ISSN : 0975-8011
बुन्देली बसंत
२०२०
बुन्देली विकास संस्थान

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित

पन्ना (म.प्र.)

1. बैंक से सम्बद्ध प्राथमिक कृषि साख सहकारी समितियों के माध्यम से उनके सदस्यों को अल्पकालीन फसल ऋण शून्य प्रतिशत ब्याज दर पर उपलब्ध करवाना।
2. बैंक में जमा अमानतों का जिले के कृषि विकास में शत- प्रतिशत विनियोजन।
3. जिले के दूरदराज के क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली अन्तर्गत उपभोक्ताओं को उचित मूल्य की
दुकानों से राशन सामग्री उपलब्ध कराना।
4. मध्यप्रदेश शासन की जय किसान फाल ऋण माफी योजना वर्ष 2018-19 के अन्तर्गत प्रथम चरण में कृषकों का ऋण माफ किया गया। दूसरे चरण की स्वीकृति प्रक्रियाधीन है।
5. अन्य बैंको की तुलना में जमा अमानतों पर अधिक ब्याज।

जिला सहकारी बैंक एवं उसकी सेवा सहकारी समितियों से जुड़िये और जिले के कृषि विकास में अपना योगदान दीजिये।

प्रशासक

(मिलिन्द सहस्त्रबुद्धे)
मुख्य कार्यपालन अधिकारी

बुन्देली साहित्य, संस्कृति तथा इतिहास को समर्पित

ISSN-0975-8011

पंजी. क्र. MPHIN-17761/12/1/2002-TC

अंक २१, फरवरी २०२०

संरक्षक :

शंकरप्रताप सिंह बुन्देला 'मुन्ना राजा'

राजमहल परिसर, छतरपुर (म.प्र.)

मोबाइल : ०९४२५१४१४५५, ०९९८१५०३०५५

संपादक :

डॉ. बहादुर सिंह परमार

एम.आई.जी.-७, न्यू हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी

पन्ना रोड, छतरपुर (म.प्र.)

मोबाइल : ०९४२५४७४६६२, ७९७४२१७७५६

E-mail : bsparmar1962@gmail.com

सह संपादक :

डॉ. हरिसिंह घोष

घोषयाना, संकटमोचन मार्ग, छतरपुर (म.प्र.)

मोबाइल : ०९४२५१४२०६६

संपादन सहयोग :

शिवभूषण सिंह गौतम

अन्तर्वेद, कमला कॉलोनी, छतरपुर (म.प्र.)

मोबाइल : ९८२६७५६९२९

प्रकाशक :

बुन्देली विकास संस्थान

महल परिसर, छतरपुर (म.प्र.) ४७१००१

❖ संपादन एवं प्रबंध पूर्णतया अवैतनिक एवं अव्यावसायिक

❖ **आवरण चित्र :**
संजय खरे 'संजू'
बकायन मार्ग, छतरपुर (म.प्र.)

❖ **सहयोग राशि :**
200 रुपये

❖ **मुदक्र :**
आकृति ग्राफिक्स, छतरपुर (म.प्र.)

❖ **संगणकीय अक्षर संयोजन :**
राजकुमार सोनी, छतरपुर (म.प्र.)
विजय विश्वकर्मा, नौगाँव

वार्षिक सदस्यता	- 250 रू. (डाक व्यय सहित)
द्विवार्षिक सदस्यता	- 500 रू. (डाक व्यय सहित)
पंचवार्षिक सदस्यता	- 1000 रू. (डाक व्यय सहित)

जो पाठक बुन्देली बसंत की सदस्यता चाहते हैं। वे बुन्देली विकास संस्थान, बसारी के **केनरा बैंक के खाता क्र. 1915101001608, आई.एफ.सी. कोड** CNRB0001915 में राशि जमा कर या चैक द्वारा अग्रिम भुगतान भेज कर सदस्यताले सकते हैं।

अनुक्रमणिका

भाषा, साहित्य और आलोचना

इतिहास, परम्परा और संस्कृति

बुन्देली गद्य

बुन्देली काव्य

अन्य

संपादकीय -

प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध, अपनी आन-बान और शान के लिए प्रसिद्ध बुन्देलखंड अँचल की सांस्कृतिक विरासत गौरवशाली रही है। अतीत में चंदेलों ने अपनी तेग से शांतिपूर्ण सत्ता संचालित करते हुए जनकल्याण के इतने सारे काम किए हैं कि उनके अवशेष आज भी गवाह के रूप में उपस्थित हैं। खजुराहो-महोबा के मंदिरों का स्थापत्य, गाँव गाँव और शहर-शहर में उनके द्वारा बनवाये गए तालाब उनकी जनहितैषी नीतियों के साक्ष्य हैं। चंदेलों के बाद बुन्देलों का प्रादुर्भाव और छत्रसाल जैसे प्रतापी शासक का अभ्युदय एक स्वर्णिम अध्याय है। छत्रसाल ने तलवार से जहाँ एक और छिन्न भिन्न रियासतों का एकीकरण करके सांस्कृतिक अस्मिता को स्थापित किया वहीं दूसरी ओर बेहतर राजनैतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, न्यायिक प्रबंधन के मानदण्ड स्थापित किए। उन्होंने यहां के लोगों को सिखाया कि अन्याय के खिलाफ डरना नहीं, संघर्ष करना। उन्होंने स्वयं कई युद्ध लड़े और उनमें विजय हासिल की। उन्होंने सामाजिक समरसता और सौहार्द्र के साथ सबको साथ लेकर सत्ता में भागीदार बनाने की नीति को अपनाने के साथ साहित्य, कला और शिल्प के साधकों को सम्मान व संरक्षण प्रदान किया। उनके बाद आजादी की जद्दोजेहद भारत वर्ष में कहीं हुई तो सबसे पहले बुन्देलखंड में। 1857 ई. के स्वाधीनता संग्राम के पहले अंग्रेजों के दांत 1842 ई. में बुन्देला खट्टे कर चुके थे। कैंथा की छावनी को जलाया जा चुका था। 1857 ई. में मेरठ के पहले नौगांव छावनी में विद्रोह हुआ था जिसके प्रमाण अंग्रेजों के सरकारी रिकार्ड तथा अभिलेखागार में मौजूद हैं किंतु बुन्देली धरती के उन वीरों को वह सम्मान व ख्याति नहीं मिल पाई। 1857 ई. के स्वाधीनता संग्राम का रणांगन भी बुन्देलखंड बना। झाँसी, जैतपुर, बानपुर, शाहगढ़, सागर, चरखारी आदि स्थलों पर भीषण संघर्ष हुआ। दिवान देशपत झीझन तो 1858 ई. के बाद तक अंग्रेजों को छकाते रहे और उन्हें छलपूर्वक मरवाया गया। ऐसी गौरवशाली भूमि पर तात्याटोपे, चन्द्रशेखर आजाद जैसे क्रांतिकारी भी आए और नई ऊर्जा का संचार करके आजादी की लड़ाई को गति दी। राष्ट्रीय परिदृश्य पर गांधी जी के अवतरित होने पर पूरे देश के साथ बुदेलखंड में भी उनका प्रभाव पड़ा। गाँव-गाँव और नगर-नगर में उनके समर्थक तिरंगा लेकर अंग्रेजी हुकूमत का विरोध करने लगे। 1931 ई. का चरण पादुका का कांड इसका गवाह है। गांधी जी ने झांसी, दमोह, गढ़ाकोटा तथा बांदा आदि की यात्राएँ की और आंदोलन को दिशा दी। इस वर्ष हम गांधी जी की 150वीं वर्षगांठ के अवसर पर उन्हें विशेष तौर से याद कर रहे हैं। इस सन्दर्भ में बुन्देलखंड में भी उनकी स्मृतियों को सहेजा जा रहा है। हमने भी इस अंक में गांधी जी को स्मरण करते हुए कुछ रचनाएं शामिल की है।

समकालीन वातावरण में गांधी दर्शन पूर्व से अधिक प्रासंगिक व प्रेरक है। उनके विचारों से गाँवों के विकास का मॉडल रचे जाने की आवश्यकता है। हमने भौतिकता को ही विकास का पैमाना मानकर बड़ी भूल की है न्यूनतम आवश्यकताओं के साथ अधिकतम सुख या संतुष्टि पर काम करने की आवश्यकता है। प्रकृति को कम से कम नुकसान पहुँचाये बिना मानव जीवन निर्वाह करने की सीख

बताने की आवश्यकता है। आज रासायनिक खादों के प्रयोग से धरती माँ बंजर हो रही है, पशु पक्षियों, वनस्पतियों की प्रजातियाँ विलुप्त हो रही हैं, इन्हें गांधी दर्शन अपना कर बचाना पड़ेगा। अनंत विलासी आवश्यकताओं से मानव तनाव में जी रहा है, इस तनाव को समाप्त कर शांति हेतु हमें न्यूनतम साधनों से लैस सादगीपूर्ण जीवन शैली की ओर लौटने की आवश्यकता है। हम चाहेगें कि हम सब संकल्पित होकर गांधी जीवन को नवीन संदर्भो में अपनाकर उन्हें सही श्रद्धांजलि दें।

बुन्देलखंड अँचल में इस समय कई समस्याएं मुँह बाये खड़ी हैं, जिन पर विचार करने की जरूरत है। आज गोधन की जो दुर्दशा है, वह चिंतनीय है। गाय जो कभी सम्पन्नता तथा प्रतिष्ठा का पैमाना रही है। आज मारी-ढकेली फिर रही है बोझ बन गई है। केवल औपचारिक गौशालाओं के संचालन या गो सेवा के फोटो सेशन से यह समस्या, हल नहीं होगी। हमें अपनी संवेदना को उससे जोड़ना होगी। इस अंक मे 'हाँका' कहानी इसी दर्द को बयां करती है। स्त्री के प्रति दृष्टिकोण हमेशा उदार व सम्मानीय रहा है। इसीलिए यहाँ बेटियों के पैर दादा जी सहित समस्त बुजुर्गों द्वारा पूजे जाते हैं। यहाँ सदैव नारी को उच्च स्थान मिलता आया है। नारी के अनेक रूपों में कुछ रिश्ते रूढ़ हैं, जैसे सास-बहू, ननद-भौजाई, देवर-भाभी, जीजा-साली आदि। इनकी अपनी प्रकृति है किंतु इसी धरती पर इन रिश्तों को नई पहचान देकर हाड़-मांस का मनुष्य लोक देवता के रूप में स्थापित होकर जननायक अपने कृत्य से बन जाता है। आप समझ ही गए होंगे। हम ओरछा के हरदौल की चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने देवर भाभी के रिश्ते को नई ऊँचाई देकर भाभी को माँ से उच्चतम स्थान दिलाया और इस पवित्र प्रेम को सिद्ध करने के लिए विष ग्रहण किया इन्हीं तथ्यों से नई पीढ़ी को परिचित करा रही है दया दीक्षित की कहानी- ''जहाँ नैकु सयानप बांक नहीं''। प्रवीण राय की कला विज्ञता तथा प्रेम उत्कटता के समक्ष अकबर निरुत्तर होता है। इस तथ्य को नाटक के रूप में स्वामी प्रसाद श्रीवास्तव ने 'रैन की पुतरिया' में प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त अंक में हमने हर बर्ष की तरह विभिन्न पक्षों को स्थान देने का प्रयत्न किया है। हम कितने सफल रहे हैं? यह तो आप ही बता सकते हैं। आग्रह है कि अपनी प्रतिक्रिया से हमें अवगत करायें जिससे हम अपने को माँज सकें।

बुन्देली विकास संस्थान का आप सब से आग्रह है कि अपने आसपास बिखरी पड़ी लोक सामग्री को सहेजिए, अन्यथा सब ये समय के साथ बिला जाएगी । हम आने वाली पीढ़ी को क्या देकर जायेंगे? खान पान, बोली-बानी, रीति-रिवाज, लोकगीत-कथाएँ, गाथाएँ, परम्परायें, संस्कार सब समय की मार से परिवर्तित होकर पश्चिमी रंग ढंग से ढल रहे हैं। समय के साथ सब बदलता है किन्तु बदलाव ऐसा न हो कि उसमें पुराने की खुशबू भी न हो बदलाव मानव स्वभाव है उसको अपनाइये किन्तु पुराना जो भी अच्छा है उसे नए साँचे में लिए ढालिए तो हम नई पीढ़ी को सुगंधित संस्कृति सौप सकेंगे।

(हस्ताक्षर) प्रद्युम्नसिंह परमार

चिट्ठी मिली अपुन की

✍ बुन्देली बसंत का अंक मिला। इसकी सामग्री शोधार्थियों के लिए महत्वपूर्ण है इसमें बुन्देलखण्ड के साहित्य, संस्कृति और इतिहास से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी हैं। मैं अंक के प्रकाशन हेतु साधुवाद देता हूँ।

–रामजी शुक्ल

सुमित्रा भवन, ग्राम चितौरी पोस्ट जसरा,
जिला-इलाहाबाद (उ.प्र.)

✍ बुन्देली की ख्यातिप्राप्त स्मारिका ''बुन्देली बसंत'' कौ 2019 कौ अंक पढ़ो, जौन भौत नौनो लगो, इ पोथी में इतैक बिलात बन्न-बन्न की नइ-नइ कविताएँ, कहानियाँ, नाटक, आलेख सबई तरां कौं बुन्देली साहित्य पढ़बे खों मिल जात है। जा पोथी बुन्देली साहित्य कौ शोध पूर्ण ग्रन्थ है। ईमें बुन्देली को सबइ तरां कों साहित्य पढ़वे मिल जात है। जा पोथी बुन्देली के इतिहास, परम्परा, संस्कृति, साहित्य आदी के संवर्धन उर विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभात है। ईकों हरेक अंक एक शोध से कम नईयाँ। इमें बुंदेली कों अथाह सागर समाओ है।

ई कै संपादन में भौत मेनत करी जात है जौं कै ईखों पढ़वे के बाद अपुन उर जान जात है। सफल संपादन के लाने हम डॉ. बहादुर सिंह परमार जू उर संपादक मंडल खौं को भौत-भौत बधाई देत हैं कै आप औरें इतैक नौनी पोथी हमओरन खौं हर बेर नौनी तरां से टेम से पौचा देत हैं।

–राजीव नामदेव 'राना लिधौरी'

शिवनगर कॉलोनी, टीकमगढ़ (म.प्र.)

✍ बुन्देली बसंत पत्रिका में नैतिक, सामाजिक लोक जन मानस से सम्बन्धित लालित्यपूर्ण लोकभाषा के विविध रंगों से सराबोर विविध विधाओं में लिखे गये लेख एवं कवितायें मन मस्तिष्क को गौरवान्वित कराते हुये सुखद संवेदनाओं की अनुभूति करातीं है। सम्पादकीय में स्पष्ट एवं वास्तविक यह संकेत है कि बुन्देल धरा प्राकृतिक संसाधनों से सम्पन्न है, यहाँ मूल्यवान कठोरतम ग्रेनाइट पाषाण का आधिक्य है, स्वच्छ जलवाहिनी सरितायें हैं, हीरें हैं तात्पर्य यह है कि प्रकृति ने हमें प्रचुर सम्पदा के भण्डारों की सौगातें दी हैं एवं पर्याप्त पर्यटन का यह क्षेत्र पर्याय है।

2019 की पत्रिका में संपादकीय से लेकर लगभग सभी लेखक महानुभावों ने प्रभावी लेखन से आकर्षित किया है। बुन्देली भाषा में लिखी गई कहानियों की रचना शैली भी सराहनीय है। डॉ. कन्हैयालाल अग्रवाल का तायमत्र लेख, बुन्देलखण्ड में सूर्योपासना विषयक डॉ. महेन्द्र कुमार का लेख तथा डॉ. सुधा सिंह चौहान का आल्हा की प्रामाणिकता विषयक लेख खोज पूर्ण है। डॉ. संध्या टिकेकर का महाराजा छत्रसाल की लोक ख्याति शीर्षक लेख सराहनीय है। डॉ. सरोज गुप्ता का आलेख हृदयग्राही है, प्रशंसनीय है। अन्य लेखकों के लेख तथा कवियों कविताऐं भी सराहनीय हैं।

बुन्देली बसंत पत्रिका के आगमन और उसके अवगाहन की प्रतीक्षा का भी अपना एक अलग आनन्द है, यही इसकी लोकप्रियता ही प्रामाणिकता है।

–श्रवण सिंह सेंगर

कैरोखर हाउस, गुरयराय (उ.प्र.)

✍ बुन्देली बसन्त का 20 वां अंक पढ़कर अपार प्रसन्नता हुयी। पत्रिका का एक-एक अक्षर मोती है। पत्रिका में इतने कवियों, रचनाकारों एवं लेखकों को पढ़कर मन गद गद हुआ और अपार ज्ञानवर्धन हुआ। बुन्देली बसन्त के सफल संपादन के लिए आपको एवं संपादक मण्डल को कोटि कोटि नमन।

–जगत मोहन हरि

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन हा.से. स्कूल
झांसी (उ.प्र.)

✍ बुन्देली बसंत 2019 का गुलदस्ता भेंट स्वरूप प्राप्त कर, आनंदित हुआ, बुन्देली साहित्यिक विरासत का जो संरक्षण तथा प्रकाशन आप कर रहे हैं। वह अत्यंत महत्वपूर्ण एवं प्रशंसनीय है। आपकी पत्रिका के साहित्यकार कहीं भी रह रहे हों बुंदेलापन उनकी आत्मा में रचा-बसा है। यही कारण है कि उनकी रचनायें पाठकों के हृदय में जाकर आत्मसात हो जातीं है। देशी व्यक्ति हो या विदेशी सभी यहां की आन बान और शान के मुरीद हैं। परम सत्ता हो यश लोक देवता सभी के प्रति लोगों की अगाध श्रद्धा है तीज त्यौहार, पर्व, दंगल, दिवारी, नृत्य, लोक साहित्य सभी परम्परायें विशिष्ट और मनमोहक हैं। वीर सिंह जू देव को न्याय, नृत्यांगना मोतीबाई, बुंदेलखंड में सूर्योपासना, कालंजर का गढ़, लोक देवियाँ, वसदेवा सम्प्रदाय, हरदौल आदि पर लिखे गये आलेखों में चिंतनपरकता का प्राचुर्य पाठकों को नवीनता से अवगत कराता है। काव्य, कहानियाँ, संस्मरण आदि विधायें अपनी पूर्णतः के साथ रूपायित हुई हैं। यह पत्रिका शोधार्थियों साहित्यकारों, सुधी पाठकों एवं प्राध्यापकों के लिए अत्यंत उपयोगी है। मैं इसके दीर्घ जीवन की ईश्वर से कामना करता हूँ।

–डॉ. अवधेश कुमार चन्सौलिया

डी.एम. 242, दीनदयाल नगर, ग्वालियर (म.प्र.)

✍ एक सौ अड़तालीस पृष्ठ कौ लगभग 108 कवि साहित्यकारन के विचारन कौ समग्र ग्रंथ बुन्देली बसंत (अंक-20) पढ़वे खों मिलौ। का कबें जा अंक की बड़ाई के बारे में। अपनी मताई बुन्देली की मिठास तौ ई में सबरें ई देखवे पढ़वे खौ मिलतइ है। जामें अपने क्षेत्र की सभ्यता रूपी सुमन की सुवासउ खूव सूँघवे आ मिल जा तई। लोक साहित्य में पशु महातम शीर्षक के विचारन की महिमा कौ का कैबौ। भीतर खों छू लेतइ जाके सद्विचार। प्रभावउ खूबकरत, कै हम पशुअन के संगै अपनौं जैसौ बर्ताव करें। जा अंक में वर्णित लोक कथायें, हमाइ परम्परा, रीतिरिवाज और नीतिन खों खोल कें रख देत। हमाये साहित्यिक परिवेश खों सोऊ जा अंक नें प्रकाशित करौ है। जिसमें वर्धित संस्कृति और इतिहास परक जितने लेख हैं, वे हमें अपनी धरोहर खों अच्छी तरौ सौधरवे तथा इतिहास सें अच्छोइ सीखवे के लानें अच्छी सीख देत हैं धरम करम और लोक देवियन में विश्वास के नाते जौ अंक

साँचऊ के प्रत्यक्ष कर देत बुन्देलखण्ड कैसौ है, जाकौ रूप कैसौ है, इतै के साहित्यकार और साहित्य की खूबी का आ है, इतै के मानवीय उपादान, नारी और नरन के चरित्रन की ऊँचाई कौ मर्मज्ञार्शी बखान, अच्छे और बुरे की पहिचान, लिखे जा ग्रन्थ में धरम है इतै, करम है इतै, नीति सों परिचय है तौ अनीति की कुरीतिअन सोंउ भरौ है जायें इतै चार पुरूषारथ लै जगां कौ परिचय दै रये। अपुन ऐंसई पोथी निकरात रइयो।

–आचार्य डॉ रामेश्वर प्रसाद गुप्त

सेवानिवृत्त प्राध्यापक (संस्कृत), दतिया (म.प्र.)

✍ वर्ष 2019 का बुन्देली बसंत अंक सशक्त है। पहली बात तो यह कि गद्य-पद्य की प्रायः सभी रचनाएं बुन्देली में हैं। विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त बुन्देली कविताओं में बुन्देली की भिन्नता देखी जा सकती है। छतरपुर, सागर, जबलपुर, और झांसी कोंच की रचनाओं में क्रिया आदि की दृष्टि अंतर स्पष्ट है। उदाहरण के लिए डॉ. श्याम बहादुर श्रीवास्तव ''श्याम'' का छोटा किन्तु महत्वपूर्ण लेख देखा जा सकता है। एक वाक्य भिन्न क्षेत्रों में भिन्न रूप ग्रहण करता है। इसी प्रकार राजकुमार का लेख बनाफरी बोली का परिचय कराता है। मानकीकरण का दावा करने वालों को इस सब पर विचार करना चाहिए। गुण सागर सत्यार्थी ने एक ओर बुन्देली की प्राचीनता का दावा करते हुए उसे संस्कृत से भी प्राचीन माना है। साथ ही आधुनिक विद्वानों के बुन्देली संबंधी चिंतन और प्रयोग पर आक्रोश व्यक्त किया है।

बुन्देली कविताओं में बुन्देलखण्ड का लोकजीवन, खेती-पाती, प्राकृतिक स्थिति, श्रृंगार आदि के साथ नवीनतम सामाजिक स्थिति की भी झलक मिलती है। जगत मोहन हरी, शिवाजी चौहान, अंजान, चंसौलिया, बिन्दु, रमेश गोस्वामी, मधुरेश, कंज, रामस्वरूप पाण्डेय, उदैनिया, हरिमोहन गुप्त, गुप्तेश्वर गुप्त, महेश कटारे, प्रजापति, पंकज, शिवभूषण गौतम आदि की इस सबकी झलक देखी जा सकती है। श्रृंगार बुन्देली का प्रमुख अंग है। अवधेश एवं जड़िया जैसों की कविताएँ इसकी साक्षी हैं।

गद्य का संसार बहुत व्यापक है। राकेश व्यास ने फ्रांसीसी यात्री लुइस रासलेट की छतरपुर, पन्ना क्षेत्र की यात्रा के अनुभव अंकित किये हैं। लुइस ने यहाँ के प्राकृतिक व सामाजिक स्थिति की चर्चा की है। सबसे बड़ी बात है यहाँ का अतिथि सत्कार। वे जहाँ भी गये वहाँ उन्हें सुविधाएँ उपलब्ध कराई गईं। रजवाड़ों से उन्हें सुख साधनों के साथ भरपूर सत्कार मिला यह बुन्देलखण्ड की विशेषता है।

नरेश कुमार पाठक द्वारा प्रस्तुत मस्तानी संबंधी तथ्य प्रामाणिक नहीं माने जा सकते। उस पर बहुत विवाद है। मस्तानी और प्रवीण राय बुन्देलखण्ड की दो ऐसी नारियाँ हैं जिन पर विद्वानों में अनेक मत हैं। श्रवण सिंह सेंगर ने मोती बाई, उमाशंकर तिवारी ने ओम शंकर असर, कन्हैयालाल बिन्दु ने जगन्नाथ सुमन, उदयशंकर दुबे ने, कवि किशोर, हरि विष्णु अवस्थी ने बखत कुंवरि के बारे में नई और अच्छी जानकारी दी है। लोकनायक हरदौल, हरिराम व्यास छत्रसाल जैसी ऐतिहासिक जैसी विभूतियों का परिचय कराने वाले लेखों के साथ कालंजर, अछरूमाता, तालबेहट, बड़ोनी, नौगाँव, छावनी, खंडेह, आदि पर प्रकाश डालकर उनकी महत्ता प्रतिपादित की है। बुन्देली लोक जीवन की चर्चा करने वाले लेखों में गायत्री बाजपेयी, सीमा तिवारी, नेहा तिवारी, शरद सिंह, राजेन्द्र सिंह चौहान, विनोद मिश्र, रविशंकर पाठक, सरोज गुप्ता, रामकिशोरी गुप्ता आदि के लेख उल्लेखनीय है।

डॉ. वीरेन्द्र निर्झर ने डॉ. रामनारायण शर्मा की पुस्तक बुन्देलखण्ड के रचनाकार का संदर्भ देकर एक नये तुलसीदास की चर्चा की है। उदयशंकर दुबे के अनुसार तुलसीदास नामधारी हिन्दी में 21 कवि हुये हैं। जिससे बड़ा भ्रम होता है। उमाशंकर खरे लिखित एकांकी 'वीर सिंह जूदेव का न्याय' वीर सिंह की ईमानदारी व न्याय प्रियता का दुर्लभ उदाहरण है। स्वामी प्रसाद श्रीवास्तव ने ओरछा कें अमरदीप एकांकी में हरदौल और उनकी भाभी की सच्चरित्रता को उजागर किया है। डॉ. सुरेश पराग का एकांकी 'लाल बत्ती' की गाड़ी मन के लड्डू खाने और उस बहाने आज की विकृत मानसिकता का रोचक चित्रण है। अजीत श्रीवास्तव का व्यंग्य भी महत्वपूर्ण है।

जगनिक कृत आल्हा बुन्देली और बुन्देलखण्ड की सर्वाधिक लोकप्रिय गाथा है लेकिन इतिहासकारों ने उसकी प्रामाणिकता पर प्रारम्भ से ही प्रश्न चिन्ह लगाये हैं। डॉ. सुधा चौहन राज ने अनेक ग्रन्थों के संदर्भ देकर उसकी प्रामाणिकता सिद्ध की है। यह लेख विचारणीय है। बुन्दलेखण्ड की पत्रिकाओं में मधुकर की ख्याति है। हरेन्द्र पाल सिंह ने उसके अवदान पर प्रकाश डाला है। वीरेन्द्र शर्मा ने बेतवा की महत्ता कवि स्वरों में प्रस्तुत की है।

कहानियों की दुनियाँ भी बुन्देलखण्डी जीवन से जुड़ी हैं दुर्गेश दीक्षित ने नारी चरित्र कहानी के माध्यम से रसिक जनों को शिक्षा दिलाई है। वही नारी की सूझ-बूझ भी। महेश कटारे की कहानी फिर का भओ में एक बिगड़ैल युवको दंडित कर समाज को चेताया है। संवाद शैली रोचक है। तीरथ को फल में राजकुमार ने तीर्थों में चल रही लूटखसोट और पाखंडो का चित्रण किया है। डॉ. दया दीक्षित ने दिक्कत की खों कहानी में पारवारिक सोच का स्वाभाविक चित्रण करते हुये दो पीढ़ियों के जीवन और चिंतन में आये बदलाव को प्रस्तुत किया है। जहाँ बेटों की अपेक्षा बेटियाँ अधिक संवेदनशील हैं।

आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल का ललित निबंध अंगना में बरसत जुन्हैया ललित कम शास्त्रीय अधिक है। ललित निबंधकार की कल्पना कहां से कहाँ ले जाती है।

इस अंक में बारे में सम्पन्न लोक विधाओं के चित्रों का न होना खटकता है। चित्र अंक का आकर्षण ही नहीं होते अपितु वे अपनी भाव भंगिमा से वह सब भी व्यक्त कर देते हैं जो अन्य विवरणों में नही मिल पाता।

सम्पादकीय में जिन समस्याओं को उठाया गया है और जो समाधान दिये गया हैं- वे युगों से लोगों के मन में हैं किन्तु क्षेत्र का प्रतिनिधित्व उतना सबल कभी नहीं रहा कि समाधानों को कार्यरूप दिया जा सके।

– डॉ. गंगा प्रसाद बरसैया

ए-7 फार्चून पार्क जी-3, गुलमोहर, भोपाल

✍ बुन्देली बसंत का अंक प्राप्त हुआ इसके माध्यम से बुन्देलखण्ड के विविध पक्षों की जानकारी प्राप्त हुई यह बुन्देली साहित्य को स्थापित करने के लिए सतत् प्रयत्नशील है। इसकी सामग्री से शोधार्थियों को मदद मिलती है। मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ

– डॉ. दिनेश कुशवाह

विभाग अध्यक्ष, हिन्दी

अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

बुन्देली गीतों में गाँधी

- डॉ. के.एल. वर्मा 'बिन्दु'

''जाके पाँव न फटी बिबाईं, सो का जाने पीर पराई'' पीर की अनुभूति, निराली होती है, मतवाली होती है, नुकीली होती है, चुभीली होती है, शरमीली होती है, हटीली होती है, ककरीली होती है, पथरीली होती है। कभी नीली, कभी पीली होती है कभी गुलाबी कभी लाल होती है कभी ज्वाल, कभी मशाल होती है। होती है पर विशाल होती है । मन कों कोंचती है। घोंचती है। रिस रिस कर झरती है जब अन्तस में पीर पिरती है। अवसाद की बदली घिरती है, मन टूटन होती है, हड़फूटन होती है ! पर बरसने पर मन में धैर्य को धीरज देती है। कुछ कुछ मसोसती है मरोड़ती है झकझोरती है। इस सब हलचल, उथल-पुथल के बाद, प्रगति का रस घोलती है। नये पथ का दरवाजा खोलती है। व्यथित, आक्रान्त मनपथिक बन मंजिल की ओर पग बढ़ा देता है। अन्त में प्रगति, उस राही के सम्हले कदम चूँमती है। यही सच्ची-जीवन्त जिन्दगी होती है।

गाँधी जी ने यह सब भोगा था, पास से देखा था। सुना था। रंगभेद क्या होता है? देश-विदेश क्या होता है? जाति-पाति क्या होती है? सम्प्रदाय, धर्म-भेद-धर्मों की भिन्नता क्या होती है? गुलामी क्या होती है? गुलामी का दंश कैसे डसता है । सौ विच्छू की बेदना का अहसास पल पल कराता रहता है, और स्वतंत्रता क्या होती है? आजादी की वयार जीवन को कितना आनन्द प्रदान करती है? इसकीं प्राप्ति के लिए संघर्ष करना कितना जटिल होता है। सत्य के पथ का पथिक बनकर, अहिंसा को सहचरी बनाकर लक्ष्य की प्राप्ति कैसी होती है? जो अनूठी ही नहीं, बहुत अनूठी होती है। कष्टप्रद होने के बावजूद भी आनन्ददायिनी होती है। सुखद होती है। सर्व सुखाय सर्व हिताय होती है? प्रेम की सहज अभिव्यक्ति होती है। सौहार्द्र और करुणा की गंगा-जमुना, मानवता को विजयी बनाकर पावन कर देती है। मानव मन को कर्म हेतु प्रबल एवं सबल बना देती है। इन समस्त भावों को निराकार रूप से निकार को साकार कर देना ही गाँधी जी का दूसरा नाम है... महात्मा गाँधी है।

इस पीर की कसक को मैंने झेला था, भोगा था जन्म से ही उपेक्षा, तिरस्कार, अपमान, पग-पग, घर-बाहर डगर डगर, नगर नगर, इधर उधर सर्वत्र जाति-सूचक व्यंग वाणों ने मेरी छाती को छेद-छेद छलनी करने का दंश दिया, घाव दिया। किन्तु उससे जो पीर रिस-रिस के चुँई, वही, उसने मुझे संघर्षशील बनाया, दृढ़ता प्रदान कर कर्मठ बनाया। प्रगति के सोपानों पर पहुँचाने में मील का पत्थर साबित हुई। इस सबका श्रेय-स्वानुभूति पर अनुभूति से कह सकता हूँ-पूर्णरूपेण महात्मा गाँधी जी को जाता है। यही कारण है कि मेरा रोम-रोम उनका, उनकी विचारधारा का, उनके द्वारा मेरे जैसे करोड़ों असहाय, विपन्न लोगों के उद्धार करने के सफ ल प्रयासों का ऋणी है। प्रमाण स्वरूप स्वयं भोगी घटना मेरे जीवन का नया मोड़ है जो अविस्मरणीय है और प्रगति की मंजिल की पगदण्डी है। सन् 1964 ई. की बात है मुझे एम.ए. पूर्वाद्ध की परीक्षा महाराजा महाविद्यालय में देना थी। आर्थिक अभाव और आवास की असुविधा होने पर गाँधी आश्रम छतरपुर आया था। आश्रम ने निशुल्क आश्रय तो दिया ही, वह सब कुछ दिया जो चौबीस वर्षों तक नहीं मिला था। स्व. श्री बलराम जी मिश्र, महामंत्री गाँधी आश्रम छतरपुर ने पुत्रवत स्नेह ही नहीं दिया, मेरे ऊपर आत्मीयता का रस बरसाया, जिसमें प्यार था दुलार था, आत्मीयता थी। उपकारी भावनापूरित सहज स्नेह था। जाति-भेद का दंश न था, कलंक न था पर अपनत्व और ममत्व की बेतवा और केन प्रवाहित हो रही थी यह ऐसी घटना थी जो जीवन में मील का पत्थर बन गई और मैं बन गया उन गाँधीवादी पुजारी का परमभक्त और गाँधी जी का उपासक। गाँधी जी न होते तो देश ऐसा न होता क्या होता। पता नहीं कैसा होता। मैं भी जो आज हूँ वैसा नहीं होता? क्या होता? कैसा होता? जैसा होता उसकी कल्पना मात्र ही हृदय विदीर्ण कर करुण क्रन्दन करने लगती है। मनः स्थिति छिन्न-भिन्न हो खिन्न हो जाती है और डूब जाती सोच के अंधकार में, नहीं। लेकिन गाँधी जी की विचारधारा की अविरल समरसता की धारा ने समाज में जागृति दी। जन जन को चेतना दी। उस चेतना का प्रतिफल मुझे मिला- बिन्दुआ से, बिन्दु, और अन्त में बिन्दु जी बना । अतः अन्तः करण पुकार उठता हैः आत्मा गा उठती है-

जग में सुन्दर दो हैं नाम,
एक कऔ गाँधी दूजे राम,
जीवन में समरसता देता,
विकल प्राण को गाँधी धाम।

गाँधी जी ने स्वाधीनता आन्दोलन का नेतृत्व किया था यह सभी जानते है, लेकिन बहुत कम लोग जानते हैं कि इस सत्कार्य के लिए गोखले जी को श्रेय जाता है जिन्होंने गाँधी जी से आग्रह कर, आन्दोलन का नेतृत्व करने भारत बुलाया था।

''मेरी मानो गाँधी अब तुम भारत आ जाओ, भारत में स्थितियाँ तेजी से बदल रही हैं। उन्हें सही दिशा में मोड़ने के लिए तुम जैसे नेता की जरूरत है।....

मैं तो अब थकने लगा हूँ। बहुत दिनों तक जिम्मेदारी नहीं निभा पाऊँगा।''-गोपाल कृष्ण गोखले

गाँधी जी ने स्वंतत्रता आन्दोलन के नेतृत्व के साथ-साथ, सामाजिक सुधारों पर पूरा ध्यान दिया। सफाई मद्य-निषेध , बुनियादी शिक्षा, स्वरोजगार हरिजनों से जुड़े अस्पृश्यता निवारण, समाज में विषबेल की तरह फूली, जातिगत ऊँच-नीच की भावना का तिरोहरण, दलित वर्ग के लोगों के लिए समाज में बराबरी का हक, साथ ही मन्दिरों में उनका प्रवेश प्रमुख थे। महात्मा गाँधी जी का कथन था - ''अस्पृश्यता हिन्दू धर्म के लिए सबसे बड़ा कलंक

है और जब तक ऐसा रहेगा प्रत्येक हिन्दू को शर्म से सिर नीचा करना होगा''[1]

गाँधी जी ने छुआछूत के कलंक को मिटाने के पवित्र ध्येय की प्राप्ति हेतु सन् 1932-33 में सत्याग्रह कर तीन बार प्राणों की बाजी लगा दी थी। उन्होंने ब्रिटिश प्रधानमन्त्री मेक डोनेल्ड द्वारा सुझाई हरिजनों के लिए प्रथम मतदान व्यवस्था, जो हरिजनों और सवर्णों के बीच खाई पैदा करती थी, यरवदा जेल से ही इस क6यूनल अवार्ड का बहुत विरोध किया और 20 सितम्बर 1932 को आमरण अनशन की घोषणा कर दी, जिससे झुककर सरकार ने कानून को वापिस ले लिया था।

गाँधी जी ने हरिजन उद्धार हेतु 28 नवम्बर 1933 से सिवनी, छिन्दवाड़ा, बैतूल, दमोह, सागर मण्डला, बावई हरदा, खण्डवा आदि का दौरा किया था । सब जगह सम्बोधन में मूल बात कही थीं ''आज हिन्दू और हिन्दू-धर्म दोनों कसौटी पर हैं। यदि वे सच्चे न उतरे तो दोनों नष्ट हो जायँगे.... किसी भी जगह धर्म के नाम पर और जन्म से ही अस्पृश्यता नहीं मानी जाती। बुद्धि या हृदय कोई भी इसका समर्थन नहीं कर सकते। शास्त्रों में इसका समर्थन नहीं मिलता।''

गाँधी जी ने इस यात्रा में हरिजनों के लिए बनाये जा रहे मन्दिर का शिलान्यास अपने कर कमलों से किया था। यहाँ हरिजन उद्धार हेतु चार हजार पांच सौ ग्यारह रूपये थैली भी भेंट की गई थी। 6 दिसम्बर 1933 मण्डला से लौटकर गाँधी जी जबलपुर गुजराती समाज के कार्यक्रम में गये यहाँ हरिजन कोष के लिए 6000/रु. की राशि प्राप्त हुई। गाँधी जी की पहल पर सदर बाजार स्थित दो मन्दिरों के दरवाजे हरिजनों के लिए खोल दिए गये। गाँधी जी ने भाषण में कहा था- '' मैं संसार के सभी धर्मों पर विश्वास करता हूँ, वस्तुतः मेरा यह आन्दोलन ऊँची जातियों द्वारा प्रायश्चित और पश्चाताप करने का आन्दोलन है। अस्पृश्यता जिएगी तो हिन्दू धर्म मरेगा और यदि अछूतपन मरेगा तो हिन्दू धर्म कलंक रहित होकर जियेगा।''

गाँधी जी की अन्तर आत्मा की पुकार पर जन-जन का समूह उनके साथ हो लेता था, अछूतों का उद्धार, शरीर के सड़े-गले अंग के उपचार सदृश्य है इसका उपचार मानवता की सच्ची सेवा है, भारतीय समाज का सच्चा सुधार है, प्रगति का सोपान है। गाँधी जी इस सत्य तथ्य को स्वीकारते थे।

'' भारत में जाति प्रथा का आज जो स्वरूप है उसमें उनकी(गाँधी जी) आस्था नहीं थी.... और फिर जिन मन्दिरों में हरिजनों का प्रवेश निषिद्ध था उनमें वह हरगिज नहीं जाते थे। जे.बी.कृपलानी''

गाँधी जी की प्रबल इच्छाशक्ति का उद्घोष एवं प्रतिफल बुन्देली गीतों में भी गुन्जरित होता है। गाँधी हते अवतारी जात-पाँत खों तोर घर देसी बना दऔ।

डर भगाय सरकारी। गाँधी हते अवतारी
कर-कर सत्याग्रह लरी लराई,
राजपाट छीनौ दै तारी, गाँधी हत अवतारी ।

इतना ही नहीं...''[2] गाँधी जी ने अस्पृश्यता निवारण हेतु पहला सत्याग्रह सन् 1924-25 में बैंकाक में किया था। जिसका नेतृत्व कांग्रेस नेता डी.के. माधवन ने किया था। एजंवा एवं अन्य अस्पृश्य जातियों को मन्दिर में प्रवेश कराया था। यह सत्याग्रह 20 महीने चला था। अन्त में सत्य की अहिंसा के बल पर जीत हुई थी।'' [3]

गाँधी जी की नैतिक शक्ति की शक्ति से यह सुखद फल फलित हुआ था।

नैतिक शक्ति गाँधी जी के प्रिय शब्दों में आत्मबल, श्रद्धा से और सच्ची धार्मिकता से प्राप्त होता है। मृत्युपर्यन्त गाँधी जी सदा ही शक्ति के इसी केन्द्र पर जोर देते रहे है'' - सी. राजगोपालाचार्य

बुन्देली जनीमान्से जल चढ़ाउती बिरियाँ जो लोकगीत गाउतीं, हरसाउतीं, मुस्काउतीं........दरसन होन लगे हैं कल सें भुन्सारे खुल गई किवरियाँ, रोजऊँ सजा बिरियाँ गाँधी जू के बल सें, दरसन होन लगे हैं कल सें.... दरसन होत रोज दोऊ जुरियाँ, करत पुजापौ तिरियाँ ढारत नौने जल सें, गाँधी जू के बल सें, दरसन होन लगे हैं कल से, गाँधी जू जिनका कोई नहीं उनके सब कुछ थे। पुत्र थे, पिता थे, भाई थे, दीन-दुखियों को वरदान थे, गरीबों के कल्याण थे, अछूतों के उत्थान थे, मानवता के पुजारी जन जन के प्राण थे। मन्दिरों की आरती, मस्जिद की कुरान थे, सच्चे अर्थों में इन्सान थे। क्योंकि.... ''हजारों दीन-दुखियों की झोपड़ियों में उन्हीं के समान वे आए। उनसे उनकी भाषा में बातें कीं। उन्होंने जो कहा खरा सत्य था, शास्त्रों के उद्धरण नहीं। इसीलिए भारत की जनता द्वारा उन्हें दिया गया ''महात्मा'' ही उनका सच्चा नाम है। दूसरा कौन है जिसने उनके समान सारे भारतीयों को अपना परिजन समझा हो? सत्य से सीधा सम्बन्ध स्थापित होने पर आत्मा की दबी हुई शक्तियाँ फिर से जागृत हो उठती है''-रवीन्द्रनाथ टैगौर

गाँधी जी में सबको आस, विश्वास, अपनत्व मिलता था। उन्हें लगता था। कि दुखः- दर्द में कोई तो अपना है। विश्वास ही जीवन का सवल सम्बल होता है।

गाँधी जी ने 14 मार्च सन् 1930 वासणा के भाषण में कहा था ''यह तो सत्य और अहिंसा की लड़ाई है। और हम सच्चे सत्याग्रही है। मेरी इस भविष्यवाणी को सच माने कि एक दिन ऐसा आयेगा कि अंग्रेजों को हमसे माफी माँगना पड़ेगी। [5]

गाँधी जी की भविष्यवाणी अक्षरतः सत्य हुई क्योंकि उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन को जन-जन का आन्दोलन बना दिया था। बापू स्वतंत्रता के पर्यायवाची बन चुके थे। बुन्देली गीत में इसकी बानगी - देखिए -

बापू भले हते बलसाली, जानत दुनियाँ सारी।

परस्वारथ के लाने जिनने, छोड़े महल अटारी।
देस बिदेसन लगा लगोटी, घूँमें खादी धारी।
बिन हतयारन लरी लराई, कर गये देस सुखारी
जानत दुनिया सारी।...

गाँधी जी की सफलता पर राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था ''गाँधी जी की यह देन थी कि उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन को जन साधारण तक पहुँचा दिया और राष्ट्रीय आन्दोलन देश के सारे लोगों का आन्दोलन बन गया और महात्मा गाँधी की सफलता का कारण भी''-डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

गाँधी जी की पुकार ने बालक, वृद्ध, हर जवान नर, नारी को अहिंसक सेना का सिपाही बना दिया था। इन्हीं भावों का गीत -

बारे बूढ़े बने तोपें चलीं न दागी बन्दूकें गये सिपइया
और संग मरद सजाए देसी गाँधी ने।
सत्याग्रह सें जीती लराई, देसी गाँधी ने। [6]

सन् 1929 में गाँधी जी आगरा से पं. श्री मुन्शी अजमेरी जी के आग्रह पर चिरगाँव पधारे थे। गाँधी जी राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी की राष्ट्रीय भावनापूरित रचना भारत-भारती से अत्यधिक प्रभावित थे। चिरगाँव में आयोजित सभा में नगर के समस्त नर-नारियों ने स्वतंत्रता संग्राम हेतु एक आना, दो आना चवन्नी, अठन्नी एक रुपया हँस हँस कर दान दिया था, वहीं खुदा बख्श के परिवार की बूढ़ी डुकरो ने एक किलो चाँदी का पैजना दान कर दिया था। गाँधी जी ने सहर्ष कहा था धन्य नारियाँ हैं चिरगाँव की। बुन्देली गीत पुकार उठता है -

लन्दन में हड़कप मचा दवो, भारत के बनियाँ ने।भारत के बनियाँ ने।
सवनै संग दवो गाँधी खों राजा रंक रनियाँ नैं।भारत के बनियाँ ने।
सबसे आँगू बड़ कै दै दओं बुन्देली धनियाँ।भारत के बनियाँ ने।
डुकरौ मान बढ़ा दऔ दूनौ चाँदी पैजनियाँ ने।
लन्दन में हड़कप मचा दवौ, भारत के बनियाँ ने। [7]

गाँधी जी के साथ हिन्दू मुसलमान सिख सभी कंधा मिलाकर साथ देते थे हँसते हँसते । गीत गाये है-

जाँत-पाँत तोड़ कर देसी बना दवो, डर खों भगा सरकारी,
कर कर सत्याग्रह लरी लराई, राजपाट छीनों दैतारी
हमाये गाँधी ने । [8]

गाँधी जी के सत्कर्मों से उनका नाम भारत के कोने-कोने के अलावा विदेशों में फैल चुका था। गाँधी भारत थे, भारत गाँधी था। '' जहाँ जहाँ मैं भारत के बाहर गया, पहिला सवाल मुझसे यही हुआ गाँधी कैसे हैं? अब क्या करते हैं। हर जगह गाँधी जी की शोहरत पहुँची थी। गैरों के लिए गाँधी हिन्दुस्तान था और हिन्दुस्तान गाँधी''-जवाहरलाल नेहरु

गाँधी जी के सत्कर्मों की दुन्दभी बुन्देली गीत में इस प्रकार गूँजती है -

अफरी का नौटाल में बाजी विपता होइगे छोर
चम्पारन खेड़े में वाजी, कास्टा कर घनघोर
सो वंशी अब बजरई भारत में चहुँओर [9]

अहिंसा के माध्यम से असम्भव को संभव करना, प्रेम रसवृष्टि कर सृष्टि की संरचना करना गाँधी का ध्येय था। '' गाँधी जी उन सब की आशा थे, जो यह विश्वास करते हैं कि जन साधारण पर भरोसा किया जा सकता हैं-पर्ल एस् वक

बुन्देली गीतों में अंग्रेजों के अत्याचारों का वर्णन खूब मिलता है। किसी को भी कहीं भी, शक के आधार पर जेल में ठूँस दिया जाता था। -

अंग्रेजी परी है गम खाने।
कहाँ बनी चौकी कहाँ बने थाने, कहाँ जू बन गये जेल खाने ।
अँगीत बनी चौकी, पछीत बने थाने,
बाकी देरी में बन गये जेल खाने।
अंग्रेजी परी है गम खाने। [10]

इस जेल खाने से गाँधी जी, नेहरू, पटेल, सुभाषचन्द्र बोस आदि स्वतंत्रता सेनानियों ने आजादी की राह दिखा दी। इसी राह के पथिक गाँधी को बुन्देली लोककवि 'मोहन' (कृष्णा) का अवतार मानता है -

चलाउत जावौ चरखा, कताउत जाव सूत।
गोरे खदेरन खों बनियाँ कौ पूत।[11]

गोरों को खदेरने के बाद आजादी आई। नर-नारी झूम उठे।।
गा उठे-अब सारौ पलट गवो राज,
देस में आजादी आई बैना मिट गई कारी रात,
सबेरो हँसत दिखारऔ बैना आजादी आई बैना। [12]

बुन्देली लोककवि की दृष्टि बड़ी पैनी है। वह गुन्त व्योंत कर निष्कर्ष निकॉलता है'', एक राशि वाले व्यक्तियों में जो अत्याचार करता है उसका वध उसी राशि वा करता है। जैसे राम, रावण का, कृष्णा कंस का और गाँधी, गवर्नमेन्ट (अंगेजी हुकूमत का) अन्त करते हैं -पढ़िए -

जब जब एक राशि मिल राजै, दुस्मन होत पराजै।
रामचन्द्र ने रावण मारो, निसचर सहित समाजै।
कृष्ण चन्द्र नै कंस पछारो, द्विज देवतन काजै।
गौरमेन्ट बिन हतियारिन गाँधी लेत सुराजै। [13]

इसलिए गाँधी जी के लिए कहा गया कथन कितना सटीक है ''आने वाली पीढ़ी शायद ही यह विश्वास करें कि इस प्रकार के हाँड़-माँस का मानव कभी इस भूमि पर चला था।'' -अल्वर्ट आइन्सटीन ।

फिरंगियों ने फूट डालो, राज करो, की नीत अपना कर देश की कृषि और उद्योगों को चौपट कर दिया था। गाँधी जी ने स्वदेशी अपनाने पर बल दिया था। बुन्देली गीतों में इस भाव की झलक झिलमिलाती है. यथा -

हरे हरे खेत उजर गये सबरे,

रे लूट डारी सारी सम्पत्तियाँ विदिसिया रे,
बै-बै बीज फूट के तैंने, रे कर दऔ देस भिकारी

इतना ही नहीं बुन्देली नारी बन्नी गाने लगती है। स्वदेशी अपनाने के लिए -

हुकुम गाँधी जू कौ निभावौं वारी बन्नी जू।
मेरी बन्नी पैरौ सुदेसी सारियाँ, विदेसी खौं वापिस करौ वारी बन्नी। [14]

'सत्याग्रह आन्दोलन' की गूँज बन्ना गीत में ध्वनित होती है

गाँधी महाराज महात्मा, मेरा, बनरा मोह लियो रे, मोह लियो रे।
मोह लियो रे, भरमाय लियो रे, खादी पैन सजवाय लियो रे,
बनरा, मोह लियो रे।
पुलिस कचैरी, डंडा गोली वो डर भगाय दिवोरे।
बनरा मोह लिवो रे।
जेल भेज कैदी बनायो, देस खौं स्वराज पाठ पढ़ाय दियो रे।
वनरा, मोह लियो रे। [15]

स्वदेशी आन्दोलन की बिरियाँ, बुन्देली तिरियाँ झुण्ड के झुण्ड झूला झूल-झूल मनई मन फूल-फूल गा उठतीं

चरखा कातौ मोरी बैना पिरेम सें जू।
एजी कोऊ जल्दी से होंय सुधार जू
बढ़िया, बढ़िया कातौ मोरी वैना सूत खों जू
एजी सोई पैने सबई परिवार जू
माल विदेसी बैना तियाग दो जू
ऐसें-ऐसें देसी कौ करौ पिरचार जू
भारत माँ कौ चरखा लाड़लौ जू
ए जी जासें भवो हरिजन उद्धार जू
चरखा कातौ मोरी बैना। [16]

गाँधी जू के सत्कर्मों का गुणगान बुन्देली कवि आल्हा छन्द में भी जोर-शोर से करता है -

लन्दन काँपो गाँधी बाबा, संग में लयें जवाहर लाल।
अब तक तौ भारत में भइया, होरई मुकता मारा-माल (मारामारी)
नियत विरुद्ध होय जो राजा, वाकौ ऐसई बिगड़ें हाल
कारी करतूतन रावन कौ, लंका बिछौ मौत कौ जाल। [17]

बापू जन-जन के नयन के तारे थे, बारे थे नियारे थे, गरीबों के सहारे थे, डूबतो के किनारे थे। अतः दुलारे थे। लोककवि को सुनिए -

बापू तुम नैन के तारे, हते पिरान सें पियारे।
भारत के थे हिमगिर रक्षक, खम्बा अटल सहारे।
निर्धन के धन, हरिजन के मन भूतल के रखवारे।
खेत सिंह थे हीरा जग के, बे अनमोल हमारे। [18]

गाँधी जी की करनी का यश गुणगान डॉ.डी.आर वर्मा, बुन्देली के सशक्त हस्ताक्षर की पंक्तियों में जय घोष करता गूँजता है

गोरन कौ मौ कारौ कर डारो, गौरन कौ मौ कारौ कर डारो।
जिनने जुलम गुजारौ, कर दऔ तो मौ कारो।
चक्र अहिंसा, गदा सत्त कौ घुमा घुमा कैं मारो
आदी रात बँदा दवो बिस्तर हिन्द सें वार निकारो
कोटन कोट भारती संगे, गाँधी बढ़ ललकारो।
भागे पिरान बचा सब गोरा, ओ माई गाड उचारो।
'दयाराम' लैराय तिरंगा तन मन धन सब वारो।
गौरन कौ मों कारो।

इतना ही नहीं -

गजब कर डारौ गाँधी तुमने लवौ सुराज छुड़ाई।
मारी न तेगा तरबार, लाठी लैकें करों न बार
सवरे गोरा दये निकार
असहयोग आन्दोलन करकें, तुमनें गैल दिखाई
लऔ सुराज छुड़ाई।
तुमरे संग लाखन गये जेल, जेल खौं उन ने जानौ खेल
देखी धार और देखो तेल,
करौ मरौं कैदई तुमने, बड़ गये बीर अँगाई।
लऔ सुराज छुड़ाई।
तुमने चरखा दये चलवाय,
खादी अपनी लों बनवाय।
पैरी सब सरीर सुक पाय।
पूरे देश विदेसी उन्नन होरी तुम जलवाई
लऔ सुराज छुड़ाई।
जब जब तुमने करे इसारे
कोटन जुआन संग तुमारे।
'दयाराम' बैचेन तिरंगा दिल्ली दवो चढ़ाई
गजब कर दवो गाँधी जू तुमने, लवो सुराज छुड़ाई [19]

महात्मा गाँधी जी एवं उनके विश्वसनीय साथियों तथा अनगिनत अज्ञात वीरों के बलिदान से दासता की बेड़ियाँ कटी ही थी कि सिर मुड़ाते ही ओले पड़ गये। जिन्ना की जिद्द से देश के टुकड़े हो गये। मानवता इस वीभत्स काण्ड से थर्रा गई। बुन्देली कवि चीत्कार कार उठता है -

बँटवारा हो गवो रे भारत के, दे दऔ रे पाकिस्तान।
दे दवो रे पाकिस्तान, धन्य जिन्ना मौलाना।
बड़ी तपस्या करी, खून में आटा साना
जानत है भगवान जिबा वे कर सामूँ।
फटौ करेजौ जाय, घटी हिम्मत सब काबू।
भीतन में बच्चे टटे, तलफ तलफ गई जान
ऐकें भुजरये आग में, कई चीर करौ खैमान। [20]

'खून में आटा साना' वाक्य बँटवारे के जिम्मेदार दानव, स्वार्थी जिन्ना के मुँह पर थूकता दिखाई देता है। चीत्कार भी, इस भीषण त्रासदी पर चिल्ला चिल्ला कर चीत्कार करता है, मानवता सिहरती है। यह ऐसी भूल है जो नासूर बनकर सदियों तक सिसक-सिसक कर रिस-रिस कर रिसती रहेगी। उस समय भाईचारे के लिए कहा था' -

मैं इस अजीज मुल्कौ के निवासियों से निवेदन करता हूँ कि 'आज गाँधी जी द्वारा सिखाए गये मार्ग का अनुसरण करें। इसी में आपके देश की शान्ति और समृद्धि हैं।'- खान अब्दुल गफ्फार खाँ

खान साहब की किसी ने नहीं सुनी। जो होना था सो हुआ। इस भीषण त्रासदी उपरान्त देश में जो मारकाट हुई। खून खराबा हुआ। परिवार के परिवार उजड़ गये। देश की स्वतंत्रता अवसाद में परणित हो गई। सम्प्रदाय सौहार्द्र विदीर्ण हो गया। सर्वत्र हिंसा का तान्डव नर्तन करने लगा। बँटवारा अविस्मरणीय था, करुणिम था, दारुण था। पर हो चुका था। भारत-पाकिस्तान दो स्वतंत्र राष्ट्र बन चुके थे। सब कुछ ठीक ठाक चलने को आतुर हो रहा था कि ....

अनहोनी होनी प्रबल होनी माने होय
कोट जतन कैसेऊ करौ, रोक सके न कोय,

अनहोनी होना थी, हुई। 30 जनवरी 1948 बिड़ला मन्दिर में प्रार्थना करते समय राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के साथ जो हुआ था वह अकल्पनीय था। श्री राम मनोहर लोहिया के शब्दों में ''30 जनवरी शाम को मैं टैक्सी लेकर गाँधी जी से मिलने बिड़ला भवन की ओर चला। लेकिन रास्ते में ही गाँधी जी की घृणित व नृशंस हत्या की खबर मिली।

बिड़ला भवन पहुँचा तो वहाँ बहुत बड़ी भीड़ थी। केवल गाँधी न थे, कमरे में उनका मृत शरीर पड़ा था''

उस दिन लगा कि असली अर्थ में मैं पहली बार अनाथ हुआ, देश का सन्तरी सामने मरा पड़ा था और देश के राजा बने लोग आँसू बहा रहे थे।

गाँधी जी के विश्वस्त चेलों-नेहरु व पटैल, के गद्दी पर रहते हुए भी गाँधी जी की हत्या हो गई।

मुझे गाँधी जी की 'ईश्वर पर विश्वास' वाली कहावत याद आई। मैं सोच रहा था कि ईश्वर पर अटूट श्रद्धा रखने वाला, जिसने जिन्दगी भर अहिंसा का प्रचार किया, आज उसका हिंसा द्वारा हनन हुआ। यह कितनी विपरीत घटना थी।

-राम मनोहर लोहिया 22

लोहिया जी का मन भारी था, व्यथित था। मन ही मन बुदबुदा रहे थे। देशवासियों के साथ दगाबाजी कर, जल्दी चले गये.... दादा माखनलाल चतुर्वेदी जी ने अपने मन की व्यथा को यों व्यक्त किया -

खुले नयन जब ढूँढ़ कर थक जाते हैं।
मुँदे नयन में चरण-चरण चलकर आते
स्वर भर शर्म के मौन रहे, पर जी में बोल-बोलकर
कितनी सर्वोदयी श्रृंखला समझाते हो।
ऊषा माँग करके प्रसन्न पर पापी अंधकार की वाणी
कोकिल था उड़ गया, गूँजती रही सिर्फ बोली कल्याणी। 23

- माखनलाल चतुर्वेदी

श्री लोहिया जी एवं श्री चतुर्वेदी जी की वाणी गुपचुप कुछ कहे बिना बहुत कुछ कहती हैं । जहाँ दर्द ही दर्द है अभाव ही अभाव है...... कहा भी हैं -

पत्ता टूटा पेड़ से साख बाकी रह गई।
धूनी से साधू, उठ गया राख बाकी रह गई। 24

गाँधी जी के अभाव में बुन्देली कवि कहता है -

अबका खेलैं रंग की होली, महासभा की टोली
पैलई सें ई देस भरे की, सवरी खुशी निचोली,
ईसुर (भगवान) विनय करत में मारी, बापू के तन गोली
'खेत सिंह' जग भर में सुन ले, हाय हाय की बोली। 25

गाँधी जी की मृत्यु पर यह कथन गाँधी जी की महानता का द्योतक बन गया है।

''श्री गाँधी जी की मृत्यु दर असल मानव जाति के लिए एक बड़ी हानि है क्योंकि उसे उनके प्यार एवं सहनशील शक्ति के आदर्शों की जीती रोशनी की, जिसके लिए वे जिए एवं मरे, बहुत आवश्यक है।'' - लार्ड माउन्ट वेन्टन

बुन्देली का दूसरा कवि अश्रु ढुलका-ढुलका कर द्रवित होता है। अपना अपनों को ही मारता है संहारता है। क्योंकि घर की कुरइयाँ से ही घर वाले की आँख फूटती है। नापाक नाथूराम गोडसे की गोली चली साँस टूटी, आँख फूटी, रोशनी चली गई, करोड़ों हरिजनों के मसीहा की -

करनी कहों कूर कमतर की, छाती कर बज्जुर की
तीस जनवरी, सन् अड़तालीस, श्री बिरला मन्दिर की।
गोली बनी मौत बापू की, बच्चई केरे कर की।
घर की एक कुरइया से भई, दुरगति सबरे घर की। 26

गाँधी जी की दुखत मृत्यु पर भारत ही नहीं विश्व ने अश्रु ढुलकाए थे.... यह कथन साक्षी है - 'महात्मा गाँधी का अन्त यह जाहिर करता है कि अच्छा होना कितना कठिन है।' - जार्ज बर्नाड शा

30 जनवरी उन्नीस सौ अड़तालीस को भारत के कलंक नाथूराम गोडसे ने भारत माँ के सच्चे सपूत महात्मा गाँधी की निर्मम हत्या की थी। उस समय मेरी आयु सिर्फ सात साल की थी। यह सब क्या हुआ, कैसे हुआ, क्यों हुआ, किसलिए हुआ मैं नहीं जानता था पर अब सब घोक-घोक कर, सोच-सोच कर मन विकल होता है।

गाँधी जी जैसा दूसरा गाँधी खोजने का असफल प्रयास, स8ार वर्षो से प्रतिदिन कर रहा हूँ। पर गाँधी तो क्या गाँधी की किसी एक ही विचारधारा का पूर्णरूपेण अंश नहीं मिला क्योंकि गाँधी जी तो सिर्फ गाँधी जी ही थे। आशा से आसमान टंगा है। आशारत हूँ....फिर भी अब तक नया गाँधी नहीं मिला जो मानवता की सेवा कर, ममत्व उड़ेर देता, प्यार वर्षा देता, अपनत्व प्रदान कर उपकृत करता, संतप्त प्राणों को शीतलता प्रदान करता और यह विश्वास पैदा कर देता है कि अभी हम तो है हिंसा पर अहिंसा की विजय हेतु।

कहीं कोई सुरहिन गऊ नहीं दिखाई देती, न ममत्व का प्रतीक वचन का पक्का बछड़ा और ना हीं सिंह सा सशक्त मामा जो बलिष्ट होकर क्षमाशील है परोपकारी है। अहिंसा का प्रतिरूप है। प्राणी का रक्षक है, भक्षक नहीं। अन्त में बुन्देली कवि पुनः कोधातुर हो, नर पिशाच हत्यारे नाथूराम पर चीख-चीख कर, खरी-खोटी सुनाता है -

'नथुआ' जौ का कर डारौ, गाँधी खौं माड़ारौ
नथुआ तेने का कर डारो? औछे करम करे सें
बन बैठो हत्यारौ, नथुआ तेंने का कर डारौ।
देश विदेशन थू-थू हो रई, थूक रवो जग सारौ
नथुआ का कर डारो गाँधी खों माडारो है। 27

अन्त में लोहिया जी के शब्दों में, अहिंसा के पुजारी का अन्त हिंसा से हो गया'' अहिंसा के पुजारी का सूर्य हिंसा के अंधकार में डूब गया।

अनमोली हीरा हिरा गवो, ककरन में।
अहिंसा फसी, हिंसा-झकरन में ।
हीरा हिरा गवो, ककरन में।

सन्दर्भ सूची -

1. मध्यप्रदेश गाँधी धाम, डॉ. शिवकुमार अवस्थी
2. बुन्देली लोक साहित्य, डॉ. रामस्वरूप, स्नेही, पृष्ठ 402
3. भारतीय स5यता एवं संस्कृति, सत्य नारायण दुबे, पृष्ठ 407
4. निजी संग्रह
5. गाँधी के सत्याग्रह, डॉ. रामाश्रय रत्नेश, पृष्ठ 63
6. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 402
7. श्री देवेन्द्र मोहन गुप्ता 'तपन' बुन्देली कवि भोपाल म.प्र.
8. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 402
9. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 402
10. बुन्देली लोक साहित्य एक अनुशीलन, डॉ.के.एल.वर्मा पृष्ठ 215
11. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 402
12. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 402
13. बुन्देली का फाग साहित्य, श्री श्याम सुन्दर बादल, पृष्ठ 215
14. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 400
15. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 401
16 बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 401
17. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 401
18. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 401
19. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 408
20. डॉ. दयाराम बैचेन के सानिध्य से
21. बुन्देली का फाग साहित्य पृष्ठ 151
22. साक्षात्कार पत्रिका अंक अक्टूबर, नवम्बर, दिसम्बर 19 पृष्ठ 102
23. राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी श्री माखनलाल चतुर्वेदी पृष्ठ 8
24. अज्ञात
25. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 150
26. बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 150
27. गीत की प्रथम पंक्ति पं. गुणसागर सत्यार्थी जी से प्राप्त

- कला निकेतन, नीरजा नगर, जे.के. रोड, भोपाल म.प्र.
मो. 9425079493, 462021

धरती बुन्देलन की प्यारी

- आचार्य डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त

धरती बुन्देलन की प्यारी, प्रीति-भरी अनियारी।
हरी-भरी सँवरी खेतन सों, सुखमयि बहै वयारी।
हिलमिल खेलें सबइ सुहानी होली और दिवारी।
शब्दन में है लचक मनोरम, लगवै मीठी गारी।

मुँह के इतै बुंदेली बोली, अजर अमर अनमोली।
शौरसेनि प्राकृत सों निकसी, शूरन की हमजोली।
जगनिक कविवर के आल्हा ने, जामें मिसरी घोली।
सरसावलि जाके माथे की, चन्दन कुमकुम रोली।।

झरना इतै झूम कें गावें, कलकल गीत सुनावें।
सरितन में उत्साह अमित, अनवरत करत हित जावें।
सिन्ध, वेतवा, मंदाकिनि, गंगा, यमुना सरसावें।
तीर्थ दरस सों इतै सबइ जन, 'राम' चरन चित लावें।।

धरती जा वीरन की 'मानी', सबकी है पहिचानी।
मर्दनसिंह वीर भये जामें, उनकी अमर कहानी।
बचे न कोउ फिरंगी, मारे सब झाँसी की रानी।
'वीरभूमि' जाके वीरन सों, कोउअन रार न ठानी।।

राजा छत्रसाल वर सेली असि अरि दल पै रेली।
भगतफिरी यवनन की सेना, दिल्ली तक लौ ठेली।।
बुन्देलन की शक्ति, कि जाकी चाल बड़ी अलवेली।
शक्ति सुधा सह सत्य धर्म माला जन-जन हिये मेली।।

जाभू की है शोभा न्यारी, भरी नेह की क्यारी।
रक्षा करतइ विन्ध्यवासिनी, देतइ आशिष भारी।
खजुराहो के महादेव की कृपा, अनिन्ध उचारी।
शशिधर शंभु जटाशंकर की दया सदा सुखकारी।।

विग्रह वेत्रवती के न्यारे, सुन्दर रूप सँभारे।
तट पै धम ओरछा, जहँ श्रीराम लला बैठारे।
आल्हा, ऊदल मलिखे अजहूँ, जाके हैं रखवारे।
प्रेरक हैं हरदौल वीर के, गीत मनोहर प्यारे।

इतै है चित्रकूट अतिशोभित, देख होत मन मोहित।
मन्द बहत मन्दाकिनि, लख चित्त होत चारू अतिलोभित।
इच्छा पूर्ण करत कामदगिरि, संतन कौ है जौ मत।
जा धरती बुन्देलखण्ड खों, है प्रणाम हो कें नत

निवास - श्रीमती लक्ष्मी गुप्ता-भवन, उद्योग विभाग के पास
सिविल लाइन्स दतिया (म.प्र.), 475661, मो.-
9826249448

जब बापू मेरे घर पधारे

– गुणसागर 'सत्यार्थी'

'चल पड़े जिधर दो डग मग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर।...''

पं. सोहनलाल द्विवेदी की इन अमर पंक्तियों ने पूरे विश्व की न केवल आँखे खोल दीं अपितु आश्चर्य चकित कर दिया था कि जिस देश में आठ कनबजिया और महात्मा गांधी ने वर्ग-भेद, वर्ण-भेद, क्षेत्रीयता, भाषा, धर्म और विभिन्न संस्कृतियों के संकीर्ण घेरे मिटाकर जो अभूतपूर्व एकता के सूत्र में भारत को फिरंगियों के विरुद्ध ऐसा खड़ा कर दिया कि उनका एक मात्र शस्त्र - ''फूट डालो और राज करो।'' को निस्तेज कर दिया था। जिसके कारण ही अंग्रेजी शासन की जड़ें हिलाकर एक नई मिशाल कायम की थी।

ऐसे महात्मा गांधी नवम्बर 1929 में भारत भ्रमण करते हुए उत्तर प्रदेश के आगरा में संगठन के सिलसिले में नेहरू जी और सरदार पटेल जैसे दिग्गज कांग्रेसी नेताओं के साथ अपना डेरा डाले हुए थे। उस समय चिरगाँव जिला झांसी निवासी बुन्देलखंड से सु-कवि मुंशी अजमेरी जी भी उनके साथ में थे। इस अवसर का लाभ उठाते हुए कविवर सियाराम शरण गुप्त ने अपने अग्रज मैथिलीशरण गुप्त से परामर्श लिए बगैर ही मुंशी अजमेरी जी को पत्र लिखकर भेजा था। जबकि वे प्रायः अपने अग्रज से पूछे बगैर ऐसा नहीं करते थे। उस पत्र में उन्होंने लिखा था कि आप बापू को चिरगाँव आने का निवेदन कीजिएगा। बापू बुन्देलखण्ड भी तो देखें।.... मुंशी अजमेरी जी के आग्रह पर महात्मा गांधी ने चिरगाँव आना स्वीकार कर लिया था। उसके बाद तो फिर तो बापू ने बुन्देलखण्ड की धरती को अपनी चरण रज से अनेक स्थानों को पावन किया।

जब पहले पहल महात्मा गांधी बुन्देलखण्ड पधारे तो उनका एक दिन का पड़ाव झाँसी में हुआ था, वहां से दूसरे दिन चिरगाँव का कार्यक्रम था। पूर्व निर्धारित कार्यक्रम अनुसार चिरगाँव से मुंशी अजमेरी जी को प्रातःकाल ही कार मोटर लेकर बापू को लेने आना था। उनकी कार मोटर बीच में ही खराब हो गई और उन्हें झाँसी पहुँचने में विलम्ब हो गया लेकिन बापू समय के पाबन्द थे, जो समय झाँसी से प्रस्थान का नियत था, घड़ी में वह समय होते ही बापू ने चिरगाँव के लिए पैदल ही प्रस्थान कर दिया था। बापू अपनी चिर परिचित लम्बी डगें बढ़ाते हुए चिरगाँव मार्ग पर कोछा भांवर के तालाब तक ही पहुँच पाये थे कि सामने से कार सहित मुंशी अजमेरी जी ने वहाँ पर बापू की अगुवानी करते हुए विलम्ब के लिए क्षमा याचना की।

चिरगाँव पहुँच कर जो आमसभा में बापू ने प्रभावशाली व्यख्यान दिया कि सभा में ही बापू के सत्याग्रह की लहर दौड़ गई। तन, मन और धन से अपार भीड़ आजादी की इस लड़ाई में बापू का साथ देने ऊँच-नीच की भावना भूलकर हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई एक सूत में उमड़ पड़े। संगठन सुदृढ़ बनाना पहली आवश्यकता थी, उसके लिए धन जुटाने की बापू ने अपील की - सभा की भीड़ में दो लोग एक चादर की झोली फैलाकर निकले तो देखते ही देखते झोली में धन मानो बरसने लगा, जिसके पास जो था वह झोली में डाला जा रहा था। पुरूषों ने रूपया-पैसा अर्पित किया तो महिलाओं ने सोने-चांदी के बहुमूल्य जेवर। इसी क्रम में चिरगाँव निवासी खुदाबक्स की बूढ़ी माँ ने अपने पैर से भारी बजनदार एक पैजना उतार कर झोली में डाल दिया। जब वह झोली घूम कर वापिस बापू के सम्मुख पहुँची तो बापू ने उस एक पैजना को आश्चर्य से देखा कि यह इतना खूबसूरत और जरूरत से भी ज्यादा बजनदार गहने बुन्देलखण्ड की महिलाएँ पहनती हैं। वे बार-बार उस पैजना को घुमा फिरा कर और उसका बजन अनुमानित समझने की कोशिस कर रहे थे। अन्त में बापू उसकी जोड़ का दूसरा पैजना झोली में खोजने लगे और न मिलने पर उन्होंने जोर से उद्घोष करते कहा-''किसी कंजूस बहिन ने अपने पैर का सिर्फएक ही जेवर दिया है।''

बुढ़िया ने जब सुना तो आवेश में आकर उसने दूसरा पैजना भी बापू के सामने जाकर पटक दिया। यह दृश्य देख कर सभी लोग हँस पड़े थे। उसके बाद गांधी जी बुन्देलखण्ड में और कब कहाँ आए? इसका अन्दाजा इसी बात से लगाया जात सकता है कि गांव-गांव में ग्रामीणों के स्वर में गांधी जी से सम्बन्धित बुन्देली में भी उन दिनों लोकगीत सुनाई देते थे, कांग्रेस के संगठन को विस्तार दिया जा रहा था। सदस्य बनने के लिए एक चवन्नी शुल्क लगती थी और लोग दौड़ -दौड़ कर कांग्रेस के सदस्य बनते थे एवं गाते थे -

''एक चवन्नी चांदी की, जै बोलो महात्मा गांधी की।........''

इतना ही नहीं मुझे अपने बाल्यकाल की अच्छी तरह याद है कि किसी घर में शादी-ब्याह होते थे, तो गांधी जी के प्रभाव में महिलाएँ ढोलक बजाकर समूह स्वरों में गाती थीं -

''झंडा तिरंगा लैलो हाथ, हरयाले बन्ना।........''

अब आज 83 वर्ष की आयु में बहुत कुछ विस्मृत होने लगा है। इसलिए उन बुन्देली लोकगीतों का पूरा पाठ नहीं लिख पा रहा हूँ। मुझे याद आता है - जब 30 जनवरी 1948 में महात्मा गांधी की हत्या हुई तो कई दिन की हड़ताल हुई थी और बाजार भी कई दिन बंद रहे थे। मैं किले पर चढ़कर देखता था कि किसी भी घर में चूल्हा नहीं जला, धुआँ निकलता कहीं से भी नहीं दिखाई देता था। वैसी हड़ताल एवं शोक का वातवरण मैंने आज तक नहीं देखा। ग्रामीणों के करूण स्वरों में बुन्देली लोकगीत ही सुनाई देते थे।

''तेंने नाहक जनम विगारो,
नथुआ तैने गाँधी जू खों मारो।..''

वे सब बातें आज सपनों की सी बातें लगती हैं। कोई विश्वास नहीं करेगा कि विश्व-बन्धु महात्मा गांधी हमारे बुन्देलखण्ड में भी अलख जगाने आए थे।

- कुण्डेश्वर (टीकमगढ़) 472005

कवि जड़िया और उनकी शब्दभूमि

– आचार्य डॉ. ब्रजमोहन पाण्डेय 'विनीत'

सन्तों, शहीदों आराधकों, अमर साधकों और वाणी के वरद पुत्रों की प्रसविनी बुन्देलखण्ड की पावन धरती में प्रसूत, रससिद्ध स्व. श्री ब्रजलाल जी वैध के सपूत, रससिद्ध वाणी से अनुस्यूत, संवेदना-सिक्त सहृदयता में अकूत, बुन्देली संस्कृति के अग्रदूत, मानव-मन के जीवन्त चितो, सुकवि श्री अवधकिशोर 'जड़िया' के काव्योत्कर्ष का परिचय मेरे लिए नया नहीं है। मैं लगभग दो दशकों से उनकी काव्य-प्रतिभा का गायक रहा हूँ। यदा कदा काव्य-मंचों में मेरी वह अनुभूति प्रखरता पाती रही हैं। समयान्तराल से उस स्मृति में जो न्यूनता आई थी, उसे मेरे अभिन्न, सुहृद डॉ. सुरेश 'पराग' ने उद्दीप्त किया, इसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं।

मुझे 'स्तुति की शब्दभूमि' के अवलोकन का सौभाग्य मिला, उसे आद्योपान्त पढ़ा। शीर्षक तो विचित्र था ही। पहले तो उसी में उलझ गया। शब्द भूमि, वह भी स्तुतियों की। पूरी पुस्तक पढ़ने पर ही यह गताशी हुआ कि वह कौन-सी और कैसी शब्दभूमि हैं, जो कवि को अभिप्रेत है। प्रस्तुतज कृति का नामकरण अदभुत है, साभिप्राय है और कलात्मक है। सफल शीर्षक वही है जिसे पढ़ने के बाद, पाठक का मन कृति को आद्योपान्त पढ़ने के लिए मचल उठे। इस शीर्षक का वैशिष्टय कुछ ऐसा ही है।

प्रस्तुत शब्दभूमि भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि है। यह शब्दभूमि बुन्देली की बहुदेववादी संस्कृति की आधारभूमि है। यह शब्दभूमि भारतीय उपसना-पद्धति की जीवन्त तस्वीर है। यह शब्दभूमि लोक संस्कृति और उसके आस्थवान् पुजारियों के लिए संजीवनी है। स्तुतियों की इस शब्दभूमि पर गंभीर चिन्तन के बाद एक महत्वपूर्ण तथ्य और भी उभरकर सामने आता है कि डॉ. जड़िया की स्तुति मात्र दिव्यलोकवासी देवी-देवताओं तक ही सीमित नहीं है। वह दिव्यलोक से उतर कर पावन देशभूमि के समतल धरातल पर अवतीर्ण युगपुरूष तुलसी, महावीर, श्रवण कुमार, प्राणनाथ, छत्रसाल ओर भक्त प्रहलाद तक के स्तुति प्रसंगों को भी समाहित कर रही है। सम्पूर्ण भारत के गौरव-गायन में प्रदेश के महत्वपूर्ण स्थल, तीर्थ, नदियाँ तथा वहाँ के कवियों का वंदन इस शब्दभूमि का अपना वैशिष्टय है। कवि के मन में यहां के ऋतुओं और पर्वों के प्रति भी कम आदरभाव नहीं है। पावस, वसन्त, होरी, दिवारी, शरद् आदि के वर्णन भी रोचक हैं। वन्दनीय बुन्देलखण्ड की स्तुति के प्रसंग में वहाँ के दतिया, ओरछा, महोबा, झाँसी जैसे ऐतिहासिक स्थलों का नमन करते हुए, वहां की सरिताओं तक का नमन करना नहीं भूले हैं।

कवि के हृदय में लोक-तत्वों के प्रति भी गहरी आस्था है। लोक-संस्कृति उसका प्रेय है। इसका पुष्ट प्रमाण यही है कि उन्होंने अपने बुन्देलखण्ड के लोकगीतों-फाग, देवारी, देवीगीत, विलवारी, मजरी, रमटेरा, नोरता, कतकारी, सोहर, विरहा, लावनी और आल्हा जैसे गीतों का स्मरण किया है। डॉ0 जड़िया देवी-देवताओं, मातृभूमि तीर्थ, रम्य ऋतु और लोक संस्कृति की गहरी सँकरी वीथियों से गुजरते हुए अन्त में दार्शनिक हो जाते हैं और अन्त में उनकी कविता मोहमाया ओर संसार की इयन्ता का परिचय कराती हुई उपदेश-परक हो जाती है। ''किसने जानी सृष्टि कहानी'' नामक कविता डॉ. जड़िया की पुष्ट रचना है। कवि इस अन्तिम रचना में ब्रह्म की सत्यता और जगत के मिथ्यात्व का प्रतिपादन करते हुए, प्रश्नों की बौछार लगा देता है। कवि के सारे प्रश्न यथार्थ और उनके समाधान भी यथार्थ हैं। कवि ने जन-मानस के अन्तस् में पैठकर जिस तथ्य को उजागर किया है, वह उसके, हमारे, ओर दूर जीवनधारी के लिए मूलमंत्र ही है। कवि ने इस तथ्य का उद्घाटन करते हुए अपने काव्य शिल्प से उन भावों को ऐसे जड़ दिया है कि वे सच्चे अर्थों में 'जड़िया' अभिघान के अधिकारी हो गये हैं। अब हम कतिपय उपदेशपरक पंक्तियों की बानगी दे रहे हैं -

भज ले नमः शिवाय,
जग में नमः शिवाय के सिवाय क्या रखा।।
(किसने जानी-पृ. 104)

गायेगा गुणानुवाद, पायेगा नहीं तो यह
माटी का खिलौना, माटी में ही मिल जायगा।।
(किसने जानी-पृ. 105)

इस धरती औ आसमान में समाया हुआ,
सच पूछिये तो ये बाजार चार दिन का।।
(किसने जानी- पृ. 106)

इस संसार में लोगों की इन्द्रियाँ और उनके व्यापार ही पतन के कारण होते हैं। इस तथ्य को उजागर करने के लिए कवि, रूपक का आश्रय लेते हुए जो कहता है, वह मनन करने योग्य है :-

बाहर खड़े हैं विषयों के हठी मेहमान,
इन्द्रियों के फाटक खुलासा नहीं छोड़ना।।
(किसने जानी- पृ. 109)

लोक-जीवन का सत्य-
मुट्ठी बांधे आया था, पसारे हाथ जायगा। (किसने जानी- पृ. 113)

भाषा-विधान –कवि का भाषा-विधान उत्कृष्ट है। भाषा तो भावों की संगिनी ही है। भाव कविता के प्राण हैं तो भाषा उनका तन है। तन के बिना प्राण कहाँ रहेगा। डॉ. जड़िया की भाषा क्षण-क्षण में अपना परिधान बदलती रहती है। अलंकार उसकी साज-सज्जा में तत्पर रहते हैं। वह अलकृत होकर ही काव्य मंच पर आती है। भाषा का एक नमूना दृष्टव्य हैः -

सदाचार का ही बोलबाला धरती पै रहा,
सदाचार लाये, सदाचार छोड़ जायेंगे।।(किसने जानी- पृ.110)

प्रस्तुत पंक्तियों में सभंग यमक द्वारा अलंकृत भाषा अपना सौन्दर्य बिखेर रही है। यहां जीव सदा (हमेशा) चार (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) तत्वों के साथ जन्म लेता है। सदाचरण छोड़कर चला जाता है। एक भाषा विधान और देखें- या रसना को मिल्यो रसना, फिर काफिर पै कृपा कीजिये वाणी।

(वागीश्वरी- पृ. 004)

कवि कहता है कि इस रसना (जिह्वा)को 'रसना' रस नहीं मिला है। सभंग यमक है। कवि को किसी भाषा से कोई परहेज नहीं है। उर्दू मिश्रित भाषा की वानगी देखें -

व्यर्थ दिवा स्वप्न में भिगोता मूल्यवान क्षण,
होता तो वही है जो मंजूरे खुदा होता है।

(किसने जानी- पृ. 108)

डॉ0 जड़िया के भाषा-विधान में शब्द चित्र उकेरने की अद्भुत कला के दर्शन होते हैं। चार पंक्तियों में एक ग्राम्य नायिका का सजीव चित्र देखने योग्य है, जहाँ भाषा की शब्द चित्रात्मकता का अनूठा निबन्धन है। यथा -

बोझ कौ बाँधि धरयो सिर पै, अरु काँख में दाबि चली चट छौनो।
छैल सों कै गई आतुर आवे को, नैन सों मारि गई कछु टोनो।
चाल चलै कछु बोझ हलै, चमकै हँसिया दुति देने सलोनो।
मानहुँ बद्दल के दल बीच, सों झाँकत दोज मयंक कौ कौनो।।

(ग्रामीण नायिका- पृ. 90)

अलंकार-विधान -

कविता-कामिनी की सजावट में जिनका विशेष योगदान होता है, उन्हें अलंकार कहते हैं। ये अलंकार कविता की सुन्दरता में चार चाँद लगा देते हैं। ''बिनु भूषन न विराजई, कविता वनिता मित्त'' वाला कथन सत्य है। प्रस्तुत छन्द में ग्रामीण नायिका का सजीव चित्रण है। वह खेत में बोझ बाँधकर सिर पर रखती है। अपनी काँख में अपने शिशु को दवा लेती हैं। चलते समय प्रियतम से शीघ्र आने का संकेत करती है। सिर पर बोझ और हाथ में हँसिया की चमक है। बोझ मानों मेघ मण्डल ओर उसके बीच उसका मुख मण्डल द्वितीया के चन्द्रमा की भाँति चमक रहा है। इस प्रकार जड़िया का भाषा विधान सर्वगुण सम्पन्न है।

कतिपय अलंकारों से तो कवि की प्रगाढ़ मैत्री ही है, उनमें अनुप्रास और यमक प्रमुख है। ये अलंकार तो बिना बुलाये ही आते रहते हैं। ''स्तुति की शब्दभूमि '' इसका पुष्ट-प्रमाण है। इसका कोई छन्द ऐसा नहीं है, जहाँ इन की उपस्थिति न हो। अलंकारों की यह चमत्कृति और अयल साध्यता सराहनीय है। इसकी परीक्षा के लिए कुछ नमूने दे रहे हैं -

अनुप्रास -

राजत राजिव लोचन राम, सुवाम विराजति सीय दुलारी।
दीनन को दुख दारिद दारिवे, दीठ दया की ढरै अवढारी।
मंजुल मोदमयी मुसकान, हिये में मयंक-मरीचि प्रसारी।
नाथ अनाथन के जो उन्ही रघुनाथ के हाथ में डोर हमारी।।

(श्रीराम 0- पृ. 07)

प्रस्तुत छंद की प्रत्येक पंक्ति अनुप्रासमय है। यहाँ पर 'र', 'ज', 'द', 'ढ', 'म', 'न', 'थ' आदि वर्णों की असकृत् आवृति सम्पूर्ण छन्द को अलंकृत कर रही है। अनुप्रास ने अन्य किसी अलंकार को फटकने नहीं दिया।

यमक- 'दीपाली वन्दना' के प्रसङ्ग में देखें -

देखो जड़ चेतन के तन हर्ष के तन लिये,हैं और
किसलय गाते किस लय से।

यहां पर 'के तन', 'के तन' और 'किसलय', 'किस लय' में सभंग यमक का चमत्कार है। और देखें -

''या रसना को मिल्यो रस ना'' (वागीश्वरी- पृ. 4)
हीरन की धरती जो धरती है ही रन की (छत्रसाल- पृ. 44)
डारन लागे सो डारन लागे हैं पौन जू अक्षत पत्र सुपीले(पृ. 68)
रोली लिये रस रंग की किंतु, गरीब की आत्मा ही खुद रोली। (गरीब की होली- पृ. 75)

इस प्रकार यमक के शतशः चमृत्कृत छंद हैं, जिनका निदर्शन विस्तारभय से संभव नहीं है। हाँ, डॉ. जड़िया को 'यमक सम्राट' उपाधि से विभूषित किया जा सकता है।

उपमा- बन्दनिवारे नये दल की, सखियाँ सी फिरैं पत्तियाँ पत्तियाँ।
कूक कै कोकिला मानो बधू को सुनावत है रस की बत्तियाँ।।

(वर वसन्त- पृ. 67)

यहाँ वन्दनवार उपमेय और सखियाँ उपमान है। सा6य होने के कारण उपमा अलंकार और कोकिल की कूक में रस की बातें सुनाने की संभवना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार भी है।

रूपक- मानस की मृदु मृत्तिका में, सुकृपा-कल्पद्रुम पोष दो माई।
बुद्धि के भाजन में गुरु ज्ञान कौ मोहिं प्रसाद परोस दो माईं।

(वागीश्वरी- पृ. 3)

प्रस्तुत पंक्तियों में वागीश्वरी देवी से प्रार्थना करते हुए कवि का कथन है कि हे माता मेरे मानस की मृ8िाका में सुकृपा का कल्पद्रुम उगा दो और बुद्धि रूपी भाजन में गुरु ज्ञान का प्रसाद परोस दो। यहाँ पर 'मानस', 'उपमेय', 'मृत्तिका', 'उपमान', 'कृपा', 'उपमेय', 'भाजन', 'उपमान', 'गुरूज्ञान', 'उपमेय', और 'प्रसाद', उपमान है। सांगरूपक की चारूता सराहनीय है।

सन्देह - होंठ खुले हुये हैं खिलकैं
किधौं दाड़िम ये दरकाने लगे हैं।
ये दृग पूतरी हैं या सरोज पै भृंग भले से भुलाने लगें हैं। (पृ. 66)

यहाँ पर नायिका का सौन्दर्य वर्णन है। हँसी में खुले हुए होंठो को देखकर सन्देह होता है कि ये होंठ है या दरकता हुआ अनार-फल है। इसी प्रकार मुख पर काली आँख की पुतलियों में भी कमल पर मंडराते भ्रमर का सन्देह है। अतः सन्देह अलंकार है।

उत्प्रेक्षा - कूक के कोकिला मानो बधू को सुनावत है रस की

वत्तियाँ। (वर-वसन्त- पृ. 67)

यहाँ पर कोकिल के कूकने में (उपमेय) नायिका को सरस बातों को सुनाने (उपमान) की संभवना की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है। इस प्रकार हम देखते है कि डॉ. जड़िया से अलंकारों की मैत्री इतनी प्रगाढ़ हैं कि वे अनाहूत ही उपस्थित होकर अपना चमत्कार दिखाने लगते हैं। शब्द भूमि में अलंकार-विधान बेजोड़ है।

छन्द-विधान - डॉ. जड़िया एक सफल छंदकार हैं। इनका काव्य निबन्धन छन्दों में ही होता हैं। इस अकविता के युग में, पिङ्गल शास्त्र के ज्ञाता दुर्लभ हो रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में छंदों के उज्जीवक डॉ. जड़िया साधुवाद के पात्र हैं। स्तुति की शब्दभूमि नामक कृति तो छन्दों का अजायबघर ही है। इस कृति में छंदों के विविध प्रयोग दृष्टिगत होते हैं। इन विविध प्रयोगों से डॉ. जड़िया के छान्दस् ज्ञान का अनुमान लगाया जा सकता है। छन्दों में 'मनहर' और 'रूप घनाक्षरी' तथा सवैयों में 'मदिरा' और 'मत्तगयन्द' सवैया का बाहुल्य है। घनाक्षरी और सवैया तो कवि के वशवर्ती छन्द है।

इस कृति में एक ऐसे छन्द का विधान है जो अति विलक्षण, प्रवाहपूर्ण ओर मनोरम है। संयोग से उस छंद का नाम भी ' मनोरम' ही है। यह एक 14 मात्राओं का मात्रिक छंद है। 'काव्यस्तुति' शीर्षक कविता इसी 'मनोरम' छंद में निबद्ध है। यह छंद भावों के साथ घावन करता हुआ प्रतीत होता है। इस छंद में एक गति,लय और भाव-संप्रषण की अद्‌भुत क्षमता है। यह डॉ. जड़िया के छान्दस् ज्ञान की प्रौढ़ता का एक नमूना है।

इसी प्रकार ''त्रिभंगी सावन'' और ''त्रिभंगी वसन्त'' शीर्षक की दो कविताओं के शीर्षक भी विलक्षण हैं। आपाततः तीन भंगिमा वाले सावन और वसन्त का अर्थबोध होता है, जबकि उसका अभिप्राय कुछ और ही है। ये दोनों रचनाएं 'त्रिभंगी' नामक छंद में निबद्ध हैं। यह छंद अति प्राचीन ओर लुप्तप्राय है। यह बत्तीस मात्राओं का एक मात्रिक छंद है। कवि ने 'चौकड़ियाँ' और 'वासन्ती गीत' में लोक साहित्य की संगीतात्मकता का परिचय देने का स्तुल्य प्रयास किया है। संक्षेप में यही कहना पर्याप्त होगा कि डॉ0 जड़िया की कृति, उनके प्रौढ़ छान्दस् ज्ञान का पुष्ट प्रमाण है। वर्तमान युग में ऐसे छंदकार दुर्लभ हैं।

रस-विधान - कविता में रस की प्राणवत्ता निर्विवाद है। प्रसिद्ध काव्य शास्त्री आचार्य विश्वनाथ ने काव्य के स्वरूप-निरूपण में ''वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'' कहकर रस की अनिवार्यता को सिद्ध कर दिया है। डॉ. जड़िया की कृति को परखने के बाद यह कहा जा सकता है कि यह एक सरस काव्य कृति है। यथा नाम तथा गुण वाली यह कृति मूलतः देवादिविषयिणी रति से संसिक्त है। इसमें भक्ति रस का प्राधान्य है। कृति में श्री गणेश, श्री राम-कृष्ण, राधा, वाग्देवी, हनुमान् जी आदि दिव्य शक्तियों के प्रति प्रणत भाव का समर्पण प्रधान है। कवि ने देवी-देवों के अतिरिक्त देशभूमि, बुन्देलखण्ड, ओरछा तथा तीर्थस्थल, नदी-नद, ग्रह, पर्व और ऋतुओं का भी स्मरण किया है। इससे सुस्पष्ट है कि भक्तिरस की प्रधानता होने के अतिरिक्त अन्य रसों को भी यथोचित अवसर प्रदान किया गया है। उदाहरणार्थ 'रति प्रीतिका नायिका कविता को भक्ति रस से क्या लेना देना है, वह तो रसराज का अधिकार क्षेत्र है। अस्तु 'स्तुति की शब्दभूमि'नामक कृति में रसों की अवस्थितिका निरीक्षण परीक्षण करके रसों की कुछ बानगी देने का प्रयास कर रहे है।

प्रस्तुत काव्य कृति तो भक्ति का सागर है। इसका प्रारम्भ गणेश स्तुति से होता है और यह भक्तिधारा ग्यारह स्तुतियों तक प्रवहमान रहती है। यहाँ तक तो भक्तिरस ने किसी रस को फटकने नहीं दिया पर इसके बाद अन्य रस भी घात लगाकर अपना चमत्कार दिखाने से नहीं चूके हैं। कृति के अंत में भक्ति का आत्मीय 'शान्त रस' उपस्थित हुआ हैं क्योंकि भक्ति का पर्यवसान विरति में होना सत्य है। देवादि रति का अंतिम पड़ाव निर्वेद ही है।

सर्वप्रथम भक्तिरस का एक नमूना दृष्टव्य है -

अब दीठ चाहती, विहार करे रोज रोज,
सीताराम जू के गोरे साँवरे वरन में।
राम नाम की ललाम ध्वनि अविराम विना,
काम सुबह शाम गूँजती रहे करन में।

(श्रीराम- पृ. 7)

यहाँ पर आश्रय रामभक्त, आलम्वन विभाव श्रीराम, उनका गोरा, साँवरा, वदन उद्दीपन हैं। श्री रामविषयिणी रति भक्ति रस की सृष्टि कर रही है।

श्रृंगार रस - प्रस्तुत कृति भक्तिरस प्रधान है परंतु स्तुतियों के अतिरिक्त अनेक लौकिक प्रसंगों से सन्दर्भित शीर्षक भी हैं, जहाँ श्रृंगार, रौद्र, वीर और शांत आदि रस भी यथावसर दृष्टिगत होते हैं। रसराज श्रृंगार का एक उद्धरण निम्नवत हैं-

गोरी ने पारो चँगेर में चेनुआँ, बैठ गई उत आम की छैंयाँ।
छैल ने रोक दये हल बैल, औ गेल पसेउ गिरै भुइँ मैयाँ।
बालम को लखि के मुसक्यात, उतै झट दौरत अवत सैंयां।
सो श्रम वक्ष पै आतुर हवै, झट प्रीति ने डार दई गलबैंयां।।

(ग्रामीण नायिका- पृ. 89)

प्रस्तुत छंद में ग्रामीण नायिका का वर्णन है। यहाँ पर नायक-नायिका (गोरी और छैल) आलम्बन हैं। नायिका का प्रेमपूर्वक देखना और नायक का मुस्कराना आदि क्रियाएँ उद्दीपन विभाव हैं और आतुरता तथा गले लगाना आदि अनुभाव हैं। यहाँ रति से पुष्ट संभोग श्रृंगार रस है।

वीर रस -

कोमल पान में थाम कृपान, अनेक अनेक निपान किये हैं।
कोटिन क्रूर फिरंगिन के अरमान, मसान समान किये हैं।
चण्डिका को बलिदान दिये, यमलोक कौ थोक लदान दिये हैं।

अंत में भारत मेदनी पै, न्यौछावर लक्ष्मी प्रान किये हैं।

(लक्ष्मीबाई- पृ. 39)

यहाँ पर महारानी लक्ष्मीबाई के वीरता-प्रसंग का वर्णन है। फिरंगी आलम्बन विभाव, उनकी क्रूरता उद्दीपन विभाव, रानी का कर में कृपाण धारण करना अनुभाव है। उत्साह नामक स्थायी भाव से पुष्ट वीर रस है।

रौद्र रस – अधिक रिसाय भ्रूहि बंक सी बनाय बोल्यो,
आज निज पूरन प्रताप प्रगटाइहौं।
करि कै उपाय रामजस विनसाय जग,
बीच निज नाम की पताका फहराइहौं।
आज प्रहलाद कौ प्रमाद कर चूर चूर,
गिरि ते गिराय धरा धूर में मिलाइहौं।
देखत हौं कौन रिपु याहि को बचावत है,
ताहि को अवश्य वश्य करि सुख पाइहौं।

(प्रहलाद-पचीसा- पृ. 100)

प्रस्तुत छंद में हिरण्यकशिपु का प्रहलाद के प्रति कथन है। यहां पर प्रहलाद आलम्बन, पिता की आज्ञा का उल्लंघन उद्दीवन और पिता हिरण्यकशिपु की गर्वोक्तियाँ अनुभाव हैं। 'क्रोध' नामक स्थायीभाव विभाव, अनुभाव के सहयोग से रौद्ररस की पुष्टि कर रहा है।

वात्सल्य रस – कवि ने अन्य रसों के परिपाक के साथ वात्सल्य रस की मेहमानी में चूक नहीं की है। वात्सल्य का एक जीवन्त नमूना 'प्रहलाद पचीसा' में दृष्टिगत होता है, वह निम्नवत हैं-

पलना परे हैं लोने ललना नरेश जू के,
कबहुँ सुहाथन के पलना में डोलते।
तेज कौ सुरूप रूप कंज अनुरूप दिपै,
रानी और भूप के हिये में रस घोलते।
पंजन चलावै कर कंजन चलावै नेकु,
लेत किलकारी हँसमुख मुख खोलते।
याही किलकारी बीच लागत 'किशोर' मानो,
नारायण नाम को अमोल बोल बोलते।।

(प्रहलाद-पचीसा - पृ. 95)

प्रस्तुत इस मोहक छंद में प्रहलाद शिशु के प्रति माता-पिता के ऊपत्य-स्नेह का रोचक वर्णन है। यहाँ पर आश्रय प्रहलाद के माता-पिता हैं। आलम्बन विभाव शिशु प्रहलाद हैं। बालक का पलने में डोलना, हाथ-पैर चलाना, किलकारी मारना आदि चेष्टाएँ उद्दीपन विभाव हैं। राजा ओर रानी का हाथों में झुलाना, उनका हर्षित होना आदि अनुभाव हैं। यहाँ वात्सल्य रस का पुष्ट परिपाक है।

शान्त रस – स्तुतियों की शब्दभूमि का शुभारम्भ भक्तिरस से हुआ है। भक्तिरस के अतिरिक्त अन्य रसों का अवगाहन करते हुए, इस कृति की इति शान्तरस से होती है। रति का अन्तिम सोपान निर्वेद (विरति) ही है। ''किसने जानी सृष्टि कहानी'' नामक कविता शान्त रस की प्रतिनिधि रचना है। संसार की असारता और जीवन की क्षणभंगुरता के चित्रण में कवि को भरपूर सफलता मिली है। कविता का एक एक बन्ध शांत रस का सजीव चित्रण करता है। इस जग की आसरता शाश्वत सत्य है, इसकी बानगी कवि के शब्दों में देखने लायक है-

अभी जो चमकदार दीखतीं दुकाने दिव्य,
शाम होते होते सारी हाट उठ जायेगी।

(किसने जानी - पृ. 107)

कवि ने इन्द्रिय निग्रह की चेतावनी देते हुए जो कहा है, वह कितना सटीक है -

बाहर खड़े हैं विषयों के हठी मेंहमान,
इन्द्रियों के फाटक खुलासा नहीं छोड़ना।

(वही - पृ. 109)

कोई भी साधन देवविषयिणी रति के सोपान पर चढ़कर ही साध्य तक पहुँच सकता है। अतः भक्ति की अनिवार्यता पर कवि का कथन दृष्टव्य है-

गायगा गुणानुवाद पायगा नहीं तो यह,
माटी का खिलौना माटी में ही मिल जायगा।

(वही - पृ. 105)

इन पंक्तियों में शांत रस चरम उत्कर्ष पर है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कबि जड़िया की ''स्तुति की शब्दभूमि'' का क्षेत्र व्यापक हैं। उसका क्षेत्र देवी-देवताओं से लेकर, देशभूमि, धरती, तीर्थ, नदी नद, वन और महापुरुषों तथा कवियों तक होता चला गया है। वह भारतीय संस्कृति, लोकतत्व और लोकसंवेदना का गायक है। उसकी दृष्टि ग्रामांचल तक जाती है, उसे बैलों के गले में बँधी घण्टियाँ सुनाई पड़ती हैं। इतना ही नहीं प्रातः चार बजे चकियों की घरघराहट का स्वर भी सुनाई पड़ता है। कवि ने ग्रामीण नायिका को समीप से देखा है। चीकने हाथों से, चीकने गोबर से लीपती हुई नायिका की थपकियों से कँगनों की खनक भी उसे सुनाई पड़ती है। वह लोकतत्व को उजागर करने वाले, विरहा, सोहर, रमटेरा, नोरता, लावनी जैसे लोकगीतों की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा भी करता है। यह कृति लोकतत्व और भारतीय संस्कृति की अनुपम धरोहर है।

अंत में तो इतना ही कहना है कि यह कृति आज के सांस्कृतिक क्षरण वाले रूग्ण भारतीय समाज के लिए एक संजीवनी है। वर्तमान अकविता के युग में पिंगल शास्त्र की परम्परा को पुनः उज्जीवित करने का सत्प्रयास है।

- विनीत सदन, खागा (मु0 गदाई) जनपद -फतेहपुर (उ.प्र.)

मो. - 7755839652

ऐतिहासिक बुन्देली लघु नाटिका

रैंन की पुतरिया

-स्वामी प्रसाद श्रीवास्तव

पात्र परिचय

1.	राजा इन्द्रजीत सिंह	- ओरछा के राजप्रभारी (कछऊआ के जागीरदार)
2.	महाकवि केशवदास	- राजकवि
3.	राय प्रवीण	- राजनर्तकी-मुख्य नायिका
4.	नवरंग राय	- राजनर्तकी
5.	दूल्हाराय	- सामंत
6.	अकबर	- आगरे का मुगल बादशाह
7.	नामत खां	- शाही दरबार का वीणा वादक
8.	वीरवल	- अकबर के शाही दरवार के मंत्री
9.	टोडरमल	- अकवर के शाही दरवार के मंत्री
10.	खिजिर खॅा	- अकवर का सैनापति
11.	नकीव	
12.	चौवदार	

दृश्य-प्रथम

(महाकवि केशव की ड्योढ़ी-महाराज इन्द्रजीत सिंह का प्रवेश बगल से झुककर जुंहार करती हुई-सावित्री का बाहर निकलना)

इन्द्रजीत सिंह - का हो रओ महाकवि ?

केशवदास - (चौंककर) अरे महाराज ! अबाई होय जू।

इन्द्रजीत सिंह- हमाई बगल से कनाव काटकैं, सरमॉउत औ मुस्क्यात कड़ गई जा बिटिया को आये-ऐसौ लगत जैसे मैंने पैलें कऊ देखो होय ई खौ।

केशवदास - महाराज जा........(बात करते हुए)

इन्द्रजीत सिंह - अरे हां ध्यान आगऔ, जब मैं जागीर कछऊआ की गढ़ी सै शिकार खेलवे ऐंगर के गांव बरदुआ के जंगल में जारओ तौ, गांव में होके निकरो। उतै एक लुहार दतुआ-पांसै बना रओ तो-औ जा बिटियां खलाते धौंक रई ती, भौतई खूबसूरत है, मैने लुहार सै नाव पूंछो तौ ऊनै माधव बताओ तौ औ दूसरी बेर सावन तीज के मेला में बाप-बिटिया खो देखो लगत जा ओई की मोड़ी आय-हमने तबई अपुन सैं चर्चा करी तीं।

केशवदास- (मुस्कराते हुये) चीन लओ अपुन ने-अरे हम तौ जबई बरदुआ जाकै सब भेद-भाव लियायते-ई कौ बाप माधौ औ मताई को नाव सत्या हैं। बाप लोय को काम करत और मताई सत्या नचनारी कैलो चाय पतुरिया, है। बड़े महाराज रामशाह जू देव के दरवार में औ सावन तीज, संक्रान्त, होरी, औ भौत से तीज-त्योहारन पै नाचवे आउत रई-भौतई अच्छी नाचवे वारी ओ सब राग-रागनी-इन की जानकार है।

इन्द्रजीत सिंह- जा तौ बताव-कविराज-अपुन खौ इत्तो सब पतो करबै की का परीती ?

केशवदास- राजन-हम और अपुन बालसखा हैं- नस-नस जानत हो अपुन की।

इन्द्रजीत सिंह- जा कैसी कई अपुन ने कवि।

केशवदास- देखो-कवियन की नजर इत्ती पैनी होत कै सांमू ढाड़े आदमी के अन्दर के भाव तनक में ताड़ लेत-वा कानात तौ सुनी हुए जू कै- ''जहां न पौचे रवि-वहां पौचे कवि'' ''हम उदनई ताड़ गये ते-जब कछऊआ सैं लौट कै ई विटिया की सुन्दरता पै अपुन कौ दिल मचल के कुलांटैं खा रओ तों।

इन्द्रजीत सिंह- (सहम कर मुस्कराते हुए) तौ फिर अब जा तौ बताओ, इतै कैसी औ कामखो आई ?

केशवदास- हमने ई की मताई-बाप खौ समजाओं के ई खौ औड़छे में राखो-बैसें तो वा नाच, गाना, वीणा वादन में आकाश की ऊँचाई तक पौंच गई है-मताई ने सिखा दओ जो सब अब जो कछु कसर रैगई हुईये वा इतै पूरी होजे।

इन्द्रजीत सिंह- इतै किते रात-और अपुन नौ कायखॉ आउत-का ई की सुन्दरता देख फिर से''नखशिख'' लिखैं को विचार है।

केशवदास- नई जू-''नखशिख'' तौ पैलई पूरी कर लई। जा-तौ-मौ-लौ-कविता-करवो सीकवे आउत-कविता सुनवे-लिखवे को भौत सौंक है, ई-खॉ। जा व्यासपुरा में अपनी मताई के संगे रात।

इन्द्रजीत सिंह- अरे जो तौ बड़े अचरज की बात है, नाचवे वारी ओ कविता ?

केशवदास- हां जू ! गुनन की खदान है जा बिटिया कविता की कला कायखौं छूट जाये।

इन्द्रजीत सिंह- कवि, पै सब गुनन सै ऊपर है ई की खूबसूरती-एक कवि की कछु लेने याद आ गई मोहां-सुनाऐ का।

केशवदास- सुनाओ महाराज।

इन्द्रजीत सिंह- हिरनी सै कजरारे नैना, और चांदसी मुईयां गोरे गोल कपोल, हंसतमें पर जावै गड़कुईयां, नागिन सी चुटिया, कांधे सैं छाती ऊपर लटकै, जो देखे देखत रै जावै, ओई में मन अटकै, लफलफदूंनर होय हंसै, नैनन सै सेन चलावे, रूप अनूप देख के ई को, कामदेव ललचावे।

केशवदास- (ठहाका मार कर हंसते हुए) वा रावराजा-भौतई नोनी-सिंगार रस सैं भरी-ई बिटिया पै पूरी तरा उतर रई।

इन्द्रजीत सिंह- आचार्य-अरे, जब सिंगार करकै आहे-चतुर-सियानी गोरी- तब छैलन खां छिगुरिन

नाच न-चाहे-मानौ न मानौ कविराज जा ''रैंन की पुतरिया'' हैं ''रैंन की पुतरिया''

केशवदास- समज गये महाराज-अच्छी तरा सैं समझ में आ गई, अपसरा बन कै बैठ गई अपुन की आंखन में। तौ अब का देर है महाराज-ई खॉ राजदरवार में अपनी कला दिखावे को मौका मिलो चईए कै नई।

इन्द्रजीत सिंह- अवश्य-जा तौ हमई सोच रये ते। ऐसौ करो-हम कल्लई राज दरवार में नर्तकियन की प्रतियोगिता कराउत-अपुन ई विटिया खौ संगे लिवा के पधारियो-जा भी शामिल हो जै है।

केशवदास- हमाई चेली है राजन होड़ लगी, तौ जा सबसै आँगू कड़ जैहे फिर राजनर्तकी तौ बनई जैहे।

इन्द्रजीत सिंह- नई कवि राजनर्तकी नई, प्रधान राजनर्तकी बना-हैं, हम नई, सबई सामंत, राजदरवारी मिलकैं फैसला करहें-अरे दांम चौखे तौ परखईया खौ को दोष दे है।

केशवदास- भौत अच्छो सोचो अपुन नै-जय हो।

इन्द्रजीत सिंह- अब हम चलत हैं महलन खों । हओ जू-अपुन ड्योड़ी पै पधारे सो जा धन्य हो गई, राजन।

इन्द्रजीत सिंह- ये लौ-जा कोनऊ कैवे की आय-हम तो बाल सखा आये।

केशवदास- जय हो रामराजा सरकार की श्रीमंत। ....(परदा गिरता है)

दृश्य द्वितीय

(स्थान-राज दरबार, मंत्रियों-सामंतों में बातचीत का मिश्रित कोलाहल-महाराज इन्द्रजीत सिंह का प्रवेश)

चौवदार - सावधान-ओरछाधीश महाराज इन्द्रजीत सिंह जूदेव-राजदरबार में पधार रहे हैं।

इन्द्रजीत सिंह- (सिंहासन पर आरूढ़ होते हुए-सभासदों का अभिवादन स्वीकार करते हुए)

आज सब नर्तकीं एक संगे नई नाच-हैं। हर नर्तकी अलग-अलग नाचे-जो जित्ती कलाऐं जानती होंय-नाच-गायन-वादन-में सो दरबार में दिखायें, कटाछनी हो जाये। हमने आज प्रमुख राजनर्तकी को चुनाव करबै की सोची है-दरबार सबको हुनर देख कैं, सबकी सला-मशवरा सैं जो ई प्रतियोगिता में आगे कड़ जेहे ओई खौं प्रधान नर्तकी बनाओं जै-है-बताओं अपुन सब को का बिचार है।

सम्मिलित स्वर- हओ जू महाराज-सई है- हमें मंजूर है।

इन्द्रजीत सिंह- सबसैं पेले नवरंग राय, फिर विचित्र-नयना, ऊ के पांछू तानतरंग फिर रंगमूर्ति अपने-अपने हुनर दिखायें।

(शास्त्रीय संगीत की विविध विधाओं के स्वरों के साथ क्रमशः नृत्यंगनाओं का नृत्य-गायन-वादन-सबकोयथोचित पुरस्कारोंका वितरण)

इन्द्रजीत सिंह- चौबदार गोपाल-ओरछा के कुल भूषण महाराज रामशाह के दरवार की नर्तकी सत्या की बिटिया-व्यासपुरा सै आई है का-ऊ खौ पेश करो-सुनो है कै बा नाच-गाना औ वींणा बजावे में भौतई माहिर है-ऊ की सोई परीक्षा हो जाये-बड़ी बड़वाई सुनी हमने।

चौवदार गोपाल- जो आज्ञा महराज-आई है वा-आओ बिटिया-दिखाओं अपने हुनर।(सावित्री का दरबार में प्रवेश-राजा और सभासदों को अभिवादन कर)

सावित्री - गायन के साथ नृत्य की प्रस्तुति-वाद्ययंत्रों के स्वरों की गूंज (राग आशावरी (मूल ताल) में)

मोहनी करत मोहन सों बात।
कोमल मधुर मनोहर धुनि सुनि, पिय के स्रवन सिरात
नैनन नैन मिलत सैननि दै, मंद-मंद मुसिक्यात
जनु खंजन खेलत प्रतिबिंबनि, जल में चंचल गात
रसना एक अनेक रूप गुन, बरनत कवि अकुलात
कोटिक 'व्यास' करत हूॅ बुधि बल, सखा सिंधु न मात

इन्द्रजीत सिंह- वा-भई-वा-कमाल को नाच-तुमाये हाव-भावन ने तौ गजबई ढा दओ ई महफिल में-लगो जैसें कोनऊँ आकाश की परी हवा में उड़ रई होय। सब नर्तकियन ने अपने-अपने कौशल दिखाये पै तुमाये-नाच-कोमल सै सुर ने मोरे मन में एक अजीब सी हलचल मचा दई। लगत जैसे नृत्य की देवी हो तुम-तुमायें पांव की धुंधुरियन की छनक कानन मे अबै लौ गूंज रई। वीणा के तार जब तुमने झनकारे हिंडोरना झूलें नबल किशोर तौ लगो जैसैं भगवान कृष्ण सां मू पलना में झूल रहे हों। सबरे सभासद् झूम रये ते औ मैं तो ऊँगन लगो तो।

अब हम जो गीत तुमाये मौ सैं-सुरीली आबाज में और सुनो चाहत-सो सुनाव-बैसे रामराजा सरकार के मंदिर में औ कृष्ण जू को महलन में झूला घलोई है- अबै सावनतीज को उत्सव तौ चलई रओ है।

रायप्रवीण - जो आज्ञा महाराज(पुनः वाद्ययंत्रों के स्वरों के साथ गायन प्रारंभ राग कल्याण)

हिंडोरना झूलत नवल किशोर
बरषत मेह हरयारी सावन, जॅह-तॅह नाचत मोर
दामिनि दुरति, भामिनि छबि निरखत, चंचल अंचल छोर
डोलत बग, बोलत पिक चातक, सुनत मंद घन धोर
हिंय सों पियहिं लगाइ, मचायौ अबला जोबन जोर
सीकत श्याम गिरत तें उबरै, कर गहि उरज कठोर

पट-भूषन लट उरझि न छूटति, बाढ़ी प्रीति न थोर
कच गहि चुंबन करि मुख देखत, सुख सागर झकझोर
गावत नांचत सखी झुलावति, गति उपजत चित चोर
राख्यो रंग 'व्यास' की स्वामिनि, रति-रस-सिन्धु हिलोर
हिंडोरना झूलत नवल किशोर

सावित्री - (दाहने हाथ से शुक्रिया अदा करती हुई) महाराज की जै हों।

इन्द्रजीत सिंह- अरे हॉ! कलाओं की देवी-अपुनो नाव तो बताओं हमें।

सावित्री - दासी को नाव सावित्री है सरकार। प्यार से पुनियां कें-कें बुलाउत-दद्दा-बाई।

इन्द्रजीत सिंह- सावित्री औ पुनियां जो तो भई भौत पुराने नाव है। राज दरबार में अच्छो न लगहे। देखो तुम सबई हुनरन में प्रवीन हो-ई सैं हम तुमाओ नाव प्रवीण रखत है औ दरवार की प्रधान नर्तकी को पद देत हैं तुम्हें। (सभासदों की ओर हाथ का इशारा करते हुए) बोलो अपुन सब जनन खौ मन्जूर है हमाओ फैसला ?

सभासद्- (संबेत स्वर में) मौत सई फैसला है महाराज-जय हो।

इन्द्रजीत सिंह- (सावित्री की ओर देखते हुए) काय सावित्री जा तो बताओं, राय-प्रवीण नाव तुमें अच्छो लगो कै नई ?

रायप्रवीण- अच्छो काम न लगहे महाराज-मोय तो बड़ौ भाग जो अपुन ने तुच्छ नाचवे वारी की बिटिया-एक दासी खों इतनो सम्मान दओ-मैं तो धन्य हो गई महाराज।

इन्द्रजीत सिंह- राय प्रवीण! तुम दासी नई अब राजदरबार की शान हो-लो अपनी इनाम (मोतियन को हार भेंट करते हुए(मुस्कराकर) अब सज-घज कें-जो हार गरे में पैर कै आबू करे दरबार में।

राय प्रवीण- (झुक-झुक कर-भुजरा करती हुई) जय हो मालिक (प्रस्थान) (यवनिका का गिरना)

दृश्य-तृतीय

(स्थान-राजनर्तकी नवरंग राय का कोठा-सावंत दूल्हाराय का प्रवेश रूठने का नाटक करती हुई नवरंगराय)

दूल्हाराय - नवरंग-प्यारी जान-काय भकुरीं सी घूंटन में मूढ़दये बैठी ? बताओं का बात है हमसैं का गल्ती हो गई-जो तुम रिसा गई-मोई नोनी दुलैया जू-बोलो तौ कछु।

नवरंगराय- (शिर थोड़ा सा उठा-रोने का नाटक करती हुई)मैं सै न बोलो, अपुन खौ का-मरौ चाय जियौं (मटक-मटक और सिसकी लेकर)अपुन की कौ लगत मैं ?

दूल्हाराम- जा कैसी कई तुमने-अरे तुम तो प्रानन सैं प्यारी हो-जान हो हमाई-पै बताओं तौ का होगओ ऐसो-जो तुम अनमनी होंके रोबै बैठ गई।

नवरंगराय- मोय भाग में तौ रौबोऊ लिखौ-सो रो रई। अपुन की आंखन के सांमू ऊ काल की छुकड़िया खो दरबार की प्रधान राजनर्तकी बना दओ गओ औ मोहां जी की सब बड़बाई करतते, छुछ्या दओ-राजा की हां में हां अपुन नै मिला दई। अब कायखो मौ लौ लुडू-लुडू करत आ गये कुंवर साव-मोय अपने हाल पै छोड़ दो। पुटयाये- मान मनअल सैं कछु नई होने।

दूल्हाराय- बस्य-इत्ती सी बात पै रिसा गई तुम! सुनो-ई चांद सी मुईयां सै चिन्ता की लकीरें मिटाकै-मदभरी अखियां और मुस्क्यात लाल-लाल ओंठन से हमाये तांई तौ हेरो।

नवरंगराग- मौं तो दिखावे जोग नई रव-अब कौ पूछ्हे कुंवर साव मोहां।

दूल्हाराग- (हाथ पकड़ कर आलिंगन की चेष्टा करते हुए) तुम नायखौं तो आब-हमाये ऐंगर-सुनो-चिन्ता छोड़ो, इत्ते दिन हो गये-तुमने अबैलौ दूल्हाराय खो नई जान पाव नवरंग। वा छछुंदर कौनऊ दीन की न रै है-तुमाये पांवन की घूरा चाटहे एक दिना-तुम तनक धीरज तौ धरौ, प्रधान राजनर्तकी बनवा कै रेहौ-अबै राजा के मन की हो गई-अब हमाये मन की हुए।

नवरंगराय- (उठकर)निराटई झूटी बातें-मोंहां अपुन पै तनकऊ विस्वास नई रओ कुंवर साव। आंखन के सांमू राजा ने फैसला करो और अपुन देखत रये-हांत उठाकें हां मैं हां मिला दई-मोहा भरमाव न-सब जानत हों, अब कछू नई होने।

दुल्हाराय- नवरंग! हमाओं नाव दुल्हाराय है-जो कछू सोचत वो करकें दिखउत-इत्तों विस्वास तौ करोई चईइये हम पै। सतरंग की ऐसी चाल चलहो कै ''सांप मरै ना लाठी टूटे''। वा प्रधान नर्तकी तौ का-ओड़छे में कऊं दिखै तक ना-विस्वास करो, जो बचन है हमाओ-तुम नई जानती हमाई चालन खों।

नवरंगराय- (मुस्करा कर दुल्हाराय से लिपटती हुई) वो दिन जब आहे कुंवरजू चन्दा-सूरज सै आरती करहों अपुन की।

दूल्हाराय- वो दिना आहे-मोई जान-अवस्यई आहे। तुम चिन्ता छोड़ो-हमाई जिम्मेवारी है करकै दिखाहे तुमें।

नवरंगराय- अपुनई कौ तौ सहारो है और को है मोव ई नगरी में। (दूल्हाराय का प्रस्थान) परदा गिरना

दृश्य-चतुर्थ

(स्थान-राजमहल का प्रतीक्षालय-उपस्थित सांमंतो-राजघराने

और पुरजनों की भीड़ का शोर)

दूल्हाराय- कविवर! काय नवरंगराय के वींणा बजाये सैं महाराज सोये कै नई?

केशवदास- नई कुंवरसाव! नवरंग तौ का, राज कीं जित्तीं कलाकार हैं, कौनऊं नई सुवा पाई अपने संगीत सैं

दूल्हाराय- तौ फिर राज वैद खॉ बुलाओ जाये, वे कछु उपाय कर है।

केशवदास- राजवेद नै तो पैलई हांत खड़े कर दये-वै कै रये ते-दवाई सैं कछु नई होने महाराज की अनिद्रा संगीतई सै दूर हू है।

दूल्हाराय- तौ फिर का करौ जाये ? जब सबसै हुशियार नवरंगराय नई सुवा पाई तौ अब बाहर सैं कौनऊं कलाकार बुलाओं जाये।

केशवदास- नई कुंवर साव! अबै प्रवीणराय तौ है-मो हां पूरौ भरोसो है कै प्रवीण की वींणा की झंकार सैं महाराज अवशई गैरी नींद के आगोश में समां जै है ऊ खो तलब करौ जाये।

दूल्हाराय- (उत्तेजित स्वर में) बस-प्रवीणराय राय प्रवीण। अरे ऊ नई छुकड़िया खॉ पक्षपात सै प्रधान नर्तकी बना दओ गओ-ई कौ मतलब जौ तौ नई कै ऊये महान संगीतकार तानसेन मान लयौ जाये।

केशवदास- हांथ कंगन खो आरसी का -कुंवर साव! ओ ई खॉ अजमालओ जाये हम ऊ खो महाराज की सेज के ऐंगर बिठा कै आये ते। बो देखो सांमू सैं महलन को चौवदार आ रओ-देखों का खबर ल्यावो।

चौवदार- बड़ी खुशी की बात है कविराज-महाराज सो गये।

केशवदास- कैसे ?

चौवदार- रायप्रवीण की वींणा की झंकारन सै ऊंगे-फिर सो गये औ सोई रये अबै लो।

केशवदास- भौत अच्छी खवर-चौवदार-(दूल्हाराय की ओर देख कर) कओ जू कुंवर साव-हमाओ अंदाज सई हतौ कै नई ?

दूल्हाराय- (उदास से मन से) हूँ..... हूँ चलो अच्छो है अब हमऊं सोयें-चलो-चलें।

(सबका प्रस्तान-भवनिका का गिरना)

दृश्य-पंचम

(स्थान-महाराज का शयन कक्ष-पलंग पर राजा सोने का प्रयास करते हुए पास में बैठी रायप्रवीण -वींणा के गूंजते स्वर-धीरे-धीरे लुप्त होना, राजा का अंगड़ाई लेकर उठ कर बैठना)

इन्द्रजीत सिंह- ओह प्रवीण-आज नींद नई आ रई।

रायप्रवीण- क्षमा करै महाराज-मैंने जानी अपुन सो गये-ई सै वींणा वन्द कर दई। मैं फिर छेड़त हों वीणा के तारन खो-अपुन विसराम करौ-औ बजाउत रै हों जबलौ अपुन सो न जेहो।

इन्द्रजीत सिंह- नई प्रवीण-अब न बजाओ-हम बताऐं-हमाये दिमाग पै एक बुझवा है जब तक ऊ खौ न उतार दे हो, मोहां नींद आवेवारी नईयां-ई बोझा खां अब और नई ढो सकत-भौत कोशिश करी कै काऊ सै न कये जा बात पै मन औ आत्मा की आबाज खौ कबतक दवाये रयें सुनाये बिना जो बोझा हल्को न हुये।

रायप्रवीण - ऐसो काय को औ कैसो बोझ है अपुन के मन में महराज बताओं मोसें कछु मदद हो सकै तो हाजिर हो।

इन्द्रजीत सिंह- ऐसी आशा हती हमें कै तुम हमाई बात जरूर सुनहो-औ ऊ को उपाय करहो न टार हो न निरादर कर हो।

रायप्रवीण - निरादर तो सपने में नई कर सकत-जा कैसी कई अपुन ने। दासी को तन-मन और जीवन, जो कऊं समस्या को निवारन कर सके तो हाजिर है सरकार।

इन्द्रजीत सिंह- बात जा है प्रवीण-मोहां प्यार हो गओ तुमसैं-जब सै तुमै देखो-तुम दिल में समा गई हो-तब सैं जो बोझा न उठाव उठत-न सौउन देत, न खान देत सो बता दओ तुमें-बोलो मंजूर है कै नई।

रायप्रवीण - ई मैं का बुराई है-मोओ बड़ो भाग-अपुन को प्यार ई दासी खो मिलौ

इन्द्रजीत सिंह- भाग तौ हमाओ आय उदय भओ-जो तुमने हमाये प्रेम प्रस्ताव खौ मंजूरी दे दई। रायप्रवीण मोई का हैसियत महराज जो तौ अपुन को बड़प्पन आय-एक नाचवे वारी खॉ इतनो सम्मान-जय हो सरकार। धन्य है मालिक अपुन।

इन्द्रजीत सिंह- देखो प्रवीण तुम जो हो सो हो, हमाये मानस में तुम देवी हो, दिल की धडकन बन गई हो तुम। तुमाये बिना छिन भर नई रै सकत। तुम हमाई हो, हमाई हो कै रैहो।

रायप्रवीण- महाराज मैं का पूरी रिया-या अपुन की है, मै तो पांउन की धूरा हौ सरकार।

इन्द्रजीत सिंह- तुमने हमाई बात नई समझी प्रवीण-तुमाई जगा पाउन में नई हमाये दिल में है, हम चाउत कै तुम हमाये संगे राजमहलन में रओ।

रायप्रवीण - (आश्चर्य सें) महाराज जो कैसें संभव है। राजा के संगे नाचवेवारी-और राजमहल में ?

इन्द्रजीत सिंह- संभव है-एक हौकें।

रायप्रवीण - बात समज में नई आई जू-कैसी कई?

इन्द्रजीत सिंह- बात साफहै-राजरानी बनाकें।

रायप्रवीण - क्षमा करै मालिक-का केहे जो समाज, प्रजाओं बुन्देलखण्ड के राजवंश। एक राजा के घर में-राजघराने की बेटिंयई रानी

बनकै आउतीं। कौनऊ नचनारी की बिटिया नई। राजवंश की पुरानी मर्यादा टूट जैहे। धरम-जात-पांत परम्परा औं राज की प्रतिष्ठा पै कुठाराधात हो जैहे महाराज। मौरे औ अपुन के बीच ऊंच-नीच की ऐसी गैरी खाई है जी खो पाटवो-अनीत औ अधरम कै-कै कें हंसी कर हें जो संसार।

इन्द्रजीत सिंह- जे सब बेकार के बातें हैं। धरम-जात, ऊँच-नीच, राजा-प्रजा समाज की बनाई परम्परायें हैं, रूढ़ियां हैं भेद-भाव की जंजीरन में बांद के अपने-अपने स्वारथ सादे। हमैं कुन दुक-छिप कें आय करने जौ सब, अरे हम तो ताल ठोक कै अग्निदेव के सांमू-हरे मड़वा तरै भांवरै पार कै एक नचनारी खौ राजरानी बना हैं- ई रूढ़िवादी समाज कै मौं पै तमाचा जड़ है।

रायप्रवीण - मैं मानत हौ, प्रेम-विवाह सैं रिस्तौ बनाबे में कौनऊ बुराई नईया पै जो सब समानता बारन सैं अच्छो लगत-कुल की मर्यादा कलंकित नई होत-एक नचनारी औ राजमंदिर की रानी ?

इन्द्रजीत सिंह- का कये चाउती तुम खुलकें बताओ-देखो नाचवे वारी औ राजा में फरक ईश्वर ने नई स्वार्थियन ने बनाओ। प्यार मनुष्य कौ आचरण है काऊ से कर सकत। पाप-पुन्य के भ्यानक-कठोर दण्ड विधान, झूटे, फरेवी, दगावाज लोगन के लाने बनाये हैं समाज नै जो वासना के बसीभूत हौके रिस्ता खौ कछु दिना निभाओ मन भर गओ, सौ तोर दओ-उनकी आय फजियत होत, फिरत सच्चो प्रेम एक जनम नई जनम-जनम तक रात। ऐसौ प्रेम कमऊ पाप-पुण्य सैं नई डरात। हां-तौ अब बताओं-का निरनय करौ तुमने ?

प्रवीणराय- (उदास से स्वर में) स्वामी-मोव जन्म एक नाचवे वारी की कूंख से जरूर भयो पै मालिक जो शरीर गंगा सो पवित्र है, अपुन ने मोहां रानी बनायवे की ठान लईतौ मै तैयार हों- सौभाग्य है, मोव-पै एक सला मानो मौरी सरकार-अपुन मोहां रानी औ मैं अपुन खॉ पति परमेश्वर मान दोई आत्मन खां जोर लें। बस-हो गयो व्याव-आत्मा से एक दूसरे खो वरण कर लयो-ई शरीर के देवता, सबई कछु हों अपुन। मालिक मोव नाव सावित्री है-सत्यवान-सावित्री की कथा तौ सुनी हुए-मै सावित्री के नाव की गरिमा कभऊ खंडित न होन देहै-चाये प्रान देने परै-पै अपने पतिव्रत धरम पै कलंक को टीका न लगन दे हो। व्याव की रस्मन में का घरो-ना ऊमर फेरो न पखेरू उड़ाव, कुल कलंक से बच जैहे-औ प्रेम की नीचट गोठ कमऊ कोई तोर न पै है महराज।

इन्द्रजीत सिंह- प्रवीण तुम सांच मांच देवी को रूप हो, भौतई अच्छी सला दई, कोऊ आंख न उठा पै है-हमाये तन-मन में फूलन की सुगन्ध बन कै समां गई हो तुम-मोई प्यारी रानी तुमें पा कें मो हां अपने प्रेम पै गरव हो रओ। सांची मानौं तुमाये गुन-विद्या-संस्कार औ विश्वमोहनी छवि ने ऐसो वशीभूत कर दओ मोहां कै नींद तक गायव हो गई ती हमाई, तुमाई सुन्दरता औ अच्छे गुनन को कौनऊ मुकाबलों नई कर सकत-का होत राजवंश औ बड़े घरन की बेटियन सैं जो कुलच्छने होय। तुम तौ ''रैन की पुतरिया''-हो महारानी।

रायप्रवीण - महाराज इतनी बड़वाई एक तुच्छ नाली के कीरा की।

इन्द्रजीत सिंह- (उत्तेजित स्वर में) ये-यें-खबरदार-जो अब कभऊं ऐसे बोल बोले तो, अब तुम ओड़छे के राजा की रानी हो-नाली को की-रा नई। ओं कछुउवा जागीर के किले की शान-वो सोऊ दिखाहो-संगे लिवा जैहीं कछुउवा काय कै अब छिन भर खौ तुम सै दूर रै वौ को मन नई होत।

रायप्रवीण - महाराज स्वामी

इन्द्रजीत सिंह- और सुनो- किले की बाजू में तुमाये रैवे के लाने एक खूबसूरत महल बनवाहे-जी खां रायप्रवीण महल' के नाम सै जानो जैहे-महल सै किले तक अन्दरई-अन्दर एक सुरंग-जी में हौके-तुमाओ-हमाओ आबौ जाबौ हू है-सुन्दर बगीचा बावरी सब हू है ऊ मैं।

रायप्रवीण - मै धन्य हो गई, रानी बन गई, सुहागिन हो गई अपने हांत से मोई मांग में सेंदुर भर कैं सदां खो ऐवातन बना दो नाथ अपनी रानी लों।

(राजा का मांग में सिन्दूर भरना-छाती से लगा-सुखद मिलन) (यवनिका का गिरना)

दृश्य-षष्ठ-

(स्थान-नवरंग राय की डयोड़ी(कोठा) कुवर दूल्हाराय का प्रवेश)

नवरंगराय - मुजरा पौचे कुंवर साब-अबाई होय।

दूल्हाराय- मौं बनाकैं नई छमकछल्लो-मुस्कराकैं मुजरा करो-एक खुशखबरी है तुमाये लाने।

नवरंगराय- (मुंह बनाते हुए)खुशखबरी-कै सी खुशखबरी ? अब का बचौ मोय लाने, ऊ कल-चुट्टी ने राजा पै प्रेम के डोरा डार कैं ऐसो स्वांग रचौ कै अब राजरानी बनबै के सपने देखन लगी।

दूल्हाराय- अब छोड़ों इन बातन खॉ। हमने ऐसी चाल चली कै-वा ससुरी न दरबार की प्रमुख

राजनर्तकी औ न राजरानी-सबसै हांत धौ बैठहे। तुम्हे औड़छे में ऊ की छायरी लौन दिखै।

नवरंगराय- कायखौं लावरी बातन सै पुटयाउत-भरमाउत मोहॉ-ऊ की गोरी मुईयां-गालन की गड़कुईयन पै महाराज लट्टू हो गये-जाने कैसीं कैसीं बातें सुनवै खां मिल रई। रात-रात पर सेज की पाटी पै मूढ़ धरैं उनई सैं तो चिपकी रऊत। बताओ-अब का बिगार ले हो ऊ कौ ?

दूल्हाराय- विस्वास करौ हमाई बात पै- रायप्रवीण कौ डेरा ओंडछे सै उठबेई बारो है-तनक तुम गम्म तो खाओ-सांची आय कै रये हम, मानो न मानो-जो सब हो कैं रे है।

नवरंगराय- का चाल चली अपुन नै-बताओं तौ मोहां-तबई तौ विसवास हुए मन खो?

दूल्हाराय- हमाओ एक दोस्त है नामत खां-वो इलाहाबाद में शहजादा सलीम के दरवार को वींणा वादक है, ऊ को भैया राहत खां शहंशाह अकबर के शाही दरबार में है, ई सै नामत खां की पौच दोऊ दरबारन में हैं-वादशा की खुशामद करत रात। हमने प्रवीणराय की तारीफन के पुल वांद कै ऊ के मन खो इत्तो गरम कर दओ-कै आग की लपटें बन कै बादशा के दरवार तक पौच हैं।

नवरंगराय- ई सै का हुए ?

दूल्हाराय- देखो-काल तुमने खुद नामत खॉ के मौं सैं सुनी हुयैं, ऊ छुकड़िया की तारीफन जब वो वींणा वादन में प्रवीण सैं मांत खा कैं, कै रओ तो-''प्रवीण की कला आकाश की ऊचाईयों जैसी है और मेरी जमीन की सतह जैसी-कला की इस देवी को पर फैलाने का मौका मिलना चाहिए ताकि वह कला की चरम सीमा पर पहुंच सके।'' वस्य हमाओ काम इतई सै शुरूं ही गओ।

नवरंगराय- बो कैसौं ! कुंवर साव?

दूल्हाराय- अरे-तुमाई अकल में तौ पथरा पर गये-नामत खां प्रवीण की कला को कायल हो गओ-औ हमने ऊऐ और पेड़े पै चढ़ा दओ।

नवरंगराय- सौ ?

दूल्हाराय- मोरी भोली बन्दरिया-अकल की दुश्मन-अरे-नामत खां आगरे जा कै शंहशाह अकबर सैं प्रवीण की कला-ऊ की खूबसूरती की चर्चा जरूर करेगो-फिर का हूरन कौ शौकीन वादशा लपक कैं ई गुलेदे खों अपने मौ में डारवे के लाने राजा खॉ शाही फरमान भेज कै आगरा बुला लेंहे। महाराज में इत्ती दम नईयां कै वादशा के हुकुम की उदूली कर सकैं-और जो राजा ने चूँचपाट करी तो शाही फौज ओंड़छे में ऐसौ दोंदरा कर है कै प्रवीण औ राजा दोऊ जनै आगरा के बन्दी खाने में डरै मिलें। फिर का तुम नर्तकी सै प्रधान नर्तकी बन जैहो। (दोनों का ठहाका मार कर हंसना)

नवरंगराय- (प्रसन्न मुद्रा में) सांचऊ-अच्छी चाल चली अपुन ने - जय हो।

दूल्हाराय- तुमें विश्वास नई हतो हमाऐ ऊपर-अब तुमाये पांव को कांटी-खुदई निकर जैहे।

नवरंगराय- (पैर छूने को झुकती हुई) -मो हां माफकरदों कुंबर सा-अपुन के सिवा को है हमांव।

दूल्हाराय- (मुस्कराते हुए) अरे-बस-बस-बस, मोई जान। तुमाई जगा पाउंवन नई-हमाये दिल में है-आओ .... (अन्तराल ध्वनि के साथ परदा गिरना)

दृश्य-सप्तम

(स्थान शाही बाग में शहंशाह अकबर का टहलना-नामत खॉ का प्रवेश)

नामत खॉ- आलीजां के कदमों में नामत खां का सलाम।

अकबर- नामत खां तुम ! शहजादा सलीम के पास से आ रहे हो न तुम-क्या हाल है सलीम और उसके दरबार का ?

नामत खॉ- जहां-पनाह ! सब ठीक है मै इलाहाबाद से आगरे आते वक्त कुछ दिन के लिए ओरछा रूक गया था

अकबर- ओरछा ? सुना है, इन्द्रजीत सिंह के दरबार में रायप्रवीण नाम की कोई वेश्या है क्या तुमने उसे देखा है ?

नामत खां- हुजूर-मैने रूवरू उसे देखा ही नहीं-उसके साथ वींणा भी बजाया है।

अकबर- तबतो वह तुमसे मात खा गई होगी-आखिर तुम शाही दरबार के बींणा वादक हो।

नामत खॉ- गुस्ताखी माफ हो आलीजां। मै उसका मुकावला नहीं कर सका। वह जब वींणा बजाती है तो ऐसा लगता है जैसे संगीत की देवी मंत्र फूंक रही हो। मुझे तो ऐसा लगा कि उसके वींणा के तार उसके चंचल नयनों के इशारे से बजते हों। वह वींणा ही नहीं बजाती बल्कि जादू फूंकती है।

अकबर- सुना है वह खूबसूरती में भी कम नहीं है।

नामत खां- आलमपनाह ! इस खादिम ने बहुत सी आंखे देखी है पर प्रवीणराय की तरह किसी के चेहरे पर वह नूर नहीं दिखाई दिया जो पहली ही नजर में दिलो दिमाग पर छा जाये, वह हुश्न की तस्वीर है, नाजो-नजाकत और शर्मो-हया का रूप है। वह शोला भी है और शबनम भी। वह चांद भी है और आफ्ताव भी। हुजूर............ उसे देखकर तो ऐसा लगता है

	कि वह साधारण इन्सान नहीं, खुदा का बेमिसाल नूर है। वह जितनी खूबसूरत है उतनी काबिल भी है मेरे पास उसके हुश्नो-जमाल की तारीफकरने के लिए अल्फाज ही नहीं है।
अकबर-	काविल का मतलब मैं नहीं समझा, वह नाचती है, वींणा बजाती है और बेहद खूबसूरत है, यही न ?
नामत खॉ-	इसके अलाबा भी बहुत कुछ है हुजूर। वह नाचती है तो सारी महफिल नाचने लगती है, वह गाती है तो सन्नाटा छा जाता है, वह बजाती है तो दिलों के तार-तार झनझना उठते हैं, इन सब के अलावा वह कविता भी करती है।
अकबर-	वाह खूब नामत-तुमने तो उस नाचने वाली को खुदा का नूर बता कर शायरी पेश कर दी।
नामत खां-	आलीजां-रायप्रवीण-साधारण नाचवे वाली नहीं-उसकी मां पातुर जरूर, थी पर प्रवीण मुजरा नहीं करती, दूसरों की महफिलों में नहीं नाचती, वह शिर्फ इन्द्रजीत सिंह की सभा में नाचती है। सुना है राजा उससे बेहद मुहब्बत करते हैं। रात को पलंग के पास बैठकर जब तक वह वींणा नहीं बजाती-राजा इन्द्रजीत सिंह को नींद नहीं आती, वह इन्द्रजीत को अपना शौहर मानती है और राजा उसे अपनी बीबी।
अकबर-	(ठहाका मारकर) ह....ह....ह.... नाचवे वारी और बीबी-गजब है।
नामत खॉ-	इतना ही नहीं हुजूर। सुना है वह शौहर परस्त है हिन्दुओं की व्याहिता स्त्रियों की तरह तीज-त्योहार और ब्रत रखती है।
अकबर-	माना कि वह बहुत खूबसूरत है तो वह जंगली राजा उसकी मुहब्बत का, शौहर परस्ती का मतलब ही नहीं समझ सकता(हाथ में लिए गुलाब के फूल को दिखाकर) क्या वो इस गुलाब के फूल की तरह है ?
नामत खां-	नजरे इनायत हो सरकार, तौ मै कुछ कहूं।
अकबर-	कहो....... बेशक कहो ?
नामत खॉ-	(मुस्कराते हुए) ये फूल उसकी बरावरी नहीं कर सकता। इसकी रंगोबू एक तरह की है लेकिन उसमें कई तरह के रंग हैं, कई तरह की खुशबुऐं है वह इस फूल से ज्यादा तरोताजा और खूबसूरत है हुजूर।
अकबर-	(उतावले पन से) तुम .... तुम..... और कुछ कहना चाहते हो ?
नामत खॉ-	आपका गुलाम सिर्फ इतनी ही अर्ज करना चाहता है हुजूर कि वह आम नाचने वाली
नहीं-	वेश कीमती जवाहरात है उसे ओरछा की ककरीली पथरीली जमीन में नहीं हुजूर के शाही दरवार की रौनक होनी चाहिए।
अकबर-	हूॅ-ऊॅ-ऊॅ- अगर तुम्हारा व्यान सही सावित हुआ तो हम उसे जल्द ही शाही दरवार की रौनक नहीं-अपने जनान खाने की रौनक बनायेगें।
नामत खॉ-	कोई कसर मिले हुजूर तो मेरा शिर कलम करालें।
अकबर-	सही हुई तो तुम्हें इनाम से नवाजा जायेगा-अब तुम जा सकते हो। (यवनिका का गिरना)

दृश्य-अष्टम्

अकबर-बीरवल !

वीरबल-	जी हुजूर .... आलीजांह- हुक्म करै-बन्दा हाजिर है।
अकवर-	मैने तुम्हें एक फरमान ओरछा भेजने के लिए हुक्म दिया था-क्या वह नहीं भेजा गया।
वीरवल-	आलमपनाह- वो तो उसी दिन भेज दिया गया था-
अकबर-	तो इसका मतलब ये हुआ कि उस जंगली राजा ने मेरे हुक्म को नजर अन्दाज कर दिया।
वीरबल-	आप बजा फरमा रहे हैं हुजूर, उस गुस्ताख राजा ने अभी तक प्रवीणराय को आगरा नहीं भेजा।
अकबर-	यह हिन्दुस्तान के शहंशाह की सरासर बेअदवी है।(क्रोध से पेर पटकते हुए) वह अकबर को क्या समझता है। हुकुम उदूली की हिम्मत-उस नाचीज राजा ने कैसे की। यह मुगलिया सल्तनत की इज्जत का मजाक है और शहंशाह अकबर उसे हरगिज बरदास्त नहीं कर सकता-उसे इस गुस्ताखी की सजा जरूर मिलेगी।
टोडरमल-	सही फरमाया हुजूर ! इसी तरह सारे गुलाम राजा-नवाव और रियाया-शाही हुकुम टालने लगें तो क्या होगा, उस गुस्ताख को इस बेमानी हरकत की सजा जरूर मिलनी चाहिए।
अकबर-	वीरवल तुम चुप क्यों हो बताओं उस नमक हराम ने हिन्दुस्तान के शहंशाह का अपमान नहीं किया-बोलो।
वीरवल-	ओरछा के नासमझ राजा ने हुजूर के फरमान की अहमियत नहीं समझी उस नाचने वाली को अभी तक नहीं भेजा।
अकबर-	शाही फरमान की बेइज्जती को मैं अपनी बेइज्जती मानता हूॅ और उस गुस्ताख पर एक करोड़ रूपये जुरमाना अदा करने का हुक्म देता हूॅ। टोडरमल हुक्मनामा जल्द से जल्द तामील कराया जाये।

टोडरमल- हुक्मनामा शाही मुहर लगा कर प्यादे के हाथ अभी ओरछा भेजता हूँ, आलीजां।(टोडरमल का प्रस्थान)

वीरबल- आलीजां! राजा इन्द्रजीत सिंह ने यह जुर्माना भर दिया तो .... ?

अकबर- क्या कहते हो वीरबल! वह दो कोड़ी की रियासत का राजा एक करोड़ की रकम कैसे और कहां से अदां करेगा।

वीरबल- तो क्या जुर्माने की भरपाई के साथ रायप्रवीण का मसला खत्म हो जायेगा?

अकबर- न-ही-ही-आगामी कार्यवाही के लिए हमारा बहादुर सिपहसालार खिजिर खां और मुगल सेनाऐं काफी है वे बिना खून खराबे के जो उस नूरानी को ला सके तो लायेगे-नहीं तो उन्हें खुली छूट होगी कि वह उस नाचने वाली और गुस्ताख राजा को जवरदस्ती पकड़ कर हमारे कदमों में डाले-ओरछा की फोज ने दखलन्दाजी की तो खून की नदियां बहादें।

वीरबल- बजा फरमा रहे हुजूर-आप।(वादशाह के साथ वीरबल का जाना) (परदा गिरना)

दृश्य-नवम्

(स्थान-राजा इन्द्रजीत सिंह का शयन कक्ष-महराज विक्षिप्त सी अवस्था में पलंग पर पड़े हुए सिसकियों के साथ प्रवीणराय का प्रवेश)

इन्द्रजीत सिंह- प्रवीण तुम ? आंखन में असुवा-का हो गओ-बताओ न हमें।

रायप्रवीण- (रोते हुए) आखरी दरशन करवै आई हो महाराज

इन्द्रजीत सिंह- आखरी दरशन-जा कैसी कई पैलैं जे अंसुवा पोंछो, फिर बताओ का भयो हमें तौ जिन्दगी भर संगे राने।

रायप्रवीण - हां महाराज-मोई आत्मा अपुन के संगे रे है पै जो शरीर मुगल सेनापति खिजिर खॉ की कैद में है-ऊ ने मोहां बन्दी बना लओ-आगरे ले जा कैं वादशा के कदमन में डारवै खॉ। जाती बेरां अपुन सै मिलवे खौ भौतई गिगयानी पतयानी तब तनक देर खों आन दओ।

इन्द्रजीत सिंह- खिजिर खां-वादशा कौ सैनापति?

रायप्रवीण - हऔ मालिक वो द्वारे पै ठांड़ों है।

इन्द्रजीत सिंह- (मन ही मन बड़बड़ाते हुए) ई कौ मतलब-कै हमने जरीबाने के एक करोड़ रूपया नई भर पाये सो वादशा ने सैनापति भेज तुमें बन्दी बना लओ।

रायप्रवीण - हां महाराज कोठा मे सै खचौर कैं-राजमहल घेरऊं से मुगल फौज-फटे नै घेर लऔ-और धमकी दैरओ तो-कै राजा ने रोक-टोक करी तो ओड़छे में आग लगा दे है। वेतवन्ती में पानी की जगा खून की धार बहा दे हैं।

इन्द्रजीत सिंह- जिन्दगी में पैली बेर इत्तो लाचार भओ-का करौ-समझई में नई आउत कछू। कौनऊं सामन्त-ओहदेदार-सैना और रियाया साथ देवे खौ तैयार नईयां बिल्कुल असहाय (एकायक जौश के साथ) नई-नई मैं तुमें राजमहल से बाहर न जान देहो-काऊ में दम नईयां हमारे जियत-तुमै ले जाये।

रायप्रवीण - नई-स्वामी-नई। ओड़छे के सामन्त ठीकई तौ कै रऐ-एक नाचवे वारी के पांछू-जान की बाजी लगावो-ओड़छे की बरवादी मोल लेवो-सई नईयां, ई सैं धीरज धरकै मोहां जावै की आज्ञा दो महाराज।

इन्द्रजीत सिंह- (मांथा पीटते हुए) प्रवीण! अब तुमई बताऔ-हम का करें ?

रायप्रवीण - महाराज-मैं ओड़छे, ई राजमंदिर औ प्रानन सै प्यारे अपने राजा की बरवादी अपनी आंखन सैं नई देख सकत-दैखो मालिक-मोय कारन-राज में मौंत कौ तांडव हुए कत्लेआम-घेरऊं तबाही को तूफान आ जैहे-कित्ती सुहागनिन की मांग को सेंदुर पुंछ जेहे-कित्ती मताईयन के ओली के खिलौना, औ कित्ते डुकरा-डुकरियन के बुड़ापे को सहारो छिन जैहे जब मुगलन की जालम फौज कत्ले आम पै उतारूं हो जै है। मैं ओड़छे खॉ युद्ध की आग में जल तन नई देख सकत- सो जान देव मालिक।

इन्द्रजीत सिंह- तुम धन्य हों प्रवीण। बहादुर हो, साहस की देवी हो-औ मै राजा होत भये लाचार, कायर-डरपोंक-एक जनी की रक्षा न पाओ।

रायप्रवीण - म-हा-रा-ज। इत्ते अधीर नई-हिम्मत सै काम लेव-देखो एक नाचवे वारी-नचनारी-कुवाउत-ऊ कै लाने प्रान दये सैं-राज की प्रजा अनाथ होजे है, दुश्मन चढ़ाई कर सकत जो-ई सब देख कै सामंत और ओहदेदार विरोध कर रऐ सौ अपुन धीरज धरौ मालिक।

इन्द्रजीत सिंह- प्रवीण तुम जा काय भूल जाती हो कै तुम नचनारी नई-हमाई रानी-ओड़छे की महारानी हो। अपने जियत डग न मारन दे हो तुमें।

रायप्रवीण - मैं सोऊ अपने राजा खौ अपने जियत काल के गाल में नई डार सकत। मोई बिनती है नाथ-मोहां भूल कैं अपने राज औ रिया को भलो तकौ-महाराज

इन्द्रजीतसिंह- मैं अपने आप खौं, ई दुनियां औ दुनियां के लोगन खॉ भूल सकत, पै तुमैं कभऊॅ नई भूल सकत प्रवीण।

रायप्रवीण - सोचो महाराज-समजदारी सैं काम लेव-देखो अपुन राजा हो, ओरछाधीश हो प्रजा के लाने भगवान समान सो उनकी रक्षा करबो

करतव है अपुन को-मोय पिछाऊं उनपै जोन संकट सामूं दिखारओ, ऊ सै बचाओ।

इन्द्रजीत सिंह- हमने तुमाई सुन लई-अब हमाई सुनो, किलो तवाह होय, ओड़छो बरवाद हो जाये, खून की नदियां बै जायें-हमायें प्रान चले जाये-पै तुमें अपने सैं अलग नई कर सकत-औ तुमनै जावै की जिद्दई कर लई होय तौ (तलवार म्यान से निकालते हुए) तौ तुमाये सामूं हम अपनी जान दे दै हैं।

रायप्रवीण - (तलवार पकड़ते हुए) नई-महाराज नई, ऐसो अनर्थ न करो स्वामी-जानत हौ मोय लाने अपुन सबई कछु कर सकत (रूंधे गले से ऑचल फैला कर) मैं आज एक भीक मांगत हो सरकार-नांई न करियो जू।

इन्द्रजीत सिंह- बोलो का चावने तुमें-हम बचन देत-पूरौ कर है।

रायप्रवीण - अपने स्वामी-पति परमेश्वर के प्रानन की रक्षा औ आगरे जावे की आज्ञा, बस और कछु नई चानै मोय, जियत रई तौ फिर चरनन में हाजिर हो जैहों।

इन्द्रजीत सिंह- हमाये जियत-तुमाओं पवित्र आंचर दागी होय, लाज नीलाम होय-मो हॉ कैसे बरदास्त हुए, तुमई बताओ?

रायप्रवीण - (दृढ स्वर में) अपुन धीरज धरौ महाराज-मैं बदनाम कुल में जन्मी नचनारी, तिरिस्कृत अवला अवश्य हों पै भीतर सैं कमजोर नई-ई शरीर खौ कोऊ छू नई सकत जियत में। अपुन के धीरज धर कै-हिम्मत औ खुशी सैं बिदा करवे सै-मो हां साहस और बल मिलहे-जी सैं मैं चटोरन की चालन औ आगरे की परिस्थितियन सौं जूझ सकौं।

इन्द्रजीत सिंह- जाओ प्रवीण-मो हां पूरो भरोसो हो गओ तुमाई हिम्मत औ ताकत पैं।

पार्श से- (बाहर से तेज स्वर में) मुलाकात का वक्त खत्म-बाहर निकलो

रायप्रवीण - (रूंधे कंठ से-पैर छूते हुए) जा रई हूँ मालिक-जियत रई तौ फिर मिल हें। (राजा का अवचेतनावस्था में पलंग पर गिरना-गुप्तद्वार से केशवदास का प्रवेश)

केशवदास- महाराज......... महाराज............ होश में आओ, हिम्मत बांदो तनक-उठवो होय मोरी, बात सुनो-देखो-उठो......... ।

इन्द्रजीत सिंह- (उठकर बैठते हुए रूंधे गले से) महाकवि-महाकवि अपुन-वा-वा प्रवीण ....।

केशवदास- हमैं सब पतौ है । अपुन हिम्मत सै काम लेव-देखो बायरै हमाओ घुरवा कसौ आय ठांड़ो है आगरा जावे खॉ-खिजिर खां के पांछू-पांछू हम आगरा पौच हैं। वीरवल सै हमाई मित्रता है ऊ सै मिलकै हम कौनऊ अनेओ से समझा बुझा ले है और जैसें बनै तैसे उनकी शिफारस सै एक करोड़ रूपईयन को जुर्मानो बादशा सैं माफकरवा ले है।

इन्द्रजीत सिंह- बादशा मान जै है का?

केशवदास- रायप्रवीन खॉ न भेजवे पै जुरमानों करौ तो अब बा पौच गई-तौ अब कायको जुरमानों।

इन्द्रजीत सिंह- पै कविवर! प्रवीण की का गत हुए-बिचारी की इज्जत-आवरू........ ।

केशवदास- महाराज...... । प्रवीणराय मोई शिष्या है। हमें पूरो विश्वास है कै ऊ खों छूबै की काऊ में दम नईयां-वा भौत चतुर औ गुनन की तेज हैं मुश्किल से मुश्किल हालात में अपनी इज्जत-आवरू पै आंच न आउन दे है। अपुन चिन्ता छोड़ो- हम पै औ प्रवीण पै भरोसो करो-जई समजावै आयते अपुन खॉ। अब जात हो-झुली पर गई-मुन्सारे लौ पौचने है आगरे।

इन्द्रजीत सिंह- जाओ कविराज-हमें विश्वास हो गओ-जाओ। (केशवदास का प्रणाम कर वाहर निकलकर घोड़े की हिनहिनाहट के साथ प्रस्थान-यवनिका का गिरना)

दृश्य-दशम

(स्थान-शाही महल-रायप्रवीण के रंगमहल की ओर सम्राट अकबर का प्रस्थान)

नकीव- बाअदव-वामुलहजा होशियार-कदम-व-कदम फतेह-नसरत-नजर-मालो- दौलत-वख्शीशो इज्जत-हिन्दुस्तान के शहंशाह आला हजरत-शहंशाह जलालुद्दीन अकबरे-आजम तशरीफ ला रहे है। हर कदम-मुलाहजा-फजले इलाही-शहंशाह जिन्दावाद।

अकबर- (रायप्रवीण की ओर देख कर) मरहवा ! बाकई नामत खां तुम्हारे रूप और जबानी का वर्णन नहीं कर सकता था। तुम बेसुमार हो .... वे मिशाल हो.......... तुम्हे देख चांद भी शर्माता होगा, चांदनी भी झिझकती होगी।

रायप्रवीण - (सहमी सी-धीमें स्वर में) जहां-पनाह-नाचीज कदमों में सलाम ....

अकबर- (बात काटते हुए) ओफ.. तुम जैसी हसीना हमने नहीं देखी। हमारी नजरो से हिन्दुस्तान और हिन्दुस्तान से बाहर के मुल्कों की न जाने कितनी औरतें गुजर चुकीं हैं पर वे सब तुम्हारा मुकावला नहीं कर सकती, तुम जन्नत की हूर हो, खुदा का नूर हो और शंहशाह अकबर के दिल का करार हो। रायप्रवीण तुम रूप-गुण में जितनी माहिर हो उतनी ही तुम्हारी

किश्मत बुलन्द है हम तुम्हें बुलंदियों के उस ऊंचे दर्जे पर पहुंचायेगे जहां पहुंचने के लिए दुनियां की बेहतरीन औरतें तड़फा करती हैं।

रायप्रवीण- हुजूरे आलम- मैं - क्या

अकबर- हय ... यह शर्मोहया का अंदाज, ये झुकीं-झुकीं पलकैं, यह खामोश ओंठ अपने दिल की बात कहें तो मेरे दिल को करार आये।

रायप्रवीण - एक मामूली नाचने वाली हुजूर के आंगू कैसे जवान खोले ?

अकबर- वा-ह-बहुत खूब-तुम्हारी आबाज में इक तारे का स्वर भरा है। बेसुमार खूबसूरती में उदासी की झलक क्यों ? लगता है तुम्हें ओरछा के उस जंगली राजा की याद सता रही हैं।

रायप्रवीण - नई सरकार-ऐसो कछु नईयां।

अकबर- तौ फि र-तुम्हें सोचना चाहिए कि कहां शहंशाह अकबर और कहां इन्द्रजीत सिंह। हां उसने प्यार-मुहब्बत का नाटक किया होगा तो शिर्फइसलिए कि तुम उसे छोड़ कर बुलंदियों का आसमान न छू सको। हम तुम्हें वह सब कुछ देंगे-जिसे पाने के लिए दुनियां का हर इन्सान तड़फ्ता रहता है। तुम पढ़ी-लिखी हो, विद्वान और सबगुण सम्पन्न हो-तो अपना भला-बुरा तो सोच ही सकती हो।

रायप्रवीण - अबई नई-नई जगा में आई गरीपर्वत-शाही महलन के रीत-रिवाज-मालूम नईयां-मांफी चाहत हों-कौनऊ गल्ती .... ।

अकवर- अरे हां.... हमने तुम्हारे लिए शाही पौशाकै-हीरे-जवाहरात से जड़े सोने-चांदी के गहने भिजाये थे तुमने उन्हें न पहिन कर हमारी तौहीन क्यों की। उन्हें पहनना चाहिए था और सज-संवर कर हमारे सामने आना चाहिए था-जबाव दो।

रायप्रवीण - क्षमा करें मालिक-एक तुच्छ नाचवे वारी सम्राट के रुख खौ नई समझ पाई, जई सोचीं कैं जैसी हों-ऊसई पेश हो जाऊं अपुन के सांमू-सजबंद कै आवै में बादशाह सलामत मोव असली रूप-रंग न जान पै है, सई परख न कर पेहें।

अकवर- वाह .... बहुत खूब! हम तुम्हारी अक्ल की दाद देते हैं। वाकई में हमने जैसा सुना था उससे बढ़कर तुमको पाया। तुम्हारी हाजिर जबाबी का मै गुलाम हो गया-तुम हमारे दिलो दिमाग पर छा चुकी हो। हमारी खुशियों का, हमारे प्यार का फूल बन चुकी हो। अब दुनियां की कोई ऐसी चीज नहीं जो तुम्हारी खुशियों के लिए तुम्हारे कदम न चूमें। अब जरा सा नजदीक तो आओ हमारे।

रायप्रवीण - (संकोच भरे स्वर में) हुजूर ....

अकबर- अरे... अब क्या हुजूर-हुजूर लगा रक्खा है-आकर हमारे साथ झूले पर झूलते हुए-हम दोनों अपने ख्वावो और जजवातों की बारात सजा कर चांद पर पहुंचें।(प्रवीण का हाथ पकड़ कर अपनी ओर खीचने का प्रयास)

रायप्रवीण - (स्थिति को भॉप कर झट से) सुनो है कै शहंशाह जू के दरवार में अच्छे-अच्छे शायर औ कवि हैं, तानसेन जैसे संगीत के कलाकार औ खुद शहंशाह अपुन बृजभाषा में कविता करत हो-मो हां कविता-शायरी सुनवै को बड़ौ शौंक है हुजूर।

अकबर- हां-हां-तुमने ठीक सुना है हमें कविता-शायरी सुनने और कहने का अच्छा शौक है। हमें याद आया कि नामत खां ने तुम्हारे विषय में यह भी बताया था कि तुम अच्छी कविता कर लेती हो। ओरछा का केशवदास नाम का कोई कवि तुम्हारा गुरू है। हमें अच्छा लगा-हम दोनों एक ही रोग के मरीज हैं।

रायप्रवीण - मोव मन हो रओ कै अपुन कछु सुनाये तो मन वहल जे है।

अकबर- तुम्हारे हुश्न से रूवरू हुआ-उसी पर लिखूंगा कुछ-फिर सुनना, इस वक्त मेरे दिलो-दिमाग में कविता नहीं केवल तुम छाई हो। हां अगर तुम्हारे पास कुछ हो तो-सुनाओ।

रायप्रवीण - आज्ञा होय तो एई शाही महल में बैठ कें लिखे गये एक दोहे को पेश करूं

अकबर- जरूर ..... जरूर, हम तुम्हारी प्यारी-प्यारी बातों को सुनकर काफी खुश हुए हैं इस वक्त हमारा मन तुमसे दूर होने की इजाजत नहीं दे रहा है। तुम हमें अपना दोहा सुनाओं।

रायप्रवीण - ''विनती रायप्रवीण की, सुनिए शाह सुजान।
जूठी पातर भखत हैं, वाइस, बारी, श्वान।।

अकबर- (अपने की झकझोरते हुए अफ्सोस भरे चेहरे से) ओफ.. तुमने यह क्या सुना दिया, सब कुछ हमारी समझ में आ गया। तुम्हारा इशारा तुम्हारी असलियत को व्यां करता हुआ-नसीहत देता है कि तुम उस बुन्देली ओरछा के राजा इन्द्रजीत सिंह की जूठी पत्तल हो। पत्तल पर बचे जूठन को खाने का हक केवल कौआ-बारी और कुत्ते को है शहशाह जैसी हस्ती को नहीं। तुम्हारा यह सुन्दर जिस्म उस जंगली राजा की हवस का शिकार हो कर जूठा हो चुका है अब इस जूठन को खाना-यानी निगाह डालना अपनी बेइज्जती करना ही है (अफसोस करते हुए) हिन्दुस्तान के बादशाह तूने कुछ भी नहीं सोचा इस बारे में-वासना के तरंगों में बहकर सब कुछ भूल गया।

रायप्रवीण - नई हुजूर-राजा की हविश का शिकार नई- उनने मोहां अपनी रानी औ मैने उनै अपना पति परमेश्वर मान कै एक दूसरे के जीवन साथी बने हैं। आलमपनांह-जई सै मैने अपनी असलियत अपुन खॉ दोहा बना कै बता दई, काये कै हिन्दुस्तान के वादशा खों धोके में रखवो मोरो पतिव्रत धरम इजाजत नई देत फिर अपुन जैसे इन्साफपसन्द इन्सान खों।

अकवर- रायप्रवीण, वास्तव में तुम जितनी खूब सूरत हो उतनी विद्वान भी हो। मैंने तुम्हे जितना समझा था उससे कहीं ज्यादा ऊंची हो। शाही हुकूमत की शराब में बेखवर होकर जिस बासना के दल-दल में हम गिरने वाले थे- वहां से तुमने हमें बचा लिया। तुम वास्तव में शौहर परस्त-नारी धरम की रक्षक, साहसी, प्रतिभावान औ बेमिसाल षषक्त नारी हों- इतिहास के पन्नों में लगने वाली कालिख से बचा लिया शंहशाह अकबर को महारानी अपुन नैं।

रायप्रवीण- एक सुहागिन नारी के सतीत्व की गरिमा खो समझ कै अपुन ने शाही हुकूमत की लाज राखी महावली-अपुन धन्य हैं।

अकबर- मै हार गया-तुम जीत गई-हिन्दुस्तान का बादशाह तुम्हारे सामने अपनी पराजय स्वीकार करता है और महारानी हम आपको वाइज्जत ओरछा लौटाने का वायदा करते हैं।

रायप्रवीण- शहंशाह की जय हो।

अकबर- महारानी प्रवीन-आपने मुझे एक ऐसे कलंक से बचा लिया, जिसके कारण अकबर-अकबर न रह कर एक अय्याष, कुकर्मी, और तानाशाह बन कर रह जाता। आपने मुझे जो वक्षीषों इज्जत-इन्साफे-ए-दौलत की डगर दिखाई है तुम्हारे इस ऐहसान को कभी भुलाया नहीं जा सकता।(थोड़ा रूककर पुनः) (पुनः)

अकबर- नकीव वीरवल और टोडरमल को पेश करो

नकीव- जी हुजूर(दोनों का प्रवेश)

अकबर- दीवान-ए-माल-टोडरमल-हमारा हुक्म है कि राजा ओरछा पर लगाये गये एक करोड़ रूपये के जुरमाने को माफ करने का हुक्मनामा ओरछा भेजा जाये।

टोडरमल- हां आलीजां-अभी भेजता हूँ।

अकबर- और दीवान-ए-खास वीरबल-महारानी ओरछा रायप्रवीण को बाइज्जत शाही सम्मान के साथ ओरछा भेजने की तैयारी करो। राजसी पौशाकें, हीरे जवाहरात-अशर्फियां देकर-गाजे-बाजे, हाथी-घोड़ों और पालिकी में भेजा जाये-सिपहसालार खिजिर खां की सैनिक टुकड़ी हिफाजत से ओरछे ले जाकर राजा इन्द्रजीत सिंह को सौपें।

बीरबल- हुक्म की तामील के लिए बंदा अभी कार्यवाही शुरू करता है जहां पनाह। ओरछा राजदरबार के राजकवि और रायप्रवीण के गुरू जो आगरा में ही रूके हुए है-उन्हें भी साथ जाने के लिए इत्तला भेजे देता हूँ।

अकबर- ठीक है-कवि को भी शुक्रिया अदां करते हुए-रूखसत करना।(अकबर का प्रस्थान.........)

(पटाक्षेप)

-बजरंग नगर वेयरहाउस की बगल में,
ग्ली नं.1,पन्ना रोड़,छतरपुर(म0प्र0)
मोबाइल नं.9479482980

लड़ाई पर जाने के पूर्व सैनिक की पत्नी को सीख-

लाम-गीत

-पं. राजकुमार पुजारी

छोड़ तुमै हम जात लाम पै, घरै चैन से रइयो।
अगर जरूरत परै देश खों, मोड़े पौंचा दइयो।।

सूकी रोटी नोंन मिर्च सें, लगा आपनी खइयो
ठंडों पानी पी गगरी कौ, चैन से समय बितइयो
बिना बुलायें चली मायकें, कभऊँ न अपने जइयो
अपने बस में अपने मन खों, करैं हमेशा रइयो
साँच खों आँच कभऊँ न आवै, सत खों राखें रइयो
अगर जरूरत परै देश खों मौड़े पौंचा दइयों।।

तोय भरोसे पै छोड़त हों, अपने बाप मताई
पानी न डुल पाय पेट को, बेरा आखिरी आई
जो कऊँ इन खों खबर आय तो, तुम समझायें रइयो
आय जात बे लौट लाभ सें, बातें ऐसी कइयो
सेवा माई बाप की मन सें, करत हमेशा रइयो
अगर जरूरत परै देश खों, मोड़ैं पोचा दइयो।

भारत माता के लाने जो कऊँ, रन मे मर जावैं
तो करियो न सोच कछू तुम, नाव अमर कर जावैं
पतौ परै कै मरै लाम पै, मगा लाश तुम लइयो
तपना मोरो ऐई गाँव की, लगा भूम पै दइयो
प्रानन प्यारी अबकौ विछुड़े, पुर्नजनम मिल जइयो
अगर जरूरत परैं देश खों, मौड़ै पौंचा दइयो।।

- मोती निवास, पुजरयाना पृथ्वीपुर
जिला-निवाड़ी (म.प्र.)

छतरपुर में स्थित गुसाइयों की समाधियाँ

– नरेश कुमार पाठक

मुगल सम्राट औरंगजेव की मृत्यु के पश्चात मुगल सम्राज्य का विघटन शुरू हुआ। उनके सूबेदारों, नवाबों, और छोटे-छोटे राजाओं ने अपने स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिये । उनके आपसी संघर्षों का लाभ उठाकर उद्धार भारत पर नादिर शाह, अहमदशाह अब्दाली ने आक्रमण किया, साथ ही मराठों, अंगेजों के सैनिक अभियानों ने स्थिति और खराब कर दी थी। शांति और सुरक्षा के अभाव में खेती, उद्योग धंधे व व्यापार तो जैसे ठप्प ही हो गया। व्यापारियों के कारवे और बाजारों की लदाने मार्गों की असुरक्षा के कारण सम्भव नहीं रह गयी। ऐसे ही समय देश के अन्तरदेशीय व्यापार के कुछ बिखरे सूत्र संयोग से नागा गुसाई साधुओं के हाथ आ गये। अठारवीं शती ईसवीं के अंग्रेजी विवरणों में उनके उल्लेख सन्यासी ट्रेडर्स के नाम से मिलते हैं। साधु सन्यासी समुदायों की परम्परायें हमारे देश में बहुत पुरानी है, उनके दलों द्वारा लम्बी-लम्बी तीर्थ यात्रा करने माघ मेंलों आदि में सदलबल भाग लेने के अनेक उल्लेख मिलते हैं, इन साधु सम्प्रदायों में कुछ ऐसे सम्प्रदाय भी थे जो आत्मरक्षा के लिये शारीरिक बल और अस्त्र-शस्त्रों के प्रशिक्षण को महत्व देते थे। नागा गुसाई ऐसे ही योद्धा साधुओं के वर्ग के थे। नागा गुसाईयों ने साधुओं के रूप में ख्याति अर्जित की हैं। अपने व्यापारिक गतिविधियों के लिये भी वे कम महत्वपूर्ण न थे। ये बलशाली योद्धा भी थे। इन्होंने बुन्देलखण्ड के राजाओं के लिए अनेक युद्ध लड़े 19वीं शती ई0 तक भारत पर अंग्रेजों की सत्ता स्थापित हो ते ही गुसाईयों की उग्रता पर अंकुश लगता गया। बुन्देलखण्ड के गुसाई मठों के महन्तों, चेलों और व्यापारियों के रूप में बसने लगे। फ लस्वरूप उनके स्वभाव की उग्रता और आक्रमणता भी धीरे-धीरे पहले से कम होती गयी। गुसाई मुख्य रूप से शैव थे। उनमें अधिकतर अपने मृतकों को भूमि समाधि कर समाधि के ऊपर शिव मंदिर निर्मित करा देते थे। छतरपुर जिले के गुसाईयों के अधिकांश पूरी, गिरी और वन गोसाई है। इन्होंने परम्परागत अपने मृतकों की याद कों स्थाई रखने के लिये अनेक समाधियों का निर्माण कराया।

छतरपुर नगर में कुल 28 समाधियों है, जिन्हें अध्ययन की दृष्टि इस प्रकार विभाजित किया गया है, **प्रथम समूह** में छतरपुर नारायणपुरा मार्ग पर क्रमांक 01 से 07 तक की सात समाधिया है। **द्वितीय समूह** छतरपुर बस स्टेण्ड पर समाधि क्रमांक 08 से 12 तक पाँच समाधि है। **तृतीय समूह** में छतरपुर-नौगाँव पर दायीं ओर समाधि क्रमांक 13 से 14 तक दो समाधियाँ है। **चर्तुथ समूह** छतरपुर-नौगाँव मार्ग के बाई ओर क्रिश्चिन स्कूल के पीछे क्रमांक 15 से 19 तक की पाँच समाधियाँ है। **पंचम समूह** में सिद्ध गणेश मार्ग छतरपुर में क्रमांक 20 से 23 तक चार समाधियाँ है। एवं छठे समूह में विश्वनाथ कालोनी छतरपुर में क्रमांक 24 से 28 तक कुल पाँच समाधियाँ है, जिनका विवरण इस प्रकार है :-

समाधि क्रमांक 01 – हनुमान गिरी बाबा की समाधि है जो मध्य में निर्मित है। यह ऊँची जगती पर निर्मित है। इसमें मण्डप अंतराल और गर्भगृह है। मण्डप में प्रवेश हेतु तीन ओर मेहरावदार द्वार हैं। उसके ऊपर सुन्दर कंगूरों पर छज्जा है। छज्जे के नीचे चित्र बने हुये हैं। ऊपर कमलदल अलंकरण, मध्य में गुम्बद उसके चारों कोनों पर लघु शिखर और गुम्बद के सहारे आले निर्मित है। गर्भग्रह का आंतरिक भाग खाली है। जंघा भाग में सुन्दर आले उसके ऊपर लघु मंदिर शिखर कंगूरों पर छज्जा है। छज्जे के नीचे पृष्ठ में हनुमान, साधुओं के चित्रों का चित्रण है।

समाधि क्रमांक 02 – हनुमान गिरी बाबा की पत्नी की समाधि है। ऊंची जगाती पर निर्मित समाधि में गर्भगृह अंतराल ओर मण्डप का प्रवेशद्वार मेहारवदार है। यह बेलबूटों से अलंकृत है, ऊपर कंगूरा, छज्जा है। शिखर के मध्य खरबूजानुमा गोल गुम्बद है, उसके चारों ओर लघु शिखर, उसके मध्य गणेश प्रतिमा निर्मित है। इसी प्रकार दायीं ओर दुर्गा जी की प्रतिमा का अंकन है। अंतराल और गर्भगृह का जंघा भाग अलकृत है। ऊपर गोलाकार गुम्बद है। गर्भगृह का आन्तरिक भाग खाली है।

समाधि क्रमांक 03 – हनुमान गिरी बाबा की पत्नी की समाधि के दायीं ओर निर्मित समाधि है। ऊँची जगती पर निर्मित समाधि में गर्भगृह अंतराल और मण्डप है। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार तीन ओर निर्मित है। ऊपर खरबूजानुमा गोल गुम्बद है, चारों ओर लघु शिखर उनके मध्य आर्चनुमा आले में गणेश प्रतिमा उत्कीर्ण है, गर्भगृह भाग अलंकृत है। शिखर शंक्वाकार है। गर्भग्रह का आंतरिक भाग खाली है।

समाधि क्रमांक 04 – हनुमान गिरी बाबा की समाधि के बाई ओर निर्मित समाधि है। यह ऊँची जगती पर निर्मित समाधि में गर्भगृह अंतराल और मण्डप है। मण्डप का प्रवेश द्वार मेहरावदार है। यह तीन ओर से खुला है। ऊपर कंगूरों पर छज्जा है। शीर्ष भाग पर खरबूजाकार गुम्बद एवं उसके चारों ओर लघु छतररियाँ है। अंतराल भाग सादा है। गर्भगृह के शीर्ष पर शक्वाकार शिखर सामने के भाग पर लघु शिखर क्रमशः छतरी, पीछे की छतरी भग्न है। गर्भगृह का आंतरिक भाग खाली है।

समाधि क्रमांक 05 – हनुमान गिरी बाबा की समाधि के सामने की समाधि है। यह ऊँची जगती पर निर्मित समाधि चतुष्कोणीय है। प्रवेश द्वार मेहरावदार है, ऊपर कंगूरों पर आधारित छज्जा है। ग्रीवा भाग कमल पंखुड़ियों से अलंकृत है। शीर्ष पर गोल गुम्बद है। आंतरिक भाग खाली है।

समाधि क्रमांक 06 – हनुमान गिरी बाबा की समाधि के पीछे की समाधि है। यह ऊँची जगती पर अष्टकोणीय स्तम्भों पर आधारित है।

ऊपर अलंकृत कंगूरों पर सुन्दर छज्जे का अलंकरण है। ग्रीवा भाग में कमलदल का अलंकरण है। शीर्ष पर गोल गुम्बद है। आन्तरिक भाग खाली है।

समाधि क्रमांक 07 – छतरपुर से नारायणपुरा मार्ग पर निर्मित समाधि है। इसमे मण्डप, अन्तराल और गर्भगृह है। बाह्य भाग में सुन्दर कंगूरों तथा मण्डप पर गोल गुम्बद है। गर्भगृह के गुम्बद के चारों ओर लघु गुम्बद रहे होंगे, जिसमें पश्चिम की ओर का गुम्बद नष्ट हो गया है।

द्वितीय समूह में छतरपुर बस स्टेण्ड पर क्रमांक आठ से बारह तक पाँच समाधि है।

समाधि क्रमांक 08 – बस स्टेण्ड छतरपुर पर निर्मित समाधि है। यह ऊँची जगती पर निर्मित है, इसमें मात्र गर्भगृह है। गर्भगृह पर गोल गुम्बद है। उसमें चारों ओर मेहरावदार अलंकरण है। ऊपर कमलदल का सुन्दर अंकन है। यह समाधि लगभग 19वीं शती ईसवीं की है।

समाधि क्रमांक 09 – बस स्टैण्ड छतरपुर के श्री सतपाल सिंह के खेत में स्थित है। दायीं ओर प्रथम समाधि ऊँची जगति पर निर्मित है, समाधि में मण्डप, अन्तराल एवं गर्भगृह है, मण्डप का प्रवेश द्वारा बेलबूटों से अलंकृत है। अंतराल भाग में बाई ओर हनुमान एवं दायीं ओर गरुड़ की प्रतिमा निर्मित है। बाह्य भाग में कंगूरों पर मानव आकृतियाँ भद्र रथिका पर हनुमान, अस्पष्ट मूर्ति एवं एक ओर की भद्र रथिका पर पुरुष निर्मित है। समाधि का आंतरिक ऊपरी भाग विकसित कमल अलंकरण से अलंकृत है। गर्भगृह पर शंक्वाकार गुम्बद तथा उससे लगे हुये चार लघु शिखर है। मण्डप के ऊपर गोल गुम्बद है।

समाधि क्रमांक 10 – बस स्टेण्ड छतरपुर के श्री सतपाल सिंह के खेत के समाधि क्रमांक 09 के बायीं ओर स्थित है, ऊँची जगति पर निर्मित समाधि में मण्डप अंतराल और गर्भगृह है। जंघा भाग पर सुन्दर कंगूरों पर छज्जा है। गर्भगृह के ऊपर शक्वाकार गुम्बद उसके चारों ओर लघु शिखर है। मण्डप तीन ओर से खुला है, उसके ऊपर गोल गुम्बद है।

समाधि क्रमांक 11 – बस स्टेण्ड छतरपुर के श्री सतपाल सिंह के खेत में समाधि क्रमांक दस के बायीं ओर स्थित है। ऊँची जगती पर निर्मित लघु आकार की समाधि है, इसमें मात्र गर्भगृह है, समाधि का प्रवेशद्धार अंलकृत है। बाह्य भाग में कमलदल से अंलकृत है, शिखर गज पीठिका के आकार का है।

समाधि क्रमांक 12 – ऊँची जगती पर निर्मित यह जीर्ण शीर्ण अवस्था में है। यह पूर्वाभिमुखी है, इसमें मण्डप, गर्भगृह का शिखर शंक्वाकार है। इसमें चारों ओर लघु शिखर मेहरावदार है अलकरण है।

तृतीय समूह में छतरपुर नौगाँव मार्ग पर दायीं ओर समाधि क्रमांक 13 एवं 14 स्थित है।

समाधि क्रमांक 13 – ऊँची जगती पर निर्मित है। इसमें मण्डप, अंतराल एवं गर्भगृह है। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावरदार द्वार, ऊपर पुष्प गुच्छ अलंकरण ऊपर सुन्दर छज्जा उसमें ऊपर कमलदल अलंकरण है। शिखर पर शंक्वाकार गुम्बद है। अंतराल भाग पुष्प गुच्छों से अच्छादित है। गर्भगृह पुष्प गुच्छों से अलंकृत है।

समाधि क्रमांक 14 – ऊँची जगती पर निर्मित यह समाधि उ8राभिमुखी है। इसमें मण्डप, अंतराल और गर्भगृह हैं। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार है। द्वार के पार्श्व में मानव ओर सिरदल में देवी-देवताओं का अंकन है। शिखर पर शंक्वाकार गुम्बद है। अंतराल के बाह्य भाग में हनुमान, गणेश की प्रतिमा का अंकन है। गर्भगृह के शिखर पर शंक्वाकार गुम्बद, लघु शिखर, आमलक कलश का अलंकरण है।

चतुर्थ समूह छतरपुर नौगाँव मार्ग के बायीं ओर क्रिश्चन स्कूल के पीछे समाधि क्रमांक 15 से 19 तक पाँच समाधियाँ है।

समाधि क्रमांक 15 – ऊँची जगती पर निर्मित है। इसमें मण्डप, अंतराल और गर्भगृह है। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार है। ऊ पर सुन्दर कंगूरों पर छज्जा है। मण्डप के शिखर भाग पर शंक्वाकार गुम्बद है। गुम्बद के मध्य भाग में गणेश का अंकन है। ऊपर शंक्वाकार शिखर है। शिखर में पुरूष का अंकन है। समाधि लगभग 19वीं शती ईसवीं की है।

समाधि क्रमांक 16 – ऊँची जगती पर निर्मित यह समाधि उ8राभिमुखी है। इसमें मण्डप, अंतराल और गर्भगृह है। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार है। उसके ऊपर कंगूरों पर छज्जा है। चारों कोनो पर लघु शिखर तथा मध्य में शंक्वाकार गुम्बद है। गुम्बद के सम्मुख भाग में गणेश उत्कीण है। गर्भगृह के चारों कोनों पर लघु शिखर एवं मध्य में शंक्वाकार गुम्बद है।

समाधि क्रमांक 17 – ऊँची जगती पर निर्मित अष्टकोणीय है। यह आठ स्त6भों पर आधारित है। मकबरे में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार चारों ओर खुले हुए हैं, ऊपर सुन्दर कंगूरों पर छज्जा है। उसके ऊ पर कमलदल अलंकरण शीर्ष पर खरबूजा आकार का गुम्बद है।

समाधि क्रमांक 18 – ऊँची जगती पर निर्मित समाधि चतुष्कोणीय है। यह चार स्तम्भों पर आधारित है। इसके चारों कोनों पर लघु शिखर रहे होंगे जो नष्ट हो गये हैं। मध्य में खरबूजा आकार का गुम्बद बना है।

समाधि क्रमांक 19 – अष्ट स्तम्भों पर आधारित है। यह ऊँची जगती पर निर्मित अष्टकोणीय, आठ स्तम्भों पर आधारित है। ऊपरी भाग पर अलंकरण खरबुजिया आकार का गुम्बद है।

पंचम समूह में सिद्ध गणेश मार्ग छतरपुर में समाधि क्रमांक 20 से 23 तक चार समाधियाँ है।

समाधि क्रमांक 20 – श्री सुरेन्द्र गोस्वामी के मकान के बाई ओर स्थित है। इसका निमार्ण जमीन से प्रारम्भ कर तैयार किया गया है, इसमें गर्भगृह, अंतराल और मण्डप हैं। ऊपर अलंकृत कंगूरों पर

छज्जा है। शिखर भाग में शंक्वाकार शिखर एवं शिखर के चारों कोनों पर आठ लघु शंक्वाकार शिखर का निर्माण किया गया है, गर्भगृह के ऊपर शंक्वाकार शिखर, शिखर के चारों ओर लघु शिखर है।

समाधि क्रमांक 21 – श्री सुरेन्द्र गोस्वामी केमकान के दाँयी ओर स्थित है। इसमें मण्डप और गर्भगृह है। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार, ऊपर अलंकृत कंगूरों पर छज्जे निर्मित है। मण्डप का शिखर शंक्वाकार गुम्बद उस पर चारों ओर लघु शिखर एवं चारों कोनों पर शंक्वाकार लघु शिखर का अंकन है।

समाधि क्रमांक 22 – श्री सुरेन्द्र गोस्वामी के भवन के दाँयी ओर निर्मित है, इसमे गर्भगृह, अंतराल और मण्डप भाग है। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार, ऊपर सुन्दर कंगूरों पर छज्जा, शिखर पर सामने अलंकृत आले में गणेश की खण्डित प्रतिमा, कोनों पर लघु शिखर मध्य में शंक्वाकार गुम्बद है। अंतराल भाग के दाई अलंकृत आले में सिंह वाहिनी देवी का अंकन है। गर्भगृह पर शंक्वाकार गुम्बद का निर्माण किया गया है।

समाधि क्रमांक 23 – श्री प्रीतम सिंह सरदार जी के भवन के दाँयी ओर निर्मित है। यह पश्चिमाभिमुखी है। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावदार दरवाजा, ऊपर सुन्दर कंगूरों पर छज्जा, शिखर पर चार स्तम्भों पर आधारित छतरी निर्मित है। गर्भगृह के चारों कोनों पर लघु शिखर, मध्य में शंक्वाकार शिखर है। शिखर के ऊपरी भाग में आमलक कलश आदि का अलंकरण है।

छठे समूह विश्वनाथ कॉलोनी छतरपुर में समाधि क्रमांक 24 से 28 तक कुल पाँच समाधियाँ है।

समाधि क्रमांक 24– ऊँची जगती पर निर्मित समाधि में गर्भगृह और मण्डप है। मण्डप के ऊपर शंक्वाकार, गुम्बद, मेंहरावदार दरवाजे हैं, उसके ऊपर कमलदल अलंकरण है। गर्भगृह शंक्वाकार गुम्बद, चारो ओर मेहरावदार अलंकरण और उसके ऊपरी भाग कमलदल से अलंकृत है।

समाधि क्रमांक 25– ऊँची जगती पर निर्मित है। समाधि में गर्भगृह, अन्तराल और मण्डप भाग हैं। समाधि का बाह्य भाग सुन्दर कंगूरों पर छज्जे का अलंकरण से अलंकृत है। गर्भगृह के ऊपर शंक्वाकार गुम्बद हैं गुम्बद के चारों ओर लघु शिखर है। अन्तराल के ऊपर गज की खण्डित मूर्ति है, पुरुष लेटा हुआ दिखाया गया है। मण्डप का शिखर शंक्वाकार हैं, उसके चारों ओर लघु शिखर निर्मित है। मण्डप तीन ओर से खुला है। मण्डप में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार है।

समाधि क्रमांक 26– श्री मिहीलाल अहिरवार के मकान के पास यह समाधि स्थित है। समाधि ऊँची जगती पर निर्मित है। समाधि पर गोल गुम्बद, उसके चारों ओर मेहराबदार अलंकरण, उसके मध्य गणेश की खण्डित प्रतिमा और आलों के मध्य अस्पष्ट प्रतिमाओं का अंकन है।

समाधि क्रमांक 27– उत्तराभिमुखी है। इसमें मण्डप, अंतराल, और गर्भगृह है। गर्भगृह और मण्डप पर शंक्वाकार गुम्बद का निचला भाग कमलदल अलंकरण से अलंकृत है। समाधि में प्रवेश हेतु मेहरावदार द्वार है।

समाधि क्रमांक 28– विशाल आकार की समाधि है। मण्डप के ऊपर शंक्वाकार गुम्बद उसके चारों ओर लघु आकार के गुम्बद, अलंकृत भाग पर मेहरावदार झरोखे बने है। गर्भगृह पर शंक्वाकार गुम्बद है। उस पर अनेक लघु शिखर हैं। जंघा भाग पर सुन्दर कंगूरों पर छज्जे का अलंकरण है। ऊपर कमल दल का अलंकरण है।

उपरोक्त गुसाईयों की समाधियाँ क्षेत्रीय बुन्देलखण्ड के पँवार कालीन स्थापत्य कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

24, रामानुज नगर, राम वाटिका के पीछे, गोविन्दपुरी के सामने
सिटी सेन्टर, ग्वालियर (म.प्र.)मो0 - 9826341257

रोटी

–डॉ0 गौरीशंकर उपाध्याय 'सरल'

रोटी के हित जूझते नर नारी हर रोज।
दिन्नाँरात मेहनत करें, करें रोजी की खोज।।
रोटी बिन भूँके फिरे, भिकमंगे चहुँओर।
रोते बिलखे भूँकसें झेले पीरा घोर।
रोटी के बिन पेट में, जठरागिनी सताए।
कमजोरी पल पल डसै तन बल घटतौ जाए।।
रोटी सुख की मिलै तौ, सब कारज हौ ठीक।
भूँकें भजनउँ होय न, जा कॉनाँत सटीक।
रोटी के हित छूटते, कुटुम्य देस परिवार।
लाख कोस जाकें बसें, रोटी ढूँड़न हार।।
रोटी संग रोजी जुरी, मजबूरी कौ काम।
बिना काम के दाम ना, जीसें सब सुख धाम।।
रोटी बिन भौड़े लगे, सकल कुटुम्बी लोग।
रोटी के सुख साके सें, जुरैं समाजी लोग।।
रोटी कहती सबन सें, मिल बाँट सब खाँए।
आपापोई ठीक नई, धरम-करम घट जाए।।
रोजी रोटी देय जो, दाता धरम कमाए।
छीनें मूँ को कौर जो, पापी मनुख कहाए।।
मैनत की रोटी, रोजो दै सुख चैन।
काम चोर वेईमाननें, होत जेई दुख दैन।।
खूँन-पसीना एक कर, अन्न उगाए किसान।
भरें पेट के साव कौं जानें सकल जहाँन।।
खेतनकल कारखाना मे न, काम करें मजूर।
करें गुलामी पेट खों, जी सें जग मजबूर

-97/17 ए, सरल साहित्य संगम, झाँसी (उ.प्र.)
मो.- 9452921238

बुन्देलखण्ड के लोकदेवता : रक्कस बाबा

-डॉ. कामिनी

आस्था और विश्वास लोक-जीवन के मूल आधार हैं। ग्रामीण अंचल में लोकदेवता आस्था के प्रतीक हैं। हर अंचल की आत्मा होती है। इसी आत्मा को लोक-जीवन पुष्ट करते हैं। लोक का मन आस्था के मार्ग पर आगे बढ़ता है। गाँवों में लोक देवताओं को पूजने की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। रक्कस बाबा, गोड़ बाबा, दाने बाबा, मनियाँ देव, कारस देव, हीरामन, नगरे बाबा, प्यादी बाबा, रामजू बाबा, परीत बाबा, पठान बाबा, नारसिंग, घटौरिया, मसान, ठाकुर बाबा, भुमियाँ, बीजासेन, अघोरी बाबा के साथ-साथ पूरे बुंदेलखंड में हरदौल घर-घर पूजे जाते हैं। हर गाँव में ग्राम्य देवता विराजमान हैं। उनके 'थान' चबूतरे के रूप में या मठिया के रूप में बने हुए हैं। कुँअर सा. का घोड़ा खड़ा हुआ है। किसी पुराने पीपल वृक्ष के नीचे परीत बाबा का स्थान है।

रक्कस बाबा सबके यहाँ पुजते हैं। हिन्दुओं में हर जाति विशेष के यहाँ 'रक्कस' लगता है। रक्कस, स्थानीय शब्दावली का शब्द है। रक्षक तत्सम है। तद्भव में रच्छक हो गया है। रच्छा-रक्षा करने वाला देवता। भूमिदेव, बड़वारी के देवता हैं रक्कस बाबा।

रक्कस बाबा की पूजा, जिसे कलेऊ देना कहते हैं - मेंड़े पर अर्थात् बस्ती गाँव के बाहर, खेत की मेंड़ पर दी जाती है। बरिया या नीम के पेड़ के नीचे रक्कस बाबा का थान, चबूतरे के आकार में बना होता है और उस पर बाबा की 'मड़िया' बनी होती है। हर गाँव में एक स्थान होता है उनका जहाँ रक्कस दिया जाता है। पूजा को या कलेऊ देने को, रक्कस देना कहते हैं। लड़के के सात रक्कस दिये जाते हैं। पैदा होने के बाद बच्चे का झूला डाला जाता है। झूले के नीचे गोबर से लीप कर चौक पूरा जाता है। छह खूँट बनाये जाते हैं। घर-परिवार की स्त्रियाँ इकठ्ठी होती हैं। सात-सात पूड़ी ऊनके ऊपर लप्सी (गुड़ का हलुआ), नारियल फोड़कर गरी के टुकड़े और सात ककाा (छोटे कंकड़) रखे जाते हैं। दिया जलाकर होम किया जाता है। महिलायें उन खूंटों पर रखी गई पूड़िया और लप्सी, साथ में वहीं बैठकर खाती हैं। उन सात कंकड़ों को मनौती या बोलमा की तरह संभालकर घर में रख लिया जाता है। जब लड़के की शादी के पहले सातवाँ बड़ा रक्कस दिया जाता है, तब उन उठाये हुये कंकड़ों को सब सामान के साथ रक्कस बाबा के थान पर रख दिया जाता है। रक्कस बाबा बंशबेल बढ़ाने वाले देवता हैं। उनका प्रसाद कोई भी खा सकता है।

विश्वासों की डोर से बँधा हुआ है ग्रामीण समाज। उत्तर आधुनिकता और शहरीकरण की बयार नें इस आँचलिक संस्कृति पर भी हमले शुरू कर दिये हैं। फिर भी अभी गाँवों में बहुत कुछ शेष बचा है। यह आस्था परस्पर जोड़ती है। लोक शरीर है और संस्कृति आत्मा। लोक संस्कृति जीवन में उल्लास और ऊर्जा का संचार करती है।

बच्चे को झूला, झुलाते हुए महिलाऐं गाती हैं -

रक्कस बाबा के दये ललना,
मचल रये मोरे अँगना।।

अबतो 'बधाये' और 'सोहरे' गाने का चलन बढ़ गया है।

सांतवे रक्कस का बड़ा महत्व है। जिसे शादी के पहले मड़वा और तेल के दिन इतवार या बुधवार को देना आवश्यक है। वैसे तो ज्यादातर मेंड़े पर रक्कस देने की परम्परा है किंतु कहीं-कहीं 'जात-घाट' के कारण 'घिनौंची' पर भी रक्कस बाबा की पूजा कर देते हैं। घिनौंची को 'जलघरा' कहते हैं। पानी के बर्तन रखने का स्थान। वहां कोई पौधा-वृक्ष होना जरूरी है। धीरे-धीरे 'घिनौंची' अब समाप्ति की ओर है। 'चौका' लुप्त है। लीपना-पोतना, 'चौक'-'उरैन' गायब है। मिट्टी की खूशबू ढूँढना पड़ती हैं। सब नई संस्कृति ने निगल लिया। बहुत कम घरों में अपनी संस्कृति की सुगंध है।

जब लड़के का सातवाँ रक्कस दिया जाता है, तब बुआ नये कपड़े लाती है। जोटा से दिया जाता है। जोटा-जोड़ा अर्थात् दो भाइयों का जोड़ा। यदि सगा भाई नहीं है तो मौसेरा, फुफेरा भाई हो। बुआ माहुर लगाती हैं और छूटा लाती हैं। 'छूटा' कमर में पहिनने वाला चाँदी का आभूषण होता है। नई पीढ़ी 'छूटा' का नाम नहीं जानती। बाजार से लाल छूटा- रक्कस के नाम से फु आ खरीदती हैं, इस 'छूटे' को गले में भी पहिन लिया जाता है। मिट्टी के दो 'करबा' (मिट्टी का बड़े दिये के आकार का बर्तन 'करबा' कहलाता है) जिनमें एक करबे में चावल और दूसरे में देवल (दले हुए चने) रक्कस बाबा पर चढ़ाये जाते हैं। गोबर के गनेसजू बनाकर उनका होम किया जाता है। मेंड़े पर गीत गबने लगते हैं -

डारें गुरज पै डैरा, रक्कस बाबा बड़े अलबेला।
डारें पहारिया पै डेरा, रक्कस बाबा बड़े अलबेला।
सोने की थारी में भोजन परोसे, अरे जेबत में डार आये सेला,
रक्कस बाबा बड़े अलबेला।
झनझन झाड़ी गंगाजल पानी, पीवत में डार आये सेला।
रक्कस बाबा बड़े अलबेला।
नौ रंग पलका बिछे रंग पाये, सोबत में डार आये सेला।
रक्कस बाबा बड़े अलबेला।।

बुलउआ में आई सभी महिलाओं को चार-चार लुचईं (पूड़ी) उन पर लप्सी, कहीं-कहीं कचौंदा (गुड़ और तिली का बनता है) रखकर खूँट बाँटे जाते हैं। सब साथ-साथ बैठकर वहीं खाती हैं। रक्कस बाबा का दरबार सज जाता है। ढोलक की थाप गूँजती है -

रक्कस बाबा कौ भरो दरबार, दिवाले में रौंना जड़े।
तातीं जलेबीं दूध के लड्डुआ, जेबें जसोदा के लाल।
दिवाले में रौंना जड़े।।
सोनें के लोटा में जल भर ल्याये, पीवें जसोदा के लाल।
दिवाले में रौंना जड़े।
पाना-पचासी के बीड़ा लगाये,चाबें जसोदा के लाल।
दिवाले में रौंना जड़े।
रक्कस बाबा कौ भरो दरबार।।

दरबार की शोभा अवर्णनीय है। अद्भुत। रक्कस बाबा किसी पर भरते नहीं हैं। वे तो बड़वार चाहते हैं। 'लगना' देवता नहीं हैं। कोई-भी खाय। सब पूजें। न भी पूजें, किसी को परेशान नहीं करते। वे तो वंशवेल बढ़ाते हैं -

उलियन में मचल रयेरे,
रक्कस बाबा तिहारे ललना।
ताती जलेबीं दूदा के लड्डुआ,
जेबें न जेबन देबे, तिहारे ललना।
झनझन झाड़ी जल भर ल्याये
पीवें न पीवन देबें, तिहारे ललना।
नौ रंग पलका बिछे रंगपाये,
सोबें न सोबन देबैं, तिहारे ललना।
सोरा सुपेती लाल रजइयाँ,
ओढ़ें न ओढ़न देबें, तिहारे ललना।
चंदन की चौपर, सुरज के पांसे,
खेलें न खेलन देबें, तिहारे ललना।
रायसेन फूलन के पंखा, फूलन के पंखा,
ढोरें न ढोरन देवें, तिहारे ललना।
उलियन में मचल रये रे, तिहारे ललना।
रक्कस बाबा तिहारे ललना।।

कहीं-कहीं लड़की के पाँच रक्कस लगते हैं किंतु लड़की के रक्कस देने का प्रचलन कम स्थानों पर हैं, सब जगह लड़के के ही सात रक्कस लगते हैं। सवा पाँच सेर की पूडियाँ और लप्सी बनती है। छोटा बच्चा नया कपड़ा नहीं पहिन सकता। जब बच्चा रोता है, खीझता है, तो रक्कस बाबा को याद किया जाता है। उनका नाम लेकर कपड़े को धरती पर फेरा जाता है और बच्चे को पहनाया जाता है। सात कलेऊ देने का रिवाज है। ये रीति-रिवाज ग्राम्य संस्कृति के प्रतीक हैं। ये संस्कार सिखाते हैं, जीवन के विविध पक्षों की मान्यताओं को । शादी के बाद लड़का स्वतंत्र हो जाता है। अपने जीवन को अपने तरीके से जीने के लिए। ग्राम्य संस्कारों के अपने अर्थ और मायने हैं।

लड़के के विवाह के बाद बहू की विदा होकर आती है, तो बहू के मायके के मेंड़े पर भी रक्कस बाबा की पूजा लगती है। मेंड़े पर नारियल और बताशा चढ़ाये जाते हैं। रक्कस बाबा को मना लिया जाता है। लड़की के साथ कोई देवता लगकर न आयें - इसलिए सभी लोक देवताओं का स्मरण किया जाता है -

गुह लइयो राग रघुवीर वीर, हमकों गेंद गजरा।
जौ गजरा रक्कस बाबा कों सोहै,
उनके निर्मल सरीर, हमकों गेंद गजरा।
जौ गजरा धरती माता कों सोहै,
उनईं कौ भारी सरीर, हमकों गेंद गजरा।
जौ गजरा माता रानी कों सोहै,
उनईं केनिर्मल सरीर, हमको गेंद गजरा।
जौ गजरा हरदौल लाला कों सोहै,
उनईं के पतरे सरीर, हमकों गेंद गजरा।।

फूलों के गजरों से देवताओं को प्रसन्न किया जाता है। ये ग्राम्य-संस्कार, लोकरीति-रिवाज विश्वास और आस्था को मजबूती प्रदान करते हैं। वंशवेल बढ़ाने वाले रक्कस बाबा, रक्षक देवता भूमिदेव हैं। बुंदेलखंड के घर-घर में पूजे जाने वाले लोकदेवता। लोक संस्कृति के आधार ग्राम्य संस्कारों के स्वरूप, जन-जन की आस्था और विश्वास, परम्पराओं और मान्यताओं की विशिष्ट पहचान रक्कस बाबा।

-नाजिर की बगिया, सेंवढ़ा
जिला दतिया (म.प्र.), 475682 मोबा.- 9893878713

सपने निरे दिखातइ कुरसी

--डॉ0 इन्द्रपाल सिंह परिहार 'अभय'

जब अपनी पै आतइ कुरसी, का का न करवातई कुरसी।
नाँव मान धन दौलत पाबे, सब खौं रोज लुभातइ कुरसी।
चोरी, हत्या, लूट, डकैती, सबरे काम करातइ कुरसी।
चारो, खाद, बॉध पुल, गोला, बड़े चाव सें खातइ कुरसी।
करत सबइ दिन, छूँछे बादे, सपने निरे, दिखातइ कुरसी।
ऐलकार जब हो न मानैं, मुरगा उनैं बनातइ कुरसी।
'अभय' बड़ी कुरसी की महमाँ, गजब हजारन ढातइ कुरसी

-परिहार पुरा, नदीगाँव,
जालौन (उ.प्र.), 285206
मो.- 7897049524

लोक-कलाओं के प्रकार

-सरोजा शिल्पी

बुंदेलखण्ड में लोक-कला कौ इतिहास भौत पुरानो व समृद्ध रवो है। आदिम अवस्था के गुफन में रैवे बारे मनुष्यन द्वारा बनाये गये चित्र बुंदेलखण्ड के पहाड़न की गुंफा में मिलत हैं। ई.पू पांच हजार साल सैं भी पैले के चित्र इतै की विंध्य पहाड़न कीं गुफ न में चित्रित हैं। जिला दमोह, बाँदा, होशंगाबाद, छतरपुर, पन्ना, झाँसी, दतिया जिला के क्षेत्र की गुफन में जो चित्र पाये गये हैं। वे लोक चित्रकला परम्परा की शुरूआत माने जात हैं।

विध्य क्षेत्र के घने जंगल, गुफायें, और प्राकृतिक सुन्दरता आदि मानव की शरणस्थली मानी जात है। ई कौ प्रमाण जे गुफायें व शैल-चित्र हैं। भाषा के विकास सें भी पैलें आदि मानव ने अपनी भावनन खौं चित्रन के रूप में पथरन पै उकेरो। इन में मानव आकृति, धनुष-बाण, बेल-बूटा, जीव-जन्तु, आखेट, सूरज-चँदा, सुरौतिया, नाग, घोड़ा, हाथी, मोर, चिरइया, तोता, आदि। इतै के लोक जीवन पै आदिवासी संस्कृति कौ प्रभाव रवो है। जौ क्षेत्र ॠषियन की तपो-भूमि होवे के कारण (महर्षि वेद, व्यास, ॠषि बाल्मीकि, वृहस्पति जी, अंगिरा जी, परशुरामजी, मारकेण्डय जी, पाराशर जी) इतै की लोक-चित्रकला पै मिलो-जुलो प्रभाव देखवै खों मिलत है। लोक-चित्रकला मानव जीवन वे मंगल भाव हैं जिन कौ प्रदर्शन चित्रॉकन के माध्यम सैं करो जात है। लोक-चित्रकला जीवन में स्फू र्ती, ऊ र्जा, आनंद कौ संचार करत है। लोक-चित्रन सें हमाओ अभिप्राय वे चित्र हैं। जो पारम्परिक रूप सें लोक पर्व, त्योहार, अनुष्ठान व संस्कारन पै बनाये जात हैं। इन लोक चित्राँकन में आदर्श संदेश दुकोरत है। जे नीरस जीवन में भी उत्साह भरवे की क्षमता रखत हैं। हर आकार कौ अपनौ अलग-अलग महत्व होत है, और हर चिह्न के अपने कछु फल व शुभ संकेत होत हैं। जे कल्याणकारी और सृष्टि की रचना में सहायक हैं। जे शरीर, आत्मा, और ब्रह्म खों एकाकार करवै की क्षमता रखख्त हैं। जो ''सत्यम-शिवम-सुन्दरम'' पै आधारित होत हैं। इन लोक-कलाओं में सामाजिक सत्यता, शिवरूपी कल्याण की भावना, आत्मरूपी सुन्दरता पाई जात है। लोक-चित्रकला के विकास में नारियन की विशेष भूमिका रई है।

उननें दीवारें, आँगन, दुरैं, चौखट, धोतीं, पत्ता, मटका, इतै तक कै खावे के पकवानन पै भी कई तरा कीं आकृतियां बनाईं हैं। जे गाँव-खेरे के जीवन में उत्साह, साहस और विपछियन सें लड़वे की ताकत भर देत हैं।

लोक-कला खौं मुख्य रूप सें चार भागन में बाँटों जा सकत है।

(१) आधार भूमि के अनुसार चित्राँकन :-

(अ) **भूमि चित्रण** - धरती पै बनाये जावे बारे चिछोर।

(ब) **भित्ति चित्रण** - भीत पै बनाये जावे बारे चित्र।

(स) **पट चित्रण** - कागज, कपड़ा, पै बनाये जावे बारे चित्र।

(द) **देह चित्रण** - शरीर पै बनाये जावे बारे चित्र।

(२) विषय के आधर पर करो गवो चित्रण :-

(अ) **अनुष्ठानिक चित्रण** - जैसें नौरता, करवा-चौथ।

(ब) **धर्मानुष्ठानिक चित्रण** - जैसें दीवारी, दशहरा।

(स) **सामाजिक चित्रण** - जैसें हरछठ, कुनघुसू, पूनो।

(द) **आध्यात्मिक चित्रण** - जैसें कृष्ण-जन्माष्ठमी, गणगौर, नागपंचमी, रक्षा-बंधन।

(३) माध्यम के आधर पर चित्रण :-

(अ) **गोबर** - जैसें नागपंचमी।

(ब) **खड़िया, गेरू** - जैसें दीवारी कौ सुराँतिया।

(स) **रंग**-जैसें पिसे चाउर, दूधिया पथरा, जैसें नौरता के चौक

(४) लोक संस्कारन पै आधरित चित्रण :-

(अ) **जन्म संस्कार के चित्र**-जैसें चरुआ, छटी अलंकरण, साँतिया।

(ब) **कुल देवता के चित्र** - जैसें हाँते, पुतरिया।

(स) **ब्याओ के चित्र** - जैसें गनेश जू, शिव-पार्वती, दीवार, पै कलश, हाथी, घोड़ा पै सवार, दूला, डोला

(द) **आध्यात्मिक चित्रण** - जैसें कृष्ण-जन्माष्ठमी, गणगौर, नागपंचमी, रक्षा-बंधन।

(१) आधार भूमि के अनुसार चित्राँकन :-

आधार भूमि के अनुसार चित्रण वो कौआउत है जो चित्रण कौनऊ आधार लै कैं करो जात है।

(अ) **भूमि चित्रण** - भूमि-चित्र वे कये जात हैं। जो धरती खौं लीप-पोत कैं फिर ऊ पै समय के अनुसार चित्रण करो जात है। जे तीज-त्यौहार, उत्सव, पूजा आदि पै बनाये जावे बारे चित्र होत हैं। विशेष रूप सें विभिन्न प्रकार के चौक आदि। इन चित्रन में बिन्दु केन्द्रीय प्रतीक होत हैं। बिन्दु सृष्टि कौ केन्द्र मानो जात है। एई के संगै ई खौं ब्रह्मा, विष्णु और शंकर जू की शक्तियन कौ एकाकार रूप ब्रह्म भी कई जात है। जौ ब्रह्माण्ड और आसमान कौ प्रतीक भी मानो जात है। बिन्दु सैं बनतीं हैं रेखायें जे रेखायें सीधीं-खड़ी बनाईं जात हैं। जे गति और विकास कीं प्रतीक हैं। और तिरछीं रेखायें आगे बढ़वे कौ संकेत देतीं हैं। तरंगायित रेखायें प्रवाह खौं दर्शातीं हैं। आड़ी या परीं रेखायें अगति और स्थिरता कौ प्रतीक होत हैं। एक-दूसरे खों काटतीं रेखा में विरोध, संघर्ष और युद्ध खौं प्रदर्शित करतीं हैं। तीर के जैसीं दोई

तरफ बढ़तीं रेखायें पूरे विकास कौ प्रतीक हैं। समकोण पै मिलती रेखायें उदासीनता कौ प्रतीक हैं। ऐई बिन्दु सें त्रिकोण की उत्पत्ति भई है। तीन सीधीं रेखायें बिन्दुअन पै मिल कें तीन कोण बनात हैं।और तीन के संगम कौ अर्थ है, तीन देव-ब्रह्मा, विष्णु, महेश, तीनों देवीं जू-महालक्ष्मी,महासरस्वती, महाकाली तीन गुण-सतो गुण रजो गुण, तमो गुण, तीन शक्ति-ज्ञान, इच्छा, क्रिया तीन काल भूतकाल, वर्तमान काल, भविष्य काल। अपने आधार पै खड़ो ऊर्ध्वमुखी (सीधो) त्रिकोण-पर्वत, आगी, और शंकर जू कौ प्रतीक है जब कै अधोमुखी (ओंदौ) त्रिकोण पानी और शक्ति को रूप मानो जात है और दोइन खौं मिला कें बनो षटकोण शिव और पार्वती और पुरूष व नारी के मिलन सें सृष्टि कौ प्रतीक है जेई बिन्दु चौकोर में अपनो विस्तार पा लेत है। जौ शक्ति की पूर्णता कौ प्रतीक मानो जात है। ई के अलावा जौ धरती व आकाश कौ भी प्रतीक मानो जात है। जौ चौकोर ब्रह्माण्ड,हवा,नाद कौ भी प्रतीक होत है। जौ गति और गति-मंडल कौ भी प्रतीक है। चौकोर चक्र काल, सृष्टि, उत्थान, और पतन की गति खौं भी प्रदर्शित करत है।

चौक पूरबे की प्रथा पूरे बुंदेलखण्ड में है। जे पिसी के चून या पिसे चाउर, हरदी, रोरी, सें पूरे जात हैं। कौनऊ भी पूजा अनुष्ठान होये विना चौक पूरें शुरूं नईं होत है। लिपी-पुती धरती पै सबसें पैलें चार दली या अष्ट दली कमल जरूर बनावो जात है। अष्ट दल-आठ सिद्धी, आठ दिशा, आठ वर्ग(आयुर्वेद के)अष्टाँग योग कौ, जौ अष्ट दल कमल प्रतीक मानो जात है। फिर ऊ के ऊपर पटाधर कैं नौनौ लाल रंग कौ आसन बिछा कै ऊके ऊपर भगवान विराजमान करके पूजा करी जात है। ई क्षेत्र में कई चौक तो भौतई प्रसिद्ध हैं। जैसें व्याव के चड़ाये कौ चौक, नौरता के चौक आदि। ये चौक सुख, समृद्धि और जीवन में पूर्णता के प्रतीक है।

भूमि चित्रण कौ उदाहरण-

गैया कौ गोवर मँगवो मोरी सजनी
ढ़िगधर अंगन लिपावो महाराज।
मुतियन चौक पुरावो मोरी सजनी
कंचन कलश धरावो महाराज।।

(ब) **भूमि-चित्रण** - भित्ति-चित्र वे लोक-चित्र होत है जो भीत पै बनाये जाते हैं। जे दो भाग में बाँटे जा सकत हैं। एक वे भित्ति-चित्र जो महिलाओं द्वारा तीज-त्यौहार पै कथाओं और त्योहारन के अनुसार लिखे जात हैं। दूसरे वे जो ''चित्तेउरन''द्वारा अपनी आजीविका चलावे के लाने ब्यावो-सादियन पै परम्परागत रूप सें बनाये जात हैं। जैसे-ब्यावों के मड़ुआ तरें कौ खँव, घर के मुख्य द्वारे की दीवार पै बनाये जावै बारे चित्र आदि। जे चित्तेउर परम्परा कौ पूरौ-पूरौ ध्यान राखत हैं। इनकौ जीवन पूरी तरा सें चित्र लिखबेई पै निर्भर होत है जे चित्र लिखबे के रूपइया तौ लेतई हैं संगै-संगै नेग के रूप में अनाज (केनौ)और कपड़ा सोई लै जात हैं। खुशी कौ मौका होवे के कारन सबई जने इनै रूपइया और नेग खुशी सें देत हैं।

पैले वर्ग के चित्रण में घर कीं महिलायें उपास, तीज-त्योहारन में घर की दीवारन पै समय के अनुसार चित्रण करतीं हैं। जे चित्र धार्मिक और सामाजिक दोई तरा के होत हैं। जे चित्र पिसे चाउर के घोल गेरू, घी में घुरी रोरी, हरदी आदि सें जाँदातर लिखे जात हैं।

इनमें सूरज-चँदा,शंकर-गौरा जू,श्री लक्ष्मी-नारायण, फूल-पक्षी, कलश,चरण, शंख, चक्र, कमल, गऊ माता कृष्ण की लीलायें, मछरी, त्रिशूल, नाग, हाथी, मोर, तोता, मैना, सुराँतिया, तुलसी, हरछट, दिवारी, रक्षा-बंधन, दशहरो, मैर कौ चित्र आदि।

दूसरे वर्ग में वे भित्ति चित्र आउत हैं जो कै व्यावसायिक चिते उरन द्वारा लिखे जात हैं। जौ चित्रांकन दीवार और लकरिया, बॉस आदि पै रंगन द्वारा करो जात है। जैसें व्याव कौ खंब, बर्तन-भाड़े, टुकना, टिपारो, बिजना, मटका आदि। और घर के मुख्य द्वारे की दीवारन पै। जे चित्र शुभ-सूचक और लोक हितकारी माने गये हैं। सुख और समृद्धि के सूचक भी माने जात हैं। बुंदेलखण्ड में युद्ध की परम्परा रई है। ऐसौ कौनऊँ युग नईं रओ जी में वीरन ने बलिदान न दवो होय, और नारियन ने जौहर न करो हो। एई कारण सें अपने इतै लाल रंग या गेरू सें भित्ति-चित्र जादाँतर बनाये जात हैं।और दीवारन पै उन वीरन की गाथायें भी उकेरीं जातीं हैं। विशेष औसरन पै कछू चित्र कृषि प्रधान देश होवे के कारण कृषि प्रकृति से संबंधित भी बनाये जात है। अधिकतर देवतन के चित्र गनेश, शिव-गौरा, श्री सीता-राम, के व्याओ के, श्री फल धरे कलश, बेल, बूटा, सजे घोड़ा, सजे हाथी, बरात, सुराँतिया, तोता, सूरज-चँदा, श्रवण कुमार आदि। जे चित्र अनेक मंगलन कौ प्रतीक माने जात हैं। जैसें-हाथी ऐश्वर्य कौ, घोड़ा शक्ति व गति कौ, और मारे प्रेम कौ, ताता व मछरिया सँपन्नता कौ, नाग इच्छा शक्ति कौ, कलश पूर्णता कौ, चँदा-सूरज-प्रकाश, बुद्धि, सत्य कौ प्रतीक हैं। भित्ति-चित्रण कौ क्षेत्र भोतई बड़ो है। भित्ति-चित्रन सें सजीं दीवारें भौतई नौनी लगतीं हैं। जे चित्र केवल दीवारन कीं शोभई नईं बड़ाउत जे जीवन में उत्साह भरवै को काम भी करत हैं।

एक उदाहण भित्ति चित्रण कौ-

तिरिया अपने कारने, लिख पूजत है भींत।
सुफल होय मनकामना, तुलसी प्रेम प्रतीत।।

(स) **पट-चित्रण** - पट-चित्र वे लोक-चित्र होत हैं जो कागज या कपड़ा पै बनाये जात हैं। कपड़ा पै बनाये जाबे बारे चित्रन में यज्ञ कीं नव-मातृकायें आदि स्थापितहोतीं हैं। जे शुद्ध घी सें बनाईं जाती हैं। कुल देवता की पूजा कौ फरका। फरका हाँत कौ

बनौ(कतो)औरहाँत कौ बुनो खादी कौ एक तीन फिट लम्बौ एक टूँकाहोत है। जी पै हरदी सें अपनी कुल परम्परा के अनुसार चित्र बना कें ऊ खों पटा पै धर कें ऊ पट-चित्र पै अपने कुल देवता की पूजा करी जात है। श्री कृष्ण जन्माष्टमी कौ चित्र भी ऐंई श्रेणी में आउत है। दिबारी पै भी कपड़ा पै चिकोणी और चौकोर चित्र गेरू सें बनाये जात हैं। पुराने जमाने में कपड़ा पैई संदेशे भी लिख कें भेजे जातते वे धार्मिक पुस्तकन पै भी कपड़ा के आवरण चढ़ा कें उन पै विषय से संबंधित चित्र बनाये जातते। बुंदेलखण्ड में जब बिटिया खों ससुराल सें पैली बेर लुआउन जात हैं सो मिठाई की मटकी के संगे एक धोती जात है जी खों हरदी सें रंग कें माहुर और सिंदूर सें ऊ पै तरा-तरा कीं आकृति बना कें भेजी जात है। पट-चित्र पै कवि ईसुरी जू कौ एक उदाहरण देखें -

जी पै लिखीं पपीहा मोरें, ऐसी अँगिया तोरें।
मुतके लाल मुनइयाँ लिपटे,चिरवा चारु चकौरें।
पीरीं-हरीं चिरइयाँ चिपकीं, पीरीं-हरीं चिरइयाँ चिपकीं
सुआ, मुरग, मुख मोरें।

कपड़ा के अलावा पान, पीपल, केला के पत्तन पै भी पूजा में चित्राँकन करो जात है। वो भी पट-चित्राँकन में लेखो जात है। ऐंई के संगे चमड़ा पै चित्राँकन की परम्परा भी अपने क्षेत्र में पुराने जमाने सें चली आ रई हैं। जैसें-पर्स, जूता, मियाँन ऐंई श्रेणी में आउत हैं।

(द) **देह-चित्रन** – बुंदेलखण्ड में देह-चित्रण की प्रथा पुराने जमाने सें चली आ रई है। आदिवासियन में ऐसी मान्यता है कै गुदना मरवे के बाद लौ संगे जात हैं। ई सें देवता भी खुस रत हैं और शरीर भी स्वस्थ्रत है नारियन कौ तौ जौ सच्चो श्रृंगार होत है काय कै ई खों सौभाग्य को प्रतीक भी मानो जात है। गुदना की स्याही रमतला सें बनाई जात है। ई में काजर फेंट कें गाड़ी स्याही के रूप धरो जात है और ई में सुई डुबो डुबो कें गुदना गोदे जातते बाद में गोवर और पानी सें धोय से गुदना पकत नई हते। आज के आधुनिक युग में गुदना की मशीन आ गई है। जीसें गुदना गुदवावे में सुविधा हो गई है। जीसें गुदना गुदवावे में सुविधा हो गई है। सो नये युग में गुदना के आकार सोई बदल गये हैं। जो आज कौ फैशन हो गओ। पैलें गाल,डाड़ी, पै बूँदा, बाँह पै सूरज-चंदा फूल , नाम, पाउन पै घोड़ा,फूल, बिछिया, पुतरियाँ,मछरियाँ हाँत पै सीता कौ हाथ, सीता रसोई, मोर सबसें श्रेष्ठ चुरिया मानी जात है। ई में सिंहासन, सूरज, घोड़ा की जोड़ी, फूल, छत्र दानन कौ समूह खों संगै गुदवावे खों चुरिया कत हैं। सिंहासन धरती कौ, सूरज नक्षत्रन कौ, घोड़ा शक्ति कौ, फूल प्रसन्नता कौ छत्र आकाश कौ, और दाने अनाज की समृद्धि कौ प्रतीक माने जात हैं। आदिवासियन में जो भी मानो जात है कै गुदना ऊपरीं शक्तियन सें भी रक्षा करत हैं। गुदना गुदवावै में पीड़ा भी मौत होत है। अकेले गुदवावे कौ मोह भी नईं छूटत तो !

ईसुरी जू की फाग कौ उदाहरण देखैं -

गुदना गुदवाये रो दवो तो, तनक दरद न सवो तो।
अँसुआ चुंए गिरे गालन पै, रन-बन काजर बवो तो।
आँखे मींच ननद बारी खौं, दोऊ हाँतन भर लवो तो।
''ईसुर'' प्रान छनक गये मोरे, विधना औड़ौ भवो तो।

एक फाग में कवि ईसुरी ने गुदना की सुन्दरता कौ वर्णन करो है -

गुदना गुदवाये तन गौरे, खुले दरस भय तोरे।
डाड़ी पै बूँदा है सुन्दर, मुख चँदा के दोरे।
कौंचन-कौंचन गुदे पपीरा, लिखीं बाँह पै मोरें।
''ईसुर'' पाँव पछेला देखे, पुतरी दो कर जोरें।

ईसुर जू कीं इन पंक्तियन सेंई दें चित्रन की लोकप्रियता कौ पतो चलत है। माहुर और मेंहदी भी देह चित्रण के भीतरई लेखे जात हैं। जे भी मंगलकारी और सोभाग्य के प्रतीक होत हैं।

माहुर – बुंदेलखण्ड में माहुर कौ उपयोग लगभग सबई शुभ ओसरन पै करो जात है। माहुर नाउन द्वारा पाउन के पंजन में ऐड़ी सें लै कें अंगूठा सहित चारऊ उँगरियन में लगाओ जात है। क्वारीं बेटी बिना हरदी के और सुहागनन खौं पैलैं गीली पिसी हरदी पूरे पंजा पै लगाई जात है। फिर रुई सें चारऊ तरफ माहुर लगाओ जात है। उंगरियन पै टिपकीं धरीं जात हैं। फिर चिरइयाँ काड़ी जातीं है। चिरइयन के लाने दो रेखायें और एक बिंदी कौ उपयोग करो जात है। रेखायें पंख व बिन्दी मूड़ कौ प्रतीक होत है। चिरइयाँ प्रगति व गति कौ प्रतीक मानी जात हैं। जो सौभाग्य सूचक मनो जात है। ई कौ वरनन ''ईसुरी'' ने ऐसें करो है उदाहरण -

पिया कैसें डुलाऊँ रस के बिजना,
नरम कलाई गरय ककना।
सारी के भार कमर मोरी दूखे,
माहुर भार उठैं पग ना।
पिया कैसे डुलाऊँ रस के बिजना।

मेंहदी – मेंहदी भी मंगलकारी और सौभाग्य कौ संकेत देत है। मेंहदी सावन तीज, रक्षा बंधन, तीजा, व्यावो-सादियन में विशेष रूप सें रचाई जात है। ई में औषदीय गुण भी पाये जात हैं। जा अनिष्ठ सें भी रक्षा करत हैं। पुराने कई चित्रन मूर्तियन में महिलायें आपस में मेंहदी लगाती भी दिखाईं गई हैं। मेंहदी के बारें में संयोग और वियोग दोई शैलियन में गीत रचे गये हैं।

संयोग गीत- कारे-कारे बदरा बैरी ऐसे बरसियो,
पिया न छोड़े मड़इया।
साउन मइना गोरी मेंहदी रचा लेब,
नैनन में डार कें कजरिया।
वियोग गीत- देवरा रचाई दोई छींगरी, सौदागर लाल
भौजी रचाई दोई हाँथ, माँदी राचनू मोरे लाल।
देवरा बताये अपनी माई खौं, सौदागर लाल,
हम किये बतायें दोई हाँथ, माँदी राचनू मोरे लाल।।

(2) विषय के आधार पर करौ गओ चित्रण :

विषय के आधार पर बुंदेलखण्ड में लोक चित्रांकन की परम्परा भौत पुरानी मानी गई है। हर चित्र कौनऊँन कौनऊँ विषय पैई आधारित होत है। ईखौं चार भागन में बाँटो गवो है।

(अ) अनुष्ठानिक चित्रांकन - जैसें नौरता, करवा चौथ।

(ब) धर्मानुष्ठानिक चित्रांकन - जैसें दीवारी, दशहरा।

(स) सामाजिक चित्रांकन - जैसें हरछठ, कुनघुसू, पूनो।

(द) आध्यात्मिक चित्रांकन – जैसें कृष्ण-जन्माष्ठमी, गणगौर, नागपंचमी, रक्षा-बंधन

(अ) अनुष्ठानिक चित्रांकन- जा लोक-चित्र परम्परा वे लोक-चित्र हैं जो पूरी तराँ सें अव्यावसायिक हैं। कैवे कौ मतलब जौ कैअनुष्ठानिक चित्रण तीज-त्यौहारन के वे कौ मतलब जौ के आनुष्ठानिक चित्रण तीज-त्योहारन पै घर की नारी स्वयं बनाती हैं। इनमें आनुष्ठानिक और चिंतन के व्यापक अर्थ समाये होत हैं। इनकौ लक्ष्य देवतन खौं प्रसन्न कर कैं लोक कल्याण और लोकहित की भावना चुकी होत है। जे लोक-चित्र लोक अहित करवैवारी असुरीं शक्तियन के विरुद्ध संघर्ष करवे के लाने महाशक्ति जुटाउत है जौ उनकौ संहार कर सकें। जैसें क्वार की नौ दुर्गा में खेलो जावे बारौ बिटियन कौ खेल नौरता । ई खेल की लोक कथा के अनुसार ''सुआटा'' नाम कौ एक असुर हतो। वो कन्यन खौं उठा लै जात तौ। जब माता पार्वती जू कौ अवतार भवो सो उनके पिता जी ने ऊ दानों सें कई के तुम बिटियन खौं उठा कें मार कें ना खाव। आज सें बिटियाँ तुमाई पूजा कर हैं सो वो मान गवो माता गौरा ने सब बिटियन की रक्षा करीती। सो जबई सौ नौरता या सुआटा कौ अनुष्ठान होन लगो। ई में बिटियाँ नौ दिना माता गौरा और शिव पंथोला के रूप में पूजती हैं। छोटे से चौतरा पै गौरा देवी खौं विराज कैं पूजा करतीं हैं। पीछे की दीवार पै सुआटा, राक्षस, सूरज, चंदा, की माटी कीं मूर्ति बना कैं नौ दिना पूजती हैं और बड़े चौतरा खौं लीप-पोत कैं तरां-तरां के रंग-बिरंगे चौक पूरतीं हैं। करवा-चौथ की पूजा उपास सुहागने अपने पति की लंबी उमर के लाने करतीं हैं ई में भी लोक चित्र बनावों जात है।

(ब) धर्मानुष्ठानिक चित्रण- धर्मानुष्ठानिक चित्रण में दशहरे व दिवारी जैसे लोक-चित्रण खौं सामिल करौ जा सकत है। दशहरा विजय व दिवारी प्रकाश कौ पर्व है। ई में भगवान रामचन्द जू की पूजा करी जात है। काय कै ई दिना भगवान ने रावण जैसे असुर खौं सेना सहित मार कैं धर्म की स्थापना करीती। जौ अधर्म पै धर्म की जीत को पर्व है। ई दिना सवेरे सें मछरियाँ और नीलकंठ पक्षी के दर्शन शुभ माने जात हैं। ई दिना की पूजा में एक लोक-चित्र बना कैं विस्तार सें पूजा करी जात है दिवारी पै लक्ष्मी जू व विष्णु भगवान की सुरांती और सुरांता के रूप में पूजा करी जात है। रात के मुहू में लिपी-पुती दीवार पै गेरू सें सुरांती-सुरांता बनाये जात हैं। जे लोक देवी-देव भित्ति-चित्र के रूप में लिखे जात हैं। सुराती शब्द सुरत्राती ओर सुरांता सुरत्राता सें बने हैं। ई चित्र में एक तरफ डवुलियाँ और दूसरी तरफ दिया बनाये जात हैं, ऊपर चंदा-सूरज, स्वास्तिक लिखे जात हैं। स्वास्तिक ब्रह्म कौ व शुभता कौ प्रतीक हैं। तौ चंदा-सूरज, प्रकाश, गति व मन के प्रतीक हैं। सुरांता कौ अर्थ अतिपराक्रमी और वीरवान है। जे भगवान विष्णु कौ रूप हैं। जो शक्ति व पालन-पोषण करवे में समर्थ हैं। कमल कौ फूल खुसी कौ प्रतीक है। जो सुरांती में खाने बने रत हैं वे समृद्धि कौ प्रतीक होत है। ई तरां सें दिवारी कौ लोक-चित्र सुभता, कल्याण और समृद्धि कौ साक्षात रूप मानो जात है।

(स) सामाजिक-चित्रण – ई सामाजिक-चित्रण में हम हरछट, व कुनघुसू पूनो जैसे वृतन के चित्रन खौं सामिल कर सकत हैं। आज ई मिलावटी युग में हरछट जैसे व्रत कथा कौ बड़ों महत्व है। ई कथा के माध्यम सें मिलावट खौं उजागर करो गवो है। ई की पूजा पुत्रवती मातायें करती हैं। ई व्रत में हर कौ जुतौ व गऊमाता कौ दूध नई पियो जात है। भैंस कौ दूध उपयोग में लियाओ जात है। छः प्रकार कौ अन्न व महुआ को भौग छः दौनन में लगाओ जात है। हरदी रंगो सूतौ और सुहाग साम्रगी चड़ाई जात है और पीपर के पत्ता पै माता हरछट जू की चंदन सें पुतरिया बना कें पूजा करी जात है। जे माता पति व पुत्र की रक्षा करकें दीर्घ आयु प्रदान करती हैं।

कुनघुस पूनों में सास पूजा घर में चारऊ कौनन में पुतरियाँ-बहुअन कौ चित्र बना कैं चंदन, चाउर, फूल चढ़ा कें आरती उतारतीं हैं। घी गुण कौ भोग लगाती हैं। ओर मन में जा कामना करतीं हैं कै घर की बहू लक्ष्मी बन कैं घर में सुख, समृद्धि लियावे। जे लोक-चित्र परिवार के कल्याण की भावना सें ओत-प्रोत हैं। कुनघुस पूनो कौ चित्र सास द्वारा बहू की पूजा परिवार कौ चित्र सार द्वारा बहू की पूजा परिवार खौं टूटवे सें बचावे की कोसिस दर्शाउत है। जे समाज खौं जोर वे के उद्देश्य सें मनाये जावे वारे उत्सव और व्रत हैं।

(द) आध्यात्मिक-चित्रण – आध्यात्मिक-चित्रण में नाग-पंचमी, श्री कृष्ण जन्माष्टमी, गणगौर के चित्रण खौं शामिल करो जा सकत है। नाग-पंचमी खौं नाग देवता की पूजा करी जात है ई दिना शंकर जू की पांचऊ बेटियन को जनम दिन मनाओ जात है जो कि गंगा जू की धार में पैदा भईंतीं। ई दिना मुख्य द्वारे की दीवार पै गोवर से पांच नागिन कीं आकृति बनाई जाती हैं और एक चौकोर चारउ तरफ बना दओ जात है। दोई तरफ सुरांतियाँ बनाये जात हैं। ऊ के बाद हरदी, रोरी, चाउर, जल, दूध सें उनकी पूजा करी जात है और भोग लगाओ जात है। ई पूजा सें नागन सें रक्षा होत है। नाग इच्छा, शक्ति तम, काल कौ प्रतीक होत है। ऊतई दोऊ तरफ के सुरातियां शुभ व मंगलकारी चिन्ह हैं। कृष्ण जन्माटमी के पट चित्र जी खौं बुंदेली में पना कत हैं ई में कृष्ण जू की बाल लीलायें, कंस बध, कुवलियापीड़ बध, वसुदेव जू, शेष नाग, यसोदा माता जू, बलराम जू, रोहणी माता, के चित्र अंकित हैं पाण्डव, तुलसी जू सोई बने रत

हैं। पैलें महिलायें जई चित्र गेरू सें भित्ति-चित्रण के माध्यम सें बनाउततीं।

गणगौर में सुहागनें रेणुका जी (गंगा जू की रज) की गौरा जू बना कैं उन पै चुरियाँ, माहुर, रोरी, चाउर, दिया, धूप, नैवेद्य सें पूजा कर कैं उपास रैतीं हैं और माँ कौ सिंदूर लै कैं अपनी माँग में भरती हैं। शिव जू खौं माँ के संगै पूजतीं है। जे चित्र परिवार, पति, संतान की मंगल कामना सें बनाये जात हैं।

(2) माध्यम के आधार परै लोक-चित्राँकन : ई चित्रण के अन्तर्गत वे चीजें आउतीं हैं जिनसें कै लोक-चित्रन कौ चित्रांकन करो जात है। जैसें-गोवर, खड़िया, गेरू, पिसे चाउर, पिसी कौ चून, दूधिया पथरा, गौरा पथरा, पिसो टीलवटा, पिसो-किरकूना, रंगो बजरी, रंगो लकड़िया कौ बुरादा, हरदी रोरी, कोयला आदि। रँगवे के लाने सेम के पत्ता के रस में हरो रंग,नील के पेड़ के फलत सें नीलो रंग टेसू के फूल के रंग सें पीरो रंग, माहुर सें गुलावी रंग बचपन में बिटियाँ नौरता के लाने खूब बनाती हैं। रंगन खौं प1को करवे के लाने खैर की गोंद मिलाई जात है। कलम के रूप में या तौ उगंरिया सें लोक-चित्र बनायें जातते या फिर लकरिया की सीक में रूई लपेट कैं भी उखौं रंग में डुबो-डुबो कैं चित्राँकन करो जात है। ई के अलावा आज कल तौ रसायनिक रंगन को उपयोग भी चित्रकला में खूब होन लगो है और ब्रस को भी उपयोग होन लगो है। लोक-चित्रण में रंगन कौ उपयोग चित्रन के प्रतीक के हिसाब सें ई भरे जात हैं। काय के इन रंगन कौ भी अपनो प्रभाव होत है। सफेद रंग सत शान्ति कौ प्रतीक होत है लाल-रज ओज कौ, कालो तम रहस्य कौ, पीरौ उत्साह कौ, नीलौ अनंत कौ, हरौ प्रकृति व परिवर्तन कौ, नारंगी बैराग्य-त्याग कौ, प्रतीक है। ई तराँ सें लोक-चित्रांकन करवे के अनेक माध्यम समाज में प्रचलित हैं। जो ओरई सें चले आ रयें हैं । और घर में सहजता में मिल जात हैं।

(4) लोक-संस्कारन पै आधारित चित्राँकन : जैसें-जन्म के समय के संस्कारन के चित्र-चरूआ, अलंकरण, छटी, सतिया, हाँते, विआसा-शादी के शुभ-सगुन के चित्र-गनेस जू, दीवार पै गौरा-महेश, चौक, मटका-कलस, हाथी, घोड़ा पै सवार दूल्हा, बराती, पालकी, डोला, सुराँतिया, श्री सीताराम जू, कुल देवता की पूजा कौ चित्र। जे चित्र कछू तौ घर कीं महिलाओं द्वारा बनाये जात हैं। और कछू व्यवसायिक चितेरन द्वारा बनाये जात हैं। बच्चा के जन्म के छट के दिना छटी पूजन होत हैं सो सोर घर के बाहर द्वारे की दीवार पै दोई तरफ गोवर सें प्रतीकात्मक चित्र-चित्रित करे जात हैं। एक तरफ सुराँतिया और दूसरी तरफ गोलकार चित्र बनाओं जात है और ऊंमें जौ खौंसे जात है।

ऐसई सादियन में एक कमरा मांय-मैर कौ होत है। और ऊंमें ज्योति के रूप में एक पुतरिया गेरू के घोल से लिखी जात है। और ऊ पै शुद्ध घी डारो जात है। चौक और कई तराँ के चित्र भीत पै बनाये जात हैं। इन चित्रन में आटा, हरदी, रोरी, कई तरां के रंगन कौ प्रयोग करो जात है। चढ़ाये कौ चौक तौ जग प्रसिद्ध है।

बुंदेल-खण्ड में ऐसौ कोनऊ औसर नईं होत जी पै कै चित्राँकन न करो जात होय। लोक-चित्र कला वातावरण में रोचक्कता और मौलिकता प्रदान करत है। चित्राँकन सें परिवार और समाज के संबंध में मधुरता व उत्साह बनो रत है। जौ भगवान खौं पावे कौ सरल रस्ता है। ई सैं आत्म-संतुष्टी और आत्म-बल मिलत है। बुंदेलखण्ड की संस्कृति कौ मूल तत्व इतै की रचनात्मकता है। जो अभावन में भी खुस रेबै की कला सिखाउत है। लोक-कलन में असुरी शक्तिअन खौं बदलबे की भी शक्ति होत है। जे चित्र केवल घर की शोभई नईं बड़ाउत बल्की इन चित्रन में मंगल व रक्षा करने की शक्ति भी निहित है। जा कला पूरे समाज में समरूपता सें प्रभावी है। जा धनी-निर्धन सबई के घर की सोभा बढ़ाउत है। जा पीड़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होत चली आ रई है।

लेकिन आज बड़े दुःखी मन सें जौ लिखने पररओ है। कै ई आधुनिकता की दौड़ में हमाई संस्कृति, संस्कार, कलायें, धीरैं-धीरैं हमाये हाँथन सें छूटतीं चलीं जा रईं हैं और हम अपनी जड़न सें अलग हो कैं भौत कछू-खोउत जा रये हैं। हम तरक्की तौ करें लेकिन अपनी माटी सें भी जुड़े रयें। तौ वा तरक्की हमें व हमाये समाज खौं जादो मजबूत व ससक्त बना है। अगर हम अपनो अमूल्य खजानौ खोये बिना कछू पाहें तौ हम जादाँ समृद्ध बन पा हैं।

- एफ/7 गीत बंगले फेस 2 दुर्गेश विहार, जे-के.रोड़
भोपाल (म.प्र.) मोबा.- 9977825997

बैला

-राजेश चन्द्र गोस्वामी

कभऊँ जे बैला हते घर के जेठे भइया
जेई धौरी हते घर की लाज रखइया
पहूजा अड़ुआ, बछोआ बधिया
ढूड़ ढूड़ राखे जात हते
हिन्नखुरी कजरा छिपटा मैनियां
ओंधीकपारी बाले वे धौरी पीरीं बधियां
जानें इनईं के कित्ते भेद हत्ते
मुखिया मुनारन की, सिकरम सांन हते
कोनऊ घर में होय नौनों समइया
तवंई जेऊ पैरतते गरें गलगला गरधनियां
सींगन बंधतती रंग-बिरंगी सफियां
घर के मौड़ीमोड़न सों जेऊ सजत हते
नई नई डोंरन सें नौने खूटन बधत हते
देखो भइया कैसो आऔ समइया
अब हमंई इनें पशुधन कान लगे
भूखे प्यासे कटीले बाड़न में बेड़न लगे
हा करतार कभऊँ का इनऊँ के दिनफिर हैं
जबै जे फिरसों सजे बजे बैला बन रै हैं।

- सुभाष नगर कोंच जालौन, झाँसी (उ.प्र.)

हाँका

– लखनलाल पाल

बहोरा परेसान है। ओंखे समझ में नई आत कि बइयर-लरका खें कैसे समझाए। उनके खिलाफ जाबे की हिम्मत ओनें न पै पाँव धरतई लरका के तेवर बदल गए। बहोरा असहाय हो गवो। अगर महतारी, लरका के संगै ठाड़ी हो जाय तो लाचारी कौ अंत कहाँ है?

परधान ने डौड़ी पिटवा दई कि दिन डूबे घर पाछूँ एक आदमी अथाई में इकट्ठे हो जाएँ। सब काम चोरी-छिपे करने हैं। दूसरे गाँवन ने एखी भनक न लगै। भनक लग गई तो उपद्रव होय सें कोऊ नई टार सकत।

गइयन कौ झुंड हर गाँव में टिड्ढी सौ उतरा रहो है। झुंड की टेढ़ी नजर जोन खेत में पर जात ऊ खेत के ढूँठउ नईं बचत।

जे गइयाँ कहाँ सें आईं काउ खें पतौ नहियाँ। जौ ऐसौ रहस है कि व्यक्तिगतरूप सें तौ सबखें जानकारी हैं पै सामूहिक रूप सें सब अंजान। काए सें जुन गइया दूध दैबो बन्द कर देत बई ऊ झुडं को हींसा बन जात। बूढ़ी गइया और बैलवा तौ आदमी मरें-मारे पै नई स्वीकारत कि जे पसु हमाए हैं।

उपयोगितावाद के सिद्वान्त सें वे जानवर झुंड के रूप में परिवर्तित हो गए। अब नई झुंड नादिरसाही सेना की नाईं किसानन के करेजे में खौफ पैदा करन लगे।

परधान ने फतवा जारी कर दवों तो कि जिनकी जौन गइयाँ दूध नईं दे रही हैं उन्हऊ खें झुंड में सम्भल कर दो, बाद में छोड़ा-छाड़ी करी तो फिर समझ लइयो। परधान की धमकी ने उन्हें सोच-विचारें पै मजबूर कर दवो तो। कछू गइयाँ अबै दूध दै रही तो, दो महीना बाद छुटा जैहें, अब उन्हें ढीलें या न ढीलें। परधान ने हुँकारी भरी- ''आज रात सबरी गइयाँ बेतवा पार करा दो, सारौ झंझट खतम हो जाय। बेतवा गाँव से जादा दूर नहियाँ, तीन-चार कोस कहूँ कोस में कोस है।''

बहोरा की लुगाई और लरका छरकन गाय खाँ हटाबो चाहत हैं। वा छुटाने आ गई है, दूदउ कम देत है। ई माहियाँ में नाज से जादाँ भुसा की मारा-मारी है। दूध की न भूत की, ऐसी मुतयाल गाय खें राखें के पचछ में वे न हते।

बहोरा के लाने गइया महतारी समान ती। गइया माँ खों पाँव पुजाई में मिली ती। छरकन ओइ गइया की बंसबेल हती। भरते माँ कह गई ती कि गइया बड़ी भाग्गिन है, एखें अपने सें कभउँ दून न करिए। जा रैहे तो समझ लइए महीं जिन्दा हों।

छरकन उन्हें काँटे सी सालत है। सास-बहू के झगड़ा में बहू अपनी गुस्सा जइ पै निकारत ती, काए सें सास खें जुन चीजें प्यारी ती वे बहू खें नीम घाईं करवात ती। गाये को दोस सिरफ इततौ हतो कि वा सास के मायके की हती। जब सास दुश्मन तो गइया हिकारत की पात्र।

लुगाई ने बहोरा सें साफ-साफ कह दवो तो कि अटारिया कौ भुसा खतम हो रहो है, भैंस खें खबा हो कि मुतयाल खें। गइया हमाए काऊ काम की नहियाँ, एखें अन्ना गइयन के संगै पूज दो। बहोरा ने मरो सौ विरोध करो-''बनी रहन दो, किन्तौ खात है। माँ की नामना हे, भैसं के छड़्यालन में बनी रैहै।

'नामना' सुनखें लुगाई की चुटइया में आगी लग गई। वा सन्ना खें बोली-हाँ-ऽ....महतरिया सरग से चारौ छोल खेंल्या है। जलम भर महतारिया ने उगदाओ, अब जा करेजौ ख रही है।'' लुगाई चेतात भई बोली-''मैं कहे देत, ई घर गाय नई रैहे।''

पूत अलग सें धरती अकरूंच रहो तो। गाय खें तो उ बिल्कुल नईं रखबो चाहत तो। गाये सें अच्छी भैंस। भैंस जब लौ दूध दे रही हैं खूब गर्र-गर्र दुही, ठाँठ पै बैपारियन खें बेंच दो। तनक रूपइया और मिला दो दूसरी खरीद लो। गइया दूध कम देत, लातें लन्दन तक फटकारत।

पिता की दलीलें बेटा खें नई सुहा रहीं तीं। जई सें उ सवेरे से दंघई कोटे फिर रहो तो।

बहोरा रार नईं बढ़ावो चाहत तो। जई सें ऊ उन्हें फुसला पौट रहो तो। ओखी बात कोऊ सुनबे खें तैयार नईं हतो। इ समय घर को माहौल बेहद तनावपूर्ण हतो।

बहोरा को माँ की याद आ गई। आज माँ जिन्दा होती तो गाय कभउँ नह हकवाती। प्रान लै लेती। माँ बताउत ती कि गइया के देहरी लात मारतइ गिरो घर उठ गओ तो। ससुर खें बीघा भर जमीन न ती पैं गाय को ऐसौ पुन्न-परताप कि आज दस बीघा जमीन के मालिक बने बैठे हैं। उ गइया ने कई जोड़ा बैल दए। अब बैलन कौं पूछत।

रात के दस बज रहे ते। ठंड बढ़त जा रही ती। दिन कोहरों रहो, रात खें आसमान साफ। ई जानलेवा सीत में घर पाछूँ एक आदमी सरकारी स्कूल में इकट्ठे हो गए। अन्ना गइयन के झुंड पंचायत घर, स्कूल कौ मैदान और गाँव कें कई कोनों-आतरों में बैठी ती। गइयाँ आधी रात खें खेतन पै हमला करत। उठत, सूधी होत, अगड़ाई लेत फिर हगत-मूतत एखे बाद खेतन कोद डगर जात। खेत पापी को है कि पुन्नात्मा को वे जौ नईं दिखत। उन्हें तो चरे सें मतलब।

कछू आदमिन ने असलहा संगै लै लए ते। इत्ती गइयाँ जौन मौजे सें गुजर हैं वहाँ कौ आदमी तुरतई लाठी दिखा है। कौन्हउ मौजा कौ आदमी न चाह है कि गइयाँ हमाए मौजा में आश्रय पांए। वे कैसउँ तरा सें अपने खेत न उजरन दै हैं। जइ सें निपटें के लानैं असलिहा जरूरी ते।

हर घर से दो-एक गइयाँ झुंड में सामल करी गई। जवे गइयाँ हतीं जुन दूध नई दै रही ती। बहोरा ने छरकन को ओई में मिला दओ। छरकन खें दिखखें एक आदमी बोलो- ''का बताएं भइया, घर में गइया की समाई नहियाँ।'' बहोरा भरे सुरे में बोला-''खात जादा है, दूध कम देत। सोचो, पबार दऊँ। कहाँ लौ खबा है, भैसई खें नईं खबा पात।'

चार-पांच सौ गइयन के पाछूँ सौ सें जादा आदमी 1 गइयन के खुरन की आवाज रात के सन्नाटे खें बेरहमी सें चीर रही तीं। आदमिन की जा कलाकारी गइयाँ समझ नईं पा रही ती। उन्हें नईं पतौ हतो कि वे कहां हाँकी जा रही है। अपने सीमा क्षेत्र लौ तो वे चलत रही पै जैसइ अजनबी क्षेत्र में पहुँची उनके कान ठाड़े हो गए। वे अपनौ क्षेत्र नई छोड़बो चाहत ती सो यहाँ-वहाँ बिलकिटयान लगी। हंकारों की चौकसी सें वे अपने मंसूबन में कामयाब न भई। आँगू-पाछूँ, अगल-बगल चल रहे आदमी दौर खें झुंड में मिला देत।

गइयाँ एक गाँव से दूसरे गाँव की सीमा पार करत जा रही ती। खेतन की रखवारी कर रहे किसान झुंड दिखखें ललकारते- ''गइयाँ यहाँ कहाँ ला रहे हो? फसल चौपट करवा दैहो का? झुंड के पॉछू सैकड़न आदमिन खें दिखखें उनकी आवाज अपने आप ठंडी पर जाती। उनके मुँ से इतनई निकरत तो-''भइया हमाए खेत बचा दइयो।''

आदमी थक चुके ते। कछु ने सुझाव दओ-''ठीक तो है, चलो, लौट चलें''।

असलहा धारियन ने उनके सुझाव खें खारिज कर दओ। वे रौब में बोले-''इन्हें नदिया पार कर दो'', नईंतर फिर लौट आ हैं। रोज-रोज कोउ हाँकन न जैहे।''

लोगन कौ उत्साह ठंडौ पर गओ। किटकिटाती सरदी में उनके हाँत-पाँव सुन्न पर गए ते। बेतवा अभै कोस भर दूर ती।

बहोरा खें धक्का लगो। ऊ जानत तो कि तीन-चार कोस दूर सें गइयाँ लौट सकत है। बेतवा पार हो गई तो लौटबो मुसकल है। छरकन वापस न आ पाहै। और जो काम ऊ खुद कर रहो है।

बहोरा खें पूरी दुनिया दुसमन नजर आन लगी। लरका बइयर तो हतेई, असलहाधारी और कसाई निकरे। आंखे पाँवन कौ बजन अचानक बढ़ गओ। ऐसौ लगत तो जैसें पांवन में मनभर बजन धर दओ होय। हारे-थके पाँवन से ऊ छरकन के पाँछू चल रहो तो। गइया एक देर रंभानी और ठाड़ी हो गई। बहोरा ने ओखें पुचकारो। वा कातर नेत्रन से बहोरा खें दिखन लगी। बहोरा ने ओखीं पीठ पै हाथ फैरो। संग वाले भड़क गए-''कक्का पाँव पछाऊँ न धरौ, सबेरौ हो गओ तो आंगू न बढ़ पाहै। कैसें-कैसें मुड़चढ़याव कर हैं।

उन्हइ में से एक ने गइया की पीठ पै डंडा मारो। गइया दौर खें झुंड में जा मिली। बहोरा लाल-पीरौ हो गओ-''मारत काहे है, चल तो रही है।''

उनकौ बतबढ़याव सुनखें दस-पाँच आदमी और आ गए। बहोरा जानत तो इनके सामूँ गुस्सा जायज नहियाँ। अवांछितन खें अहमियन दैबो खतरे सें खाली नईं होत। ऊ मन मसोस खें रह गओ।

अघरन्ता सें ज्यादा हो गओ तो। ऊँचे-ऊँचे टीलन के बीच संकरौ रस्ता सुरू हो गओ। झुंड के अगल-बगल चलत वाले लाग पांछू आ गए ते। खुरन सें आ रही पट-पट की आवाज से कगार पै के रूख जाग गए ते। वे विसमय से अपनी उनींदी आँखिन से मानव के करतब देख रहेते।

बेतवा किनारे पहुँचतइ रेत सुरू हो गई। अब खुरन से आ रही टप-टप की आवाज बन्द हो गई तो। बालू में खुर धंसतइ रेत फैल जातीं। कछू दूर वे ऐसइ चलत रहे।

धार सें पहलू गइयाँ अचानक रूक गईं। गइयाँ पानी में घुसबों नहँ चाहती तीं। वे यहाँ-वहाँ मकड़यान लगी। हंकारे गइयन की बदमासी ताड़ गए ते। जई सें वे चौकसी सें लट्ठ-मार-मार पानी में घुसान लगे। वे जानत ते कि एकइ गइया झुंड से अलग भगी तो ओखें पाँछू सब गइयाँ भग धर हैं। रेला को संभार वो मुसकल हो जैहें। तनकई लापरवाही से पूरी मेहनत पै पानी फि र जैहें। असलहाधारियन ने संगी-साथियन खें ललकारो। ललकार को असर परो, हंकारे लाठी भाँज-भाँज खें गइयन खें पानी में कुदाएं की कोसस करन लगे।

बहोरा छरकन खें दूर सें दिख रहो तो। ओखी आँखिन से अंसुआ छलक आए। गइया एक देर फिर रंभानी। गाय की रंभाहट सब्दन में बदल गई, ओखै अरथ सिर्फ बहोरा समझ रहो तो- ''पागल रोता काहे है? मैं कहां जा रही हों, मै तेरे साथ हों, मोई चिन्ता न कर। उन्हें मोई जरूरत कहाँ है। बिना जरूरत के रहबो दुखदाई है।''

ओखें लगो जैसे माँ कहत होबे कि रोउत काहे है, मैं तो हों। हँकारन ने गइयन खें पानी में घुसा दओ। सबसें आँगू छरकन ती। ओखी दिखा-दिखी दूसरी गइयाँ पानी में हेल गई। कछु पानी के भय से यहाँ-वहाँ भगी। उननें लठया खें नदी पार करा दई। हंकारन ने राहत की सांस लई। उन्हें यकीन हो गओ तो कि अब गइयाँ लौट खें न आ है। वे सवेरे चार बजे गाँव लौट आए। उनकी फसलें अब सुरक्षित हो चुकी ती। खेतन में रात भर जगें की मजबूरी अब न रही ती।

दिन ऊरत गाँव में हड़कम्प मच गओ। जो कोऊ सुनत तो ओई दौर परत तो। बहोरा ने सुनो तो ओखी बाँछें खिल गई। सरकारी स्कूल के घेर में सात-आठ सौ गइयन कौ झुंड ढाड़ो तो। उन्हें लगो जैसे गइयाँ उन्हई के पाँछू-पाँछू लौट आई हो। पै इतने बड़े झुंड खें दिखखें उन्हें समझें में देर न लगी कि दूसरे गाँव के आदमी ई गइयन खें उनके गाँव में छोड़ गए है।

बहोरा पागल सौ गइयन के झुंड में छरकन खें ढूढ़ रहो तो।

-कृष्णा धाम के आगे अजनारी रोड, नया रामनगर, उरई
जिला-जालौन (उ.प्र.),285001,
मोबा.- 7668715109

अपनी बोली, बानी और
संस्कृति से प्रेम करिये, उसे अपनाइए।

अद्भुत प्रतिभा के धनी : मनोहर काजल

- एस.एम. अली

बात सन् 1985 की है जब मेरा स्थानांतरण दमोह(म.प्र.) का हो गया था। लेखक होने के कारण मेरी सर्वप्रथम इच्छा थी दमोह के लेखक बंधुओं से मिलना। इसी बीच संयोगवश मेरी मुलाकात लेखक गफूर तायर से हुई। फिर उन्होंने मेरी मुलाकात डॉ. रघुनंदन चिले, डॉ. सत्य मोहन वर्मा, मनोहर काजल, डॉ. प्रेमलता नीलम आदि से कराई।

सन् 1946 ई. में जन्मे मनोहर काजल जितना साहित्य पर अधिकार रखते हैं, इससे कहीं अधिक वो छायांकन के लिए जाने जाते है। वैसे उनकी प्रथम कहानी 'बेड़नी' धर्मयुग के दीपावली विशेषांक 1970 में प्रकाशित चर्चित और इसके ही साथ साहित्य और कला की शुरूआत धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, कहानी, साक्षात्कार, सारिका, मधुमती, सरिता, मुक्ता, कहानीकार और मनस्वी जैसी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में अब तक 100 से अधिक रचनाओं का प्रकाशन हो चुका है।

तीन कहानी संग्रह 'जलपंखी', 'इनकिलाब जिन्दाबाद', 'मुक्ति पर्व एवं अन्य कहानियां' प्रकाशित। 'इनकिलाब जिन्दाबाद' (कहानी संग्रह) मध्य प्रदेश के साहित्य अकादमी के सुभद्रा कुमारी चौहान पुरस्कार से पुरूस्कृत।

साहित्य के साथ-साथ छायांकन एवं रेखांकन में गहरी अभिरुचि और इस क्षेत्र विशेष में उन्हें अंतर्राष्ट्रीय उपलब्धियां अप्रतिम और अपूर्व हैं। उन्हें वर्ष 2000 में कोडक एशिया के सेलीबेशन ऑफ मिलेनियम प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार मिला। 2003 में इंटरनेशनल फोटोग्राफी अवार्ड का आई.पी.ए. अवाई (लॉस एजिल्स) से नवाजे गए। भारतीय ग्राम्य जीवन से संबंधित अनेक कलात्मक चित्र यूनिसेफ यूनेस्को द्वारा चयनित पुरस्कार तथा टाइम, लाइफ जैसी पत्रिकाओं में प्रकाशित। 2008 में उन्हें राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

मनोहर काजल के छायांकन एवं रेखांकन से प्रभावित होकर विश्व प्रसिद्ध विद्वानों ने सराहनाएं की हैं जो प्रस्तुत हैं।

भारत के लोक सौन्दर्य और संस्कृति की अपनी आत्मीयता है जो मुझे बार-बार अपनी ओर खींचती है और हर बार नए सिरे से जीवन सौन्दर्य के प्रति भावुकता से भरकर अनुप्रणित करती है। काजल के चित्रों में मुझे उसी लोक सौन्दर्य की चेतना का जीवन आभास मिला सचमुच बहुत सुन्दर और कलात्मक कजले-उजले चित्र खींचे हैं मनोहर काजल ने। -सैयद हैदर रजा, विश्व प्रसिद्ध चित्रकार

काजल के छाया चित्रों में गांव अपने सौन्दर्य के साथ उजागर हुआ है। विषय-वस्तु का संयोजन और रंग योजना सचमुच ही अनूठी और अद्भुत है ये चित्र दुनिया के किसी भी कोने में दिखाए जाने योग्य हैं और लोग उन्हें जरूर पसंद करेंगे क्योंकि इनमें कल्पना औ यथार्थ का अद्भुत सामंजस्य है।

-प्रयाग शुक्ल, प्रख्यात कला समीक्षक और साहित्यकार

मीडिया की दृष्टि भारत के गांव गरीबी और बदहाली का कितना ही रोना रोयें पर काजल के सुन्दर और कलात्मक चित्र हमें अपने गाँवों के निश्चल लोक सौन्दर्य और संस्कृति से जोड़ने का एक अभिनव प्रयास करते दिखते हैं। -अशोक बाजपेयी, प्रख्यात कवि और कला पारखी

काजल के छाया चित्रों की भाव भूमि, रंग चेतना और विषय-वस्तु की पकड़ अद्भुत है। जैसा वे अपनी गांव की कहानियों में लोक जीवन की जीवन्तता का अवलोकन कर उसे कलम से उतारने का प्रयास करते हैं। ठीक वैसा ही वे अपने कैमरे की तीसरी आँख का प्रयोग करते है एक दमअद्भुत और अपूर्व। -धर्मवीर भारती

आलोक और छाया का अलौकिक सामंजस्य, मौलिक सूझबूझ, अपूर्व संयोजन कौशल तथा वैशिष्ट पूर्व सृजन क्षमता के कारण काजल के छाया चित्रों में एक अदभुत रूपात्मकता उजागर हुई है और अपनी इसी विशेषता के कारण उनके छाया चित्रों ने कला जगत में अपनी एक अलग पहचान भी बनाई है हर कलाकार की अपनी एक छाप होनी चाहिए और मनोहर काजल के छाया चित्र इसके अपवाद नहीं है।

- व्योहार राम मनोहर सिन्हा, प्रसिद्ध, चित्रकार

मनोहर काजल के चित्रों को बारिकी से देखने पर सहज ही यह बात स्पष्ट हो जाती है कि ये महज प्रकृति और मानव की प्रतिकृतियाँ नहीं हैं। इनमें मौलिक संरचना, कल्पना और अनुभव का सटीक संयोजन है जो जाने अनजाने ही मशीनी कला को एक सृजनधर्मी कला का आयाम बना देता है और इनके चित्रों की यही एक बड़ी खूबी है। कुछ छाया चित्रों में प्रकाश, पृष्ठभूमि और वस्तु को इतनी खूबसूरती से पकड़ा गया है कि वे पेंटिग का सा आभास देने लगते हैं।

हर कलाकार की एक छाप होनी चाहिए, वह उसकी निजता होती है, वह उसकी पहचान होती है काजल के छायांकन में एक मौलिक संरचना और कल्पना की क्षमता का स्पष्ट आभास परिलक्षित होता है और यही किसी कलाकार के कार्य की उत्कृष्टता और कसौटी भी है। काजल एक अच्छे चित्रकार के साथ-साथ श्रेष्ठ साहित्यकार भी हैं शायद इनके छायांकन में कवि की सी भावुकता और चित्रकार की सी सूक्ष्म दृष्टि का अद्भुत समावेश है अपने माध्यम में वे एक सफल, ओजस्वी और उर्जावान कलाकार बनें।

- अमृत लाल बेगड़,(प्रसिद्ध नर्मदा यात्री और चित्रकार)

उपरोक्त उपलब्धियों से स्पष्ट हो जाता है कि मनोहर काजल ने अपने छायांकन, रेखांकन एवं साहित्य में बुन्देलखण्ड का नाम राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर गौरवान्वित किया है। उनकी घुमक्कड़ जिज्ञासा, स्वतंत्र छायांकन एवं अपने को ढूँढ़ने की अबाध प्रक्रिया निरंतर चालू है।

- श्री गोविन्द जी के मंदिर के पीछे, रानीगंज वार्ड,
पन्ना(म.प्र.), मोबा.-9893806132

इंदुरखी के राजा कछवाहे और गौर

-डॉ. श्याम बिहारी श्रीवास्तव

बुन्देलखण्ड के उत्तरी छोर पर भिण्ड जिले की सीमा में सिंध नदी के किनारे बसा इंदुरखी गाँव दसवी शताब्दी से लेकर अठारहवी शताब्दी तक एक समृद्धशाली रियासत के रूप में रहा है। इस इलाके की स्थिति को देखते हए यह आश्चर्य होता हैं कि यहाँ राज्य का केन्द्र बनाने को विभिन्न क्षत्रिय शक्तियां लालायित क्यों रहीं? इस प्रश्न का उत्तर खोजते हुए मैं दसवीं ग्यारहवीं शताब्दी में ग्वालियर की ऐतिहासिक घटनाओं से रूबरू हुआ। जब ग्वालियर के गोपाचल दुर्ग पर दूल्हेरय कछवाहा का शासन था तब इंदुरखी पर मेवाती सरदार हतिया मेव राज्य कर रहा था। मेव जाति के लोग मुख्यतः पशुओं के व्यापारी थे। वे सम्पन्न और शक्तिशाली भी थे। धीरे-धीरे उन्होंने इंदुरखी के इलाके पर अपना प्रमुख स्थापित कर लिया था।

बुन्देलखण्ड के इतिहास के अनुसार इंदुरखी में बारहवीं शती में बल्लार शाह गौड़ राज्य कर रहा था और इसी काल में अटेर में तेजशाह गौड़ का शासन था। इस प्रकार इंदुरखी से लेकर अटेर तक गौड़ों का राजय था। इन्हीं गौड़ों से मेंवातियों ने इंदुरखी छीनकर सत्ता स्थापित की होगी। उधर ग्वालियर के कछवाहा राजा दूल्हेराय ने राजस्थान में दौसा की राजकुमारी रूपमती से विवाह किया और वहीं पर राज्य स्थापित किया। ग्वालियर के कछवाहा राजा दूल्हेराय ने अपने लौटने तक अपने भानजे परिहार को राजा बना दिया था। इंदुरखी और अटेर के सामंतों ने ग्वालियर के राजा का आधिपत्य स्वीकार करना बंद कर दिया तब ग्वालियर के परिहार शासक ने दौसा के राजा दूल्हेराय कछवाहा से सहयोग मांगा दूल्हेराय कछवाहा प्रभुत्वअपने दोनों पुत्रों काकलदेव और वीकल देव को साथ लेकर अपनी सेना सहित आये और भिण्ड के निकट ऊमरी में पड़ाव किया। यहीं से उन्होंने गौड़ों और मेवातियों के विरुद्ध अभियान किये थे। दूल्हेराय शत्रुओं से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए थे। तब काकल देव और वीकल देव दौसा लौट गये थे, वहाँ बड़े होने के कारण काकल देव दौसा राज्य के राजा बनाये गये। वीकल देव एक स्वतंत्र राज्य स्थापना करना चाहते थे अतएव वे अपने पुत्र इन्द्रदेव को साथ लेकर इंदुरखी चले आये थे। यहाँ पर लम्बे संघर्ष के बाद हतिया मेव मारा गया। इंद्रदेव को इंदुरखी का राज्य दिया गया। इस प्रकार इंदुरखी पर बारहवीं शताब्दी में कछवाह राजपूतों की सत्ता स्थापित हो गई थी।

तत्कालीन इतिहास की घटनाओं के मद्देनजर एक बात समझ में आती है कि राजपूत जातियाँ स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने के प्रयास में युद्ध रत रहती थीं। शौर्य प्रदर्शन, पराक्रम करना, शत्रु से दुर्धर्ष संग्राम करना उनका स्वभाव हो गया था। एक राजा दूसरे राजा के क्षेत्र को हथियाने के प्रयास में आक्रमण करता रहता था। इस प्रकार अधिकांश राजा एक दूसरे के शत्रु बने रहते थे। ऐसे मे जब बाहरी आक्रमणकारी आ जाते थे तो एक होकर कोई किसी की सहायता नहीं करता था। यही कारण है कि मध्यप्रदेश ग्वालियर और उसके आसपास के क्षेत्रों में कछवाहों की सता के समीकरण बनते बिगड़ते रहे।

मध्यक्षेत्र ग्वालियर में कछवाहों को आगमन सर्वप्रथम वि.सं. 327 में हुआ था। सूर्यपाल इस समय के प्रथम शासक थे। कर्नल टाड ने सूर्यपाल की सत्ता स्थापना वि.सं. 351 में होना माना है। नौवीं शताब्दी में प्रतिहारों ने कछवाहों को पराजित कर ग्वालियर पर अधिकार कर लिया था, तब कछवाहों ने नरवर को अपनी सत्ता के केन्द्र के रूप में विकसित किया था। कुछ समय पश्चात् कछवाहों ने शक्ति अर्जित कर पुनः ग्वालियर का क्षेत्र जीत लिया था फिर बारहवीं शताब्दी तक ग्वालियर पर कछवाहों की सत्ता कायम रही।

एक शासन केन्द्र के रूप में इंदुरखी ग्राम इतना प्रसिद्ध कैसे हुआ? अतः इंदुरखी के भौगोलिक परिवेश पर भी दृष्टिपात कर लेते हैं। आज की तुलना में उस काल में इंदुरखी का क्षेत्र प्राकृतिक और भौगोलिक दृष्टि से आकर्षक और समृद्ध रहा होगा। नदी के किनारे ऊँचे-नीचे टीले-भरके, खार-कछार होने के कारण शत्रुओं से यह स्थान कुछ सुरक्षित भी रहा होगा। पहले इंदुरखी ग्राम सिंध नदी के किनारे से कुछ हटकर था पर बाद में नदी के बहाव में परिवर्तन होता गया और निरन्तर कटाव हुआ और किले का अधिकांश भाग नदी के बीच आकर उजाड़ हो गया।

कछवाहा शासकों के लम्बे शासनकाल (1200ई.-1600ई.) में इंदुरखी का वैभव बढ़ता रहा। यह छोटा ही सही परन्तु इसे भव्य रूप देने में कोई कसर नहीं छोड़ी गई। कछवाहा राजाओं के बाद गौर राजाओं के शासन काल में भी इंदुरखी का वैभव यथावत रहा। वर्तमान में वहाँ शेष रहे पुराने लोग बतलाते हैं कि सिंध नदी के किनारे आधा किला नदी में आ गया है। उ8ार दिशा में किले का सिंह पौर दरबाजा है। दरबाजे के नीचे सिंहवाहिनी देवी का मंदिर है। मंदिर के अन्दर एक भारी प्रस्तर खण्ड देवी प्रतिमा के रूप में स्थापित है।

इंदुरखी का किला कछवाहघारी शैली में पुरानी ईंटों का बना हुआ है। ये ईंटें छोटे-छोटे आकार की है। इन्हें ककइया ईंट कहा जाता है। अब उनका प्रचलन नहीं है। महल के दरवाजे महराबदार हैं। इनकी साज-सज्जा रंग रोगन के निशान अभी शेष हैं। पहले कभी अपने उन्नतिकाल में महल बहुत सुन्दर रहा होगा। किले में सात कुँए थे जो नष्ट प्राय हो चुके हैं। किले के चारों ओर गहरी खाई खोदी गई थी, जैसी कि परम्परा थी। किले की चारों दिशाओं में देवी मंदिर स्थापित हैं। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि इंदुरखी के राजा देवी भक्त रहे थे।

इंदुरखी के पर्यावरण को भव्य और दिव्य बनाने के लिए मंदिरों और बाग बगीचों की सुन्दर व्यवस्था की गई थी। किले के उत्तर में फूलबाग था। फूलबाग की बारहदरी में सतीमैया का स्थान है। फूलबाग की पूर्व दिशा में हनुमान मंदिर है। फूल बाग के पूर्व की ओर रतनगंज लगभग बीस बीघा में था। किले के दक्षिण तरफ हरदौल बाग है। सभी बगीचे बीस-बीस बीघा क्षेत्रफल के थे। अब किसानों ने उन पर खेती करना प्रारम्भ कर दिया है।

इंदुरखी के किले में एक तेजाब का कुँआ था जिसका पानी तलवार आदि की धार को पैना करने के लिए प्रयोग किया जाता था। यह एक आश्‍चर्य है। लोगों ने बताया कि एक बार इस कुँए के पानी में भीगी संटी किसी भैंसा को मारी तो भैंसा घायल हो गया था। वहाँ पर एक और आश्‍चर्यमय स्थान है जो किले के बाहर एक चबूतरे के रूप में है। इस पर एक गल्ली घास चढ़ाने पर बीमार घोड़े ठीक हो जाते हैं।

इंदुरखी में कछवाहों की सत्ता सन् 1605 ई. तक कायम रही थी। मुगल बादशाह अकबर के सेनापति अबुल फजल को ओरछा के बुन्देला वीर सिंह देव के साथ मिलकर कृपाराम गौर ने मार डाला था। मध्यकाल के इतिहास की यह एक विचित्र और परिवर्तनकारी घटना थी। अकबर के शहजादे सलीम और सेनापति अबुल फजल के बीच शत्रुता हो गई थी। सलीम उसे मरवा डालना चाहता था। इस काम के लिए सलीम ने अपने मित्र वीरसिंह देव बुन्देला को चुना। वीर सिंह देव बुन्देला कुछ शर्तों के साथ यह कार्य कर दिया था। सन् 1602 ई. में अबुल फजल दक्षिण में था। अकबर के बुलावे पर वह अपनी विश्वस्त सेना के साथ आगरा की ओर आ रहा था। इसका पता शहजादा सलीम का लग गया और सलीम ने वीर सिंह देव को यह बात बता दी। उस समय वीर सिंह देव दतिया के पास बड़ौनी में थे। वीर सिंह देव ने बरकी सराय और आँतरी के बीच जंगलों में अबुल फजल को घेरने की योजना बनाई और उसमें वह सफल भी हुए। जब अबुल फजल आँतरी के रास्ते से जा रहा था तो वीर सिंह देव की सैनिक टुकड़ी से सामना हो गया। युद्ध हुआ और अबुल फजल मारा गया। वीर सिंह देव ने अबुल फजल का सिर काटकर कृपाराम गौर के हाथों शहजादा सलीम के पास इलाहाबाद भेज दिया था।

''मुगल साम्राज्य का उत्थान और पतन'' शीर्षक इतिहास ग्रन्थ में डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी ने इस घटना पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए लिखा है - ''आज्ञा पाते ही अबुल फजल आगरा की ओर तेजी से लपका। अबुल फजल की रवानगी की खबर पाने पर शहजादा सलीम बहुत घबराया और उससे पिंड छुड़ाने का निश्चय किया। इस काम पर उसने ओरछा राजघराने के बुन्देले सरदार वीरसिंह देव को लगाया। जब अबुल फजल सिरोंज पहुँचा तो उसकेआदमी तेजी से मंजिलें पार करने के कारण थक गये थे। स्थानीय अधिकारी ने उसे परामर्श दिया कि अपने आदमियों को वहीं छोड़ दे और नये सैनिक ले ले जिन्हें उसने हाल ही में भरती किया था। और अपने विश्वस्त आदमियों को पीछे छोड़कर वह आगे बढ़ा।सराय वह और अन्त्री के बीच 9 अगस्त 1602 को वह रोक लिया गया और वह अबुल फजल का सिर काटकर सलीम के पास भेज दिया गया।'' (पृष्ठ 264-265) इससे स्पष्ट होता है कि अबुल फजल को घेरने और मारने की योजना पर वीर सिंह देव बुन्देला सिरोंज से ही प्रयत्नशील थे। सिरोंज में अबुल फजल का अपने विश्वनीय सैनिकों को छोड़कर नये भर्ती किए गये अनाड़ी सैनिकों को लेकर आगे बढ़ना उसके लिए प्राण घातक सिद्ध हुआ था।

जब अकबर को अबुल फजल के मारे जाने का पता चला तो उसे आघात लगा। अकबर बीमार हुआ और सन् 1605 में 63 वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई थी।

बादशाह अकबर की मृत्यु के पश्चात् जहाँगीर आगरा के सिंहासन पर बैठा तो शर्त के अनुसार वीर सिंह देव बुन्देला को ओरछा का राजा बनाया गया तथा कृपाराम गौर को इंदुरखी का राज्य प्राप्त हुआ था।

गौर क्षत्रियों तथा बुन्देला राजाओं के सम्बन्ध पुराने थे। गौरों की एक पुरानी वशावली में उल्लेख है कि ''राजा विभार भये सो कस्बा नार के राजा भये तिनके बेटा राजा जगतदेव भये तिनके बेटा क्रतजोंन भये तिन क्रतजोंन कें दो बेटा भये जेठे फूलचंद्र सो नार के राजा भये नार मकान दक्खिन के है और लौहौरे भाई मानिकचंद्र भये सो राजा मधुकर साहके पास आये संवत् 1612 में सो मधुकर साह बुन्देला औंड़छे के राजा हते तिनसों मानिकचंद गौर कों दस हजार की जागीर लगा दई फिर मानिकचंद के दो बेटा भये जादोंराइ जहान राइ जादौं राइ के बेटा कृपाराम भये और जहान राइ के बेटा मथुरादास कृपाराम गौर नें वृसिंघदेव के साथ अऊअल फजल कों मारे फतै पाई तब जहाँगीर साह बादसाह ने विरसिंघ देव कों औड़छे कौ राज दयौ मनसब दयौ और कृपाराम गौर कों इंदुरखी कौ राज दयौ मौजे 52 और लहाइर पाँचउ पाटी मनसब में दई कृपाराम कों और क्रपाराम के भाई मथुरादास कों मऊमहोंनी दई कृपाराम की संतान की इंदुरखी की कहावत है'' इन्हीं कृपाराम के पुत्र गोवर्धनदास हुए। गोवर्धनदास के पहाड़ सिंह गौर और पहाड़ सिंह गौर के पुत्र राजा भगवंत सिंह गौर थे।

उपर्युक्त विवरण से ज्ञात होता है कि इंदुरखी में कछवाहों ने अपने पराक्रम के बल पर स्वतंत्र सत्ता स्थापित की थी जो लगभग चार सौ वर्ष तक कायम रही। कछवाहों ने इसी बीच गोपालपुरा, रामपुरा, मछण्ड, निबसाई, अमायन, ऊमरी लहार आदि अनेक छोटे-बड़े ठिकाने बना लिए थे। शक्ति सम्पन्न होते हुए भी बुन्देलखण्ड की रियासतों के शासक मुगल बादशाह के अधीन होते थे। इन्हें मनसब प्राप्त होते रहते थे और ये मुगल बादशाह के लिए देश के विभिन्न राज्यों के राजाओं से युद्धरत रहते थे। यही कारण है

कि जहाँगीर को खुस करने के लिए और स्वयं की स्वार्थ सिद्धि के लिये वीरसिंह बुन्देला तथा कृपाराम गौर ने अबुल फजल का वध किया था और जहांगीर ने अपना वचन निभाते हुए वीरसिंह देव बुन्देला को ओरछा का राजा बना दिया था और रामशाह को ओरछा से हटाकर चंदेरी भेज दिया था। इसी क्रम में कृपाराम गौर को बावन मौजे वाला छोटा क्षेत्र इंदुरखी तथा लहार का राज्य दे दिया था।

कछवाहा राजा ने इन्दुरखी का राज्य कृपाराम गौर को यों ही आसानी से नहीं दे दिया था। इसे पाने के लिए भी क्रपाराम गौर को कछवाहा राजा से संघर्ष करना पड़ा था। कछवाहों की शक्ति उस समय अनेक छोटे बड़े राज्यों में बँटी हुई थी। परस्पर विघटन के कारण इंदुरखी के राजा को सहायता नहीं मिल पायी होगी। इंदुरखी के निकटस्थ ग्राम रौन जिला भिण्ड के लेखक श्री देवेन्द्र सिंह कुशवाहा ने अपनी पुस्तक ''वीकल पोता कछवाह राजवंश'' में इस सम्बन्ध में विस्तार से प्रकाश डाला है। कुछ पंक्तियाँ उदाहरणार्थ इस प्रकार हैं-

'जहाँगीर के सम्राट बनने के पश्चात् ही सम्राट से स्वीकृति प्राप्त कर वीर सिंह बुन्देला ने कृपाराम गौड़ को अपनी सेना का सहयोग प्रदान कर कछवाह राजा इंदुरखी पर आक्रमण करने भेजा। कछवाह सेना ने आक्रान्ताओं का बड़ी वीरता पूर्वक मुकाबला किया। युवराज हृदयशाह ने बड़ी वीरता एवं दृढ़ता पूर्वक दुश्मन सेना से लोहा लिया किन्तु साधन एवं सैन्यबल के अभाव में युवराज हृदयशाह युद्ध करते हुए दुश्मनों के हाथों वीरगति को प्राप्त हुए। (पृष्ठ 49)

कृपाराम गौर स्वयं अच्छे योद्धा थे उनके साथ वीरसिंह देव बुन्देला की सैन्य शक्ति थी। अतएव इंदुरखी के कछवाह राजा पराजित हुए और उन्हें इंदुरखी छोड़कर जाना पड़ा था। इंदुरखी में गौरों की सत्ता स्थापित हुई, यह मुगल बादशाह द्वारा प्रदान की गई जागीर थी। गौर मुगलों की सेवा में पहले भी थे और बाद में भी कई पीढ़ियों तक बने रहे। कृपाराम गौर की चौथी पीढ़ी में पहाड़सिंह गौर के पुत्र भगवंत सिंह गौर अपने पिता पहारसिंह के साथ मुगल बादशाह के लिए सैन्य सहायता हेतु जाया करते थे। ये बहुत वीर और पराक्रमी योद्धा थे।

भगवंत सिंह गौर को देवी सिंहवाहिनी का इष्ट भी था। इनके सम्बन्ध में एक किंवदन्ती प्रचलित है- ''कै तो पांज भई बाबा नंद कौं कै भगवंत इन्दुरखीवार'' एक बार जब ये यमुना नदी पार करना चाहते थे तो इन्होंने देवी का स्मरण किया और कहते हैं कि नदी का सैलाव उतर गया था और भगवंत सिंह गौर नदी पार हो गये थे।

गौर क्षत्रिय वंश के राजाओं ने कई पीढ़ियों तक मुगल बादशाह के मनसबदार सरदार के रूप में सहयोग दिया था। पहारसिंह गौर और उनके पुत्र भगवंतसिंह गौर तथा देवीसिंह तो अनेक युद्धों में साथ-साथ लड़े थे। परन्तु एक समय मुगलों की अनीतियों से व्यथित होकर ये विद्रोही हो गये थे। इन्होंने बादशाह औरंगजेब के विरूद्ध छत्रसाल बुन्देला का सहयोग किया था। इसलिए औरंगजेब ने अपने अनेक सूबेदारों-सरदारों को इन्हें समाप्त करने की आज्ञा दी थी।

मध्यकालीन बुन्देलखण्ड के इतिहास पर शोधपरक लेखन करने वाले प्रसिद्ध इतिहासविद् डॉ. भगवानदास गुप्त ने अपनी पुस्तक ''महाराजा छत्रसाल बुन्देला'' में इंदुरखी के राजा पहार सिंह गौर तथा भगवंत सिंह गौर के विषय में लिखा है- ''सन् 1685 के प्रारम्भिक महीनों में इन्दुरखी का जमींदार पहाड़ सिंह गौड़ विद्रोही हो गया। वह उस समय शाहाबाद का फौजदार था। पहाड़सिंह गौड़ ने मालवा में लूटमार आरम्भ कर दी और अक्टूबर 1685 ई. में उज्जैन के निकट शाही सेनाओं से एक मुठभेड़ में मारा गया। तदन्तर उसके पुत्र भगवंत सिंह और देवी सिंह विद्रोही बने रहे और मुगल साम्राज्य के विरुद्ध युद्धों में वे छत्रसाल के सहयोगी बन गये। उनकी संयुक्त सेनाओं ने कालपी के प्रदेश तक लूटपाट की। भेलसा और धामौनी का फौजदार पुरदिल खाँ, शेर अफगन के स्थानान्तरित होने पर इस समय एरच का भी फौजदार था पहाड़ सिंह के लड़कों का सामना करने को आया पर युद्ध में उसे गोली लगने से उसकी मृत्यु हो गई। पहाड़ सिंह के लड़कों और छत्रसाल ने मिलकर अब एरच के इलाकों को भी लूट डाला। अक्टूबर 1685 ई. में पुरदिल खाँ के स्थान पर गैरत खाँ नियुक्त हुआ और विद्रोहियों को शीघ्र कुचलने का आदेश दिया गया। पहाड़ सिंह का एक पुत्र भगवंत सिंह आँतरी के पास मार्च 1685 ई. में मुगलों से युद्ध करता हुआ मारा गया किन्तु उसका दूसरा पुत्र देवी सिंह विद्रोही बना तब भी छत्रसाल के साथ सहयोग करता रहा।'' (पृष्ठ 59-60)

उपलब्ध विवरणों से ज्ञात होता है कि इंदुरखी के गौर राजा ने मुगल बादशाह औरंगजेब का विरोध और पन्ना नरेश छत्रसाल बुन्देला का सहयोग 1680 ई. से प्रारम्भ कर दिया था। ये छत्रसाल बुन्देला की सेनाओं के साथ मुगल साम्राज्य के क्षेत्रों में लूटपाट करते रहते थे। उस काल में शत्रुओं के इलाकों में लूट और उत्पात की घटनाएँ अक्सर होती रहती थीं। जब जिसे जहाँ मौका मिला, उसने वहाँ लूटमार की। ऐसे माहौल में सामान्य जनता कितनी त्रस्त और भयभीत रहती रही होगी, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। उन भयावह परिस्थितियों में धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यव्यवहार कितने तनावपूर्ण होते रहे होंगे, यह सोचकर आक्रान्ता जातियों के प्रति सामान्य जन वितृष्णा और भय से भर जाता है। यह देसी रियासतों के राजाओं की परस्पर फूट के कारण हुआ। हमें अपनी अतीत से बहुत कुछ सीखने को मिलता है।

पहारसिंह गौर के मारे जाने के उपरान्त औरंगजेब ने शेष रहे विद्रोहियों को भी समाप्त करने के लिए अपने कई फौजदारों और सेना नायकों को लगा दिया था। इंदुरखी के राजा भगवंत सिंह

गौर को समाप्त करने का जिम्मा औरंगजेब ने नबाव पुरदिल खाँ को सौंपा था जो उस समय एरच और कालपी का फौजदार था। राजा भगवंत सिंह गौर और पुरदिल खाँ नवाब के बीच हुए निर्णायक युद्ध का वर्णन कवि सबसुख ने 'भगवंतसिंह रासो' में किया है।

''भगवंत सिंह रासो : नवाब पुरदिल खाँ समय'' में पुरदिल खाँ को गौर राजा से युद्ध करने के लिए भेजने के निर्णय का उल्लेख निम्न छन्द में किया गया है -

''सकल मंत मत चील कैं, कह्यौ साहि अवरंग।
गौर जुध्ध सफकरन कौं, पुरदिल अगव अभंग।।''

अर्थात् औरंगजेब ने अपने मंत्रियों से सलाह मसबिरा करके भगवंत सिंह गौर से युद्ध करने के लिए पुरदिल खाँ को उपयुक्त समझा था और तत्काल फरमान लिखकर उसके पास कालपी भेज दिया गया था। बादशाह का आदेश मिलते ही पुरदिल खों ने अपनी सेना तैयार की ओर इंदुरखी के राजा भगवंत सिंह पर चढ़ाई करने के लिए प्रस्थान कर दिया, उसके साथ एक विशाल सेना थी। पुरदिल खाँ की सेना का वर्णन सबसुख कवि ने विस्तार पूर्वक किया है। एक छन्द इस प्रकार है-

''सजे सब मीर सु आठ हजार
पयादउ संग गयंद अपार
तहाँ वर बज्जन वीर बजंत,
महा मदमत्त गयंद गंजत।'' (छन्द क्र. 9)

कालपी से पुरदिल खाँ की सेना ने प्रयाण कर आटा नामक स्थान पर डेरा डाला था और यहाँ रुककर भगवंत सिंह गौर से युद्ध करने के लिए उचित स्थान पर विचार भी किया था। पुरदिल खाँ भगवंत सिंह गौर से पाँड़ौरी नामक स्थान पर युद्ध करना चाहता था। पाँड़ौरी, इंदुरखी से पूर्व दिशा में सिंध नदी के किनारी एक बीहड़ सा गाँव था। भगवंत सिंह को पराजित कर उसने छत्रसाल के राज्य को भी समाप्त करने का संकल्प दुहराया था। यह संकल्प रासो काव्य में एक छन्द में दृष्टव्य है -

पहलौ सुबैर अब साहि हेत। कीजिये जुध्ध पाँड़ौरि खेत।।
सैंउड़े सुफेर कीबौ लराइ। छत्रसाल राज दीबौ ढहाइ।।(छ.क्र. 17)

अतएव भगवंत सिंह गौर से पाँड़ौरी ग्राम में युद्ध करने की योजना थी फिर छत्रसाल के राज्य को नष्ट करने के लिए सेउढ़ा के युद्ध की बात कही गई है। पन्ना रियासत के राजकवि पं. कृष्णदास ने 'वीरचरितामृत बुन्देल भास्कर' महाकाव्य में उल्लेख किया है कि अक्टूबर 1685 के पूर्व एक युद्ध छत्रसाल और पुरदिल खाँ के बीच हुआ था। जिसमें पुरदिल खाँ पराजित होकर भाग गया था। उस युद्ध में भगवंत सिंह गौर पन्ना नरेश छत्रसाल की ओर से युद्ध में लड़े थे। इसीलिए पुरदिल खाँ ने पहले हुई पराजय का बदला लने के लिए उपर्युक्त दो युद्धों की बात कही थी।

शूरवीर राजाओं के यश का वर्णन करने की परम्परा हिन्दी साहित्य में रासोकाव्यों के रूप में पायी जाती है। इन रासोकाव्यों के वर्णन अतिश्योक्ति से भरे हुए होते थे। सैन्य सज्जा, शूरवीरों की जातियों, अस्त्र-शस्त्रों आदि के वर्णन की एक बनी बनाई परिपाटी थी जो प्रायः सभी रासोकाव्यों में देखने को मिल जाती है। 'भगवंत सिंह रासो' में सेना के वर्णन में अनेक क्षत्रियकुलों के योद्धाओं का वर्णन किया गया है। संभव है कि ये सब युद्ध करने के लिए भगवंत सिंह गौर के साथ रहे होंगे। एक छन्द में भगवन्त सिंह गौर की सेना के शूर सरदारों का वर्णन इस प्रकार किया गया है -

''सिरमौर गौर पड़िहार धीर। जोधा जुझार भंजहिं सुभीर।।
कनबज्ज राई जह विरद सुध्ध। चहुआन तौर कूरम प्रसिध्ध।।
सेंगर सिचान चंदेल वंस। कटारिया मरद तहवीर अंस।।
वर वैस वंस अरु सिकरवार। जैवार डोडगनि सिरसवार।।''
(छन्द क्र. 21,22)

उस काल में शूरवीर क्षत्रियों के जो कुल विद्यमान थे उन सबका वर्णन रासोकाव्यों में किया गया है। इस छोटे किन्तु महत्वपूर्ण युद्ध में दोनों सेनाओं के बीच पाड़ौरी के युद्ध क्षेत्र में भयानक युद्ध हुआ था। इंदुरखी के गौर राजा की सहायता के लिए बेरछा तथा नदी गाँव के पमार भी आये थे। भीषण युद्ध में भगवंत सिंह गौर के हाथों पुरदिल खाँ मारे गये थे। पुरदिल खाँ और भगवंतसिंह गौर के मध्य यह युद्ध अक्टूबर 1685 ई. में हुआ था। भगवंतसिंह रासो में एक छन्द में पुरदिल खाँ के वध की सूचना इस प्रकार दी गई है-

''सत्रह सै ब्यालीस गन, संबतसर गत अध्ध।
कातिक वदि बुध पंचमी पुरदल खाँ कौ बध्ध।।(छन्द क्र. 74)

नवाब पुरदिल खाँ के मारे जाने की सूचना से औरंगजेब बहुत उग्र हो गया था। उसने राजा भगवत सिंह को समाप्त कराने के लिए दक्षिण भारत में तैनात अनेक सिपहसालारों को सचेत कर दिया था। उसने पुरदिल खाँ के स्थान पर गैरत खाँ को इसी मकसद के साथ नियुक्त किया था। मार्च सन् 1686 ई. में ऐसा एक मौका मुगल सेना के हाथ लग गया था। आँतरी के निकट राजा भगवंत सिंह गौर तथा मुगल सेना की मुठभेड़ हो गयी थी। जिममें भगवंत सिंह गौर वीरगति को प्राप्त हुए थे। भगवंत सिंह गौर से युद्ध करने के लिए मालवा प्रान्त में मुगलों की ओर से नियुक्त सूबेदार मुलूकचंद को बुलाया गया था। मुलूकचंद से युद्ध करते हुए भगवंत सिंह गौर मारे गये थे।

भगवंत सिंह गौर के उपरांत इंदुरखी में देवीसिंह गौर राजा बन गये थे। देवीसिंह के वंशजों ने इंदुरखी में सवत् 1840 विक्रमी तद्नुसार सन् 1783 तक राज्य किया। सन् 1783 ई. ग्वालियर के सिंधिया राजा महादजी ने इंदुरखी से गौरों को विस्थापित कर उस पर कब्जा जमा लिया था। इंदुरखी के गौर पड़ौसी रियासत दतिया में चले आये थे। दतिया के बुन्देला राजा शत्रुजीत सिंह ने गौरों को पाँच गाँव जागीर में दिये थे। गौरों के वंशज दतिया जिले के ग्राम नीमडाँड़ा में आज भी निवासरत हैं।

-अनन्य कालोनी, सेंवढ़ा, जिला दतिया (म.प्र.)
मो.- 9827815769

जहाँ नैकु सयानप बांक नहीं

– डॉ. दया दीक्षित

कन लगत कै प्रैम सें प्रगट होंय भगवान! प्रैमनैम की, प्रीत की रीत नीति की बात होतई है ऐसी! प्रैम से तौ भगवान लौ परगट हो जात, फिर मनई मान्स की तौ बातई का! मनई मान्स की को कय, संसार में चाय जढ़ हो और चाये चेतन चाये चौंपयारे होंय चाये पाखी परेवा, चिरवा चिरैया! प्रैम नैम सब में होत, रूख वनस्पति लौ प्रैम की पीर सें नई उबर पाये। प्रैम के बंधन से ऐसौ को है जो बच पाओ होय। बल्कि कबऊँ तौ प्रैम में ऐसौ डूब जात कै नाम अमर हो जात संसार में! प्रैम के रूप भी तौ कैउअन तरां के हैं, कोऊ देश कौ प्रेमी है, तौ कोऊ पन्नाधाय जैसा वफादार प्रैमी है, कोऊ खों दीन, तौ कोऊ खौं ईमान सें, कोऊ खों दशरथ की तरां सें लरका सें तौ कोऊ खों सरमन कुमार की नाईं बाप-मताई सें तौ कोऊ खों लछमन की नाईं भैया सें कोऊ खों सीता की तरां राम सें तौ कोऊ खों सीरीं की नाईं फरहाद सें....... गरज जा कै अपने इन रूपों में प्रेम की गिरफ्त से कोई नहीं बच पाया..........। जौई प्रैम हतो कुंवर हरदौल और रानी चम्पावती के बीचां। कुंवर हरदौल के बड़े भाई राजा जुझार सिंह की रानी थीं चम्पावती।

देओर भौजाई के प्रैम-नैम खों भौत जादां समय नई भओ। बुन्देलखण्ड में एक रियासत थी ओरछा। झाँसी से बिल्कुल सटी भई। दस बारा मील दूर! आज भी अजुध्या जी के बाद ओरछा के रामराजा कौ मंदिर दूर दूर लों जानो जात! ओरछा औ उसके आसपास का पूरा अंचल पहाड़ी और अक्षय वन संपदा के लानें देश दुनिया में नामवर है। दुर्लभ जड़ी बूटियां, क्षार, खार, खदानें, जांगन तांगन डरी रातीं वनैले जीव जंतुओं की अनमोल केंचुले, मृगचर्म, सिंहचर्म, सींग,... बेमिसाल और अक्षुण्ण महत्व की ये विशिष्ट सम्पदाएं जिनें कैऊ कामन में लओ जात, जे सब इतै इतनी जादां हैं कै का बताएं। इसी वन-प्रांतर के पहाड़ों, चट्टानों के बीच बहती बेतवा (वेत्रवती) अपने मीलों चौड़े पाट और हांथी डुबान गहराई में अद्भुत रत्नराशि समेटे दूर-दूर तक
प्रवहमान है। बेतवा के हरे भरे किनारों और चट्टानों के बीच सागौन, अमलतास, चीड़, देवदार, शीशम, पीपर, महुआ, जामुन, बरगद, नीम, जंगल जलेबी जैसे बड़े-बड़े पेड़-रुख अपनी घनी छाया सें जंगल दिवस कों रात के अंधयारे में बदल देत! झरबेरी, करौंदी, मकोय जैसी कँटीली रसीले जंगली फलों की झाड़ियाँ, उनके बीच विचरत जीव जंतु, शिकार के शौकीनन के लानें हमेसां सें प्रबल आकर्षण बनें रत! यहाँ की भुरभुरी पहाड़ी पथरीली कंकरीट बारी गेरुआ रंग की भूमि ऐसी लगत जैसें आन मान कौनऊ साधु सन्यासी जोगी जती कौ ऐन बड़ौ गेरूआ वस्त्र होय!

उन दिनों ओरछा नरेश थे जुझार सिंह! सीधे सादे सज्जन और अपार बलसाली योद्धा। उनके दोई सौक हते शिकार और पहलवानी! जे दोऊ शौक शगल बनकें उनकी जिंदगानी में ऐसें समा गएते कै या तौ बे बेतवा किनारे के घने जंगल में शिकार करबे जा रए कै तौ अखाड़े में मल्लजुद्ध में जूझ रए, नईतर कुश्ती के दाँव अजमा रए, नईतर डंड पेल रए! इन कामों में जैसें उनकी आतमा बसतती! ऐसे में रियासत कौ पूरौ काम कुंवर हरदौल खों देखनें परततो! कुंअर हरदौल कों अपने बड़े भैया सें बेहद प्रैम हतौ। अद्भुत महाबीर पराक्रमी, हरदौल केवल राजकाज नई चला रएते, बल्कें दुसमन राजाओं के दांत खट्टे करकें अपने सुराज की सीमाओं का विस्तार भी कर रएते। उनें राजकाज में ऊसई आनंद आउततो, जैसौ जुझार सिंह खों सिकार और अखाड़े में आउततो! ज्वान जमान हरदौल कौ पूरौ टैम राजकाज शासन के कुशल प्रबन्धन में, कामन में लगततो! राजकाज में बीदे हरदौल खों भूंक प्यास लौ भूल जातती। रनिवास सें दसियन बार रानी भावी के संदेश पै संदेश आउत रतते कलेवा के, पै हरदौल कितनऊँ जल्दी करें आउत आउत इतनों टैम हो परततो कै कैउनबार दुपर के भोजन की बेरा हौन लगतती! भाभी चम्पावती देर होबे के कारण पैलां तौ मान करें, फिर बाद में मनुहार करकें अपने देओर खों भोजन कराउती थीं। रोजाना तौ नई, मगर कैउअन दिना जई होत रततो! राजा जुझार सिंह खों अखाड़ा और शिकार भौत कम मोहलत देते थे। बे उनई में बीदे रहते थे।

हरदौल खों कलेवा कराबे में, भोजन कराबे में रानी खों भौतऊं सुख आनंद मिलै, बड़ौ सुख मिलै। कोऊ तौ हतो जिसके लानें उनकी दिनचर्या व्यस्त थी! बे उमर में हरदौल सें तनकई बड़ी थीं। दोउ जनै एक दूसरे के हितूमीत थे। रानी सखा संगातियन की नाईं व्योहार करती थीं लला हरदौल सें। जौलों हरदौल आ कें भोजन नई कर लेते थे, तौलों वे स्वयम् भी निराहार रहती थीं! उनकी जई आदत हरदौल खों दरबार छोड़ कें महलों में खींच लाती थी। जा बात उनके लानें असहनीय थी कि उनकी बजां से उनकी प्रानप्यारी भाबी भूकीं प्यासी रहें। जा बात नहीं थी कि इस बाबत भाबी उनसें रार न करती हों, बल्कें कैउन बार तौ हरदौल बड़ी मुसकल से उन्हें मना पाउतते। इस शर्त के साथ कै अब आगें सें बे कलेवा की बेरां कलेवा और भोजन के बखत भेजन करेंगे! मगर शर्त का यह संधिपत्र दो-चार दिन में ही दम तोड़ देता था।....

हरदौल खों भाबी के हांतन की बनी खीर भौतऊँ नोंनी, भौतऊँ प्रिय थी! खीर उनकी सबसें बड़ी कमजोरी थी। रानी भी रुच-रुच के अपने लाड़ले लाला हरदौल के लानें खीर का उपक्रम करती थीं। हरदौल खों एक दिना पैलां सें वे बता देती थीं कै ''लाला कल मैं तुमाए लानें तसमई (खीर) बनाऊँगी, ऐसा न हो कि तुमारी बाट हेरत रएं, औ तुम आबोई भूल जाऔ!

आज बड़ी रुच रुच कें उम्दा वासमती चाँवरन में केसर, लाइची, केवड़ा और मेवा डार कर, चम्पावती नें जतन सें रबड़ी

जैसी खीर बनाईती, कलेवा की बेरा हो गईती। हरदौल खों बुलावे के लाने टिरौआ महलन से दरबार के लानें चलो गओतो। देर होतन देख कें रानी नें फिरकऊँ टिरौआ भेजो! उस दिन कम सें कम चार टिरौआ गए रनिवास सें, मगर हरदौल तऊ न आए! औ जब आए, तौ लों तौ दुपर के तपे सूरज नारायण अस्ताचलगामी हो रएते! दासी नें आ कें खबर दई, मगर चम्पावती पलका पै सें न उतरीं उतै हरदौल बैठे बैठे बाट देख रयेते, अबेर, होतन देख कें हरदौल स्वयम् भाभी की ड्योढ़ी कोदी चल पड़े। मनईमन जान तौ रयेते कै आज तौ उनकी खैर नईयां। मैहर बारी शारदा भवानी खों अछरु बारी माता को सुमरत भए भाभी के ढिगां जा कें खड़े हो गये अपराधी से। डर के मारें कछु कै नई पा रए थे मगर आखिरकार हिम्मत करकें कोमल और महीन सुर में बोले- ''रानी भौजी''! बोल जैसें हवाओं में, तैर कें रै गए। आँखें मटकाउत पिंजरा कौ सुआ चकर मकर हेरन लगो। भाभी तरपी सें जब कौनऊ ज्वाब नई आओ, तब फिरकऊँ हरदौल नें टेर लगाइ ''भौजी औ भौजी काए गुस्सा हौ हमसें! आज तौ तुमारी सौगंध भुन्सारे सें पेट में चूहा कूंद रएते। मालूम था कै आज तुमनें खीर बनाई हुइयै! तुम्हारी सों भौजी अपनी सोंह, दरबार से हम उठने ही बारे थे कै दीवान जू खबर ल्याए- 'तुरकी घोड़ों का व्यवसायी आया है..............।'' अब तुमई बताऔ कै बिना देखें परखें जा सौदा कैसें निस्तारते। छाँट छाँट के बढ़िया अश्व देखे, उन पर सवारी गाँठी। दो दर्जन घुरवा (घोड़े) लेने में पहर भर का समय पल भर में फुर्र हो गया। तुमई बता दो भौजी जौ सौदा तौ हमई खों करनें तो न! कोऊ और के बस की बात न हती। दाऊ जू (जुझार सिंह) के पास खबर भेजीती अखाड़े में। अखाड़े में तौ चल रओतो मुकाबला। दाऊ जू नें किवा भेजी कै ''सौदा कर लिया जाय''। अब तुमई बताऔ भौजी हम का करते। भूखे प्यासे उसी में लगे रए। का हम नई जानते थे कि तुम हर्माइ बाट हेरतीं निराहार बैठी हुइयौ...............।''

हरदौल की सीदी सच्ची बातों सें भाभी का मान भरा गुस्सा पिघलने लगा। बचा खुचा भी तब खतम हो गया जब बेबस उदास हरदौल पिंजरे के सुआ सें कहने लगे- 'पट्टू तुर्मइं समझाऔ हमाई गुइयां कों, हम तौ कह सुनकें हार गए। पट्टू खीर तौ आज तुमनें भी खाई होगी, और हमें देख लो, संजाबेरा होबे खों है, पेट में अन्न का दाना तक नई गया। भूखन के मारें पेट की आंतें सिकुड़ी जा रई। अब चाय जैसौ काम होय पैलां पेट की मानेंगे बाद में काम। लो हम उठक बैठक लगाकर माफी माँगते हैं! ओरछा की रानी सें।''औ सांसऊँ हरदौल कानों पर हाथ धरकें उठा बैठक करन लगे। चम्पावती कौ रओ सओ संताप कपूर की नांई उड़ गओ। आंखों में प्रेमाश्रु छलक आए। देवर कों कान पकड़ कर उठते बैठते देखकर वे फुर्ती सें उठीं और विह्वल होकर हरदौल के हाथ कानों से हटाते हुए बोलीं - ''चलौ अब रान दो सफाई। ऐसे राजकाज में आगी लग जाय जिसमें- दे ओर-भौजाइ दोऊ, सातऊ सुख होत पै भूखन मरें।''

''अरे कौन भूखन मर रहा है हमारे राज में'' कहते हुए जुझार सिंह नें उसी समय ड्योढ़ी के भीतरै पाँव धरे। उनें देख कें रानी नें हरदौल के हांत छोड़ दये, हँसत हँसत बोलीं ''तुमारा राज तौ अखाड़े और सिकार तक जाकें खतम हो जाता है। फिर भाइ मरै चाये घरैतिन तुमें इस सबसें क्या मतलब?''

रानी कौ जौ बतकाव सुनकें जुझार सिंह बोले ''मतलब क्यों नहीं है जी? तुम दोनों तौ हर्माइ आँखें हौ, हमारे हांत पांव सब तुमसें हैं। हमारे नेह लगन का ऐसा उपहास तौ न करौ। हम तौ आंखें बंद करकें हरदौल पर निर्भर हैं, उनें रोकते टोकते भी नईं, जैसें चाहें वैसे राज चलाएं। अपनी मुहर निसान सब कुछ हरदौल के हवालें कर चुका हूँ। यह सब क्या तुमसे छिपा हुआ है रानी जू।''

रानी चम्पावती नें कई- ''तुम बताहौ तबईं जानहें का? अरे ओरछा के चिरई चिरवा लौं जानत हैं तुमारा प्रैम नैम!'' इतनी कह कें, अबेर होतन देख कें रानी रसुईया तरपीं जैबे के लानें उठीं, औ हांत सें दोऊ मर्द मान्सन खों भी चलबे कौ इसारौ दओ। संजा हो चली थी, अब ब्यारी की बेरा थी जा।

सुखी सम्पन्न औ समृद्ध ई रियासत पै जानें कब सें मुगलन की नजरें लगी थीं। मगर बे जौ अच्छी तरां सें जानते थे कै हरदौल के पराक्रम के आगें सेना के बल पर कभऊँ भी ओरछा खों हथियाओ नई जा सकत। सो उनकी कुटिलबुद्धि नें अपनी सोची समझी भेद की रणनीति खों महाअस्त्र की भाँति चलाबो सुरु कर दओ। वे जानत हते कै उनकी भेदनीति हरहाल में सुफल हो जात। सो धीरे धीरे वे जाल बिछाउन लगे। शिकार खों घेरबे औ फसाबे के लानें अपने छल कपट औ प्रपंच खों फैलाउन लगे। रियासत के बड़े और छोटे दीवान औ कुछेक दूसरे प्रभुत्व सम्पन्न लोगों को अपनी तरफ मिला कें राजकाज के भेद लैन लगे। तरां तरां सें प्रलोभन दै कें फोड़बो शुरू कर दओ। किसी को पद-पदवी सम्मान कौ लालच दओ, कोऊ खों रिसवत खबाई, और कोउ खों नौकरी दैकें, जौ जान लओ कै ''ओरछा कौ राज, राजा के बल पै नई, राजा के भाइ के बल पै चल रओ है। राजा तौ पहलवानी और सिकार में गाफिल रहता है....... राजा को राज के कामकाज सें कौनऊ वास्ता नई... न उसमें दिलचस्पी। राजा को अपने भाई पै अंधा विश्वास है। राजा भाई से भौत प्रैम करता है।'' जे सब भेद मालुम होते ही हरदौल मुगलन की आँख में किरकिरी बन कें खटकने लगे। अगर हरदौल न हो तौ ओरछा हथियाने में कौनउ विसेष जतन न करनें परै। अगर दोऊ भाइयों में दरार पर जाएं तौ भी काम बन सकता है। मुगलों ने इस काम के लिय ओरछा के कुछ 'जयचंदों' से मदद लई। जयचंदों ने भांत भांत सें जुझार सिंह के कान भरना सुरू कर दये-कै ''आप तौ सीधे सच्चे हें, सिकार औ पहलवानी के कारन आप नई देख पाराए कै हरदौल धीरे धीरे ओरछा नरेश के रूप में अपनी जड़ें जमा रए हैं, हरदौल तौ जई चाउत हैं, कै आप राज-काज सें दूर रएं, तभी

वे मजबूती सें जम पायेंगे। तबई तौ बे आपके लानें अखाड़ों का इंतजाम करते हैं, पहलवानों को आश्रय देते हैं। बेतवा के किस जंगल में चीतल जादा हैं, किसमें सेर, किसमें तेंदुआ..... सबकी खबर रखते हैं। उनके हाँका के लानें तैयारी करवा कें आपको सूचनाएं देते हैं, आपको नहीं मालूम कि महलों की जनानी ड्योढ़ी में एक दो नहीं कैउअन बेर हरदौल जाते रहते हैं- कलेवा, भोजन और ब्यारी तौ बहाने भर हैं वहाँ चौपर कौ खेल होत है और दूसरे दूसरे कैउअन खेल चलते हैं। रानी जू खों अपने बस में कर चुके हैं हरदौल। रानी जू औ हरदौल की प्रीत महलों की दिबारें कब की फाँद चुकी है। अब तौ ओरछा की गैल गलियारों तक हवा फैल गई है....। आप तौ बस पहलवानी, भांग और सिकार खों ही सब कुछ समझत हौ।'' जौ सब बतकाव सुनकें जुझार सिंह जैसें आसमान सें गिरे। एकीएका उनें इन बातों पै बिस्वास नई हो पा रओतो ! ऐसा कैसें हो सकता है? रानी और हरदौल में संसर्ग संबंध? नई..... नई.......... एसौ नई हो सकत...। लेकिन क्यों हरदौल दौरे छूटे महलों में ठाड़े रत? एसौ कौन सौ ज्वान जमान हुइयै जो अपनी जनानी ड्योढ़ी सें जादां भौजाई की ड्योढ़ी चढ़त होय। औ हमाई रानी जू ? चम्पावती ? जा तौ सोरा आना साँसी है कै हरदौल पै उनकी मोहमाया भौत जादां बढ़ी-चढ़ी है ! हरदौल कौ गुनगान करत अघाती नईया चम्पा, कै हरदौल ऐसे वीर हैं। हरदौल ऐसे चतुर सुगर हैं राजकाज में......... जब देखौ तब हरदौल हमसें तौ कभी नई पूंछा हमारे अखाड़ों का हाल ! न पूछा कभी हैरतंगेज खतरनाक शिकार का मंजर ! न जानी मेरी पहलवानी की कदर !.......... आखिर इस सबकी जड़ में का है? जई कै हरदौल के गुणों के आगे हमारे ये गुन उसे दुर्गुण लगते हैं। हमसे अगर सच्चा प्रेम होता, तौ का हमाए मन प्रानन में बसबे बारे हमाए इन कामों सें उसे सरोकार न होता? कन लगत कै प्रीतम पिया के तौ दूषण भी भूषण दिखा परते हैं, फिर जे तौ हमाए अतिप्रिय शौक हैं हमाए जीवन के आधार हैं। हमाए प्राणाधारों से ऐसी बेरुखी ! ऐसी बेदर्दी ! ! इसके सबब में कुछ तौ है। जरूर कुछ गड़बड़ है। कुछ खोट है ! अभी उस दिन जब बे रानी की ड्योढ़ी में गऐते..... तब किस तरां सें दोऊ जनें एक दूसरे सें गुत्थमगुत्था थे?...... आरा.....रा....रा....रा... मैने काए नई सोची इस संबंध पर। मुझे दोऊ जनन नें धोखे में रक्खो ! दोउ के दोउ विश्वासघाती हैं ! मगर मैं कर भी क्या सकता हूँ? क्या करूँ? सजा देना चाहता हूँ, मगर जौ नई सूझ परत कै का सजा दें? कैसें दें? आस्तीन कौ सांप कोऊ और नईं सगौ भइया निकरो ! ! औ दूसरी तरफ सात जनम तक संग निभाबे की सोंह उठाबे बारी जीवनसंगिनी..........? का करें? का करें हम ? जरन हती कै बढ़तई जा रईती। बढ़त-बढ़त उन लोगन तक पोंची जिन लोगन नें जा सबरी आगी लगाई ! लोहा गरम देख कें आगी लगाबे बारन नें भरपूर चोट कर डाली। ''राजा आप खों चिंता नई करनें, न परेसान होनें, इस गाढ़े समय में नीति से काम लैनें ! हमोंरन की सलायसूत मानों तौ खास आप रानी जू की परीक्षा लो ! अगर आपसे सच्चा प्रैम करने वारी पतिव्रता होगी रानी, तौ आपके कहे अनुसार काम करेगी, नकरै तौ समझ लई जाय कि रानी बिस्वासघातिन हैं........... आप रानी जू सें कऔ कै अगर हमसे सच्चा प्रैम है हमाए अलावा कोऊ और से किसी भी तरां कौ प्रैम संबंध नईयां तौ हरदौल के भोजन में बिस मिलाकर उसे भोजन कराएँ..........।''

परीक्षा लैबे की जा बात जुझार सिंह कों ऐन नोनी औ तर्कसम्मत युक्तियुक्त लगी। सक संदेह के सांप नें राजा के बुद्धि विवेक पै पूरौ कब्जा कर लओतो ! इन दिनन जुझार सिंह रीने रीने से बुझे बुझे से रहतते। दिनचर्या तौ पैलऊँ सें देर सबेर बारी हती, अब औरऊ गड़बड़ औ अबेरी हौन लगीती। ई सबकौ जौ असर भओ कै पैलें से जादां खिन्न औ चिड़चिड़े हो गएते जुझार सिंह। कमल की नाईं खिला मुखचंद एकदम सें मलीन औ मुरझा गओतो ! उनकौ एसौ हाल देख कें रानी भौतऊं संतप्त थीं। उनें समझई में नई आ रओतो कै ऐसी का बात हो गई कै राजा इस तरां सें व्यथित और बेचैन हैं, आखिरकार उनसें नई रओ गओ सो एक दिन उननें पूंछई लओ ! मगर जवाब दैबे की जांगां राजा मौन बने रए। भौत पूंछबे पै राजा नें उल्टौ रानी सें पूछ लओ- 'रानी तुम हमें कितनों मानती हौ? प्रैम करती हौ? उत्तर में रानी बोली- ''जीवन सर्वस हौ तुम हमारे ! तुमसे जादां हमें कोई प्रिय नई हैं। हमारे जीवन, हमाए सुहाग हौ तुम ! मगर आज ऐसौ का हो गओ कै तुमें जा बात पूंछबे की जरूरत परी हमसें? रानी की इन बातन खों जैसें राजा नें नईं सुनो ! फिरकऊँ बोले- ''रानी अगर तुम हमसें सच्चा प्रैम करतीं हो, पतिबिरता हौ, तौ लो जा बिस की सिसिया, हरदौल के भोजन में मिला कें खुबा दो उनें। औ इसका कारन हमसें न पूंछना रानी, ओरछा के गैल गलियारों सें पूंछना ! और हाँ, कल्ल तक जौ काम हो जाओ चाहिए।'' आदेश दै कें राजा जनानी ड्योढ़ी सें निकर गए !

रानी पै तौ जैसें गाज गिर परी ! उन पै इतनों अबिस्वास ! इतनों बड़ौ लाँछन। बौ भी की के संगै? अपने प्रानन सें प्यारे भैया हरदौल के संगै? निश्छल भोले भाले देओर हरदौल ! उसे जहर खिलाना? निर्दोष निष्कलुस हरदौल के प्राण लेना? नई नई ! प्रैम की इतनी बिकट परीक्षा? का हो गओ आखिर, राजा खों? किसनें उनके कान भरे? किसने उनें उकसाओ है? ऐसे निर्दय, निरमोही तौ नइयां बे ! जरूर इसमें साजिस है काऊ की। पता लगाना चाहिए। जौ बिचार आबे की देर हती, कै तुरतई रानी नें अपने खुफिया तंत्र खों बुलौआ भेजो ! उनमें सें जौन भौतऊँ विश्वासपात्र अनुचर थे, उननें रानी खों जौन भेद दए, उनसें रानी के हृदय में हाहाकार मच गओ ! रानी नें कड़ी फटकार लगा कें पूंछी कै अब तक जे बातें उनसें काए छुपाई गईं? क्यों नहीं, समय रहते चेताया गया? ज्वाब में अनुचरों ने कहा- जे खबरें हमें अबई दो दिन पैलऊँ मिलीतीं, पुख्ता जानकारी कर लैबे के बाद आज हम स्वयम् आपके पास आबे बारे हते।'' सुनकें रानी मौन हो गईं। कैसें बताउतीं कै अब तौ भौत देर हो गईती !

भौत सोच-विचार के बाद रानी नें राजा खों अपने महलों मे ं बुलवाओ ! अब सें पहले कभऊँ रानी नें असमय राजा खों जनानी ड्योढ़ी में नई बुलाओतो ! बुलौआ सुनत तुरतंइं राजा जनानी ड्योढ़ी में आ कें खड़े हो गए ! रानी नें उनसें भौत मन् ुहार करी ! हा हा विनती करी ! तरां तरां के लो काचार की बातें करकें अंत में बा ली- राजा, अगर बिस की सिसिया हरदौल के भोजन में मिला दई, तौ कलंक हमारे तु माए ऊपर लगहै ! तु म्हें अपजस कौ मों दे खनें परहै। तुमें अगर परीक्षा लैनेंई है अपने प्रेम की, तौ मैं खु दई विसपान खों तैयार हों। निरपराध की जान लैबे सें तौ अच्छौ है, कै अपनी जान दै दई जाय।'' रानी की एक एक बात कौ राजा पै उल्टौ असर भओ।

उसकौ सक सन्देह औरऊ पुख्ता हो गओ। क्रोधाग्नि में जैसें घी पर गओ होय ! भोऐं टेढ़ी हो गईं, ओंठ फरकन लगे, आगबबूला हो कें बोले रानी सें- 'मेरे आदे श का पालन करो, या फिर मुझे जीवन भर अपना मुँह न दिखाना।' कहकर तीर की नाईं राजा वहाँ सें बाहर चले गए। जा एकमात्र आखिरी कोसिस थी रानी की। रानी जान गई थीं कै ओरछा कौ सर्वनाश अब कोउ नई रोक सकत ! मुगलों की चाल खों मदोन्मत्त संदेह में अंधा राजा समझ नहीं पाया। बैरियों नें कान भर दए। कान कौ कच्चौ राजा अपनेई भाई खों दु समन बना बैठो है। अपनी पतिबिरता रानी की मान मर्जाद कों दांव पै लगा बैठो है, कलंक खों न्यौतौ दै रओ है। हे राम ! का करें हम? कैसें इस कठिन परीक्षा में खरे उतरें ? अगर खुद विषपान करें लेत हैं, तौ राजा हरदौल खों भी जिंदा नई छोड़ेंगे। हरदौल ! जिसनें निजी सुख दुख खों भुला कें अपनो ं जीवन राजकाज में खपा दओ। जिसनें भाइ की आज्ञा खों वेदवाक्य मानों। जो बरहमेस भाई के सुख-साधनों में ही लगो रओ, और बदले में आज उए उसी भाई के द्वारा प्राणदण्ड दओ जा रओ है ! और वह भी किसके जरियाँ से? उस भौजाई सें, जो उसे हद्द से जादां प्रेम करती है, जिस पर उसे पूरा विश्वास है, जिस पर वह अपना सब कुछ दाँव पै लगा सकता है ! हे राम ! हम का करें प्रभू ! का करें दीनानाथ..... सोचत सोचत दु पर सें साम हो गई। अंधयारौ हौन लगो। कारी रात हों आई ! जा कारी रात आज कितनों के जीवन की कारी रात थी?

यह ओरछा के इतिहास की सबसे काली रात थी। कोऊ के लाने ं जा आखिरी अन्तिम रात थी। सोच कें करेजौ क ंप गओ रानी कौ ! प्राण क ंठ में आ गए। फिर तौ पूरी रात करोंटन में कटी। भोर की उजास,पाखी पखेरुअन कौ कलरव ज ूड़ी सीरी बहत हवा.... आज रानी कों खुशदिल न कर पाई । धीरें-धीरें रानी नें मन खों मजबूत करो ! दासी से ं हरदौल के महलन में खबर करा दई कै कलेवा में खीर बनेगी, सो टंम सें आ जायें। कुछ जरूरी बात भी करनें है।

रानी नें जतन सें खीर बनाइ । हरदौल कुँवर समय सें आ गए। खीर कौ नाम सु नकें बड़े प्रसन्न थे। कहन लगे, 'अरे भौजी ! एकीएका खीर कौ कलेवा? जियौ मेरी रानी भौजी, जुग-जुग जियौ। 'जुग जुग जीने की बात पै काँटौ सौ गड़ गओ रानी के हिरदय में। ''तुम्हारे बिना जुग जुग जी कें कैसे रहूँगी लाला।'' कैस बतायें कै हमपै का बीद रई है? जिया में उमड़ न घुमड़न ऐसी कै जैसें प्राण निकरे जात हैं। विधना तुम जई घरी हमाए प्रान काए नई हर लेत? हम कैसें इस तरुन वीर राजकुंवर खों बिस दै दें? कैसें इस तरुनाई खों मौत का मंजर दै दें? कैसें देख पायेंगे इसका प्राणांत? हे परमेसुर ! हे राम !'' मन कौ जौ आँधी तूफान अंसुवन के रूप में आँखन सें बहन लगो। भौजी की रीनी रीनी सी मुरछाई मुखछब्ब औ आँखन में अंसुआ देख कें हरदौल अचंभित रै गए? बेला कुमुदनी की कलियों सी खिलतीं हँसती भौजी को ं कभी उन्होंने अश्रुपात करते हुए नहीं दे खा था। एकदम सें आगे बढ़े और उनें चुप कराउत बोले- ''भौजी, हरदौल के होत भए, तु म्हारी आँखों में आंसू कैसे? किस की यह मजाल कै मेरी भौजी खों दु खी संतप्त करै? कौन है भौजी, बोलौ कौन है, मैं उसको छोडूँगा नहीं ! बताओ किसने तु म्हें रोने पर विवश किया है?'' हरदौल की इन बातन कौ का उत्तर दें महरानीं चम्पावती। जा सोच कें कै अब हरदौल

कुछ ही देर के मेहमान हैं, खीर खाते ही.......... देखतई देखत मोरौ लाड़लौ चलो जैहै देस दुनियाँ सें........ दु ख संताप दुगने वेग से बह चला आंखों से।

रानी खों ई तरां सें रोउत बिलखत देख कें हरदौल थिर न रै सके। आगे बढ़के उनने भाभी कौ हांत अपने सिर के ऊपरै रख लओ। बोले- ''तु म्हें हर्माइ सौंह ! भौजी बोलौ का बात है? न बताओगी तौ हमारा मरा मुख दे खहौ ! रानी ने तलफकें अपनों हांत हरदौल के ओंठन पै धर दओ, फिर बोली- ऐसी बात फिर न कहियो लाला ! हम तुमें का बताएँ कैसें बताएं? हिरदय फटो जात ! हरदौल कुंवर ! मोरे प्रानन प्यारे देओर ! तुमारे भाई तुमारे प्रान लओ चाउत हैं। देखौ जा जहर की सिसिया ! जा उननें हमें दई है, तुमें भोजन में खबावे के लानें...........। रोउतीं किलपतीं रानी नें धीरे धीरे पूरी किस्सा हरदौल खों बता दई। जा भी कै, भलाऊँ राजा नें कई है, मगर हम एसौ अन्याय कभी नहीं करेंगे। चलौ हम तुम कौनऊ और ठौर ठिकाने निकर परें। हमें न चहिए जौ राज औ वैभव। हरदौल इतनी बड़ी संसारी में हम कऊँ भी सुख और चैन सें रह लेंगे । तुमारे भाइ पै संदेह के कलुष की ऐसी कालिख पुती है कै वे अपने होस हियाव में नई यां। मुगलों की चाल खों वे समुझ नई पा रए। नईं समझत तौ भलाऊँ न समझें। जिंदगानी की कीमत पै हमें तौ लो न झूटी इज्जत प्यारी है औ न खोकली प्रतिष्ठा। चलौ लाला, देर न करौ, चलौ हम इस रियासत सें निकल जाएँ।'' रानी भौतऊँ व्यग्र व्याकुल थीं, जानें का का तौ कै रईतीं, मगर हरदौल खों जैसें कौनऊ फरक नई परो इन बातन कौ। बोले- ''बस इतनी सी बात ! अरे तुमारे लानें एक बेर तौ का, हजार बेर जहर पीबे खों तैयार हैं हम। अगर मेरे विसपान से तुममें औ दाऊजू में प्रेमनैम बना रहे, तो इससे बढ़कर

मेरा सौभाग्य क्या होगा भाभी! प्राणों का क्या? जे तौ अमर नहीं हैं! कभी तौ इनें निकरना ही है। फिर इस पुनीत प्रयोजन में निकलें तो कहना ही क्या? इतनी सी बात के लानें तुम रो रो कें जान दँय डारतीं हौ भौजीं तुम काती हौ कै हम कऊँ कौनऊँ ठौर ठिया की तरपीं निकर जाँय। क्या इस तरह से निकरने पर दाऊ जी का संदेह और पुष्ट नहीं होगा? क्या वे सारी उमर एई संताप संदेह की आगी में नई जरते रहेंगे। जो काम हमनें तुमने किया नहीं? सो क्या यह कदम उठा लेने से सत्य होकर कुप्रचारित नहीं होगा? क्या इससे हम तीनों पर कलंक और अपजस नहीं लगेगा? हमारी तौ चलौ कौनऊ बात नइयां लेकिन आपकी और दाऊ जी की मान मर्जाद और प्रतिष्ठा पर आँच नहीं आने दूँगा। लो अब आप कलेवा की थाली तैयार करौ। आज की खीर तौ हमारे लानें बिल्कुल अमृत की नईं है। लै आऔ भाभी अमृत, जल्दी पीकर हम अमर हो जायें। जड़ीभूत सी हो कें हरदौल की बातें सुनतीं रई रानी। अपनी जांगां सें टस सें मस नई भई रानी। किसी तरां सें हरदौल ने उन्हें उठाया, मगर उनके सहारे के बावजूद रानी के कदम आगे नईं बढ़ रए थे। हरदौल जबरिया उनें रसोईघर की तरपीं लै गए!

भोजनकक्ष में दासी कलेवा कौ थार चौकी पै धर गई। प्रसन्न मुख हरदौल आसन पर बैठ गए। रानी कौ हिरदय फटो जा रओ है, थार में रक्खा खीर से भरा काँसे का बेला (कटोरा) रानी कों विसधर भुजंग के रूप में दिखाई पड़ रहा था, एक बार फिर उन्होंने भरे गले से बरजते हुए कहा- ''जहर भोजन में सनी, लला, खाऔ न, प्राण जान कें गंवाऔ न।'' देखते ही देखते हरदौल ने काँसे का बेला उठाया।............... खीर अपना काम कर रही थी। खाते खाते हरदौल का शरीर पहले नीला पड़ा फिर निश्चेत होकर पृथ्वी पर लुढ़क पड़ा। होठों से झाग गिर रहा था।................ हरदौल मर कें भी अमर हो गए। रानी गश खा कें गिर परीं। महलों में खलबली मच गई। खलबली सारी ओरछा नगरी कों अपनी गिरफ्त में लै बैठी। जैसई जैसें लोगन कों असलियत कौ पतौ परत गओ उसई ऊसें बे जुझार सिंह कों कोसने गरियाने लगे। अपने हितू मीत राजपुरख हरदौल के बिना ओरछा हाहाकार कर उठा! हालांकि महलों सें अपनी सफाई में बहुत बातें प्रचारित हो रई थीं लेकिन जनता के विवेक बुद्धी के आगें वे खोखलीं सफाईयां बेअसर हो कें रह गईं। जनता बलवा बिद्रोह पै उतरयाई। दरबारियों में दो फड़ हो परे। जुझार सिंह द्वारा दिये जा रए हरदौल के तेरईं भोज का ब्राह्मणों ने बहिष्कार कर दिया। जुझार सिंह ने सुना और फरमान जारी कर दिया ''जो बाम्हन तेरईं भोज में सामिल नई होंगे, उन्हें हमेसा के लानें ओरछा सें बायरें काड़ दओ जैहै!'' गुस्सा सें आग बबूला हो रए बाम्हनन नें स्वयम् रियासत छोड़ दई, औ गंगा के किनार मैदानी भाग में अपनों एक अलग नगर बसा लओ- 'कान्यकुब्ज' के नाम से। कालांतर में मुखसुख के कारन जई कान्यकुब्ज 'कन्नौज' बन गओ। जौन बाम्हन तेरई भोजन में सामिल भए वे जुझार सिंह के साथ थे, सो बे जुझौतिया कहाए। बुंदेलखण्ड में आज भी एकभौत बड़ा वर्ग इन्हीं जुझौतिया बाम्हनों का है।

हरदौल की बैन कुँजावती रोउती, पछाड़ खातीं रानी चम्पावती के महलों में आइ। उतै कोऊ खों न देख कें, रोउतीं किलपतीं हरदौल के महलों की तरपीं गई। उतै उनकी भेंट भई बड़े भैया जुझार सिंह से! देखतई जैसें कुंजावती के तन-मन में आगी सी बर गई। क्रोध के आवेश में बोली- 'भैया, तोए हरदौल नें कभी दूसरी मताई का जाया नई समझा। हमेसा एक पेट के जने सगे भैया जैसा मान पान दिया। मगर तैनें सौतेलापन जता दिया। कै बाप भले एक था, मताई तौ अलग अलग थी। तैने कभी उसे सगा न समझा। खा लओ मोरे भाई खों! जहर दै कें प्राण लै लए उसके। तैं हत्यारा है..................... कसाई।'' जुझार सिंह बैन की जे जरी कटी बातें सुनके आग बबूला हो गया उसनें कुंजावती का भरपूर अपमान करके वहाँ से निकार दिया। मद में चूर जुझार सिंह नें बैन सें भौतऊ करें औ कटुवचन भाखे। इतनों तक कै दई कै आइंदा इतै आबे की जरूरत नईयां। तुम्हारा मुख तक देखना नहीं चाहता मैं!........... रोउतीं किलपतीं कुंजावती वापिस ससुरार चली गई। मायके कौ दाना पानी औ आसरा उनके लानें तौ अब उठई चुका था। मगर कछुअई महीनों के बाद उसे फिर कऊँ ओरछा आना पड़ा। परम्परानुसार वे अपनी बिटिया के ब्याव कौ भात न्यौतबे के लानें आइ तीं जुझार सिंह के ढिंगा। इन दिनन जुझार सिंह गोरों के भांत भांत के छल कपट परपंच सें जूझ रए थे। उनकी मानसिक हालत ठीक नई थी। जैसई कुंजावती पर उसकी निगा परी, सो रओ सओ संतुलन भी भरभरा गओ। क्रोधांध हो कें बोला- जा इतै सैं, अपने ओई लाड़ले हरदौल के पास जाकें भात माँग, जिसके लियें तैनें हमपै कलंक, लगाओतो कुलच्छिन।'' भैया सें ई तरां की ताड़ना औ अपमान सें दुखी हो कें कुंजावती आहत मन सें हरदौल के महलों में गई, उस हरदौल चबूतरा पै मूंड पटक पटक कें आरतनाद करन लगी, जौन हरदौल की पुण्यस्मृति में बना था। दहाड़ें मार कर कलप कलप कें रोउतीं, कुंजावती के इस दारूण विलाप को सुनकें रुख पेड़ों पत्तों के संगै नन्हीं-नन्हीं वनस्पतियाँ तक काँप उठीं।

बिलखतीं कुंजावती चबूतरा पै एसे हांत फेर रई थीं, जैसें चोंतरिया न हो कें साक्षात् हरदौल होय। कुंजावती कौ रोबो किलपबो धरती आकास तक गूंज रओतो। बिलखती जांय औ कातीं जायं- ''भैया हरदौल देख तौ लो आकर! तुमाई बैन आज कैसें बेआसरा अनाथ हो गई। आज तुम होते तौ का मोए ये दिन देखना पड़ता। मैं का मों लै कें ससुरार जाओं? उतै कैसें बताहों कै मायके सें न भात आयेगा औ न चीकट! ओ भैया.....ब्याव के दिना हरे बांस के मड़वा के तरें मै बिना भैया के किसखों भेंट दूँगी? को आहै चीकट औ भात लै कें? जुझार सिंह ने तुमें जहर दै कें मार दओ? ओ भैया... हरदौल! कौन देश कों चले गए भैया? अपनी बैन के औसर काज के लानें चले

आऔ भैया........।''

रोउतीं कुंजावती नें चौंतरई खों हरदौल समझ कें, भात मांगबे की रीत पूरी करी। चौंतरई खों न्यौते के पीरे चाँउर दए औ भरे मन सें वापिस ससुरार चली गई.....।

तै महूरत समय पै कुंजावती के दोरें ब्याव की लगन तिथि आइ । नेंग चार होने लगे। अब बेला थी मड़वा तरें चीकट उतारबे की। कुंजावती की देओरानी जिठानियों के नाते गोते के भैया मड़वा तरें चीकटें लै कें आ गए.........। कुंजावती कौ जी हिलोरें लै रओतो- हे पीताम्बरा माई । अब तु माई सहाय करौ। मोरी लाज बचाऔ महरानी ! मायके सें चिरइ चिरवा लौ नई आए, भैया भौजाई की तौ बात ही न्यारी? न कोऊ आओ, औ न आउनें हैं ! सब जनें हमसें पूछ रए मैं का जवाब दंओं? हरदौल होते, तौ आज जा घरी न देखनें परतीं !................. हरदौल खों याद करके एक बार फिर कुंजावती बिलखन लगीं। मन बोलो कै सांसी बात कै दई सो कितनी बड़ी अगन परीक्षा लै रए हैं भगवान। अगर उस दिन जुझार सिंह के मों पै उसके कुकरम खों न खोलते, चुपचाप रै कें अनीत खों मान जाते, तौ आज जुझार सिंह ऐसा भात चीकट लै कें आउते, कै सब जनें दांतों तरें उंगरिया दबा लेते। सो का जौ सब हम पैलां न जानतते ? ऐन जानते थे ! तोला रत्ती जानते थे ! कै मदांध जुझार सिंह खों सीसा दिखाबे कौ मतलब है सेर की माँद में हांत डार देना, 'कै नेह मोह का सर्वनास हो जाना.......रिश्ते नाते सें हांत धो बैठना...........। पै अपने सुभाव कौ का करें, जो हितलाभ की गणित जानते हुए भी नहीं जानता समझता ! जो नीत के आगे अनीत की एक नहीं चलने देता ! जे सब बातें कुंजावती की पीर खों अगम बना रई थीं, इते कई में बायरें कछू हल्ला गुल्ला सुना परो। हल्ला गुल्ला भीतर तक आ गओ......... कुंजावती के भैया भात और चीकट लै कें आ रए हैं..............। एकीएका कुंजावती खों अपने कानन पै बिस्वास नई हो पाओ। बायरें तरपीं दौर परीं वे.............. का जुझार सिंह आ रए हैं भात लै कें..........? नई

जुझार सिंह नई ! जे तौ हरदौल के गाड़ीवान हैं.......... । खबर आई है कि हरदौल के गाड़ीवानों को एक ज्वान जमान लरका ने पठाया है। उसी के कहने से जे सब यहाँ आए हैं। गाड़ीवान तौ खुदई भोंचक थे कै जिन बैलों गाड़ियों खों बे औरें भीतर रखते थे बेई भोर भुनसारे जब

सूर्जनारायण उदित हो रए थे उस समय सजी बजी माल असबाव सें लदी ठाड़ी थीं। और तौ और बैल तक जोत दये थे। सुना परी थी कै इनें कुंजावती की ससुरार लै जानें......। सो जई माल असबाब लदीं गाड़ियाँ लै कें बे औरें इतै आए हैं। कुंजावती तौ जा समय फूली नई समा रई थीं, जा टैम उनें इसकी खबर नई थी कै चीकट किसनें भेजी है? इस समय तो उनका उछाह अपनी चरम सीमा पर था। मायके सें चीकट आ गई है। मड़वा तरैं सब सामान रक्खो जा रओ है................ और हरदौल की छब सें मिलत जुरत लरका चीकट लँय, कुंजावती खों, उसके भाइयों की तरफसे भेंटने के लिए मड़वा तरें ठाड़ो है.......। नगाड़े बाजों के बीच पूरी मान शान के साथ चीकट उतराई की रसम भई ।......... ब्याव के नेंग चार एक एक करकें होने लगे.......बरात दोरें ठाड़ी थी। पंडित टीका के नेगचार करवा रए थे...........।

हँसी खुसी पाँच दिना बिता चुकी थी बरात। आज विदा की कच्ची पंगत दई जा रई थी। भांत भांत की बातन के बीचां अनायास इस चर्चा नें जोर पकर लओ कै रानी कुंजावती के भाइयों ने ऐसी अनमोल चीकट दई कै आज लों कोऊ नें न ऐसी देखी थी औ न सुनी थी। कोऊ कै रओतो- 'चीकट जुझार सिंह जैसे राजा नें दई है, सो सान तौ हौनेई थी। इस पर कुछ लोगों का कहना था, कै जुझार सिंह फूटी आंखों नहीं देखते बैन कुंजावती को.........। तब फिर ऐसी उम्दा चीकट बे काए के लानें भेजेंगे? कछु जनें बोले कै जा चीकट तौ हरदौल नें भेजीती। सुनते हैं कि रानी कुंजावती नें रो रो कें हरदौल के चबूतरा कों भाइ समान भेंट करके पीरे चाँउर दएते ब्यावकाज के। हरदौल नें बैन के उस कौल को निभाया है, जौन कुंजावती नें वहाँ किया था कै अगर भात न आओ तौ वह ब्याव के हालई बाद अपनी जान दै देगी..........।'' ई तरां की कैऊ बातें हो रई थीं लोगन के बीचां। इन लोगन में कछू ऐसे भी विघनसंतोषी हते जिनें बनत काम

बिलोरबे में भौत आनंद आउतततो। ऐसे विघनसंतोषियों ने नवयुवक दूल्हे के कान भरे..... उससें कई कै ''भात किसनें भेजा है यह मालूम करना तुमाए लानें भौत आसान है, कुँवर राजा अगर तुम जिद्द ठान लो, कै भोजन तबई करबी जब भात उतारबे वारे मामाजू हर्माइ पत्तल में घी डारेंगे.......। औ अगर एसौ न भओ तौ हम बिना बिदा के बरात वापिस लै जायेंगे.......।'' सीधे भोले भाले दूल्हा खों जा बात जच गई। बिना कोऊ सें पूछेंताछें बिना सलायसूत के उसनें इस दिल्लगी खों सांसी बना दओ ! कुटिलों के मन की पूरी हो गई। शुभकारज बनत बनत बिगर परो........। पूरी बरात में दूल्हा की हठ फैल गई। बड़े बूढ़न नें माथौ पकर लओ, लरका की नादानी पै...। मगर अब का हो सकततो? अब तौ बात आन की थी। टेक की थी........। वधू पक्ष में सन्नाटौ पसर गओ। अब का हो? जा तौ सांची थी कै उनें स्वयम् नई पता था कै भात किसनें भेजा? अगर जुझार सिंह ने भेजा होता, तौ का बे अपनी रानी के संगै ब्यावकारज में सामिल न होते? तब फिर कीनें.........? कुंजा कौ जी टूंक टूंक हो रओतो । भैया हरदौल तुम जिंदा होते तौ एसौ होतो का हमाए संगै? तुम होते तौ हमाईं ऐसी दुर्गत ऐसी जगहंसाई होती का? सोच सोच कें आँखन सें गंगा जमुना बहन लगी ! चारऊ तरपीं दुख औ गमगीनी की लहर दौर परी ! किसी खों कुछ नहीं सूझ रओतो.......... कै इतने में बई हरदौल की सी उन्हार बारौ ज्वान आउत दिखा परो.............। उसनें बरात के कुछ बड़े बूढ़न सें राय सलाय करी। तै हो गओ कै बरात कच्ची पंगत जीमने

बैठेगी। दूल्हा राजा खों एकांत में, भीतरी कुठरिया में पत्तल परसी गई..........। परसबे बारे बाहर चले गए.......... कुठरिया में एकीएका सूर्जनारायन कौ उजयारौ सौ फैल गओ...... ओई उजयारे में वीर हरदौल की परछाई कोंध परी! हरदौल नें दूला की पत्तल में घी परसो, दूला खोंआसीस दओ, संगै संगै रोक भी दओ कै दर्शन दैबे की बात बैन कुंजा के अलावा किसी सें न कई जाय.........।

इस घटना खों घटें सौ साल सें जादां हो गए, मगर तबई सें पूरे बुंदेलखण्ड में वीर कुंवर हरदौल अमर हो गए। देओतन में गणना हौन लगी, औ देओतन की नाई पुजन लगे। आज भी पूरौ बुन्देलखण्ड हरदौल कों न्यौतें बिना अपने ब्याव काज नई करता! देओर भौर्जाइ औ भैया बैन के प्रैम की ऐसी जीती जागती मिसाल भारतभूम में ही सम्भव है, जहाँ भाव ही सब कुछ है! जहाँ भाव ही शक्ति है! भाव ही भक्ति है! भाव ही भगवान है। भाव ही आत्मसाक्षात्कार है! वही अध्यात्म! वही प्रेम! वही नेम! वही त्याग! वही तपस्या........। जई प्रेम का सच्चा औ सीधा राजमारग। ऐसे खरे और सच्चे एकांतिक प्रेम में रंचमात्र चतुराई कौ बांकपन नहीं होता! जई प्रेम के लानें रीतकाल बारे घनानंद लिख गए हैं- ''अति सूधौ सनेह कौ मारग है, जहाँ नैकु सयानप बाँक नहीं।''

बुन्देलखण्ड में चाहे लरका बारे होंय औ चाय बिटिया बारे होंय, ब्याव काज के सिरी गनेश सें लै कें आखिर तक में हरदौल के गीत, हरदौल की गारीं गाई जाती हैं। देओता औ पुरखा के रूप में हरदौल का मानपान पूरे बुन्देलखण्ड में है। जै होय सत्त के साँचे हरदौल बब्बा जू की!

-128/387 वाई -1 ब्लॉक, किदवई नगर, कानपुर-208011
मो0नं0 9415537644

कुंजा का विलाप

- दिव्य यादव

कितै गयै ओ मेरे भइया, वीर न कितै हिराने।
जारइ आज लाज बहिना की आजा लाज बचाने।
गइ जुझार नो आशा लेकैं, दरवाजों नँइ खोलो।
कबवा दइ नौकर से ऊने, दुष्टी मो नॅइ बोलो।
हतो भाई हरदौल वो मरगव बइनो बिथा सुनइयो।
चली जाव मोरे घर की अब दैरी ना मझयइयो।
जीनें अपनो भइया खालव, अब का, शेष बताने।
जारइ आज लाज बहिना की, आजा लाज बचाने।
तुम बिन अब तौ तनक सटै ना, मोरे भइया प्यारे।
उगलत ना लीलत बनरइ है नठ गए चौक हमारे।
तुमने कइती करैं भानजी, की हम नौनी शादी।
जइसे उँचो घर ढूँड़ौ है, तुम बिन सब बरबादी।
हंस चाल में हंसइ उड़वें, कउवा मरके माने।
जारइ आज लाज बहिना की आज लाल बचाने।
कैसे परबे पार हाय हम, बैठे हातन पइयाँ।
घर आये है ढिया ब्याव को, टका गाँठ में नइयाँ।
रिश्तेदार और व्योहारी, सबनों पढव बुलउआ।
कैसें हूहै खातिरदारी? उर सालै जो हउआ।
कैसे दैहे दान दायजो, कुल की रीत निभाने।
जारइ आज लाज बहिना की आजा लाज बचाने।
आज कल के लरका वाले, बैठ ऊँट पे मलकें।
अगर जान गये हीनी हालात, रैजे घरै मचलकें।
कन्या कुँआरी जो रै जै है, कर में बाँधे कॅगना।
तारी दै-दै के जग हॅस है, हू है जिन्दा मरना।
मोय गली निकरन न दै है, मारेगें सब ताने।
जारइ आज लाज बहिना की, आजा लाज बचाने।
किलपत कुन्जा लख पशुअन कें, अॅसुआ है चुचवाने।
हाय! भात हम देते होते, अगर गाँठ में आने।
सॉसी कइ है कभउँ न बॉधौ, चून पराये कण्डा।
घर कौ छपरा भलौ, बुरौ है, आशा कौ सतखण्डा।
देख पिछौरा पॉव पसारौ, कै गय लोग पुराने।
जारइ आज लाज बहिना की, आजा लाज बचाने।
कितै दिखा है जो मो अपनौ, कटहै नाक हमारी।
जनम-जनम के लानैं कुल में, लगहै दाग करारी।
कितउँ सहारौ नहीं दिखारव, अबका करबै दइया।
ऑखन देखत डूब रही है, बीच भॅवर में नइया।
तलफें कुन्जा वा घायल-सी, जीके तीर समाने।
जारइ आज लाज बहिना की, आजा लाज बचाने।
विपत पहार टूट गव ऊपर, लख कुन्जा पगलानी।
तब पत्थर जी करके ऊनै, उरमें है जा ठानी।
खटका पे खटका है जी खौं, अब कैसें जी पावै।
सबसे मौनों जा दुनिया से, करिया मों कर जाबैं।
पीरे चॉवर धर समाधि पर, फॉसी चली लगाने।
जारइ आज लाज बहिना की, आजा लाज बचाने।
इतैभाइ को शोक सतावै, पइसा कौ सकरौंदा।
जग को अपजस सुता कुआरी, सोच विपत कौ कौंदा।
तरु चढ़ साड़ी फॉस बनाई, फॉस गरे में डारी।
अपने दोऊ हॉथ जोर के, दइ इकदम डिड़कारी।
राम राखियो मेरे कुल खौं, हमतो मरबौ ठाने।
जारइ आज लाज बहिना की, आजा लाज बचाने।
अजर-अमर हरदौल आत्मा, देख बहिन दुखयारी।
सोची देर तनक हो जैहे, मरणै राज दुलारी
तबइ प्रगट हरदौल लला भए, बोले मीठी बानी।
जो का कररइ मोरी बहिना, तुमने जा का ठानी।
ल्याहेगें हम भात जाव तुम, अपने बचन निभाने।
जारइ आज लाज बहिना की, आजा लाज बचाने।
मधुर बोल सुनकें भइया के, कुन्जा छाती फूली।
भइया बिन को कामै आबै, सबरी विपदा भूली।
अमर वीर की कही कथा जो, मैटौ विधि को कीन्हों।
कोहू है हरदौल लला सो, मरे भात जो दीन्हों।
'दिव्य' भात बो अबइ ल्याबैं, भाई जो मन माने।
जारइ आज लाज बहिना की, आजा लाज बचाने

799/ए, कोंच तिराहा, एट-जालौन (उ.प्र.), 285201
मो.- 9450295164

सम-सामयिक समस्याएँ और गांधी दर्शन

– रामगोपाल रैकवार

अपनौ बुन्देलखण्ड संस्कृति, साहित्य, संस्कार और संसाधनन के लेखें जितनौ बड़ो -चढ़ो है, कैऊ बातन में उतनौई पाछें है। भारत की घाँई बुन्देलखण्ड सोऊ गाँवन और किसानन की भूम है। सैकरन सालन सें इतै की जनता सामंतन और साउकारन के चंगुल में फँसी रई है। वैसें तो इतै समस्यन के गाँज लगे हैं पै थोरे में कयँ तौ इनै तीन हिस्सन में बाँट सकत- अज्ञान, अभाव और अशक्ति। अज्ञान में जितै अशिक्षा, अंधविष्वास, कुरीतियाँ, छुआछात, ऊँच-नीच, भाग्यवाद, दिखाबौ वगैरा सामिल हैं उतई अभाव और अशक्ति में गरीबी, रुजगार न होबौ, करजा, बीमारी, साफ-सफाई की कमी, संगठन की कमी वगैरा देखी जा सकत है। इनन में दो चीजें खास हैं, गरीबी और अशिक्षा। इन दो के कुचक्र में फँसी इतै की जनता इतनी पिछड़ गई है कै बिना सई योजना और नीति के इतै कौ विकास 'अकास की तरैयाँ टोरबे' जैसो है। आजादी के बाद बुन्देलखण्ड में भी अशिक्षा में बढ़ोत्तरी भई है पै एक तौ जा नई पीढ़ी और मरदन में जादाँ है, दूसरें रुजगार देबे में आज की शिक्षा कौ कछु सहारौ नइँयाँ। बस पढ़े-लिखन की फौज बड़त जा रई। पढ़बो-लिखबौ नौनी बात है, ईसें समजदारी तौ बड़त है पै जा अपने पाँवन पै खड़ौ करबे में समरथ नई है। इतै के बड़े नगरन में हर साल लाखन में बढ़ रई जनसंख्या को समाबे की गुंजास नइँयाँ। बड़े कारखाने एक तौ हैं नइँयाँ दूसरे न इनन सें रुजगार की समस्या पूरी तरा सें मिटत है। वैसई देस में हजारन बड़े-बड़े कारखानन के खुलबे के बाद भी बेरुजगार लोगन को प्रतिषत बढ़ो है। खेती-पाती में भी कछु फायदौ नई रै गऔ है। रई-सई कसर टेक्टरन, और हारबेस्टरन नै पूरी कर दई। इनके अपने कछु फायदा हैं पै गाँव के हरवारे सें लेंकै फसल काटबेबारे मजूरन की रोजी-रोटी खतम हो गई है। ऐसई जेसीबी मषीनन के कारन गेंती-फावड़े सें खुदाई करबेबारे मजूर बेकार हो गय हैं। विदेसन की औद्योगिक नीति उतै के लानै भले सफल होय कायसें कै उतै की आबादी कम है, पै भारत के लानै एक सीमा के बाद फैल है। इतै के लानै तो कुटीर उद्योग, ग्राम्य उद्योग और लघु उद्योगन खों बढ़ावौ देबेबारी नीति और योजना चानै। बुन्देलखण्ड जैसे इलाकन के लानै काम की शिक्षा और काम सें शिक्षा बारी शिक्षा की जरुरत है। जे सब बातें गांधी जू के विचारन में पैलेई सें हैं। सबसें पैले येई की बात कर लई जाय।

पढ़ाई-लिखाई और रुजगारः- बुन्देलखण्ड में शिक्षा की दशा सुदरी तौ है पै अबै जा नई कै सकत कै सबरे पढ़-लिख गय हैं। प्रौढ़ शिक्षा कितनी कागजन पै है और कितनी जमींन पै सो काऊ सें छुपो नइँयाँ। नई पीढ़ी में जादाँतर साक्षर अदकचरे हैं। जा कानात साँची हो रई कै 'थोरे पढ़े सो हर सें गय और जादाँ पढ़े सो घर सें गय'। अफसरन, व्यापारियन, बड़े किसानन, नेतन और मास्टरन के कछु मौंड़ी-मौंड़ा अवस्य कें अच्छी पढ़ाई कर दिल्ली, नोयडा, पूना, हैदराबाद, मुम्बई, बैंगलोरु जैसे नगरन में काम करन लगे हैं पै कछु जनन खों छोड़, उनकी कमाई कौ जौ हाल है कै अपनौई खरचा पूरौ कर लेंय तों बड़ी बात है। अपनी जनमभूम पै कोऊ नै सौ-पचास नौजवानन खों रुजगार देबेबारौ कौनऊँ काम करो होय सो दिखात नइँयाँ। रै गय बाँकी 'अदकचरे' सो दिन भर तास खेल रय, मोबाइल चला रय और बाप की कमाई बातन में उड़ा रय।

गांधी जू ऐसी शिक्षा कौ परिणाम पैलई सें जानत ते ऐइसें उनने 'बुनियादी शिक्षा' की बात कई ती। 'बुनियादी शिक्षा' कौ मतलब शिक्षा और काम नई बरन उत्पादक काम करत-करत बन्न बन्न विषयन कौ ज्ञान प्राप्त करबौ है। वे चाउत ते कै भाषा, गणित, विज्ञान, इतिहास, समाजशास्त्र आदि की पढ़ाई कताई-बुनाई, बढ़ईकीरी, सुतारी, लोहारी, सिलाई और दूसरे स्थानीय हस्तशिल्पन खों सीखत भय होय। दस्तकारी के संगै-संगै संगीत, कसरत और अच्छे चाल-चलन की शिक्षा खों भी महात्मा गांधी जरूरी मानत ते। वे शिक्षा कौ माध्यम 'मातृभाषा' या बच्चन की गाँव-घर की बोली खों बनाउन चाउत ते। महात्मा गांधी अंग्रेजी खों देशी बोलियन की कीमत पै आगे बढ़ाबे के पक्ष में नई हते। ई बात खौं तो मानने परै कै अंग्रेजी के कारन गाँव के लाखन मौंड़ी-मौंड़ा आगें नई बढ़ पा रय। नीति बनाबेबारे उल्टे-सीदे तर्क देंके सबरेहार अंग्रेजी खों जरूरी बनायँ है। सरकारी स्कूलन में पैली कक्षा सेंई अंग्रेजी की पढ़ाई हो रई पै अंग्रेजी पढ़ाबेबारे मास्साब नइँयाँ। न घर और गाँव में अंग्रेजी कौ माहौल है। नतीजा जौ निकर रऔ कै धन्नासेठन के मौंड़ी-मौंड़ा अच्छे और माँगे स्कूलन में पढ़कें अच्छी नौंकरी पा रय। गरीब-गुरबन के मौंड़ी-मौंड़ा बस पास होत जा रय। सब अंग्रेजी पढ़ जायँ अच्छी बात है पै रुजगार की समस्या न तौ सरकारी नौकरियन से खतम हो सकत न दो-चार बड़े उद्योगन सें, ईके लानै जरूरी है कै शिक्षा ऐसी हो जीसें मौंड़ी-मौंड़ा लड़कपन सेंई हाँत कौ काम सीखें और पढ़ाई-लिखाई के बाद अपने पाँवन पै खड़े हो सकें। दस्तकारी सिखाबे के लानै भौत बड़ौ खरचा नई आउनै, गाँवन-गाँवन स्कूलन की इमारतें हैं। दस बजे के पैले और चार-पाँच बजे के बाद इनकौ कछु उपयोग नई होत। काम की कछु पढ़ाई स्कूल में रोज के समै और कछु पैले और बाद में हो सकत है। गाँव-शहर के सीखे-सिखाय कारीगर सिखाबे को काम कर सकत हैं। आबेबारी नई शिक्षा नीति में सोउ दस्तकारी (हस्तशिल्प), रुजगारबारी या हुनर की पढ़ाई (व्यावसायिक शिक्षा) और गाबौ-बजाबौ (लोक संगीत, लोक कला, गायन-वादन आदि) सिखाबे की बात कई जा रई है। स्कूलन में बागवानी, कम्प्यूटर चलाबौ, माटी के बरतन बनाबौ, लकड़िया कौ सामान, बिजली की फिटिंग करबौ बगैरा सिखाऔ जै। ई में जा बात भी कई गई है कै स्कूलन खों ई की आजादी हुइऐ कै वे अपने हिसाब से ऐसी दस्तकारी और हुनर चुन सकत जिनकौ उनके इलाके में चलन है। मातृभाषा में पढ़ाई-लिखाई पै जादाँ जोर दऔ जै। जे सब बातें महात्मा गांधी ने अपनी 'बुनियादी शिक्षा' में पैलेई

सामिल करकें रुजगार की समस्या कौ समाधान सोच लऔ तो। जरूरत ई चीजन खों ईमानदारी सें लागू करबे भर की है।

गरीबी और बेकारी- बुन्देलखण्ड की एक भौत बड़ी समस्या गरीबी है। जादाँतर आबादी गाँवन में रत है। जो समरथ हते वे सहरन में रन लगे हैं। काम-धंधे की खोज में सहरन में आय गरीब-गुरबा जैसें-तैसें गुजारौ कर रय। न रैबे की नौनी व्यवस्था न बच्चन की पढ़ाई-लिखाई। हजारन आदमी दिल्ली पंजाब जाकें अपनौ पेट पाल रऔ है। गाँवन में रोजी-रोटी का सबसें बड़ौ जरिया खेती किसानी है। जैसें-जैसें आबादी बढ़ रई वैसें-वैसें खेती की जिमीन बँट-बँट के छोटी होत जा रई। जितनी लग्गत लग रई उतनौ मुनाफौ नईं हो रऔ। घरेलू और पुश्तैनी काम-धंधे खतम हो गय हैं। खेती-किसानी सें लैकें रोजमर्रा तक को सब सामान कारखानन को बनौ आ रऔ और इस्तेमाल हो रऔ। ट्रेक्टर, थ्रेसर, हारबेस्टर सब जाँगा छा गय हैं। इनन ने खेतन पै मजूरी करबेबारन कौ काम छीन लऔ है। जैसी कै पैले भी कई गई है कै न तौ इतै कौनऊँ बड़े कारखाने खुलबे की आसा है और न उनसें इत्ती बड़ी समस्या खतम होबेबारी है। ई समस्या कौ समाधान अगरकें किताऊँ है तो बौ गांधी जू के बताय रस्ता में है।

महात्मा गांधी नै गरीबी दूर करबे को जौन मंत्र बताऔ है बो जौ है कै गाँव की जादाँतर जरूरतें गाँव मेंई पूरी हो जायँ। ईकौ मतलब है हर गाँव आत्मनिर्भर इकाई हो। अपने देस में पैले गाँव कौ बन्दोबस्त ऐसई हतो। बापू नै लिखो है ''पुराने समय में गाँवन में चीजन की पैदावार, बँटवारौ और इस्तेमाल सब संगै-संगै चलत तो। धन के लेनदेन कौ दुष्चक्र पैदा नई भऔ तौ । गाँव की पैदावार दूर के शहरन-बजारन के लानै नई, गाँव की हाल की जरूरतन के लानै होत ती।'' गाँव कौ शासन गाँवबारन के हाँतन में हतो। ई प्रबंध खौं अंग्रेजन नै मटियामेट करो। बची-खुची कसर आज के कैबेबारे विकास नै कर दई है। महात्मा गांधी की नज़र में गरीबी और बेकारी कौ भौत बड़ौ कारन बड़ी-बड़ी मसीनें हैं। उनकौ कैबौ हतो कै भारत के सात लाख गाँवन के करोड़न जीते-जागते यंत्रन (मनुष्यों) के मुकाबले में बेजान यंत्रन खौं खड़ौ करबौ ठीक नइँयाँ। ऐसी मषीन जीसें एक आदमी अपने घर में बैठे-बैठे चला लेय और अपनौ गुजारौ कर सकै तौ अच्छी बात है पै बेकारी फैलाबेबारी मसीनन कौ इस्तेमाल ठीक नइँयाँ। महात्मा गांधी बड़ी मसीनन की जगाँ छोटी मषीनन के या हाँत सें चलबेबारी मसीनन के हिमायती हते। वे चरखा खौं ऐसई मसीन मानत ते। वे चाउत ते कै गाँव-देहात मेंई नई शहरन में भी लोग हाँत से काते सूत कौ कपड़ा या खादी, कोल्हू या धानी पै पिरे तेल, मोची के बनाए जूता-चप्पल कौ इस्तेमाल करें। उनकी नज़र में कुटीर, गृह और छोटे-छोटे उद्योगन सेंई गरीबी और बेकारी मिटाई जा सकत है। बड़े काम सहकारिता के आधार पै करे जा सकत हैं। खेती किसानी में भी ऐसी मसीनें इस्तेमाल हों जिनें बैलन सें या हाँत सें चला सकें। घरेलू उद्योगन के लानै सौर ऊर्जा से चलबेबारी मसीनें बनाई जायँ तौ उननसें भौत काम बनै। हर हाँत खौं काम देबे की नीति महात्मा गांधी की सोच पैई सफल हो सकत है।

छुआछूत और सामाजिक कुरीतियाँ- कोढ़ में खाज की भाँति बुन्देलखण्ड में गरीबी, अशिक्षा, बेकारी, बीमारियन के अलावा अंधविश्वास और कुरीतियन कौ बोलबालौ सोऊ कछु कम नइँयाँ। समाज खौं एकरस बनाबे में बाधक बनो छुआछूत कौ विचार अबै लौं चलो जा रऔ है। कैऊएक गाँवन में जौन 'भले आदमी' कौ घर' कऔ जात है ऊ घर के अगाऊँ से दलित वर्ग के लोग जूता-चप्पल पैरें या छत्ता लगाकें निकर जायँ तौ ऊकौ 'चामरौ उदेरबे' की मंशा आज लौं जिन्दा है। ब्याव में दलित वर्ग कौ दूल्हा घोड़ा पै बैठ कै नई कड़ सकत। बुन्देलखण्ड की जे बातें अठारवीं सदी की नोईं ऐंई इक्कीसवीं सदी की आयँ। जे सब बातें महात्मा गांधी के विचार अपनाबे सेंई दूर हो सकत। महात्मा गांधी कौ मानबौ हतो कै जब तक हिन्दू लोग किसी को अछूत मानत तब तक वे पाप खौं बटोर रय हैं। उनके आश्रम में एक दलित परिवार वैसई रत तो जैसें दूसरे आश्रमवासी रत ते। वे भोजन-व्यवहार को छुआछूत में सामिल नई करत ते पै कोऊ खौं छूबे से पाप लगत ई सोस खौं सबसें बड़ौ पाप मानत ते। वे वर्णाश्रम या जाति व्यवस्था के विरोधी नई हते पै ईके कारन कोऊ अछूत है, जा बात नई मानत ते। अपने भारत सें और भौत कछु बुन्देलखण्ड सें छुआछूत कौ कलंक, मन सें चाय कानून के भै सें, जितनौ मिटो है ऊको जस महात्मा गांधी खौं दऔ जा सकत है।

13 अप्रैल सन् 1921 में अहमदाबाद के दलित वर्ग सम्मेलन में उनने साफ-साफजा बात कई ती कै छुआछूत हिन्दू धर्म कौ बड़ौ कलंक है। जौ हिन्दू धर्म कौ आँग नोईं। उननें स्वामी विवेकानंद कौ जिकर करो। स्वामी जी कौ कैबौ हतो कै, अछूत पतित नई, समाज के हाँतन दलित हैं, ऐइसें हिन्दू समाज पतित है। गांधी जी की दो इच्छा हतीं एक दलित वर्ग की मुक्ति, दूसरी गइयन की रक्षा। बुन्देलखण्ड की जनता उनकी जे दोई इच्छा पूरी कर देय तो जा महात्मा गांधी के काजैं साँची श्रद्धांजली कई जै।

लिंगभेद की समस्या- बुन्देलखण्ड में जा बात साँसी आय कै इतै कन्या खौं देवी कौ रूप मानौ जात पै जा बात भी उतनई साँसी है कै मौंड़ा के बनस्बत मौंड़ियन को कमतर मानबेबारे कम नइँयाँ। ई सोस में फरक तौ आऔ है पै पूरी तरा सें मिटो नइँयाँ। गाँवन में पर्दा प्रथा एक बड़ी कुरीति है। बड़ों की मरजादा रखबौ अलग बात है और हाँत भर घूँघट डारबौ अलग। गांधी जी ई प्रथा के खिलाफहते। आबादी कौ आदो हेंसा पिछड़ौ रै तौ कौनऊँ देस और समाज अगाऊँ नई बढ़ सकत। गांधी जी चाउत ते कै हर नारी पढ़ी-लिखी हो। छुटपन में ब्याव न करे जायँ। शादी-ब्याव सादगी सें होयँ। उनकौ कैबौ हतो कै जब लौं भारत में औरतें तनक भी दबी-कुची बनी रैं या उनै मरदन घाँई हक नई मिलत तौ लौं भारत कौ उद्धार नई हो सकत।

बीमारियाँ- एक बखत जौ हतो कै गाँवन में हार्ट अटैक, कैंसर, ब्लड प्रेसर और डाइबिटीज जैसी बीमारीं खोजें नई मिलत ती। अब जे बीमारीं देहात में आमतौर पै होन लगीं हैं। ईकौ सबसें बड़ौ कारन

गलत खान-पान, मेहनत की कमी, नशाखोरी और कुदरती माहौल खौं छोड़ देबौ है। अब लोग 'सादा जीवन, उच्च विचार' कौ आदर्ष भूलत जा रय हैं। घर और गाँव की खालिस चीजें अब देखबे खौं नई मिल रई, उनकी जाँगा मिलावटी और दिखावटी चीजन नै लै लई है। गांधी जी की नज़र में सब बीमारियन कौ इलाज कुदरती (प्राकृतिक) तरीका सें हो सकत है। जौ इलाज न तौ कठन है न माँगौ। अपनौ खानपान सुदार कें, जल चिकित्सा, मिट्टी चिकित्सा, उपास, घूमबौ-फिरबौ, कसरत बगैरा अपनाकें बीमारियन खौं दूर भगाऔ जा सकत है और तंदुरुस्त रऔ जा सकत है। भोजन सादा, फरारी (फलाहारी), भूँक सें कम और अच्छी तरा सें चबा-चबा कें करो जाय तौ पेट के और दूसरी कैऊ रोगन सें बचो जा सकत है। चाय-कॉफी, ठंडे पेय, डिब्बाबंद चीजें और आज के फास्ट फूड सें जितनौ दूर रऔ जा सके, अच्छी बात है।

सर्व धर्म सम भाव- बुन्देलखण्ड में सबई खास-खास धरमन के लोग रत हैं। एक-दूसरे के धरम को जितनौ आदर बुन्देलखण्ड में दिखात है उतनौ दूसरे इलाकन में नई दिखात पै कबऊँ-कभार भड़काबेबारन के बहकाबे में आबे सें धरम के नाव पै मामूली दंगा-फसाद हो जात हैं। अपने संविधन में सबई धरम समान माने गए हैं। गांधी जी कौ ई बात पै पक्को विशवास हतो कै सब धरमन कौ मूल भाव एक है। हिन्दू धरम सब धरमन कौ आव-आदर करत है। एक बेर अपने भाषण में उननै तीन बातें कई तीं 1. सब धरम साँचे हैं 2. सब धरमन में कौनऊँ-न-कौनऊँ कमी है 3. सबरे धरम उनै उतनेई प्यारे हैं जितनौ हिन्दू धरम। उनके बताय 'सर्व धर्म सम भाव' के मारग पै चल के अपने बुन्देलखण्ड में शान्ति और एका बनाय रख सकत हैं।

नशेबाजी- बुन्देलखण्ड में शराब पीबे कौ चलन इतनौ जादाँ है कै कैऊ जाति-समाज ईखौं अपनी परम्परा और रीति-रिवाज मानत हैं। का अमीर और का गरीब ? शराब पीबौ शान की बात समजी जात है। तीज-तेवार हों चाय शादी-ब्याव, चाय हौन-ब्यान, शराब पीबौ-पिलाबौ जरूरी है। शराब के अलावाँ गाँजौ-भाँग कौ नशा करो जात है, और तौ और ईखौं शंकर जू कौ प्रसाद कै कें अच्छौ मानो जात। नशाखोरी के कारन हजारन परिवार दुखी हैं। नशाखोर अपनौ तन-मन तो बरबाद करई रऔ बाप-मताई, बीबी-बच्चा, पास-पड़ौस, सबकी नाक में दम करें रत। भरी जुआनी में मौत, बीमारी, खेती-पाती कौ नास, घर-परिवार की बरबादी, हादसा, लड़ाई-झगड़ा, केस-कचहरी, पुरा-परौस और नाते-रिष्तेदारन सें बिगाड़ और न जानै का-का निखसान नशाखोरी सें होत हैं। एक चीनी कानात अपने इतै भी कई जात 'पैलाँ आदमी शराब खौं पियत फिर शराब आदमी खौं पी जात।' महात्मा गांधी चाउत ते कै सबरेहार नशाबंदी लागू करी जाय। उननै अपने रचनात्मक काम में षराबबंदी खौं सबसें पैले कामन में रखो तो। संविधान की धारा 47 में साफलिखो है कै शराब और दूसरे नशीली चीजें जनता की तंदुरुस्ती के लानै निखसान पौंचाबेबारी हैं सो सरकार खौं इन पै पाबंदी लगा देना चाइए। समाज कौ भलौ चानै तौ जितनी जल्दी हो सकै शराबबंदी और नषाबंदी लागू कर दई जाय। शराबबंदी सें बड़ी कौनऊँ श्रद्धांजली गांधी जी के लानै नई हो सकत।

आज हमें सबसें जादाँ कौनऊँ चीज की जरूरत है तौ बा है गांधी जी की विचारधारा अपनाबे की। उनकी विचारधारा बुन्देलखण्ड के लानै तौ काम की हैई पूरे भारत और पूरे संसार के लानै काम की है। गांधी जी अपने देश खौं साँचे अरथन में मुक्त बनाउन चाउत ते। ऐइसें उननै आर्थिक मुक्ति के लानै चरखा (हस्तशिल्प), समाज में एका बनाबे के लानै अछूतोद्धार (अस्पृष्यता निवारण) और राष्ट्रीय एका के लानै सर्व धर्म सम भाव कौ विचार हमाय सामनै रखो। आजकल के नौजवान गांधी जी के चरखा की हाँसी करत, वे जा नई जानत के चरखा भारत की गरीबी, अज्ञान, बीमारी, और गंदगी सें मुक्ति दिलाबे कौ प्रतीक हतो। वे छोटी मशीनन के खिलाफनई ते। आज पंचायती राज में जो बुराइयाँ दिख रई ऊकौ कारन गांधी जी की नज़र में जैसौ पंचायती राज होना चाइए वैसौ न होबो है। ई सें भी बड़े दुख की बात जा है कै कछु लोग जानबूझ के गांधी जी की छवि 'कोऊ तुमाय एक गाल पै तमाचा मारै तो तुम दूसरौ गाल आगें कर दो' की बना के पेश करत हैं। उनै सियात जौ पतो नइँयाँ कै गांधी जी की अहिंसा कायरन की ,डरैलन की अहिंसा नई हती, बा तौ नैतिक और आत्मबल सम्पन्न वीर की अहिंसा हती। आज नौजवान पीढ़ी में गांधी जी की छवि खराब करबे उनकी बातन और कामन खौं आदे-अदूरे ढंग सें, और मनमाने अरथ बताकें सोशल मीडिया पै पेश करबे कौ षडयंत्र सोसे-समजे तरीका सें रचो जा रऔ है। हिंसा सिरफविनाश कर सकत है, विकाश नईं। जितै पूरी दुनिया गांधी जी की विचारधारा में आज की समस्यन कौ समाधान देख रई है उतै भारत में उनके हत्यारन कौ महिमामंडन करबेबारे अखबारन और चैनलन पै सुर्खियाँ बटोर रय। महात्मा गांधी के हत्यारे खौं देशभक्त बताऔ जा रऔ और तर्क गढ़े जा रय वैसई जैसें कै जौ कई जाय के चंबल के खुँखार डाकू भौतई 'धार्मिक' हते। अंत समय में उनके मौं सें निकरे 'हे राम' नाम तक खौं छीनबे कौ कुकर्म करो जा रऔ है। ई बात के 'प्रमाण' माँगबेबारन सें कोऊ सवाल नई करत। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा था- ''अपने समय से पहले पैदा होनेवाले सभी लोगों के दण्ड का भुगतान गांधी जी ने घृणा, प्रतिक्रिया और दुर्दान्त मृत्यु के रूप में किया है। गांधी जी की मृत्यु उनके जीवन का सर्वोत्तम अंग था। ओठों पर राम नाम और हृदय में प्रेम का वरदान लिए हुए वे मरे। गोलियाँ लगने पर उन्होंने अपने हत्यारे का अभिवादन करते हुए उसके लिए शुभकामना की। जो कुछ उन्होंने कहा, उसके लिए अपना जीवन जिया। वे उस आदर्श के लिए मरे, जिसकी उन्होंने शिक्षा दी।''

-प्रहलादपुरम, तखा मजरा, झाँसी रोड
टीकमगढ़ म.प्र. 472001, मो.नं. 08085153778

बुन्देलखण्ड का कश्मीर : चरखारी

-डॉ0 आशुतोष त्रिपाठी

यूँ तो बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश के जिले आते हैं परन्तु उत्तर प्रदेश के हिस्से का जो भाग बुन्देलखण्ड में आता है उसमें सात जिले प्रमुख हैं, ललितपुर, झाँसी, जालौन, हमीरपुर, बाँदा, चित्रकूट तथा महोबा। महोबा जनपद की एक तहसील चरखारी है। वैसे पहले चरखारी भी हमीरपुर जिले का ही हिस्सा थी परन्तु 1995 में महोबा स्वतंत्र जिले के रूप में सामने आया और चरखारी इसी जिले की एक तहसील है। वस्तुतः चरखारी की सुन्दरता पर मोहित होकर उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री गोविन्द वल्लभ पंत ने इसे 'बुन्देलखण्ड का कश्मीर' की संज्ञा से विभूषित किया था। चरखारी पहुँचने के लिये निकटतम रेलवे स्टेशन महोबा है। यहाँ से इक्कीस किलो मीटर की दूरी पर यह स्थान अवस्थित है। वहीं हमीरपुर से जाने वालों के लिये मुस्करा से साधन पकड़कर पहुँचा जा सकता है।

चरखारी का प्राचीन नाम वेदसंहिता है। चरखारी का यह नाम देववर्मन, वीरवर्मन, हम्मीरवर्मन के लेखों में मिलता है। राजा मलखान सिंह के समय चरखारी का नाम चक्रधारी मंदिर के नाम पर पड़ा। राजा छत्रसाल के पुत्र जगत राज ने चरखारी के किले का निर्माण करवाया था। कस्बे की सुन्दरता, सरोवरों, तालाबों से घिरे देवालय, विलक्षण प्रतिमायें,विभिन्न सांस्कृतिक रंगों से परिपूर्ण चरखारी लोक संस्कृति की अमूल्य निधि है। यहाँ के सभी मंदिर चंदेल कालीन हैं, तथा आज भी राजमहल बना हुआ है। राजमहल के चारों तरफ नीलकमल से घिरे तथा एक दूसरे से आन्तरिक रूप से जुड़े विजय सागर, मलखान सागर, वंशी सागर, जय सागर, रतन सागर और कोठी ताल नामक झीलें हैं। राजा विजय बहादुर ने ताल कोठी का निर्माण करवाया था जो कि उस समय राजकीय अतिथि गृह था। यह इमारत नेपाल की शैली पर आधारित है। चरखारी नगरी को बृज का स्वरूप एंव सौन्दर्य प्रदान करते हुए कृष्ण के 108 मंदिर जिसमें सुदामापुरी का गोपाल बिहारी मंदिर, रायनपुर का गुमान बिहारी, मंगलगढ़ के मंदिर, बख्त बिहारी, बाँके बिहारी के मंदिर तथा माडव्य कृषि की गुफा है। इसके समीप ही बुन्देला राजाओं का आखेट स्थल टोला तालाब भी मौजूद है। ये सब मिलकर इस नगरी की सुन्दरता को सबसे अलग और अनोखा बनाते हैं। चरखारी का प्रथम उल्लेख चन्देल नरेशों के ताम्र पत्रों में मिलता है। चन्देलों के गुजर जाने के सैकड़ों वर्ष बाद राजा छत्रसाल के पुत्र जगतराज को चरखारी के एक प्राचीन मुंडिया पर्वत पर एक प्राचीन बीजक की सहायता से चन्देलों का सोने के सिक्कों से भरा कलश भी मिला। छत्रसाल के निर्देश पर जगतराज ने बीस हजार कन्यादान इसी धनराशि से किये, बाइस विशाल तालाब बनवाये, चन्देलकालीन मंदिरों और तालाबों का जीर्णोद्धार कराया, किन्तु इस धन का एक भी पैसा अपने पास नहीं रखा। जगतराज ने ही भूतल से तीन सौ फीट ऊपर चक्रव्यूह के आधार पर एक विशाल किले का निर्माण करवाया।

इस ऐतिहासिक किले में मुख्यतः तीन दरवाजे है। सूपा द्वार -जिससे किले के अन्दर रसद एवं हथियार भेजे जाते थे। ड्योढ़ी दरवाजा - राजा रानी के लिये आरक्षित था। इसके अतिरिक्त एक हाथी चिघाड़ फाटक भी मौजूद था। वर्तमान में यह किला आम आदमी के लिए प्रतिबंधित कर दिया गया है। इस किले के ऊपर एक साथ सात तालाब भी मौजूद हैं- बिहारी सागर, राधा सागर, सिद्ध बाबा का कुण्ड, रामकुण्ड, चौपरा, महावीर कुण्ड, बख्त बिहारी कुण्ड। चरखारी का किला अपनी अष्टधातु तोपों के लिये पूरे भारत में मशहूर रहा है। इसमें धरती धड़कन,कौली सहाय, कड़क बिजली, सिद्ध बख्शी, गर्भगिरावन तोपें अपने नाम के अनुसार अपनी भयावहता का अहसास कराती है। जगतराज के पश्चात् राजा विजय बहादुर सिंहासन पर बैठे। राजा विजय बहादुर ने विक्रम विरुदावली की रचना की। आपने मौदहा का किला और राजकीय अतिथि गृह -ताल कोठी का निर्माण कराया। यह कोठी एक झील में बनी है। इसकी गणना बुन्देलखण्ड की कुछ सर्वाधिक खूबसूरत इमारतों में की जाती है। पर वर्तमान में यह उपेक्षा का शिकार है। यहाँ का ऐतिहासिक ड्योढ़ी दरवाजे का निर्माण मलखान सिंह ने कराया था। यहाँ के सदर बाजार की राजसी बनावट मंत्रमुग्ध करती है। किन्तु राजा मलखान सिंह की सर्वाधिक प्रसिद्धि उनके द्वारा प्रारम्भ किये गये 1883 ई0 में गोवर्धन जू के मेले से मिली। मेला दीपावली के दूसरे दिन अन्नकूट पूजा से प्रारम्भ होकर एक महीने तक चलता है। यह बुन्देलखण्ड का सबसे बड़ा मेला है। पंचमी के दिन चरखारी के 108 मंदिरों से देवताओं की प्रतिमायें गोवर्धन मेला स्थल लायी जाती है। इस एक महीने में चरखारी वृन्दावन सी प्रतीत होती है।

अस्तु निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि यदि सरकार उस नगर को खजुराहो - महोबा झाँसी आदि पर्यटन स्थलों से जोड़ते हुए यहाँ पर्यटकों की दृष्टि से मूलभूत सुविधायें उपलब्ध करा दे तो यह नगर देश ही नहीं समूचे विश्व में अपनी वैभवशाली परम्परा तथा काश्मीर सदृश सुन्दरता के चलते अपना अन्यतम स्थान सुनिश्चित कर सकती है।

- झलोखर (हमीरपुर)उ.प्र.

बुन्देली लोक काव्य में आभूषण प्रियता

– डॉ. श्रीमती गायत्री बाजपेयी

सान्दर्य वर्धन की नैसर्गिक अभीत्सा नर एवं नारी दोनो में सामान रूप से पायी जाती है और दोनों समान रूप से अलंकरण करते हैं। लेकिन नारी विधाता की सर्वोत्कृष्ट एवं अनुपमेय रचना है। उसके रूप, गुण, शील एवं सौन्दर्य की चर्चा से शास्त्र एवं साहित्य आपूरित है। डॉ. गायत्री वर्मा ने इस तथ्य को स्पष्टतः स्वीकार करते हुए लिखा है- ''कवि को सुकुमारता प्रिय है, क्योंकि उनकी चित्तवृत्ति जितनी नारी- सौन्दर्य वर्णन में रमी, उतनी पुरुष-सौन्दर्य में नहीं । पुरूष-सौन्दर्य में कठोरता और वीरता ही सर्वत्र मिलती है, परन्तु लवाण्य , कमनीयता, सलोनापन, स्त्री- सौन्दर्य के प्रतीक हैं। स्त्री के एक-एक अंग में उन्होनें लावण्य औ सुकुमारता के दर्शन किए।''[1]

वास्तव में नारी कला एवं सौन्दर्य का समन्वित रूप है। बल्कि यह कहा जाए कि कला, सौन्दर्य एवं नारी परस्पर पूरक हैं तो अत्युक्ति न होगी।

शिष्ठ संस्कृति से लेकर लोक संस्कृति तक सौन्दर्य प्रसाधन के प्रमुख अंग के रूप में आभूषणों का उल्लेख हुआ है। लोक संस्कृति के आख्याता डॉ नर्मदा प्रसाद गुप्त जी लिखते हैं- ''आभूषण लोक संस्कृति के लोकमान्य अंग है। सौन्दर्य की बाहरी चमक दमक से लेकर शील की भीतरी गुणवत्ता तक आभूषणों का प्रभाव व्याप्त है।''[2]

साहित्य शास्त्रियों ने आभूषणों के भेदोपभेदों का विशद वर्णन किया है। भरत ने अपनी काव्यशास्त्रीय कृति 'नाट्य शास्त्र' में चार प्रकार के आभूषणों का उल्लेख किया है-

1. आवेध्यम- जो छिद्र द्वारा पहना जाए, जैसे कर्णफूल, बाली आदि।
2. बन्धनीयम- जो बाँधकर पहना जाए, जैसे बाजूबंध, पहुँची, शीशफूल आदि
3. प्रक्षेत्य- जिसमें कोईअंग में डाल कर पहना जाए, जैसे कड़ा, चूड़ी, मुंदरी।
4. आरोप्प- जो किसी अंग में लटका कर पहना जाए, जैसे हार, कण्ठमाला, चम्पाकली आदि ।[3]

श्री हफीजुल्ला खाँ ने अपने 'हजारे' में निम्नांकित आभूषणों का वर्णन किया है-

बैंदीभाल, नासा, बेरू बेसर, तरोना, कान, कण्ठसिरी, कण्ठहार, हीरामनि अंग में। बाजूबंद, कंकन, अँगूठी, छला, छापयुत, नीकीबन्द, किंकिनी, सौहाई, रसरंग में। भले रघुनाथ पाये नूपुर मंजीर, मजुराजत, रंगीली, भरी जोवन तरंग मैं। लीन्हें प्रतिबिम्ब चन्द बिम्ब को निकाल लखे बारह आभूषण बिराजे बाल अंग में।[4]

प्रेमाख्यानक परम्परा के प्रतिनिधि कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने अपने ग्रन्थ 'पदमावत' में बारह अंगों को अलंकृत करने वाले बारह आभूषणों का जिक्र किया है-

बारह आभरन एइ बखाने। तेपहिरें बरहौ असथाने।[5]

रीतिकालीन रीतिमुक्त परम्परा के कवि बोधा ने भी अपनी नायिका को नाना आभूषणों से सुसज्जित किया है-

बेनी सीसफूल बीज बेनिया में सिरमोर,
बेसर तरौना केसपास अँधियारी-सी।
कंठी कंठमाला भुजबंद बरा बाजूबंद,
ककना पटेला चूरी रत्न चौक जारी-सी।
चोटीबंद डोरी क्षुद्रघंटिका नयी बहार,
बिछिया अनौटा बाँक सुखमा की बारी सी।
राजा कामसैन के अखाड़े कंदला को पाय,
माधो चकचौंध रहो चाहिकै दिवारी सी।[6]

शिष्ट साहित्य की ही भाँति लोक साहित्य में भी लोक रचनाकारों नें अपनी नायिकाओं को विविध प्रकार के लोकाभूषणों सें सज्जित चित्रित किया है। बुन्देली वृहतत्रयीके कवि पं. गंगाधर व्यास एंव ईसुरी की नायिका माथे में बेंदी-बेंदा, बूँदा, दावनी, टिकुली कान में वर्णफूल लोलक नाक में पुँगरिया, दुर गले में छूटा, गुलूबद, गजरा, कंठा, बिचोली, छुटिया, पोत का गजरा, कठला, हाथ में ककना, गजरा, चुरियाँ, बाजूबंद, बजुल्ला, छापें, छला, मुंदरी, कटि में करधौनी, पैर में पैजना आदि धारण करती है। पं. गंगाधर व्यासकी नायिका ने अपने सौन्दर्य वर्धन हेतु जिन आभूषणों से स्वयं को सजाया है उसका एक चित्र पंक्तियों में दृष्टव्य है-

बिसरै न मोये हलन दुर की बेसर की गूंज तनक मुर की।
दस उँगरीदस मुदरी सौहै बजत पैजना के सुर की।
कानन भर भर करन फूल है गोरे लाल सांकर लुरकी।
नैनन भर भर सुरमा सौहे सेंदुर माँग भरी सुरकी।
गंगाधर के संग चलो तो मारो मजा छतरपुर की।[7]

ईसूरी की नायिका भी कम आभूषण प्रिय नहीं है उसने भी स्वयं को विविध आभूषणों से सजाया है। ईसुरी लिखते हैं-

बैयां लगे बरन से नौनी, खग्गन संग सलौनी।
इनई करन में ककना दौरीं, बाजूबंद मिलौनी।
पौची पैर पटेला पैरें, पीछे छैल रिजौनी।
बिच बिच गजरा नई नोंगरे, करन बजुल्ला बौनी।
कात ईसुरी इन हांतन पै, कइ अक की है होनी।[8]

नायिकाओं द्वारा धरण किए जाने वाले ये आभूषण विभिन्न धातुओं जैसे सोना, चाँदी, गिलट, पीतल, तांबा, कांसा एवं कसकुट आदि से निर्मित होते हैं। वेदों के अनुसार सोने से बने आभूषण श्रेष्ठ हाते हैं। सोना चूँकि पवित्र धातु है अतः सोने के आभूषण धारण करने से तन एवं मन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

शरीर स्वस्थ रहता है और दीर्घ आयु को प्राप्त होता है।

प्रारम्भ काल से ही नारियाँ शीश को विभिन्न आभूषणों से सजाती संवारती रही हैं। बेनी के आभूषण के रूप में चुटीला, छैलरिजौनी सुबिया, बेनीपान, बेनीफूल, किलपें तथा काँटे आदि का प्रचलन हैं जो सोने एवं चाँदी के बने होते हैं तथा केशों को संवारने हेतु प्रयुक्त होते हैं। शीश के आभूषणों में कौकरपान, झूमर, बीज, सीसफूल, नागफूल, चूड़ामणि व रेखड़ी आदि प्रमुख हैं। कौकरपान माँग में पहना जाने वाला आभूषण है। यह पान की भाँति पतली पन्ती का बना एक गोलाकार आभूषण है। झूमर साँकर एवं मोती लगाकर बनाया आभूषण है जिसे मुसलमान महिलाएँ ज्यादा पहनती हैं। बीज कमलगट्टे की आकृति का माँग में पहने जाने वाला आभूषण है। सीसफूल भी बीज की भाँति माँग में पहना जाता है। यह ठोस, चपराभरा, सादा एवं जड़ाऊ सभी प्रकार से बनाया जाता है। सीसफूल में भी साँकरे प्रायः मोती युक्त होते हैं। षोड्श श्रृंगार एवं द्वादश आभूषण से सुसज्जित लोककवि की नायिका मनकामोहक रूप इन पंक्तियों में दर्शनीय है-

लागत सहज वदन सुहायो।
ताकी शोभा कहै कौन विधि सखिन श्रृंगार बनाये।
बेनी माँग भरे मुक्ताहल शीशफूल छवि छायो।
बेंदा के नीचे लघु बूटा करनफूल पहरायो।
चढ़ी दावनी भृकुटि दवार के बैनी फूल सुहायो।
बदन बूँद चिबुक पर तिल रुचि काजर दृग लगायो।
कंठ बिचोली छूटा छूटिया नासा में दुर नामो।
जे सोरहु सिंगार अभूषन द्वादश सहित जनाओ।
राम किशोर प्रियातन सजके सन मुख मुकुट दिखाओ।[9]

मोतियों से भरी हुई माँग में शीशफुल कैंसे सुशोभित हो रहा है यह फाग की इन पंक्तियों में दृष्टव्य है-

ऊपर माँग भरी मोतिन की सीस फूल को धारें।

माथे पर धारण किए जाने वाले आभूषणों में बैंदी, बैंदा, बूँदा, टिकुली, दावनी आदि प्रमुख हैं। लोककवियों ने इन आभूषणों का उल्लेख अपने काव्य में प्रचुर रूप में किया है। बैंदी, बैंदा सोने व चाँदी का जड़ाऊ व सादा आभूषण होता है। इसे माँग के बीचों बीच पहना जाता है। इसमें तीन कुंदे लगे रहते हैं जिनमें डोरा या सांकर बंधी रहती है ताकि बैंदी या बैंदा मांग के बीचों बीच लटकता रहे। लोक- कवियों नें बैंदी व बैंदी धारण किय हुए नायिकाओं के अनेक मनोहारी चित्र अंकित किए हैं। ईसुरी की नायिका ने बैंदा धारण किया हुआ है जिसकी छवि अत्यधिक मनहरण है। यथा-

बेंदा है छविदार तुमारौ, जिउ ले जात हमारौ।
दबौ रात घूँघट के भीतर, बता देत उजियारौ।
ऐसो रंग धरौ सुनरा ने, लाल हरीरौ कारौ।
कात ईसुरी बरकत रइयौ, डस लै नाग लफारौ।[10]

बूँदा सोने, चाँदी या काँच का आभूषण है। इसे रार से चिपका कर माथे पर भौहों के मध्य में प्रायः लगाया जाता है। आध्यात्मिक दृष्टि से इसे तृतीय दृष्टि कहा जाता है यह ध्यान को केन्द्रित करने में सहायक होता है। ईसुरी की नायिका ने बेंदी के नीचे भैहों के मध्य में बूंदा लगाया है जिसकी छवि हृदयाकर्षक है-

बूँदा दये बेंदी के नेचे प्रान लेत है खींचे।
आड़ लगी सेंदुर की दमकत भौंय दुबीचे।
गुड़ी तीन माथे में परतीं बैठो दाव रंगीचें।
कात ईसुरी बीदन बीदी पर भर पलक न मोंचे।[11]

दावनी सोनी चाँदी की सादा, जड़ाऊ या मोतीदार बनी होती हैं। इसकी लरें दोनो ओर से कानों के पास बालों कुंदादार खुसमा से खुसी रहती हैं। माथे के बीच में सुशोभित दावनी की दमक निराली होती है। लोककवि ईसुरी की नायिका ने दावनी पहनी हुई है जिससे उसके सौन्दर्य में अप्रतिम निखार आ गया है। उसकी दावनी की चमक ऐसी प्रतीत होती है मानो केश रूपी काली घटा पर बिजली कौंध गई हो । उसका हँस-हँस कर बोलना प्राण ही लिए जा रहा है। ईसुरी लिखते हैं-

जी लय रजउ दावनी दैकें हँस-हँस लाला कै कें।
चुभ रई भाल गाल के ऊपर, भौंय भामिनी कैंफे।
हेरत स्याम घटा के ऊपर, बिजली कैसी फैंके।
ईसुर चोट लगी हिरदे में, आने घर को सैं के।[12]

कानमें भी विभिन्न प्रकार के आभूषण पहनने का प्रचलन है। बुन्देलखण्डी स्त्रियाँ कान के आभूषणों में ऐरन, कनफूल, कनौती, कुण्डन, खुटी, खुटियाँ, झुमका, झुमकी, झुलझुनी, ढारें, तरकी, तरकुला, तरौन, नगफनियाँ, बैकुण्ठी, बारी, बाला, बुंदे, मुरकी, मुरासा, लाला, लोलक, आदि धारण करती हैं। ईसुरी की नायिका ने कनफूल, लोलक, आदि धारण करती है। ईसुरी की नायिका ने कनफूल, लोलक, बालियाँ एवं गोशपेंच आदि से अपने कानों को सुसज्जित किया है। तलकुला सोने के कनफूल के समान परन्तु कनफूल से थोड़ा चौड़े रबादार एवं कलसादार बने होते हैं उनमें बोरा अथवा मोती लटकते रहते हैं। ईसुरी की काव्य नायिका राधिका जी ने कानों में तरकुला धारण किए हैं जिसकी शोभा देखते ही बनती है बल्कि उनको देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानों आनंददायक चन्द्रमुख पर दो सितारे चमक रहे हों। लेटने पर तरकुलों में लगे झुमके राधिका जी के गालों पर आजते हैं जिससे उनके मुख का सौन्दर्य और भी मनोहारी होजाता है। ईसुरी लिखते हैं-

कानन डुलें राधिका जी के, लगें तरकुला नीके।
आंनदकन्द चंद के ऊपर, दो तारागण झीकें।
परतन पसर परत गालन पै, तरें झूमका जीके।
जिनके घर से जौ पैरा, और जनन नें सीके।
श्याम स्नेह ईसुरी देखत, बृजवासी बस्ती के।[13]

पं. गंगाधर व्यास की नायिका ने कनफूल धारण किए हैं।

कनफूल कुकुरमुत्ता की आकृति वाले सादा एवं झुमकीदार दो प्रकार के होते हैं। कनफूल वजनदार हाते हैं अतः उनको साधने लिए साँकर लगी रहती है। इसे कनोटी कहा जाता है। यह कान को घेरती है। कनफूल से सुशोभित गंगाधर की नायिका का मुखमण्डन देखते ही बनता है-

सांकर कनफूल की झूमें गौरी को मुख चूमै।
झुक-झुक परत गिरत आनन पै, लेत चलत में लूमें।
थिर ना रहत करत चंचलता, दमकत घूँघट हू में।
देखी नही आज लो ऐसी, जा छवि और किसू में।
गंगाधर मन मोहक कौ मन, रहत नहीं काबू में।[14]

नाक के आभूषणो में प्रमुख रूप से कील, झुलनी, टिप्पो, दुर, नथ, नथुनिया, नकफूली, नकमोती, नकबेसर, पुंगरिया, बारी, बुल्लाख, सिरजा आदि पहने जाते हैं। लोककवियों की नायिकाएँ प्रायः दुर एवं पुंगरिया धारण करती हैं। ईसुरी की नायिका तो अपने प्रियतम से करौंदा के फूल जैसी औंधी रत्नजड़ित दुर बनवाने की इच्छा प्रकट करती है -

बनवा दो पिया दुर औंदा को, जैसे फूल करौंदा कौ।
मुतियन गस गस फुलटी भर दो, नाकन बीच लटकनाकौ।
सुघर सुनार बसत दोर में, हीरा जड़ाव चकचौंदा कौ।
ईसुर ऐसी बनन बनइयो, मड़ियादार मसौदा कौ। [15]

कवि गगांधर व्यास जी नायिका का तो दूर के अभाव में मुख ही श्रीविहीन हो गया है। अतः दुर धारण करने का परामर्श उसे सखी सहेलियों द्वारा दिया जा रहा है। पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं।-

दूर बिन फीकी लगे जा मुइयां, काये परोसन गुइयां।
के तुमने गानो धर राखो, के तुमरे है नइयां।
लैकें दाम पैर आ जल्दी, जइये फेर रसुइयाँ ।
गंगाधर कये दूर न जाने, सुनरा बसे अथैयां।[16]

पुंगरिया नाक में पहनने वाला स्वर्ण आभूषण है यह गर्रयाऊ, खादार, मथानी के फूल जैसी, फूलदार, पालदार व जड़ाऊ होती है। इसे बायीं ओर पहना जाता है। ईसुरी की नायिका अपने स्वामी से पुँगरिया बनवाने हेतु हठकर रही है। ईसुरी लिखतें हैं-

बनवा लेएँ पुँगरिया तड़कें, आज पिया से अड़कैं।
ऐसी सखियाँ कोउ न पैरें, गाँव भरे सें कड़कै ।
हीरामोती खूब ले हैं, होय मोल में बड़ कैं
कहे ईसुरी उनके लाने, धरी भुनसराँ जड़कै।[17]

ईसुरीकी आभूषण प्रिय नायिका ने घेरदार मोती जड़ित पुँगरिया पहनी हुई है जिसकी शोभा देखते ही बनती है। ईसुरी कहते हैंकि उस सुन्दरी ने भौंहो के मध्य में बूँदा लगाया है उसके थोड़े ऊपर बेंदी धारण की है। जिसकी दोहरी साँकरे उसके गौरवणी कपोलों पर झूल रही हैं। पैरों में पैजना रहने हैं जिसकी सुमधुर झुझांर हृदय का उद्वेलित कर देती है-

बूँदा लगौ भौंह के करके, बेंदी ऊपर चढ़कें।
गोरे गाल कपोलन ऊपर, दोरी साँकर सरकें।
गर्रादार पुंगरिया देखो, गेराँ मोती झुलकें।
ईसुर बजात पैजना सुनलो, जिनसें जौ दिल फड़कें[18]

कंठ में धारण किए जाने वाले आभूषण विभिन्न प्रकार के होते हैं। कंठ का सर्वप्रिय आभूषण हार है यह कई प्रकार के होते हैं। सीतारामी हार, दशावतारी हार, अरसयाऊहार, एवं नौ लखा हार आदि। इसके अतिरिक्त कण्ठमाल, कटमा, कठल, करसली, खंगौरिया, गुलुवंद, चन्द्रहार, चम्पाकलीहार, जलज कंठुका, टंकार, ठुसी, ढुलनियाँ, तिंदाना, धुक धुकू, बिचौली, मंगलसूत्र, लल्लरी, सुतिया, सेली, हँसूली, हमेल, मटरमाला, गटरमाला एवं मोहन माला आदि आभूषण कंठ में पहलने जाते हैं। ईसुरी की नायिका ने विविध प्रकार के आभूषण से स्वयं को सुसिज्जत किया है। उसने चार-चार छटा बिचौली और हार पहनकर अपने कंठ को भर लिया है। ईसुरी कहते हैं-

जिदना रजऊ ने पैरो गानों, हरती जिया बिरानों।
छूटा चार बिचोली पैरे, भरे फिरे गरदानों।
जुबनन ऊपर चोली पैरें, लटकै हार दिवानों।
ईसुर कात बरकने नईयाँ, देख लेव चय ज्वानों।[19]

कवि गंगाधर व्यास की नायिका के छूटा की छवि अनोखी है जो देखते ही बनती है। यथा-

छूटा खूब लागो बेजानो, गोरे गात समानो।
तनक न झोल परत डोरा में, चार तरफ हो तानो।
दोई बगल सरावे सुन्दर गर्दन में लपटानो।
ओड़न छोड़ गड़ारन मोती, देखत जी ललचानो।
गंगाधर मनमोहन कौ मन, बिन ही मोल बिकानो।[20]

नारियाँ अपने बाजू, कौंचा एवं हाथ की अँगुलियों को विविध प्रकार के आभूषणों से सजाती हैं। बाजू में पहने जाने वाले आभूषणों में खग्गा, टड़ियाँ, बखौरियाँ, बजुल्ला, बगुआँ, बरा, बांके, बाजूबंद, बहुँटा, भुजबंद, एवं अनंता आदि प्रमुख हैं । ईसुरी की नायिका ने अपने हाथों में भाँति-भाँति के आभूषण पहने हैं। उसकी कलाइयों बरों से सुन्दर लग रहीं है। बरों के बीच में चूड़ियाँ सुशोभित हो रही हैं। बीच-बीच में उसने गजरे, नोगरे, बजुल्ला भी धारण किए हैं। हाथों की दसों अंगुलियों का उसने छल्ले, अंगूठियों एवं छापे से सजाया है। ईसुरी लिखते हैं-

बैंया लगत बरन से नौनी, चुरियन संग सलौनी।
बिच बिच गजरा नई नौगरो, करन बजुल्ता बौनी।
दसऊ ऊंगलियन छल्ला, मुदरी छापें, छला रजौनी।
कात ईसुरी इन टातन पे, कइयक की है होनी।[21]

कवि गंगाधर व्यास जी की नायिका भी अपने प्रियतम से नए बाजूबंद बनवा देने के लिए हठ कर रही है। पंक्तियों

दृष्टव्य हैं-

बाजूबंद भुजन में गाड़े भए, मोय लैदो पिया बनवा दो नए।
चार दिना रुचि कें ना पैरे, दूने दाम सुनरा ने लए।
खुब-खुब जात मुलाम करन में कसते होत न जात साए।
तन गोरे गुदना के ऊपर, मानों चउअर उपट रए।[22]
गंगाधर कये पहनों प्यारी, मन मोहन मुसकाय रए।

ईसुरी की नायिका रजऊ ने अपने कोमल हाथों में प्राणहरन सुंदर कंगन पहन लिए है। बाँह में बाजूबंद बाँधे है और बरा के साथ बंगवा भी पहने हैं। गले में कई लड़ो की माला है। ईसुरी लिखते हैं-

पैरे रजउ ने प्रान हरन के, ककना कोमल करके।
बइयन पे बाजूबंद बाँदे, बगवाँ संग बरन के।
छापे छला बजुल्ला, छल्ला, गजरा केउ लरन के।
तकत तीर से लगत ईसुरी, जे नग तरन तरन के।[23]

बरा चांदी, कसकुट एवं गिलट के बनते हैं ये पोले पहलदार बनते हैं। ये सादा झिणुरियनदार, ढरमा, गढ़ता के होते हैं। इन्हें कोहनी से ऊपर एवं बाजू के नीचे पहना जाता है। इसी प्रकार बजुला को बरा के साथ पहना जाता है ये भी चाँदी या गिलत के तारों के बिजना की तरह गुबे होते हैं। बीच-बीच में पखिया लगी रहती है। किनारे पर पेंच और कुंदा लगे होते हैं। बाजूबंद सोने की तीन जंजीरों से या जरी के बीच-बीच में ताबीज की तरह सादा, नौरत्नी, जड़ाऊ एव गुबे होते है। किनारों पर कुंदा या पैंच लगे होते हैं। इन्हें बाजू में बांधा या पटना जाता है। बगुआँ भी चांदी व गिलट के पैजनिया के मसान पोले बाघ की मुखाकृति के छोरों वाले सादा या उठमा के होते हैं इन्हें कोहनी के ऊपर पहना जाता है।

कौंचा के आभूषण पहनने की परम्परा अति प्राचीन है। कौंचा हाथ का वह अंग है जिसमे हथेली के पीछे का भाग और कला दोनों सम्मिलित हैं। कौंचा में पहने जाने वाले आभूषणों में कंकन, कड़ा, कौचिया, गजरियाँ, कटीना, गजरा, गुँजें, चंदौली, चूरियाँ, चूरा छल्ला, तैतियाँ दस्तबबंद दौरी नौगरई, पछेला, पटेला, पाटला, बेल- चूड़ी, फूल चूड़ी, बंगरी, रत्नचौक, लाखें, रूनझुनियाँ, हथफूल या पान फूल, एवं हरैया, आदि पहनने का प्रचलन है। लोककवियों ककजरा, ककना, चूड़ी, बंगलियों, पछेला, दौरी, हरैयाँ, नौघरई एवं दौरी की आभूषणों का वर्णन अपने काव्य में प्रचुरता के साथ किया है। ईसुरी की नायिका ने अपने हाथ में कंकन पहनले हैं जो उसके मांसलन हाथ में फँसे जा रहे हैं लेकिन अपनी फंदेदार बनावट के कारण ये अत्यंत सुन्दर लग रही है। ईसुरी लिखते हैं-

कसकें लगे ककनवा करके, हात नई उम्मर के।
इतनी देह ससा गई आसों, बनवाये पिय पर के।
ऐसे बने बनक के साजे, रहे फँदीने धर के।
कान कुँअर ढ़रवाये ईसुर, देखत आप नजर के।[24]

हाथ की अंगुलियों को साजने का प्रचलन भी अति प्राचीन है। स्त्रियाँ अपनी अंगुलियों को विभिन्न प्रकार की बनक की मुँदरियों, छल्ल, छाप एवं फिरमा आदि से सजाती हैं। ईसुरी की नायिका का छल्ला प्रेम अनोखा है। वह तो नायक के ही छल्ला हो जने की कामना करती हैं ताकि उसे निरंतर उसका समीप्य मिलता रहे-

जो तुम छैल छला हो जाते परे उँगरियन।
मों पोंछत गालन खाँ लगते कजरा देत दिखाते।
घरी-घरी घूंघट खोलत में नजर के सामें राते।
मैं चाहत ती लख में बिदते, हात जाई खाँ जाते।
ईसुर दूर दरस के लाने ऐसे काय ललाते।[26]

छल्ला या छला सोने, चाँदी एवं ताँबे के तार का दो, तीन घेरे क बना होता है। मुँदरी अर्थात् अंगूठी भी सोने, चाँदी, तांबा, लोहा एवं अष्टधातु की बनाई जाती है। इसे अनेक प्रकार की बनक का बनाया जाता है। मुँदरी कई प्रकार की होती है जैसे जड़ाऊ, नवरत्नी, सात धातु, अष्टधातु, एंव अर्स्पाऊ आदि। नग जड़ित मुंदरी जड़ाऊ, नौरत्न, हीरा, मोती, मूँगा, गोमेद, मानिक नीलम, पन्ना, पुखराज एवं लहसुनियां जड़ित मुँदरी नौरत्नी, सात धातु की सतधात एवं आठ धातु की अष्टधातु एवं आरसी जड़ी मुँदरी अर्स्याउ कहलाती है। अँगूठे को प्रेम का प्रतीक माना जाता है। इस लिए प्रेमी-प्रेमिका अथवा वर-वधु परस्पर अँगूठी पहनाते हैं। लोक कवि की नायिका ने प्रेम की प्रतीक अंगूठी को अपनी कनिष्ठिका अर्थात् छिंगुली में धारण कर रखा है। उसका क्या प्रभाव हो रहा है यह गीत की पंक्तियों में द्रष्टव्य है-

लै गई मोरे महाराज, छिंगुरी कौ रस मुंदरी ले गई।
काना सें सोनो मँगाइयो, काना के सुगर सुनार।
लंका से सोनो मँगाइयो, पन्ना के सुगर सुनार।
की जा मुंदरी पैरियो कीने चुका दिये दाम।
राधा मुंदरी पैरियो, किसना चुका दिय दाम।
लै गई मोरे महाराज, छिंगुरी को रस मुंदरी ले गई।[27]

कटि अर्थात् कमर के आभूषण में करधोनी, कमरपट्टा एवं बिछुआ प्रमुख हैं। ये सोने-चाँदी एवं गिलट के बनते हैं। एक लर की करधौनी कड्डोरा कहलाती है। अधिक सरों का बिछुआ कहलाता है। बारालटी बोरादार करधौनी चोरसी और आधीजगह पहने जाने वाली होने के कारण अध करधौनी कही जाती है। इसके दानों छोरो को काँटों से खोंसा जाता है। करधौनी कटि के चारों ओर पहनी जाती है। यह लरदार होती है लरों के बीच में ठप्पे बने रहते हैं। जिनमें कुंदे लगे रहते हैं तथा कुंदो से जंजीरे जुड़ी रहती हैं। छोरों पर पेंच लगे रहते है। जिससे की लगने पर यह कंस जाती है। करधौनी एवं बिछुआ कई बन के बनते हैं। करधौनी में जो साँकरे एवं झालरे लगी होती हैं। वे कटमा, डेमन एवं मीना आदि कई प्रकार की बनती हैं।

पैरों के आभूषणें में अनोखा, कड़ा गूजरी, घूँघरू चुल्ला, चूरा, छड़ा छागल, छेल चूंड़ी, जेहर, झाँले, टोकर, तोड़ा, पायजेब, पायल, सांके, पैजना या पैजनियाँ पैंदना, बाँके एवं लच्छा आदि प्रमुख हैं। ये सभी आभूषण प्रायः चांदी या गिलट के बने होते हैं क्योंकि भारतीय पैराणिक परम्परानुसार पैरों में स्वर्ण धारण करना निषिद्ध है। लोककाल में इन में से रूतिपय आभूषणों का वर्णन हुआ है। पैजना एवं पैजनियां लोक कवि का प्रिय आभूषण है इसका वर्ण प्रचुरता से हुआ है। पैजना एवं पैजनियां चाँदी, गिलट एवं कसकुट के एक से दो इंच तक मोटे और खोंखले बनाये जाते हैं इनमें भीतर लोहे या पत्थर के कंकरा डाले जाते हैं जो चलने पर मधुर झंकार करते हैं। पेजना एवं पैजनियाँ कई बनऊ के बनाये जाते हैं। कटमा, कढ़मा, ढरमा, कौंड़िया, मेडसिंगी, जालीदार, झूंगरेदार, छीताफली आदि। ईसुरी की नायिका ने छीताफली पैजना पहने हैं। जिसमें हजारों कंकड़ पड़े हैं-

रजऊ बनी इन्द्र की तारा, जीवन प्रान अधारा।
छीताफली पेजना पैरे, ककरा डरे हजारा।
सात बजे से सपरन जाती, लौटत बज गये बारा।
ईसुर हमें पावने का है, खसम करो दस बारा। 28

कवि गंगाधर की नायिका तो पैजना पहनकर जहाँ से निकल जाती है वहाँ छमाके पड़ जाते हैं। यथा-

मग में बजत पैजना बांके, चलतन होत छमाके।
लरज रहे मुख के ऊपर, बिछिया बांदे नांके।
पतरे छत्र लोये के करा, लगे दिखात न टांके।
सुनतन शब्द लगे बरछी से पतर करेजे सांके।
गंगाधर ऐरे के सुनतन, मन मोहन उठ झांके। 29

पैजनियां पैजना का छोटा रूप है। जिन्हें किशोर बालाएं पहनती हैं। इनका वजन पैजना से कम होता है इनकी झंकार मन मोहिनी होती है। ईसुरी कहते हैं-

बालम पैजनियां बजती हैं, मन मोरे बसती हैं।
पतरे पतरे लोय के ककरा, रोजउ रोज मँजती हैं।
संभर के पाँव धरो पलका पै, सास ननद जगती हैं।
ईसुर कात ओर केपारै, लिपड़ लिपड़ परती हैं। 30

पैरों की अंगुलियों के आभूषणों में अनौटा, चुटकी, छला, कटीला, गुच्छी, गोदे, गुटिया, गरगजी, जोडुआ पाँतें बिरमिटी पाँव पीस, बाँके, बिछिया आदि प्रमुख हैं। यह सभी आभूषण चाँदी, गिलट एवं कसकुट के बनते हैं। अनौटा पाँव के अँगूठा का आभूषण है इसकी बनाबट छला की तरह होती है। ऊपर चाँदी की चोड़ी पत्ती और नीचे चाँदी की की टूटदार पत्ती होती है। ऊपर चौड़ी पत्ती पर रबा रखा जाता है तथा कोई दस्तकारी होती है। चुटकी भी चाँदी, गिलट व कसकुटी की बनाई जाती है। इनकी बनक कई प्रकार की होती है जैसे पट्टेदार, रवादार, , पलियादार,, ईंटदार, मछलियादार आदि । ये सौभाग्य का प्रतीक चिन्ह होती है। पाँव पोस पंजे पर पहने जाने वाला आभूषण है। यह अत्यन्तकलात्मक एवं कई प्रकार की बनाबट का होता है। यह कटमा, गढ़ता एवं ढरमा तीनों प्रकार के बनते हैं। पाँवपोस पैर के पंजे पर पूरी तरह फैला होता है । इसमें दो, तीन या पांच छल्ले लगे होते हैं जो अंगूठे एवं फैला होता है। इसमें दो, तीन या पाँच छल्ले लगे होते हैं जो अँगूठे एवं अँगुलियों में पहने जाते हैं। इनमें साँकरे लगी रहती हैं, जो टखने के आभूषण पायल आदि में दो कुंदोरें में फसी रहती है तथा चारों ओर घेरेआभूषण पायल आदि में दो कुदों में फसी रहती है तथा चारो ओर घेरे आभूषण को साधे रहती है। बाँके भी चांदी एवं गिलट की बनी होती है ये टेड़ी मेड़ी बनावट के कारण बाँके कहलाती है। बिछिया भी अपनी बिच्छू जैसी आकृति के कारण बिछिया कहलाता है। बिछिया कई बनक के बनाए जाते हैं। जैसे दो गुटियों वाला कलसियादारएवं झिंझुरियादार आदि इसे सुहागिन स्त्रियाँ ही पहनती हैं अर्थात् यह सौभाग्य का चिन्ह है। इसका वर्णन लोक गीतों में मिलता है। यथा-

कहाँ डार आयीं नार नवल बिछियाँ कहाँ डार आयीं।

ईसुरी की नायिका ने बाँकी झंकार करने वाले पेजना पहने हैं। पैर रखते ही छमाक पड़ते है। इनमें झिझुरियों के कटाव अति सुन्दर हैं। कड़ी में टाँके लगे है। बिछुए तो जैसे नाकाबंदी ही कर रहे है। ईसुरी कहते हैं-

तोर बजत पेजना बाँके, धरतन परत छमाके।
अच्छे काट कटे झिझरी के, लगे कड़न के टाँके।
लगे रात पुर उनके ऊपर, बिछियां बाँदे नाँके।
ईसुर कात सजी अलबेली, छैल देखतन झाँके।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारतीय नारियाँ चाहे वे नागरी हो या ग्रामीण अनादि काल से श्रृंगार प्रिय रही है। प्रारम्भ में ये प्रकृति प्रदत्त उपादानों से श्रृगार करती रही है तदन्तर सभ्यता के विकास के साथ-साथ अनेक प्रकार की धातुऐं से निर्मित सुन्दर आभूषणों से अपने को सजाती सँवारती रही है। वर्तमान में भी नारियाँ शिख से लेकर नख तक नाना प्राकर के आभूषण धारण करती हैं। इस तरह सोलह श्रृंगार की यह परम्परा आदि से लेकर आज तक अक्षुण है।

सन्दर्भ -

1. डॉ. गायत्री वर्माः कालिदास के ग्रन्थों पर आधारित तत्कालीन भारतीय संस्कृति पृ. 166-67
2. डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त : बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास पृ. 236
3. भरतः नाट्य शास्त्र, 23
4. हफीजुल्ला खाँ : हजारा प्रकाशक नवल किशोर पृ. 210, लखनऊ सन् 1932
5. जायसी : पदमावत दोहा 296
6. बोधा : विरह वारीश 13/41
7. श्री निवास शुक्ल (संपादक) : गंगाधर गरिमा पृ.54

8. घनश्याम कश्यप : ईसुरी की फागें पृ. 202
9. पं. गंगाधर व्यास : द्वारिका अष्टयाम पद 5,2
10. घनश्याम कश्यप : ईसुरी के फागें पृ 200
11. रमेश गुप्तः बसंत के रंग पृ. 68
12. वही, पृ. 124
13. वही, पृ. 30
14. श्री निवास शुक्ल (संपादक) : गंगाधर गरिमा पृ. 56
15. रमेश गुपतः बसन्त के रंग पृ. 106
16. श्री निवास शुक्ल (संपादक) : गंगाधर गरिमा पृ.55
17. घनश्याम कश्यप : ईसुरी की फागें पृ. 195
18. रमेश गुप्तः बसंत के रंग पृ. 68
19. वही, पृ. 125
20. श्री निवास शुक्ल (संपादक): गंगाधर गरिमा पृ. 61
21. घनश्याम कश्यप : ईसुरी की फागें पृ. 202
22. श्री निवास शुक्ल (संपादक): गंगाधर गरिमा पृ.61
23. रमेश गुप्तः बसंत के रंग पृ. 121
24. वही, पृ. 91
25. श्री निवास शुक्ल (संपादक) गंगाधर गरिमा पृ. 61
26. रमेश गुप्तः बसंत के रंग पृ. 105
27. कपिल तिवारी (संपादक): प्रेमगीत (मध्यप्रदेश के आंचलिक प्रेमगीत) पृ. 36
28. रमेश गुप्त : बसंत के रंग पृ. 120
29. श्री निवास शुक्ल (संपादक): गंगाधर गरिमा पृ. 66
30. रमेश गुप्त : बसंत के रंग पृ. 91
31. घनश्याम कश्यप : ईसुरी की फागें पृ. 202

-श्रीकृपा निकेत, आदर्शनगर
हायर सेकेण्डरी स्कूल नं.1 के पीछे,
छतरपुर (म.प्र.)

बुन्देली गीत-चेतावनी

- गुलाब सिंह यादव 'भाऊ'

मनुवा. कै दिन करो बहाने
एक दिन सासुरे जाने..........मनुवा..........

कहा-कहा में भूलै अबे लो
आदे दिना बिलाने..........मनुवा..........

फूली फिरत गदूल सौ फूला
एक दिन जो कुमलाने..........मनुवा..........

जा काया माया में भूली
पाछे फिर पछताने..........मनुवा..........

ससुरा के घर जानो पराये
मिले हजारन ताने..........मनुवा..........

गैल गलन इतरारये भारी
हसंत न मिलो भियोन..........मनुवा..........

कछु करो घरो ऊ घर खो
जासे तुमे निभाने..........मनुवा..........

अबै फिरत हो डार दुपटा
ढाके भाऊ मो जाने..........मनुवा..........

-ग्राम-लखौरा, पो.-बहादुरपुर
जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा.-9669651046

बुन्देली कविता

- भास्कर सिंह 'माणिक'

करईयाँ का हो अब करतार
परी हौ भावई में रोटी दार।

पैलें सूखा नें हमें सुखा दये
फिर पानी ने हमें मिटा दये।
के घेर के ऐसो कुहरा दवो
ओख खेतन में परे तुषार।
करईयाँ..........

चिरईयाँ पड़कुलिया घबरायें
खूंटा पे चौपे इते रमायें।
हाय अब जीवें कों का खाये
जा परी है मंहगाई की मार।
करईयाँ..........
लरका भूख-भूख चिल्लायें
कब लों धीरज इनें बधाये।
हम लता उन्ना काँ सें लाये
कैसें चले गृहस्थी घर-द्वार।
करईयाँ..........

होरी दीवारी का ईद हमारी
उमर झाँसा गई करत किसानी।
भरी तिजोरी साहूकार सेठन नें
हम तो मर गये ढो ढो भार।
करईयाँ..........

-मालवीय नगर, बजरिया, कोंच जनपद, जालौन (उ.प्र.)

सोड़रमल की मौत

– हरगोविन्द तिवारी

भौत दिना पैलऊँ की बात है लंबरदारी समय हतो ओई समय पै बोदनगंज गाँव में एक लंबरदार हते, उनकौ नाव हतो बोदन जू। अर बोदन लंबरदार अपने निजू कामों के लानें एक कारंदा राखें ते। अर उनके कारंदा को नाव हतो सोड़रमल। अर सोड़रमल जू हते बिलकुल अकेले, काये कै उनकौं ब्याव-काज नें भव तो, सो उनकैं लरका-वारे होवै की तो कोनऊ बातई नईयां। अर है सो उनके बाप-मताई हते सो भौतई समय पैलऊं वे भगवान खौं प्यारे हो गये ते। ऐंसे सोड़रमल जू हते तौ बिलकुल अकेलेई पे उनके संगै पूरौ गाँव हतो। कायं कै लंबरदार के इतै काम करत भये पूरे गाँव में उननें अपनी भैतऊ अच्छी धाक बना लई ती। जी सें गाँव के सबई जने उनखौं अच्छी तरां जानत ते ओर मानत ते, सो गांव के सब जने उनें भौत चाउतते और उनकी भौत इज्जत करत ते। इतै तक कै पूरे गांव के आदमी उनें अपनेईं घर कौ आदमी मानत ते।

सो एक बेर का भव कै वे लंबरदार सें छुट्‌टी लैंके दो-तीन दिना के लानें तीरथन खौं कऊं बायरें निकल गये। ऐंसें वे कारंदा सोड़रमल तौ गाँव में नैं हते पै उतई बोदनगंज गाँव में बुददे माते को सोड़रमल नाँव को एक गदा जरूर हतो। सो का भव कै जौन दिना लंबरदार सैं छुट्‌टी लैकें उनके कारंदा सोड़रमल जू तीरथन खौं कऊँ बायरें गये, ओई दिना बुददे माते के सोड़रमल नाव के ऊ गदा खौं हार में चरती बेरां एक तिंदुवा नें टोर खाव। सो बुददे माते के ऊ सोड़रमल नाव के गदा की उतई मौत हो गई। सो अब का भव कै ऊ गदा के मरबे के तीसरे दिना बुददे माते ने अपने मनईमन जौ गुनतारौ करो कै मोरी मूंड़ के बार भौत बड़े-बड़े हो गये हैं ईंसे अपनी मूंड़ के बार कटवा कैं मूंड़ मुड़वा लई जाय। ऐंसे बुददे माते नें अपनी मूड़ं मुड़वाबे को विचार करकैं, बार कटवाबे के लानें अपने परौसी खिम्मे कक्का खौं अपने घरै बुला लव। सो जैंसई उननें खिममे खौं बुलाव बैंसई खिम्मे के आऊतनइं बुददे नें ऊसें कई कै खिम्मे जू हमाये मूंड़ के बार भौत बड़े-बड़े हो गये हैं, ओर हमाये सोड़रमल खौं मरें भयें सोई आज तीन दिना से हो गय हैं। सो सोड़रमल की मौत को दुख अर मूंड़ पै बड़े-बड़े बारन कौ बोझ मौपे सव नई जात है। सो अब मोरी मूंड़ घौंट दई जाय जीसें मोरौ जौ बौझ कछू हल्कौं पर जाय। और है सो सोड़रमल की मोत के सूतक कौ अछुददर छूट जाय। सो बुद्दे माते के माँ से सोड़रमल की मौत की खबर सुनकें खिंम्मे ने जानी के कउँ हो न होय बुददे माते कारंदा सोड़रमल जू के मरबे की बात तो नौई कररये आयें। सो ऊ जाई सोच कैं अपने मनईमन कारंदा सोड़रमल जू की मौत के बारे में कछू गुनतारौ-सौ करन लगो। अर फिर गुनतारौई-सौ करत भये ऊ बुददे की मूंड़ के बार काटवे बैठ गव। सो बुददे माते अपने घर के बायरें चौंतरा पे बैठ कैं खिम्मे के हांतन उस्तरा सें अपनी मूड़ं के बार कटवाउत भय अपनी मूंड़ मुड़वाउन लगे।

सो जौन बेरां बुददे माते अपनी मूंड़ के बार कटवाउत अपनी मूंड़ मुड़ा रये ते, ओई बेरां बुददे माते के परोसी बहोरी दाऊ की उनके इतैं अबाई हो गई, अर वे उनके लिंगा आकैं उतईं ठाडे हो गये। सो जैंसई कैं उननें बुददे माते खौं अपनी मूड़ मुड़वाउत भये देखों वैसई कै वे इकदम ठिठक कैं रै गये। अर है सो मनधरयात भय उननें बुददे माते सें पूंछी कै काये तो जू जो का हो रव सो बददे माते के मन में तो अपने सोड़रमल नाव के गदा के मरबे कौ दुख भरोई परो तो सो बुददे माते ने दुखी मन सैईं तुरतईं बहोरी सें दै कई कै अरे का तुमें पतो नईयां के हमाये सोड़रमल नई रये आयँ। इत्तई में खिम्मे ने उनके बीचई में बतयात भये उनन से कई कै सांसऊँ सोड़रमल ने हमाव भौतउ संग दव। हमें तो कछू पतौई नईं परो कै वे हमें छोड़ कैं ई दुनियाँ सें कबै चले गये। काये कै दो-तीन दिना सें हम तो गाँवई में नैं हते। हम तो पेलऊं एक जरूरी काम सैं गाँव के बायरें कऊं दूसरी जगां हते। कंजत हम गाँव में हेते तौ जरूर पतो रातो हमें। अब का करत काम तो सबई खौं लगे रात, सो सब अपने-अपने कामन में बिदे रात। काय कें अपने गुजारे के लानें काम -धाम तौ कनेई करने आउत । सो हम तो अपने कामई में लगे हुइयें ऐइसें हमें ई बात को कछू पतौ नईं परो। सो बुददे नें खिम्मे सें कई कै अब तोये पतो कैंसे परतो काये कि तीन दिना पैलऊं सोड़रमल खौं तो हार मेंई आ एक तिंदुआ नें टोर खाव। सो बुददे के मौ सें ई बात के सुनतई खिम्मे चिमां कैं रै गव। अर है जो ऊ बहोरी की तरपै देखत भये बुददे की मूंड़ घौंटन लगो।

अब खिम्मे और बुददे की बातें सुनकैं बहोरी नें सोई जोई गुणाभाग लगाव कै होये नें हाये कऊ हमाये इतै के लंबरदार क जौन कारंदा आम सोड़रमल जू हते सो बेई नौंई रये आयँ। सो जई बात सोच कें वे अनमनें से होत भये तुरतईं बुददे माते के लिंगा बैठ गये। उर बतयात भये वे बुददे सें कान लगै के राम। राम। अरे राम। जो का भव जौ तौ भौत बुरव भव। अरे ! माते जू कजंत अपुन नें पैल बता दई होती तो मैं तौ ओई दिना नकरिया में दौरत आउतो जौन दिना सोड़रमल की गमी भई ती। अब का करत काम-धाम के मारें नायें-मायें तो फिर नई आउत है सो मैं काम सें कऊं बायरैं निकर गव हुईयों । पै चलौ छोड़ो जो भव सो भव अब तौ इत्तई भौत है कै जब ई बेरां मैं इतई मोजूद हों, सो मैं सोई अपने कारंदासोड़रमल जू के ई क्रियकरम में संगै हो लऊँ। अरे ! नकरिया में नईं रये सो नई रये, काय कै हाजिर में हुज्जत नईं अर गैर में तलाश। अर ऐंसी कात भये बहोरी उतईं बुददे माते के लिंगा बैठो-बैठो अपनी मूंड़ के बारन पै हांत फेरन लगो। सो बुददे नें ऊसें कई कै बहोरी तैंनें जौन बात अबै कईहै सो बा तौ ठीक है। पै तैंनें मोरी तो कछू सनिअई नईंयाँ, काये के सोड़रमलकीनगरिया में जावे की तो कौनऊ बातई नई रै आय। सुनों बहोरी। अबै तनकई पैले खिम्मे सें हमने का कइती कै

सोड़रमल खौं हाराई में आ एक तिंदुवा नें टोर खाव है। सो बाहोरी नें उनसें कई कै हव माते जू सांसऊं मैंने तो ई बात पै कछू गौरई नईं करो आय। पै कछू नई माते अब तो हम उनके ई क्रियाकरम में अपने संगै होई सकत हैं। सो बुददे ने ऊसें कई कै बिलकुल ठीक। काये कै हाजिर में हुज्जत नईं 3 गैर में तलाश। ऐसें बहोरी को अहानों बहोरिअई खौं सुनाउत भये बुददे चिमा गये, सो बहारिअई चिमां कैं रे गाँव। अर है सो खिम्मे अपने कामई में लगो रव। ऐसे होत -करत बुददे की मूंड़ मुड़ गई सो वे उतई बैठे-बैठे अपनी मूंड़ पै हांत फेरन लगे। अर बहोरी अपनी मूड़ मुड़वाबे खिम्मे के लिंगा बैठ गव सो फिर लगे हात खिम्मे बहोरी की मूंड़ मूंड़न लगो।

अब का कैने ऐई बेरां उतईं से गांव के कछू आदमी और दै निकरे। सो वे इनन खौं मूंड़ मुड़वाऊत देखत भये, अर इनन सें पूँछताँछ करत भये, अर इनन सें जा जानकारी पाउत भये कै सोड़रमल नईं रये आयँ। सो सोड़रमल के नै रैबे की जानकारी पाऊत भये वे सबई जनें उतई उनके संगै अपनी-अपनी मूड़े मुड़वाऊन लगे। ऐंसई-ऐसें होत-करत उनन के संगै गाँव के भौतई आदमन नें अपनी-अपनी मूड़ें मुड़वा डारीं। फिर का भव कै कछू देर में उतै सें गाँव के चिखें चौकीदार दै निकरे। सो उनई नें बुददे हरों सें पूँछताँछ करी। सो बुद्दे हरों से पूँछताँछ करबे पै उनन नें चिखैं चौकीदार सेंई ऐंसई कै कई के अरे! का तुमें पतौ नईंयां कै हमाये सोड़रमल नई रये आयँ। सो बुददे हरों के मौं सें जा बात सुनकैं चिखे चौकीदार तुरतईं लंबरदार लौं जा पौचो, अर लंबरदार साब खौं ई बात की खबर देत भये उनसें कई कै अरे! लबंरदार साब! लंबरदार साब! गजब हो गव ! हमाये कानं सोड़रमल जू नईं रये आयें। ऐसें जैंसईं कैं लबंरदार साब नें कारंदा सोड़रमल जू के नैं रैबे की खबर सुनीं वैसई तुरतईं उननें अपने पूरे गाँव में ढिंढ़ोरा पिटवा दव कै कारंदा आम सोड़रमल जू को एकाएक निधन भय सें तीन दिना के लाने शोक रखो जा रव है। अर है सोज आजई दिन डूबे सात बजे गाँव के चौपाल पै एक शोक सभा कौ आयोजन करो जा रव है। सो लंबरदार के ईं ऐलान खौं सुनकैं पूरे गाँव भर के आदमी हक्का-बक्का रै गये।

ऐंसई-ऐसें होत-करत दिन डूब गव। अर है सो दिन डूबे सात बजे गाँव के चौपाल पै कारंदा सोड़रमल जू के निधन की शोक सभा कौ आयोजन शुरू हो गव। शोक सभा के आयोजन में पूरे गांव भर के आदमी आकैं जुर गये। जिनमें बुददे माते, खिम्मे कक्का, अर बहोरी दाऊ के संगै-संगै वे सबरे आदमी जिनन नें अपनी-अपनी मूड़ें मुड़वा डारीं तै वे सबई जनें आकैं उतै बैठ गये। ऐसें कारदा सोड़रमल जू के निधन पै शोक सभा कौ आयोजन शुरू होई रव तो कै जबईं कै करांदा आम सोड़रमल जू तीरथन सें लौट कें आ गये। और वे उतईं गाँव के चौपाल लों जा पैंचे। सो उनखौं उतै देखतईं सब के सब आदमी भौचक्का रे गये। अब नैं तो कोऊ पै कछु कात बनें और नै कछू करत बनें। पै कछू देर में बड़ी हिम्मत करकैं सभा के मुखिया बोदन जू नें कारंदा सोड़रमल जू खौं अपने लिंगा बिठाकैं सभा के आयोजन के बारे में उनें पूरी बात बता दई। और है सो फिर लंबरदार बोदन जून ने सभा के बीच में ठाड़े होंके ओर जोर से बोलत को चुंगा अपने हांतन में लैके चुंगा खौं अपने मौ के लिंगा करकैं सबई आमन सें कई के जा तो भौत खुशी की बात है कै हमाये कारंदा सोड़रमल तो हमोय बीचई में मौजूद हैं। पै हमें दुख ई बात कौ है कै हमाये कारंदा सोड़रमल जू की मौत का हल्ला भव केसें? अगर कोऊ खौं ई बात कौं कछू पतो होय तो चुपचाप ठाड़े हौंके बिना कौनऊ डर-दहशत, के हमें अबई बता दैवे। सो लंबरदार के मौं सें ऐंसी बाते सुनकैं उतै मौजूद सबई जनन में खुसर-पुसर हौन लगी।

ऐंसई-ऐसें सबई जनन में खुसर-पुसर होत भये कछू देर के बाद उतईं मौजूद खिम्मे कक्का नें ठाड़ें हौकैं लंबरदार सैं दे कई कै लंबरदार साब। लंबरदार साब। जो सब तौ बुददे माते कौ करो-धरो आय। काये कै ओइनें अपनी मूंड़ मुड़वाऊती बेरां सबई जनन सें जा बात कई कै अरे! का तुमें पतौ नईंयाँ कै हमाये सोड़रमल नई रये आयें। सो खिम्मे के मौं से जा जानकरी पाकैं लंबरदार साब ने तुरतई बुद्दे माते खौं दै पकरो। अर ऊसें कई कै काये तैनें ऐंसों हल्ला काये करो। सो लबंरदार के पकरतनईं अर पूंछतनईं बुददे माते अपने दोई हौत जोर कैं लबंरदार साब से बिनती-सी करत भये कान लगो कै मालक मोरैं एक गदा हतो, अर है सो मैं अपने ऊ गदा से भैतऊ प्रेम करत तो। अर प्रेम सें मैं अपने ऊ गदा कौ नाव धरैं तो सोड़रमल! अर है सो हमाव ऊ गदा अब ई दुनिया में नई रव आय। काये कै आज सें तीन दिना पैलऊँ हमाव ऊ गदा जीसें मैं सोड़रमल कात तो, ऊये हार में चरती बेरां एक तिंदुवा नें टोर खाव। अर है सो हमाव ऊ सोड़रमल नाँव कौ गदा उतईं मर गव। ऐसें आज तीसरौ दिना है हमाये सोड़रमल गदा खौं मरें। सो हमने तौ ऐइं दुखन में दुखी होंकैं सब जनन सें ऐंसी कई कै अरे! का तुमे पतो नईयां कै हमाये सोड़रमल नईं रये आयें। मालक साब अब ईमें मोरी का खोरी। अर मौसें कछु गलती भई होय सो मोय माफी दई जाय। सो बुद्दे की बिनती सुनकैं लंबरदार नें चुंगा में हो फिर सबई जनन सें कई कै गलती तो जा बुद्दे सें भई है, पै ई गलती के लानें बुददे के संगै का करो जाय, ईको निर्णय हमाये कारंदा आम सोड़रमल जू खुदई कर हैं। ई के लानें कारंदा आम सोड़रमल जू खौं पूरौ अधिकार है कै वे जो चाहें सो करें। अर ई कौ निर्णय ऐइ सभा के बीच में अबई इतई आकैं कारंदा सोड़रमल जू कर लेवं। सो लंबरदार के जे बोल सुनकैं कारंदा सोड़रमल जू सभा के बीच में ठाड़े हो गये, अर जोर सैं बोलत कौ चुंगा उननें अपने हाँतन में लैकैं चुंगा खौं अपने मौ के लिंगा करकैंजोर-जोर की आवाज में सबई जनों से कई कै जौ तौ भौतऊ अच्छौ भव कै बुददे नें हमाये जियत भये हमें जौ आभास करा दव कै ई गाँव में हमाये कितने हितैषी हैं। इतै ई सभा में सब जनन खौं मौजूद पाकैं ई बात की हमें भौतऊ

खुशी भई कै वे सब हमाये संगै है। ऐईसें हम अर हमाये लबंरदार साब सोऊ अपुन सब के संगैई हैं। अब अपुन सब जनेईं ई बात कौ निर्णय कर लेवें।

सो कारंदा सोड़रमल जू के ऐसे बोल सुनतईं सभा में मौजूद जनें चिल्लियात भये कान लगे कै जो भव सो भव। पै सोड़रमल की मौत कौ हल्ला तौ बुददे की बदौलतई भव। सो बुददे माते खौं अपने सोड़रमल नाव के गदा की मौत के तेरवें दिना पूरे गाँव के आदमनों खौं एक पंगत देने पर है। जबई उनके सोड़रमल नाँव के गदा की आत्मा खौं शांति मिल है। अर जबई बुददे खौं सोड़रमल की मौत कौ हल्ला करबे कौ कछू फल मिल है। सो पूरी सभा के सामूं बुददे माते खौं गाँव भर के आदमनों के लानें पंगत दैवौ कबूल कर ने परो। अर है सोज अपने सोड़रमल नाव के गदा की मौत के तेरवें दिना उनें पूरे गांव भर के आदमनों खौं एक पंगत देने परी। जीमें उनकी जिंदगी भर की जुरी-जुराई पूरी कमाई ठिकाने लग गई। मतलब जौ कै गाँव भर कै आदमनों खौं पंगत दैवे में बुददे माते के खूब पईसा खर्च हो गये। ईसें वे भौत दुखी हो गये। और उनकी अपनी ई करनी-भरनी सें कछू चिड़न-सी हौन लगी। अर है सो वे ई बात सें कछू चिड़कन से लगे। सो सोड़रमल की मौत कौ हल्ला करबे बहाने गाँव भर के आदमी बुददे माते सें हंसी-मसकरी करकैं उनें खूब चिड़काऊन लगे। अर है सो उनकी चिड़काउत भये गाँव भर के आदमीं उनसें कान लगे कै ''बुददे माते को मर गव एक सरो गदुल्ला, अर उनें कर दव सोड़रमल की मौत कौ हल्ला।'' किसा हती सो पूरी भई कव प्यारे जा कैंसी रई ।

- इंदिरा प्रियदर्शिनी वार्ड, तिवारी मुहल्ला
शाहगढ़, जिला- सागर (म.प्र.) 470339
मो. 9993370274

संस्मरण

नीम न मीठे होय

– श्रीमती ब्रजलता मिश्रा

काऊकवि ने साँची कई है कै :-
जाकौ जौंन सुभाव, जायना जी सें।
नीम न मीठे होय, सींच गुर-घी सें।।

जाकौ अर्थ है कि जौंन मान्स कौ जैसौ सुभाव होत है बौ जिन्दगानी भर बैसोइ रउत है, बदलत नईयाँ। चाँएं जितेक उपाय करे जाएं। जैसे गुर उर घी सें सींचवे सें नीम की करवाहट दूर नइ होत है। नीम बरहमेस करऔ रउत है। बौ मीठौ नई हो सकत। ऐसेंई जौंन मान्स संवेदन हीन (कठोर) होत हैं उनके तीर जैसे बोल हिरदे कों छलनी कर देत हैं, छेद देत हैं।

कछू साल पैल की बात है। हमाए नगर में एक डॉ1टर साब बड़े हुसियार है। उनकी दवाई सें सबइ खों लाभ पौंचत है। अकेलें उनकी बोली बड़ी बुरई। काऊ मरीज से दिलासा के दो बोल बोलबौ उनके लाने कठिन है। कछू साल पैलें मोरे देउर राजेश के पेट में असहनीय दर्द भऔ। एक्स-रे कराकें डॉक्टर ने देखौ तौ अपेण्डिसाइटिप्स कौ ऑपरेशन बताऔ। ऑपरेशन के नाऔ से राजेश भौत घबड़ा गए/काय सें कै उनें कभऊँ एक इंजैक्शन तक नई लगौ तो। हम औरन ने भौत समझाओ कै तुम डराऔ नईं। आजकल ऐसी नई-नई मशीनें चल गई हैं कै तकलीफ नई होत। डॉक्टर जी दिलासा देके समझाहैं जौ सोचकें हम उने डॉक्टर साब के पास लै गए उर हमने कई कै डाक्टर साब ! राजेश ऑपरेशन के नाऔं सें डरा रए हैं। अब आपइ इनें बता देओ कै कौंनउ ''चिन्ता की बात नइँया।'' डॉक्टर बोले- चिन्ता की बात ? बिल्कुल है। यह कोई छोटा-मोटा ऑपरेशन नहीं है, मेजर ऑपरेशन है। कम-से-कम चार घण्टे चलेगा। इसमें मरीज की जान भी जा सकती है।

जौ सुनकें हम उनकौ मौं देखतइ रै गए। कछू दिनन में समझा-बुझा के राजेश खों आँपरेशन के लॉने हम औरन न राजी करो। भगवान की किरपा सें ऑपरेशन सफल हो गऔ। आज भी राजेश स्वस्थ हैं। अकेलें उन डाँक्टर की कई बानी,-''इसमें मरीज की जान भी जा सकती है''- आज भी हमें डरा रई है।

नवम्वर 2014 कौं मोरी बिटिया रागिनी कौं डाँक्टर ने कैंसर बताऔ, तौ हम औरन के पॉउन तरे की धरती सरक गई। घर में रूआयटे मच गए। काऊ तराँ से हिम्मत बांद कें गुड़गाँव के मेदान्ता अस्तपताल में जाँचें करवाई। मुम्बई के अस्पताल में कीमोथेरेपी इलाज करवाऔ। बिटिया कौनउं तराँ ऑपरेशन खों तैयार नइ भई। एक बेर तौ ठीक हो गई। कछू दिनन बाद दुबारा कैंसर फैलों। एक नवम्बर 2016 सें रोटी आदि खाबौ छोड़ दऔ तो। नाम मात्र कौ तरल पदार्थ - सूप, जूस आदि लेती। 12 नवम्बर कौ बिस्तर सें उठ नई पाई। सौ जौ सोच कें अस्तपताल में भर्ती करौ के 2-4 दिना, 2-4 ग्लूकोज की बोतलें चड़ जैहैं तो बिटिया कों ठाँड़े हो बे की ताकत आ जैहें।

अस्पताल में भर्ती करने गए तो बेइ डाँक्टर बोले-''ये तो कुछ घण्टों की ही मेहमान हैं। बाईना दिना बिटिया भरती रही। हालात दिन पै दिन बिगरत गई। 2 दिसम्बर कौं डॉक्टर साब बोले - ''मैंने और मेरे स्टाफ (नर्स आदि) ने आपके मरीज की बहुत सेवा कर ली। अब आप इन्हें घर ले जाइये और आप भी तो सेवा करके देखिये।''

बा समै मोरी बिटिया जिन्दगानी उर मौत सें लड़ रई हती। डॉ1टर के संवेदनहीन बोलन ने हम औरन पै कुठाराघात करौ। हमाए घर के सबहु लोगन ने बिटिया कौं बचावे के लॉने तन-मन-धन सें रात-दिना जमीन-आसमान एक कर दऔ हतौ। इलाज उर सेवा में कौनउँ कौर-कसर नई छोड़ी ती। 4 दिसम्बर 2016 कों रागिनी कौ निधन हो गऔ। अकेलें डॉक्टर के करए बोल अबै नौं कानन में गूँज रए, उर हिरदे में चोट पौंचारए हैं कै-''आप भी तो सेवा करके देखिये।''

सन्त कवि कबीरदास ने अपइँ साखी में साँची बात लिखी है कै -

मधुर बचन हैं औषधी, कटुक बचन हैं तीर।
स्रवन-द्वार हवै संचरैं, सालैं सकल सरीर।।

-पूर्व प्रवक्ता(आर्य कन्या इण्टर कालेज)
352, नानक गंज, सीपरी बाजार, झांसी (उ.प्र.)

गढ़कुण्डार का अतीत

– संतोष कुमार पटैरिया

इतिहास का शाब्दिक अर्थ है ऐसा प्रसिद्ध हुआ। इति का अर्थ ऐसा जो व्यतीत हो चुका, ह का अर्थ प्रसिद्ध और आस का हर्थ हुआ है। आशय यह है कि जो प्रसिद्ध घटनायें हुई हैं वही इतिहास है। अतीत काल से परम्परा चली आ रही है कि शासक अपने सकरात्मक पक्ष को रखते हुये इतिहास लिखाता है, स्वयं को प्रधानता देते हुये वह इतिहास लिखाना अपना अधिकार समझता है यही कारण है कि इतिहास बहुत से प्रश्न चिह्न छोड़ जाता है। ये प्रश्नचिह्न इतने बड़े होते हैं कि उनके समक्ष दिये गये इतिहास के आँकड़े वर्णन बोने हो जाते हैं। आत्म प्रशंसा इतनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है कि शिलालेखों में उत्कीर्ण विरूदावली मिले साक्ष्यों के सामने ठहर नहीं पाती।

बुन्देलखण्ड के क्षेत्र के पुराने नाम जुझोति, जेजाक भुक्ति आदि। अपने अपने कालखण्डों का इतिहास शासकों ने लिखवाया और उसी आधार पर परवर्ती इतिहासकारों ने इतिहास लिखा। इस प्रकार पिष्टप्रेषण से इतिहास सीमित बिन्दुओं की परिक्रमा करता रहा। इसके परिणाम स्वरूप आने वाली पीढ़ी ने उसी इतिहास को सत्य समझ लिया। ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने छूटी हुई कड़ियों में अपनी कल्पनाशक्ति और सम्भावनाओं की कड़ियाँ लगा दीं। जिससे इतिहास और विकृत हो गया और फिर बाद-विवाद, संवाद, प्रतिवाद, तर्क वितर्क, कुतर्क इत्यादि की एक लम्बी श्रृंखला आरम्भ होती है। बुन्देलखण्ड में गुप्तकालीन, चन्देलकालीन, बुन्देलाकालीन शिलालेख मिले हैं जिनके आधर पर शासकों की वंशनुक्रम सूची बनाई गई। चन्देल काल में बारहंवी शताब्दी मैं महोबा में परमर्दिदेव प्रथम का शासन सन 1665 ई. से आरम्भ हुआ। उनके पूर्व उनके पिता यशेवर्मन द्वितीय शासनकाल, चन्देलवंश में सबसे कम एक वर्ष ही रहा । परमर्दिदेव उपाख्य (उर्फ) परमाल के शासन काल में गढ़कुण्डार में शिवा या सियाजू क्षत्रिय किलेदार नियुक्त थे। इन्ही के सहायक खूबसिंह थे। यह रहस्यमय दुर्ग बहुत अनदेखे पृष्टों को समेटो है। इतिहास कार इसे चन्देलकालीन बताते हैं। वस्तुतः नीचे का भाग चन्देल कालीन है और ऊपर का भाग वीर सिंहदेव प्रथम ने बनवाया था। सन् 1882 में चन्देल /चौहान के बीच हुये अन्तिम युद्ध बैरागढ़ में किलेदार शिवा वीरगति को प्राप्त हुये। सहायक खूबसिंह किलेदार हो गये। चन्देल पराजय के बाद पृथ्वीराज चौहान ने खेतसिंह खंगार को गढ़कुण्डार का सामन्त बना दिया।

खंगधर क्षत्रिय खंगार कहलाये। इनकी कुलदेवी गजानन माता हैं। गजानन अर्थात् गणेश की माता पार्वती हैं। इनकी मूर्ति कुण्डार में कुण्ड के समीप प्रतिष्ठित की गई जिन्हें गिद्धवाहनी माता के नाम से जाना जाता है। स्थापित मूर्ति वाले मंदिर की बाहरी दीवार पर दो मूर्तियां दीवार में संयोजित की गई है। इन मूर्तियों मैं गहरा सिन्दूर लगा होने से प्रथम दृष्ट या मूर्ति का निर्धारण नहीं हो पाता है। किन्तु ध्यान से देखने पर ज्ञात हाता है कि खजुराहो शिल्प की आलिंगनबद्ध युगल मूर्ति है। सरोवर के तट पर पुरावशेषों के पाषाण स्थापित किये गये है। इस क्षेत्र में खण्डहरों को देख कर आभास होता है कि किसी किये गये हैं। इस क्षेत्र में खण्डहरों को देख कर आभास होता है कि किसी समय यहाँ बड़ा नगर रहा होगा जहाँ व्यापारी भी रहते हैं।

कुण्डार के दुर्ग का निचला भाग चन्देलकालीन है किन्तु ऊपर का भाग में सोलहंवी शताब्दी के उत्तरार्ध में बनवाया गया है। यदि किंवतन्तियों पर ध्यान दिया जाय तो यह दुर्ग बहुत रहस्य पूर्ण लगता है। किंवदन्ती है कि इस दुर्ग में बरात के लोग गायब हो गये थे। यदि यह बात सत्य है तो दुर्ग के सबसे नीचे तल का कोई द्वार या मार्ग सिन्दूर सरोवर में खुलता है, मदनबर्मन के शिलालेख में उल्लेख है कि यहाँ कैडी नामक स्थान पर सरोवर बनवाया। इस दुर्ग में सीढ़ियों का मार्ग व द्वार में भ्रम हो जाना सामान्य सी बात है। दुर्ग में महिलाओं के स्नान करने के लिए दुर्ग के अन्दर बावड़ी में अन्तःपुर से ही मार्ग जाता है। दुर्ग में निर्माण की श्रंखला चलती रहने से कई कालों का वास्तुशिल्प दिखाई देता है। सर्व-विदित है कि यह दुर्ग दूर से देखा जा सकता है किन्तु समीप आने पर दुर्ग नहीं दिखाई देता है।

राजकुमारी केशर दे के जौहर का प्रतीक एक कुण्ड बताया जाता है किन्तु यह कुण्ड उसके जौहर के बाद का बनवाया हुआ है। सतीस्तम्भ सबसे ऊपर की छत में स्थित है जिसके चबूतरे पर विभिन्न काल के दो मूर्ति युगल रखे हैं आनंद सम्वत् विक्रम सम्वत् से 90 वर्ष पूर्व का है। अतः यदि सही काल गणना न हो रही हो तो आनंद सम्वत् को भी ध्यान में रखा जा सकता है। खंगार शासक हुरमत सिंह से सोहनपाल द्वारा सहायता माँगने पर उसे सहायता न मिलने पर सोहनपाल बुन्देला दुखी हुआ और अन्य क्षत्रिय जातियों परमार घंधेरे आदि से सहायता लेकर सेना संगठित की फिर सोहनपाल ने पुत्र सहजेन्द्र, पुरोहित व धीर नामक व्यक्ति को पुनः भेजा तो हुरमत सिंह ने साहूकार विष्णु पांडे के कहने पर सहायता देना स्वीकार किया था। किन्तु बुन्देला परिवार की कन्या के साथ अपने पुत्र के विवाह का प्रस्ताव रखा जिससे सम्वत् 1314 में परमार, घंधेरे क्षत्रियों की सहायता से गढ़कुण्डार पर आक्रमण कर दिया और गढ़कुण्डार पर अधिकार कर लिया। जिन क्षत्रियों ने सोहनपाल का सहयोग नहीं किया उनसे उसने वैवाहिक सम्बंध नहीं किये।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. महावीर प्रसाद द्विवेदी अभिनन्दन ग्रन्थ, मैनेजर पाण्डेय पृष्ठ 24, 2. बुन्देलखण्ड का इतिहास भाग

3. बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास - गोरेलाल तिवारी

4- दीवान प्रतिपाल सिंह पृष्ठ 142 सं डॉ. बहादुर सिंह परमार,

5. बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास- प्रो. नर्मदा प्रसाद गुप्त पृष्ठ 290,

6. विन्ध्यक्षेत्र का ऐतिहासिक भूगोल- कन्हैयालाल अग्रवाल पृष्ठ 113

-रत्नम ज्वेलर्स, सर्राफा बाजार, महोबा

बुन्देलखण्डी दम्पत्ति : उलझन सुलझन

–डॉ. एम.एल. प्रभाकर

बुन्देलखण्ड खें भारत कौ हिरदय कवो जात । ईसें इतै के संस्कार नियम कायदे सबसे मनखों लुभाउत रये । इतै के परिवार के घर भर के आदमी एक दूजे खें भैतई प्रेम करत। पैलऊं से आज तक उनकी झलक कितऊँ कितऊँ देखवे मिल जात जैसे बाप मताई को बाल बच्चन के लाने समरपन, पति पत्नी की रीझ-खीझ, बाल बच्चन की ताँक झाँक बैन भैया को नौनों पिरैम आदि -आदि । जौ सब अब बिलात जा रऔ।

पैलऊँ के समइया में सास खौं भौतई कठन कात ते। काय से कैं बा बउअन खौं भौत रु+तबा बताउतती। उठत बैठत टौकवौ ऊ कौ पैलो काम हतौ। बऊ विचारी के वियाव के चार दिना पूरे नईं होत ते । नई बऊ ऊँसई तौ डरात-डरात आउत ती। सासरै आंकै सो उनकी जो दुर्दशा होत ती उयै कई नई जान सकत । भुन्सरा सैं उठ कैं सपाई झारा फूँकी करकैं पिरिया भर गोबर की हेल पथनवारें में डाट कैं कण्डा पाथने आउत ते। कूरा कचरा घूरे पै डार बे जानै पतर तौ। गइयँन भैसन की उसार करवौ उनें लगावौं, उनैं बगर में छोड़वे जावै। दूध खौं, गुरसी पै उबलबे धर कैं, जब बौ लाल-लाल सौ हो जात तौ कचुल्ला में भर कै सब जनन खौं पीवे देने परत तौ। बचौ खुचौ दूध डेदिया में जमा कै आँतरे दिना दई जमौ मटकिया में डाल कै मथानी सैं कडैनियाँ तान-तान कैं मठा भाँव जात तौ।

कछु जनीं सिर में दूध-दही की खेंप लैं कैं गाँवन की खोरन-खोरन दूध दही, मठा लै लो की टेर लगाउत फिरत ती- यथा लै लो आज दही अन हो नौं, जौ तन जीवन तोनौं जाँमन प्रेम जमायौ दै कै, चखौ बैठ झौनों घिरा नई पीतम रंग रंगीले, फीकौ लगै न नौनों।
लै लो आज दही अनहोनों।

पैलऊँ से मन चले लोग- सादी सादी जनी मांसन खौं परेशान करत आय। अकेलें बा कार्ड की बातन पै ध्यान नई देत। बिचारी बऊ गांव में बैच कैं घरे आउत ती सो फिर घर के काम में उरज जात ती। हारी थकी चूले चकिया में बीद जात ती। सब खौं मन-मन को खै-वे बना कैं परसत ती। बाद में जो कछु बचौ सौ खात ती।

एक काम बतावौ में भूलौ जा रऔतो। भुन्सारे पारै उटकैं बऊ खौं चकिया हाथन सैं चलानें परतती । सब खर्राटें मारकैं सोउत हते। बऊ बिचारी पीसत जात ती। ऊँग ना आवै संगै मन की खुंश काढवें गाँउत ती-

''मेरी चकिया को घेरऊँ घेर बिलौंटा, कैसौ रे फिरत इंदयारे में। ये मोरी सासो खौं लयैं भगौ ना बिलौंटा। कै सौ रे फिरत इंदयारे में।''

यी तरा सैं मन की भड़ास निकालती घर की सब जनींयन खौं गाउत ती। खास तौर सैं नन्दबाई खौं जदां गाउतती। काय सैं कै बा मताई भइया सें ईकीं शिकायतें जादां करत ती। सो भाभी मन की भड़ास गाकैं निकारत ती।
''अच्छी लगै लाल चुनरिया हमखौं।
बिष की गाँठ ननदिया हमखौं। अच्छी लगै लाल.''

बऊ बिचारी कौ बियाव हलकी उमर में हो जात तो सो जब बा मायके में रत ती सो भाभी सैं मन की बात कान लगत ती सपने में भौजी हमें दिखाने, हो गये बलम सियाने। भौजी सो मन की लगी बुझावे और चिढ़ाउन लगत ती। ननद भौजाई कौ केर बेर जैसा बैर रत तौ। जौ दिना ननद की बिदा होन लगत ती सो भौजाई कौ भाव देख कैं ननद कान लगती।
''माता कहै बेटी निसिदिन अइयो, बाबुल कहै दोई जोर।
भइया कहै बहना औसर अइयो, भाभी कहै कौन काम मोरे लाल''
ननद तो सासरैं जाकें पछताती मैं ने भौजाई पै भौत अत्याचार करे सौ मोय इतै भुगतने पर रऔ। काय सैं इतै मोरी वारी नगदिया, बौई कर रई जो मैंने मायके में अपनी भौजाईके संगै करौ तौ। ईं से मोय सब जनीयन सें पिराथना है कै मो घाँई न करयौ।

बऊ की बड़ी ननद तौ साँसरेचली गई। घर में सास ससुर बूढ़े देवर ननद (दूसरी) हल्के हल्के हते। घरवारे जू स्याने नई हते, वे तौ मताई के पछाँई दौरत फिरत ते। बऊ कौ दिन तौ काम करत में कढ़ जात तौ अकेलें रात बज्जर सी दिखात ती। बियारी कर कैं सब जने अपनी-अपनी जागां पर रये। पतिदेव जू डरात-डरात आदी राते आये सो घरवारी बोली...
''करलो बियारी, बुझा दो दिया, मछली सो तड़फै मोरे जिया''

घरवारे ने जल्दी फल्दी बड़े-बड़े कौरन खा पी कैं दौर लगा कैं मताई कै संगै जा कैं जानैं का -का कत गऔ... बऊ बिचारी रात कैं रोउत परी-परी बोली..

सब जागां सरदी लगै, मोरे हिरदै आग।
वारे खौं बियाई गई, फूटे मोरे भाग।
मेरे वह बामन नाई हाँ।
करी जिन यहाँ सगाई।

धीरे-धीरे समय कढ़त गओ, भौत दिना सउत-सउत हो गये। सो बिचारी की समज ना आवै कैसें मायकैं जात । एक दिना फरवारे खाँ पुटया कै भीतर लुवा लै गई और बोली...

''पौधा दो सइयां हमें मायकैं चार दिना के लानें । मैं तो चौमा से की आई, जबसैं चर्चा नई चलाई तुमतौ दै गये बेसर माई।

मेला लगौ पिया अकती कौ सौन बाँटवे जानैं।''
घरवारौ बोलौ मोय छोड़ कैं कितै जात, मोय को समारै, घर कौ काम को करै, मताई बूढ़ी है बैन हल्की सी है, तोय सरम नई आउत, घरवारी बोली मैं झट्टई आजौं, इतनी कै कैं लिपड़ कै रोउन लगी पाँव

परन लगी। सो घरवारौं बोलो....

''तोय जान न दैहौं घरी भरे खौं, बड़ी मायके वारी। कैसी हैं मायके खौं लपकी, तोरी बुझा दैंव सब भपकी। लडुआ देख लार सी टपकी जैसी तै बदमासन हो गई,
तैसई तोरी मतारी। तोय जान न दैहों.......

घरवारे की ऐसी बातें सुनकैं, ऊयै गुस्सा आ गयी, सो कन लगी, ना जान दो, जौ डरौ तुमाउ सबरौ काम, मोव तौ पेट पिरा रऔ सो जा परी। घरवारी रिसाकैं पर रई, घरवारौ सुन्न सपाट रै गओ। भुन्सारे सब जनैं उठ गये, पार भर दिन चढ़ आव, बऊ न दिखानीसो सास को पारा गरम भऔ सो आसमान खौं मूड़ पै धरै फिरवै। मुहल्ला परौस की माई बैनियन खौं बुलाकै बोली-

''कोऊ इतै आवरी कौऊ उतै जाव री, ई नौनीं दुलइयां खौं समझावरी।

सो रई दिन डूबे सैं अबै ना उठी,
चार डला लरकन नें कर लई कुटी।
कोऊ लजयाव री । ई नौनी. ...
अक्कल के पाछैं बांदैं लठा
फोर दई मथनिया बगर गव मठा।
कोऊ देख जाव री। ई नौनी ...
साँसी-साँसी कयसैं जा काढ़ै गटा।
सबखौं खुवा दये अरौने भटा।
कोऊ चींख जाब री । ई नौनी..
कोऊ सूँघ जाव री। ई नौनी ...
रोज-रोज करतीजा सोलऊ सिंगार।
खीर में दे दओ हीं कौ बगार।
सलर-मलर पर गई जा खा खा कैं माल।
देखों मोर लरका के सूख गये गाल।
जय पठै आव री। ई. नौनी ...

सबनें सला करकैं ससुर सें कई कै इयै मायकैं पौंचा आव। एई में सार है। बऊ के मन में हती अई। ससुर सज धज कैं बऊ खौं लै कैं निगत-निगत दिन छित समदियानें पौंच गये। सबने पूँछी बताई, सुआगत सत्कार करौ। समदी नें हाँ हूँ करके हालईं घरै भग आय। मायके वारन ने बिटिया सैं पूँछी सो बा बोली....

''सास लटी बा घर मइयां।।
मो सैं तनक बनत नईयां।।''

सबनैं धियान नईं दऔ। बिन्नू इतै उतै छौनयाऊ कुतिया घाँई फिरन लगी। कछू दिनन में जिज्जी-जीजा जू आ गये सो भौतई खुशी भई। जीजा सैं ररीं हौंन लगी। एक दिन उनके संगै बजारै चली गईं। दुकान के अँगाई ठाढ़ी होकैं बोली। जीजा जू बिलात दिनन में मौका मिलौ सो.....

''मोय लै दो चुनरिया मोरन की । मोय. .....
मोरन की हाँ चकोरन की। मोय लैदो. .....''

जीजा जू नें तुरतई चुनरिया लुवा दई, और कन लय अब और कछू लैने आयँ सो मौका पै बताइयो, बिन्नू बिलात दिनन बाद एक दिना मेला देखन गईं, इतै उतै इठलात फिर रई ती-

''इठलाती फिरतीं जीजा के संग घूमें मार कँदेला''

कत-रत बिलात दिना हो गय, सो एक दिना भौजाई बोली बिन्नू तुमें उनकी खबर नई आउत। सो तुरतई जुआब दऔ-

''सपने में सइयां हमे, दिखाने हौं गये तनकस्याने''
''वारे बलम खौं देख कें रोवौ आवै मोय।
सरम लगत कछु कात में, धक-धक जियरा होय।।''

भौजी बिल्कुल मरियाँ घरवारौ मिलौ, मौड़ी मौड़न के संगै खेलत फिरत, मताई की ओली में परत। मोय देखकैं चिराउत हैं। कुतका बताउत । सास सो इतनीलटी है कै मोई नाक में दम कदई। उठत बैठत नकेल करैं रत । ढोर बछेरन की उसार करौ, गोबर पाथौ, संगै दोई बेरा समूदी रूटी बनाव। खावें की बेरां सबरे मोय सौं ताय हेरत। ईसैं मोय नई जामैं । भौजाई नैं अपनी सास खौं सब बता दई। सो ऊनै कै दई, मौड़ी इतई रै, अब नई पौंचाउने सासरैं-

बऊ तौ मायके में गुल छर्रे उड़ा रई इतै सास की हालत बिगर गई। बुढ़ापौ ऊसईं आ गवतौ फिर घर-भर कौ काम करनैं परौ हल्की मौड़ी कछू जानत नइयां, सास की पलइयाँ चलन लगी, सबनें समझाव बऊ खौं बुलवालो। ससुर फिर समदियाने लुआवे पौंच गये। कोऊ सूदैं न हेरौ, बोलवौ तो भौत दूर है। समदी बेसरमाई सैं चुपचाप बने रये। बियारी करत में कन लये, भुन्सरा विदा कर दियौ। घरइअन की तबियत खराब है, सो काम दन्द की परेशानी है। सबनें कई बिटियाँ जाय सो ऐंन लुवा जाव। भुन्सारे ससुर ने फिर कई सो सुनो का हाल भऔ विचारे ससुर कौ....

''गौरी मचल रईं, मायके सैं सासरैं न जाय । गोरी. ..
ससुरा बिचारे रहे धीरे-धीरे बोल।
भीतर सैं समदिन आ गई मौंखोल।।
हमने का बिटिया खौं बैंच दऔ तुमें।
तुमनें का जानैं है भोरौं हमे।।
कर लो बियाव लरका कौ फिर समझ में आय।
गऊ की सूदी बिटिया खौं, हम नईं पठाय । गोरी. ..''

समदी खौं ''कलेऊ करवा बौ तो दूर है, पानी तक की नई पूँछी। विचारे मौं लटकाय घरै आय, काऊ सैं कछू नई कई। ऐसईं ऐसे, समय कढ़त गऔ। लरका सण्ट मुसण्ट हो गऔ। संग के लरकन नें समझाव, बुद्दू कऊँ के, घरवारी गर्रानी फिर रई, काऊ के संगै चली जै। सो रेल सी देखत रै जइये। काल के दिना बाप मताई निपट जैं फिर तुमाव का हाल हुइयै। ई सैं ससरारै जाकैं उयै पुटया कैं लवा ल्याब। लरकन की बात ऊके गरैं उतरगयी सो भुन्सरा ससरारै जान लगौ। सबने तैयारी कर दई। लरका जुआन हो गओ तो, ससरार के गेंबड़े पौंचो दिन डुबइयाँ हो रओं तौ सो कुवा पै एक जनी पानीं ऐंच रईती सौ ऊ ताय देखन लगौ। सो बा बोली तोंय बैन मताई

नइयां सो काऊ की बिटिया ताँय ऐसौ घूर रऔ। ऊनें तो चींन लवतौ, पनहारी ने नईं चीन पावतौ। विचारे नें कछू जुआब नईं दऔ। सूदौ ससरारै घरै पौंच गवौ सौ साराज ने चींन कै पांव परकै मड़ा में बैठार लऔ। पछाई से बिन्नू खेप लैकें आई सो भौजाई मुसक्यात कनलई संगई चलीं आऊतीं नन्द बोली का कै रईं भौजी। भौजी बोली काय कौ छिना घंघोटे बताउत। मड़ा में बैठे देखकैं तुरतईं जान गई। हमाय राजा इत्ते समर गये, जबई आवे मो ताँय घूर-घूर कै हेर रयते। मो सै भौतई गल्ती हो गयी। रात कैं बियारी करकैं सब जनें सो गये लाला जू खौं बैठका में स्वा दऔ। जैसई आदीरात भई सो बिन्नू तैयार हो कैं पौंची सो उननें किवार लगा लये सो विचारी बोली-

''1. अनजाने की भूल कौ, तुमने करौ निरधार।
कुअला बात बिसार कैं, खो लौ बजर किवार ।।
2. हल्के से राजा हते जब, तुमें छोड़ कैं आय।
धोके सैंकछू कै दई, जबै चीन नईं पाय।।''

लाला जू तौ गुस्सयाने हते तो उननें बैड़ा और लगा लऔ।

बिचारी रोउन लगी, नई माने सो किवारन सैं मूँड मारन लगी। सब देखकैं उनने किवार खोल दये। दोई प्रानी ऐसे मिले जैसें दूद में पानी मिल जात। भुन्सरा लाला जू का कलेवा भऔ, सो उननें सारज सैं सब कै दई ''भूली ताय बिसार दो, आगे की सुद लेव''

सारज समझदार हती, बिन्नू की विदा होने लगी, लाला जू खौं सास ससुर सारे साराज ने पिछाई की बातन की छिमा माँग कैं संगै पौंचा दऔ।

दोई जनें घरै आये सो प्रेम सैं रन लगे। बऊ सास ससुर की सेवा करन रगी। बीमार सास ठीक होन लगी सो बऊ खौं आशीष देन लगी-

''दूदन नहाओ पूतन फलौ''

भगवान की किरपा सैं दो बिरिछा हो गये घर में, सबखौं आनन्दी भई। सास कैं एक हल्कौ लरका उर बिटिया हती सो बऊ खां सौंप दये। मुलक दिना हो गये सो सास की तबियत बिगरन लगी सो हल्के मौड़ा खों बुलाकें बऊ सै कन लई-

छोटो मौरौ लाड़लो, सौंपत हौं अब तोय।
धियान राखिये आज सैं, कै ना पावै कोय।।

इत्ती कै कैं मताई ऊपर चली गई। सब जनैं रोउन डीफन लगै। सास के जाय सैं ससुर बेहाश हो गये। वैदन खौ बुलाव अकेलें वे बच नईं पाय। दोई जनन की अरथी संगै बनी। सब संस्कार भये। रिश्तेदार ने समझाव, फिर अपने-अपने घरै चले गये।

पति पत्नी पर वारकौ पालन पोसन करन लगे। बाल बच्चे लग गये, देवर, ननद हल्के-हल्के हते। सयाने घर में कोई नई हतो। काम-करत में कबहु-कबहु दोई जने आपुस में तू-तू मैं-मैं करन लगे। एक दिना गुस्सा में घरवारे ने घरवारी खौं मार दऔ। सो ऊनें ऐंगर की परौसनन खौं टेर कैं अपनी कनियाँ बतावौ शुरू कर दऔं...

''आज बलम नैं मोखौं, ऐसौ मारौ री जिज। आज. ...
मैं ना कछु बोली चाली, ना बिगरौ कछु काम।
पकर हतुलिया बायरैं फैंको, खूब परौ तौ घाम।
मोखौं मारौ री जिजी...
पैलैं मारी थौल थपरिया, दूजै मारी ईंट।
एक घमूकौ ऐसो मारौ, झन्ना गई मोयी पींट।
मोखौं मारौ जिजी. ...''
मौड़ी मौड़ा भूँके रोवे, मोय उठी ती खुंश।
एक जौ मन में ऐसी आवै, माँय बरै जो मुंश।।
मोखौं मारौ जी जिजी..
आज बलम नैं मोखौं ऐसौ मारौ री जिजी।।

मुहल्ला की सब्रीं जनीं घरवारें खौं भुक्यावन लगीं। भौतई चर्राटो बता रऔ। खबर है तैं तनक सो हतौ तब सें तोय नाव लै कैं ढरी। का तैईं आ अनोखौ घरबाव है। सारे फिर कैं छोड़ कैं चली जै सो मरत फिरै। जनियन की बातें सुन कैं बौ कन लऔ, ईकी पिच्च तौ सब जनीं लै रईं, मोयी सोची काउ नें, मैं रोजई विष के घूंट पीकैं रै जात। तनक इनकी करतूत तौ सुनौ...

मोरी काकी भौजी सुनियो बात।
मैं तौ मरोजात आफत सैं, तनक नईं गम खात।
होत भुन्सरां बैला लैंके पसर चराबे जावैं।
उतई बखरनी जांगा जोतत, आँखैं फूटी जावैं।
हारै खेतै खुद ना जावै, मोड़ा खौं पौंचात।
मैं तौ मरौ जात आफत में तनक नई. ..
भूँकौ प्यासौ काम करत हौं जा मस्तानी फिर कै।
रौनी खारी दार बनाबै, तनकई कय सैं लरवै।
रोटी कण्डा जैसे थोपे, मन ही मन गुर्रात।
मैं तो मरौ जात. ...
आठ दिना तक बोली नईयां, गप्पै मारै है बेठी।
इतर टपक रये बारन में से, जा चैटी रत ऐंठी।।
गम्मा खात की हद्द होत है, दाँती करतई रात।
मैं तौ मरौ जात आफत में जा तनक नईं गम खात।।

घरवारे की बांते सुनकै सब जनीं अपने-अपने घरै चली गईं। घरवारी घुन्नानी बैठी रई। मौड़ी मौड़ा ओई खों घेरे बैठे। घरवारौ परेशान होकैं मनाउन लगौ अब ना मारौ गुस्सा में धियान नई रात। मोय भूँक लगी, दिन भरकौ भूँकौ हौं। बाल बच्चे फिलफिलात फिर रये सो...

''उठौ धना काम करौ, मोव तुमें कौल ।
लपटा बनाई लेव, फुरकबे कौ डोल''

घरबाव कन लव, ''कुल-कुलवाती, चना चबाती'' सुनकैं घरवारी उठी मुसक्यात घर में घुस गई। मौड़ी-मौड़ा उयै पछया कैं चले गये। सो कन लव, सबरी लड़ेर मताई तायँ हो जात में

अकेलौ रै जात। मोव कोऊ नईयां। लड़ेर में सोव कछु नईं लगत। जौ मौड़ा तो मो तायँ हेरतई नइयां, मताई खाँ घेरें फिरत। घरवाई कन लगी लरका तौ मोवअई आय चाय जी सैं पूँछ लो, बौ कन लवौ बुलाई तौ लै तोई भरी कड़ जाये। सुनकैं बा जनी मांसन खौं बुलाकैं बोली-

आव मोरी बैना बैठो अँगन में, जौ झगड़ा निपटाव।
पिया कौ लाल कैसैं कहाव।।
मोरी जिज्जी कष्टा हमनें उठाव। पिया कौ. ...
आव मोरी काकी बैठौ आँगन में,
जौ झगड़ा निपटाव। पिया कौ लाल. ...

परोसनें दोई जननं खौं समझा कैं चलीं जातीं बेरां कै गई आपस में लरबौ ठीक नई होत, बाल बच्चन पै बुरऔ असर परत, रनैं तो एकई संगै है। ई सैं पुरखन कौ कैवो मानो। ''लरबौ देय राम बिछउवौ ने देयं'' दोई आदमियन की तकरार जिन्दगी भर होंत रई। देवर कौ बियाव हो गऔ, है सो देवरानी आ कैं और रोउत फिरत। जौ देखकैं घरवारी बोली तुमसे बड़कैं तुमाव हल्कौ भैया हो गऔ। काल देवरानी पड़ोसन बैन सै कैरईती-

''तुम सुनौ परोसन गुइयांरी, मोय मिले शराबी सइयां।''
पउआ अद्दा रोज लगावैं।
बोतल दुका-दुका कै ल्यावैं।
मो से उल्टी सूदी कावैं।
पी कै नरदा में गिर मौ जावैं।।
टाँग उठा कैं कुत्ता मूतैं, देखें लोग लुगइयां। तुम सुनो. ...

देवर कौ जौ हाल देखकैं तो मोई समज में कछू नईं आ रऔ। इनके संगै हम बरवाद भये जा रये। काल के दिना मौड़ी मौड़ा स्याने भये जात सो उनकों बियाव-चलाव करनें। कैसें का हुइयै?

ई सैं मौयी बात पै ध्यान देऔ, अबै कछू नई बिगरौ दो जनें बैठार कैं हैंसा बाँट करलो काय सैं कै...

सौंजई में सुख नइयां स्वामी, कै रई पर-पर पइयां।
देवर हो गये मन के राजा।
तुम पै थूँकै सकल समाजा।
तुम सो मो पै हौ नाराजा।।
जैसें कोउ-कोउ सुआ पढ़ावत, तैसई पढ़ा लये सइयां।
सौजंई में सुख नइयां राजा...

घरवारी की बातें सुन कै कन लऔं बौ मोव सगौ भइया आय। आज नई तौ कल सुदरई जै। ईखौं मताई तुमाई ओली में सौंप कैं मर गइती। कजन्त न्यारे होजै तो इनकौ हाल का हुइयै, संगै-सगैं बैन स्यानी हो रई ऊ कौ बियाव कैसें हो पाय। ई सैं मन लगा कै काम करौ। बैन पै ध्यान दो कजन्त कछू उल्टौ सूदौ हो जै तो मरत फिरैं। घरवारी कान लई, जा तौ मैं भूलई गईती। सबरै काम धन्धौ छोड़ कै नन्द खौं ठौर ठिकानौ देखो...

''पिया चूले में जान दो कमाई खाँ।
दूला ढूँढ़ौ नन्द बाई खाँ।।
दिन दिन होवत जात स्यानी।
आगैं ठाढ़ी हँसै गिरानी।
बिरतिया बामन संग जाऔ सगाई खाँ। दूला ढूँढौ
पिया चूलें में जान दो कमाई खाँ। दूला....

घरवारी की बात मानकै, गाँवन-गाँवन जाकैं नौनों घर वर देखकैं बैन के हात पीरे कर दये। अब भइया के लानें बोली इयै सुदार लो नईंतर मैं फिर सैं भग जैंव-सुनकै घरवारौ ऐंड़या कैं बोलौ, जबकी बात दूसरी हती, मैं हल्कौ हतौ, अब सौ ...

सब जनन खौं मोई हाथ जोर कैं राम-राम।

- प्रभाकर साहित्य निकेतन
पृथ्वीपुर, निवाड़ी (म.प्र.), मो. 9981943813

चौकड़ियाँ

-आचार्य भगवत दुबे

भैया कैंसे होय किसानी, खाद मिलै नइँ पानी
बीज, कीटनाशक नइँ मिल रये, याद आउत है नानी
योजनाओं कौ पिटत ढिढ़ोरौ, मिलै न कौड़ी कानी
'भगवत' नेताओं की गप्पें,लग रइँ हैं बचकानी

फिर रये पशु-पंछी भैराने, मिलैं न दुनके दाने
चीतल सिंह बाघ रीछों के, उजड़े ठौर ठिकाने
कौआ बगला गीद धरा से, जाने कहाँ बिलाने
'भगवत' जीवजन्तु पशु-पंछी, अपने मित्र पुराने

छोड़ौ आस नौकरी बारी, मानौ कही हमारी
कर लो खुद कौ धंधौ-पानी, लोन मिलत सरकारी
मुर्गी भैंस, बकरियां पालौ, होत मुनाफा भारी
छोड़ौ लाज करौ अब 'भगवत', धंधों की तैयारी

सब खों भा रओ इज्जतघर है, पकरी नई डगर है
बने देश भर में शौचालय, अब दिख रओ असर है
अब बाहर निस्तार नकरियौ, कइ की बुरी नजर है
'भगवत' उन्नति करन लगो अब, अपनो गाँव शहर है

कोंख में जिन मारौ बिटियन खो, समझा दो बुढ़ियन खों
जा कलियों की बौल बढ़न देव, महकैहै बगियन खों
मौड़ा अनब्याहे रै जैहें, गर मारो मोड़िन खों
'भगवत' दोनऊ कुल खें तारैं, पढ़ा लेव बिटियन खों

-शिवार्थ, जसूजा सिटी पो. गढ़ा, जबलपुर (म.प्र.), 472003
मोबा.-9300613975, 9691784464

बुंदेली लोकगीतों में गाँधी

– डॉ. अन्नपूर्णा सिसोदिया

लोकगीत, भारतीय लोक-संस्कृति की आत्मा हैं और भारत जब अपनी आजादी की लड़ाई लड़ रहा था तो ऐसे में ये लोकगीत इससे अछूते कैसे रह सकते थे। महात्मा गाँधी इस आजादी की लड़ाई के महानायक थे अतः में यह बात प्रसिद्ध थी कि गाँधी वह उद्धारक हैं, जो अपने अंहिसा के हथियार से अंग्रेजी सरकार को हरा कर आजादी दिलाएंगे। लोकगीतों में गाँधी, चरखा और सुराज की बातों ने उन्हें जनमानस से जोड़ कर जनप्रिय बनाया। गुजरात और दिल्ली से दूर भारत के लोकजीवन में, गाँव - गाँव और घर-घर में गाँधी जी को पहुँचाने में लोकगीतों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। बुंदेलखंड का लोकांचल भी गाँधी जी के इस जादुई प्रभाव से अछूता नहीं रहा। बुंदेली लोकगीतों में धोती और लंगोटी वाले गाँधी बापू के सत्य और अहिंसा वाले हथियारों से अंग्रेजी सरकार को हराने की कहानियाँ बड़े उत्साह से उकेरी गई -

''बिना तमंचा और तलवार, कर दओ अंगरेजन पे बार मानने परी उने तो हार, सत्य, अहिंसा के हथियारन से, कर दओ काम तमाम रघुपति राघव राजा राम, धोती और लंगोटी बारे बापू को परनाम।''

हमारे देश के महापुरुषों के विषय में जितना इतिहास की किताबों में लिखा गया है, लोकजीवन में और लोकगीतों में उससे तनिक भी कम नहीं हैं। यह कहना यहाँ आवश्यक नहीं कि इस लोक चेतना में सर्वाधिक किस्से गाँधी बाबा को लेकर हैं लोकांचलों में गाँधी जी को चमत्कारी शक्तियों का स्वामी माना जाता था। इससे संबंधित कुछ रोचक बातों का उल्लेख लोकगीतों के रूप में सुनने को मिलता है कि ये चमत्कारी शक्तियाँ ही गाँधी को महात्मा बनाती हैं। इन लोकगीतों में महात्मा गांधी को अवतार मानकर उनकी तुलना राम और कृष्ण से की गई है। इस बुन्देलखण्डी लोकगीत में इसी प्रकार का आशय व्यक्त किया गया है -

''करनी मोहन हो कथनी कहाँ लो होई ,
मोहन भये कलिकाल में, इधर गाँधी अवतार रे
गाँधी हते सो मर गए ,देस विदेसन नाम,
हत्यारों मराठा गोडसे ,,जी ने लै लाये प्राण रे
गाँधी जी के हो गये नाम ,जैसे भये राम,कृष्ण के
गाँधी जी को दओ सम्मान ,देस ने राष्ट्रपिता कह के।''

यमुना और बेतवा नदियों के बीच स्थित हमीरपुर जिला बुन्देलखण्डी संस्कृति के साथ स्वाधीनता सैनानियों की गतिविधियों का सक्रिय केंद्र रहा सन् 1920 के स्वदेशी आन्दोलन बाद इस क्षेत्र में गाए जाने वाले इस गीत में महात्मा गाँधी और शौकत अली के माध्यम से हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल डाला गया है द्य इसी भाव को केन्द्रित करते हुए स्वदेशी आन्दोलन के महत्त्व को इस गीत के माध्यम से प्रतिपादित किया गया है-

''सब कोऊ गाढ़ा पैरो भाई, जासो होय भलाई,
घर-घर रांटा चरखा धर लेव, बनवा लेव नटाई,
छोड़ देव इजलास तसीली, उर दीवानी भाई.
सौकत अली और गाँधी ने सबका देवो जगाई,
दुःख खुमान अब अपनी ऊजत किस्मत देत दिखाई।''

स्वाधीनता संग्राम और गाँधी जी के सुराजी आंदोलन के उस समय में समस्त भारत तो गांधीमय था ही साथ में गीत, कविता, कला, रंगमंच, फिल्म, संगीत, लोकगीत और लोकजीवन में प्रचलित लोक कथाएँ आदि जनजीवन का कोई भी क्षेत्र गाँधी जी के प्रभाव से अछूता नहीं रहा। यही कारण था कि गाँधी लोकजीवन में रचबस गए और गाँधी की उपस्थिति किसी-न-किसी रूप में बनी रही, उन्हीं दिनों जनमन को प्रतिध्वनित करने वाला यह लोकगीत भी सर्वत्र गूंजा था-

''काहे पे आवें बीर जवाहर, काहे पे गांधी महराज?
काहे पे आवें भारत माता, काहे पे आवे सुराज ?''

लोक चित्त ने ही इसका उत्तर भी दिया था-

घोड़े पे आवें बीर जवाहर, पैदल गांधी महराज।
हाथी पे आवें भारत माता डोली पे आवे सुराज।''

इस लोकगीत में देश का वह सामूहिक अवचेतन व्यक्त हुआ है जिसने पारंपरिक रूप से एक ओर यदि राजा को सम्मान दिया था तो दूसरी ओर ऋषि, संत या फकीर को उससे भी बड़े सम्मान का अधिकारी माना और गाँधी जी तो वह फकीर थे, जो अंग्रेज़ी सरकार को परास्त कर सुराज लाने हेतु संकल्पित थे। भारतीय लोकांचल में खादी, चरखा वाले बापू इसीलिए सबके प्यारे बने -

''बापू खादी चरखा बारे, रहे सबही के प्यारे।''

सत्याग्रह हो, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार या भारत छोड़ो आंदोलन गाँधी जी का हर कदम बुंदेलखंड के लोकगीतों में जनता की आवाज बन मुखर हुआ-

''ऐसे भए देस प्रेमी नातो सबसे जोरो
भारत हमारो प्यारो चले जाओ छोड़ो
जन-जन के कष्ट मिटा गए, महात्मा गाँधी नारो लगा गए।''

अंग्रेजों ने भारत के गाँव -गाँव में फैले कुटीर उद्योगों को नष्ट कर दिया था। गाँधी जी का मानना था कि देश को सम्रद्ध और शक्तिशाली बनाना है, तो देश की अर्थव्यवस्था मजबूत करना आवश्यक है7 गाँधी जी ने इसके लिए कुटीर उद्योगों को फिर से स्थापित करने पर बल दिया। इसी क्रम में 1920में बुंदेलखंड के बेलाताल में खादी केंद्र की स्थापना की केंद्र खोलने के लिए महत्मा गांधी,अपने सहयोगी जे. बी. कृपलानी , प. जवाहर लाल नेहरू के साथ यहाँ आये थे । केंद्र के पहले दिन की खादी की बिक्री के केश मेमो खुद गांधी जी के हस्ताक्षरों से खरीददारों को दिए गए थे । इस केंद्र की स्थापना से क्षेत्र के अनेक लोगों को रोजगार मिला। खादी, चरखा और गाँधी जी का यह नाता बुंदेली लोकगीतों में भी उभर कर आया है-

''देखो टूटे न चरखा को तार चरखवा चालू रहे
गाँधी महात्मा दूल्हा बन गए, दुल्हन बनी सरकार ।''

यहाँ गाँधी महात्मा के दूल्हा बनने से आशय उनका स्वाधीनता संग्राम के नायक होने से है, जिसके समक्ष अंग्रेज सरकार दुल्हन के समान नतमस्तक है।

'बापू' हमारे प्रिय राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की हत्या से भारतीय जनमानस को गहरा आघात लगा, ऐसा प्रतीत हुआ मानो भारतीय जनता के सर से उनके बड़े का हाथ उठ गया, यह दुख लोकगीतों में भी अपनी सम्पूर्ण वेदना के साथ प्रस्फुटित हुआ हैद्य गाँधी जी की शहादत पर संपूर्ण बुंदेलखंड कराह उठा था, इस कराह के भाव यहाँ के गीतों में देखने को मिलते हैं''

''किस विध कहिए हितु हमारे तुम नैनन के तारे थे
उजियारे थे सरद चंद्र से, सारे जग को प्यारे थे।''

भरे मन और सजल नयनों से अपने प्रिय बापू को विदाई देते करुण हृदयों से यही आवाज आती कि-

''आजादी को तोफा दे गए सकल मुसीबत टारी
अंत समय हरि नाम कहे तुम सुरपुर गए सिधारे।''

- 37, पार्क के पास, लेकसिटी कालोनी, अशोकनगर (म. प्र)

जॉन लैंग द्वारा बिठूर और झांसी का प्रथम दृष्टया वर्णन

- राकेश व्यास

जान लैंग द्वारा सन 1859 में लिखित पुस्तक ''वांडरिंग्स इन इंडिया'' में उसकी 'नाना साहब' से बिठूर में और रानी लक्ष्मी बाई से झांसी में हुई मुलाकातों का विस्तृत वर्णन है। पुस्तक के अंत में एक पूरा अध्याय तात्या टोपे को समर्पित है। लेखक की पृष्ठभूमि को जाने बिना उसके लेखन का सही आकलन कठिन है और इसीलिये यह जान लेना आवश्यक है कि जान लैंग कौन था? जान लैंग यूं तो एक बैरिस्टर के रूप में सन 1842 में भारत आया था पर उसकी वकालत से कहीं अधिक उसे एक लेखक के रूप में जाना जाता है। वह मूल रूप से आस्ट्रेलिया के वर्तमान शहर सिडनी के एक उपनगर पैरामेटा का रहने वाला था, जहां उसके पितामह चोरी के आरोप में ब्रिटेन से निष्कासित होनेके बाद रहने लगे थे। उस समय वर्तमान आस्ट्रेलियाब्रिटेन की एक 'पीनलकोलोनी' हुआ करता था, जहां इंगलैंड से निष्कासित अपराधियों को भेज दिया जाता था। हत्या जैसे बड़े अपराध करने वाले तो जेल में रहते थे पर चोरी जैसे अपराध करने वालों को खुला छोड़ दिया जाता था। यहीं जान लैंग का जन्म सन 1816 को हुआ था। अपनी आरम्भिक शिक्षा सिडनीग्रामर स्कूल से पूरी करने के बाद वह वकालत की पढ़ाई के लिये सन 1837 में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय आ गया, जहां से वह सन 1841 में बैरिस्टर बन कर आस्ट्रेलिया वापस लौट आया। जान लैंग एक चतुर, तिकड़मी, अति महत्वाकांक्षी, साहसी परहठी व्यक्ति था। वह आरम्भ से ही अपनी एक अलग पहचान और सम्माननीय स्थान बनाने के लिये पत्रकारिता या वकालत को व्यवसाय के रूप में अपनाना चाहता था। सिडनी का शान्तिपूर्ण जीवन उसे रास नहीं आया और उसका हठी स्वभाव भी उसके वहां सफ़ल वकील बनने में आड़े आया। वह सन 1842 में अपने एक चचेरे भाई के पास कोलकाता (तत्कालीन कलकत्ता) आ गया, जहां उसका वकालत का स्थापित काम था। उसके भाई ने भी उसे अपने यहां काम दे दिया पर यहां आने पर लैंग को स्वयं के लिये अन्य वैभवपूर्णक्षितिज दिखने लगे। अगले 6 माह में उसने फारसी और हिन्दी भाषाओं पर अधिकार प्राप्त कर लिया और वह स्थानीय राजाओं, नवाबों और धनाढ्य लोगों के बीच उठने बैठने लगा। इसी समय में उसने अपने लेखन कार्य को आगे बढ़ाया और वह व्यंग, कहानी और यात्रा वृतान्त लिखने लगा। 1845 में उसने 'मुफ़स्सिलाइट' नामक एक पत्रिका का सम्पादन प्रारम्भ किया। इसमें व्यंग, उच्च वर्ग के रंगीन समाचार और अंग्रजों की गलत नीतियों को प्रधानता से छापा जाता था। बीच-बीच में लैंग वकालत में भी हाथ आजमा लेता था।

इसी सन्दर्भ में उसकी सबसे बड़ी सफलता सन 1851 में आई, जब उसने जोती प्रसाद नामक एक व्यवसायी का अंग्रेजी सरकार के खिलाफ मुकदमा जीता। जोती प्रसाद ने अंग्रेजों को सिख युद्ध के दौरान सामग्री आपूर्ति का ठेका लिया था। अंग्रेजों ने जोती प्रसाद पर घपले का आरोप लगाते हुए, उसे भुगतान करने से मना कर दिया। जोती प्रसाद ने अपना मुकदमा जान लैंग को सौंप दिया और जिस चतुराई से उसने यह मुकदमा लड़ा और जीता वैसा कभी ब्रिटिश ट्रिब्यूनल के सामने नहीं हुआ था। ईस्ट इंडिया कम्पनी को पूरा पैसा जोती प्रसाद को देना पड़ा। इस जीत से प्रसन्न होकर जोती प्रसाद ने लैंग को धन और उपहार से मालामाल कर दिया। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बदला लेने की भावना से उसे 'मुफ़स्सिलाइट' में छपे एक राज-विरोधी वक्तव्य को आधार बना कर दो माह के लिये जेल भेज दिया। इस मुकदमे के बाद जब वह आगरा में रह रहा था तब रानी लक्ष्मी बाई ने उसे अपना पक्ष रखने के लिये झांसी बुलाया था। उसका विवरण बाद में 1854 के बाद के पाँच वर्ष लैंग लंदन में रहा और उसने वहां अनेक पुस्तकें लिखीं। पर इस अनुपस्थिति के कारण वह 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम का गवाह बनने से वंचित रह गया। सन 1859 में वह भारत लौट आया और इसी वर्ष उसकी पुस्तक वांडरिंग्स इन इंडिया छपी। दोनों पक्षों के उसके मित्र इस बीच में हुए प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की बलि वेदी पर न्यौछावर हो चुके थे। निराश लैंग ने कोलकाता छोड़ कर मसूरी को अपना निवास स्थान बनाया और लेखन कार्य पर ध्यान दिया। यहीं 47 वर्ष की अल्पायु में उसका देहान्त हो गया। जान लैंग को गुमनामी से निकालने का श्रेय प्रसिद्ध लेखक रस्किनबांड को जाता है, जिन्होंने सन 1964 में लैंग की कब्र की खोज मसूरी की 'क्रिश्चिअन सेमेटरी' में की।

लैंग ने अपनी बिठूर और झांसी यात्रा का वृतान्त अत्यन्त रोचक शैली में लिखा है, जिसे पहली बार हिन्दी भाषा भाषियों तक इस लेख के माध्यम से पहुंचाया जा रहा है। प्रथम दृष्टया होने के कारण यह विवरण प्रामाणिक होने के साथ-साथ इसमें वर्णित स्थानों और व्यक्तियों की जीवन शैली,तात्कालिक व्यवहार और विचारों पर प्रकाश डालता है। प्रत्येक स्थान और व्यक्ति का विशदविवरण होने के कारण पूरा अनुवाद न करके केवल सार दिया जा रहा है पर अत्यन्त रोचक प्रकरणों का शब्दशः अनुवाद उद्धरण चिन्हों के साथ दिया जा रहा है। इन यात्रा विवरणों से यह भी पता चलता है कि उस समय के अंग्रेज शासन में घूस, बेईमानी, झूठ, मक्कारी व्याप्त थी। अनेक ब्रिटिश और यूरोपीय नागरिक अपने आपको गवर्नर जनरल, गवर्निंग कौंसिल या महारानी का करीबी बता कर हिन्दुस्तान के राजाओं को ठगा करते थे। उन्नीसवीं सदी के अन्त और बीसवीं सदी के आरम्भ में यह प्रवृति और भी अधिक बढ़ गई थी और पालिटिकल एजेन्ट, रीजेन्ट, गवर्नर आदि अफसर राजाओं और उनके जागीरदारों से बेहिसाब घूस लेते थे (सन्दर्भ-राजपूताना का अपूर्व इतिहास, कृष्ण सिंह बारहठ)।

बिठूर प्रवास और नाना साहब से भेंट (सन 1849) अवध में लगभग 6 माह का समय व्यतीत करने और हिन्दुस्तानी व फारसी भाषाओं पर और भी अधिक निपुणता हासिल करने के बाद, सन 1849 के आसपास लैंग लखनऊ से बिठूर के लिये रवाना हुआ। इस बीच उसने अपने परिचित लोगों से नाना साहब के नाम अनुशंसा पत्र ले लिये थे। ऐसे पत्र लैंग के अनुसार इतने अतिशयोक्ति पूर्णहोते थे कि उसके मेजबान उसे किसी 'रायल्टी' या ब्रिटिश राजपरिवार से सम्बन्धित व्यक्ति समझते थे। ऐसे पत्रों को झूठा जानते हुए भी उसे आतिथ्य सत्कार अच्छा लगता था। उसके अपने शब्दों में मेरे लखनऊ से प्रस्थान से पूर्व एक पत्र नाना साहब को भेज दिया गया था, जिसमें लिखा गया था कि 'आपके पास आने वाले महानुभाव गवर्नर जनरल के करीबी मित्र हैं और जन्म या

वैवाहिक बन्धन के द्वारा कोलकाता में स्थित गवर्निंग कौन्सिल के सदस्यों के सम्बन्धी हैं। वे महारानी विक्टोरिया के स्थायी मेहमान हैं जो वर्तमान में वेश में घूम रहे हैं। वे महाराजा बहादुर के दरबार को अपनी उपस्थिति से गौरवान्वित करेंगे और आशा की जाती है कि उनका समुचित आदर-सत्कार किया जायेगा'। मुंशी ने जब यह पत्र मुझे पढ़ कर सुनाया, तो मैंने इस में लिखे गये तथ्यों के विषय में सविनय आपत्ति की, जिसका मेरे लखनऊ के मित्रों ने मुझे समझा कर निराकरण कर दिया÷।

लैंग की लखनऊ से बिठूर की 45 मील (72 कि.मी.) की यात्रा के लिये 15 घुड़सवार उसके साथ कर दिये गये क्योंकि उस समय यह क्षेत्र डकैतों के आतंक से ग्रसित था। प्रातःकाल बिठूर से एक मील पहले उसका स्वागत महाराजा पेशवा बहादुर के सैनिक प्रतिनिधि द्वारा किया गया। यहां से नाना साहब के चार घुड़सवार और आठ पैदल सैनिक पालकी के साथ हो गये। महाराजा बहादुर के निवास स्थान पर लैंग का स्वागत नाना साहब(नाना साहब का असली नाम धूंधूपंत था और वे बाजी राव द्वितीय के दत्तक पुत्र थे। अंग्रेजों द्वारा बसइं की सन्धि के बाद बाजी राव को बिठूर विस्थापित कर दिया गया था। उस समय नाना भी उनके साथ बिठूर आ गये थे। बाजी राव द्वितीय की मृत्यु के बाद अंग्रेज सरकार ने उनकी सम्पत्ति पर तो नाना साहब का हक माना पर उनकी 8 लाख प्रति वर्ष की पेंशन बन्द कर दी थी जिसे वापस पाने के प्रयास नाना फिर भी कर रहे थे।) के मुसाहिबों ने किया और उसे ठहरने के स्थान तक ले गये। वहां पर उसकी सेवा के लिये एक परिचारक, एक खानसामा और तीन अन्य नौकर पहले से उपस्थित थे। वहां उसे बताया गया कि उसके लिये ठंडा पानी और हर प्रकार का इंगलिश मद्य पदार्थ (ब्रांडी, जिन, शेम्पेन, क्लेरेट, शेरी, पोर्ट, बीअर, चेरी ब्रांडी और सोडा आदि) उपलब्ध है। खानसामा ने बताया कि उसके भोजन हेतु हर प्रकार का मांस उपलब्ध है। उसने भोजन में केवल चावल और सब्जियां खाने की इच्छा व्यक्त की, जिसका प्रबन्ध करने के लिये खानसामा रसोई की ओर चला गया और परिचारकों ने उसे रहने का स्थान और स्नान गृह आदि दिखाये।'साहब लोगों' के लिये बिठूर में दो कमरों का एक नियत स्थान था जो अब मेरा आश्रय स्थल था।

घर व कमरे की भारतीय साज-सज्जा के बारे में लैंग के विचार उसी के शब्दों में ''यूरोपीय फर्नीचर को सजाने की भारतीय विधि विचित्र और अनोखी है। एक यूरोपीय के घर में नौकरों को टेबल, कुर्सी, पलंग आदि की व्यवस्था का ज्ञान होता है पर हिन्दुस्तानी रईस या राजा के यहां बैठक में हाथ धोने का स्टैंड, खाने-पीने के बर्तन, दराजों वाली अलमारी या सौंदर्य प्रसाधन की टेबल मिल जायेगी। इसी प्रकार शयनगृह में एक पुराना पिआनो या बाजा और ताश खेलने की टेबल रखी मिलेगी। यह अधिकतर फर्नीचर अफसरों द्वारा बेचा गया पुराना सामान होता है।'' विशिष्ट और सस्ते समान को किस प्रकार एक साथ रख दिया जाता है, उसका वर्णन करते हुए लैंग लिखता है ''टेन्ट या कैम्प में रखे जाने वाले स्टूल के साथ उसी कमरे में संगमरमर की टेबल और बेलबूटेदार रेशमी कपड़े से मढ़ी कीमती आराम कुर्सी भी रखी मिल जायेगी। सजावट के स्थान पर एक शानदार घड़ी के साथ दो कौड़ी के जापानी मोमबत्ती स्टैंड रख दिये जायेंगे। दीवार पर चित्रों को सजाने का ढंग भी विचित्र है;लैंडसीअर की मौलिक पेंटिंग 'बोल्टनअब्बी' या 'हाकिंग' के साथ ड्यूकऔफवेलिंगटन या नेपोलिअन की सस्ती तस्वीरें लगा दी जायेंगीं। सस्ते चित्र कहीं से भी खरीद लिये जाते हैं और इसी कारण नाचती हुई औरतों की तस्वीरें दुर्लभ उत्कीर्णन किये गये चित्रों के बीच में मिल जाती है। फोरेस के खेल उपकरण शास्त्रीय विषय की दुर्लभ पुस्तकों, संगीत उपकरणों, अति विशिष्ट चीनी के बर्तनों या सुंदर चाय और शक्करदानियों के बीच टाट में मखमल के पैबन्द की भांति रखे मिल जायेंगे। सस्ते कांच के गिलास 'महोगनी' की बेहद शानदार टेबल पर रखे मिलेंगे।''

एक बीस फुट लम्बी डिनरटेबल पर लैंग को खाना परोसा गया जिसमें सूप, पुलाव, सब्जियां और पुडिंग अलग-अलग प्रकार के बेमेल बर्तनों में परसी गई। अपने लेखन में लैंग ने इसका खूब मजाक उड़ाया है। उसने लिखा है कि उसे बीअर अमरीकी मग्गे में और क्लेरेट शैम्पेन पीने के गिलास में परोसी गई। सुबह से भूखा होने के कारण उसने भरपेट खाना खाया। अन्ततः रात्रि 8 बजे एक मुंशी समाचार लाया कि क्या अब वह महाराजा से मिलना चाहेगा? उसके प्रसन्नतापूर्वक आमन्त्रण स्वीकार कर लेने पर मुंशी उसे अनेक गलियारों से होता हुआ नाना साहब के कक्ष तक ले गया। आगे का वर्णन लैंग की व्यंगात्मक शैली में इस प्रकार है

महाराजा तुर्की के बने हुए एक शानदार गलीचे पर मसनद का सहारा लिये हुए बैठे थे, उनके पास उनका हुक्का, तलवार और सूंघने के लिये फूलों का गुच्छा रखा हुआ था। मुझे आता देख वे अपने स्थान से उठे, मेरा स्वागत किया और हाथ पकड़ कर मुझे एक बांस की कुर्सी तक ले गये जो मेरे आराम से बैठने के लिये वहां रखी गई थी। परस्पर अभिवादन के बाद महाराजा ने पूछा कि आपने भोजन तो भली प्रकार से किया है। यहां आप लोग जानना चाहेंगे कि ऐसे अवसर पर सामान्य व्यवहार कैसा होता है। उसका उदाहरण निम्नानुसार है-

स्थानीय राजा. ''आप स्वनामधन्य हैं और आपके चर्चे सारे संसार में गूंज रहे हैं।''

विनम्र साहब. महाराजा आप धन्य हैं।ज्ज

राजा. ''कलकत्ता से काबुल तक सारा हिन्दुस्तान, सभी जुबानें आपको अद्वितीय कहतीं हैं। क्या यह सही नहीं है?''

साहब. (प्रत्येक साहब जो हिन्दुस्तानी आचार-व्यवहार से परिचित है, जानता है कि उसे मेजबान की बात का खंडन न करके आनन्दपूर्वक इस प्रशंसा का आस्वादन करना चाहिये) महाराज।''

राजा. ''आपकी प्रतीति अद्भुत रूप से तीव्र है और आपकी बुद्धि विवेकपूर्ण है जिसे सारा संसार जानता है। वह सूर्य के समान दैदीप्यमान है।'' राजा ऐसे में अपने चारों और एकत्रित लोगों की और देख कर प्रश्न करते हैं, ''यह सच है या नहीं?''

सभी उपस्थित लोग राजा की बात को सच बताते हैं और कहते हैं कि सच के अलावा कुछ और कहना राजा के लिये कहां सम्भव है।

राजा. ''साहब के पिता श्री तो जीवित हैं न?''

साहब. ''नहीं महाराज, वे दिवंगत हो चुके हैं।''

राजा. ''वे महान व्यक्ति थे।''

साहब. ''महाराजा ने मेरे दिवंगत पिता श्री की याद को महिमा मंडित किया है और मेरे हृदय में उनके प्रति आदर भाव को और बढ़ा दिया है।''

राजा. ''और आपकी माता श्री? वे तो जीवित हैं?''

साहब. ''ईश्वर की कृपा से यह सत्य है।''
राजा. ''वे अति उदार स्त्री होंगीं''?
साहब. ''इस विषय पर मैं क्या कहूं, महाराज''।
राजा. ''आपके कहने की आवश्यकता नहीं, आपके चेहरे को देख कर ही पता पड़ जाता है। मैं उनके एक दर्शन के लिये करोड़ों रुपये दे सकता हूं ताकि उन्हें बता सकूं कि उनका पुत्र कितना बुद्धिशाली और प्रतिभावान है। मैं अगले वर्ष इंगलैंड जा रहा हूं, तो क्या साहब उनका पता मुझे बतायेंगे''।
साहब. ''महाराज।''
इस समय पर राजा अपने मुंशी को कलम, दवात और कागज़ लाने को कहते हैं। कथित सामान लाकर मुंशी मुझे प्रश्नवाचक नजरों से देखता है। मैं अन्दर ही अन्दर हंसते हुए कुछ इस प्रकार पता लिखवाता हूं लेडीबोम्बाज़ीन, मुन्नीमुन्ट का ऊपर, पिक्काडिल्ली में, बिलग्रेवइस्क्काइर, सुन्जोन्सवुड, कम्बर्विल। जिसका सही मायने है लेडीबोम्बेज़ीन, मोनुमेन्ट के ऊपर, पिक्काडिली, बेलग्रेवस्क्वायर, सेन्टजोन्सवुड, कैम्बरवेल।'' पाठक इसको यूं समझें कि न तो राजा को इंगलैंड जाना है और न ही लेडीबोम्बेज़ीन से मिलना है। पर फिर भी राजा द्वारा मुंशी को सख्त हिदायत दी जाती है यह पता उनके महत्वपूर्ण पत्रों के साथ रखें। अब आगे का वार्तालापः
राजा. ''आपने भरपेट भोजन किया?''
साहब. ''जी महाराज।''
राजा. ''और पेय पदार्थ?''
साहब. ''जी महाराज।''
राजा. ''अब साहब हुक्का पीना पसन्द करेंगे?''
साहब. ''महाराज की कृपा है''।
''महाराज हुक्का लाने की आज्ञा देते हैं तो एक के पीछे एक कई आवाजें अन्दर से हुक्का लाने का आदेश प्रेषित करतीं हैं 'हुक्का लाओ, साहब के वास्ते'। अन्ततः एक बेशकीमती हुक्का मेरे सामने प्रस्तुत किया जाता है, जो अवश्य ही किसी वरिष्ठ अंग्रेज अधिकारी का होगा। क्योंकि कोई स्थानीय व्यक्ति तो जाति भेद के कारण म्लेच्छों का छुआ हुआ हुक्का पीयेगा नहीं, इसलिये साहब लोगों के लिये खान-पान का सभी सामान अलग से रक्खा जाता है। मैंने जैसे ही हुक्का गुड़गुड़ाना आरम्भ किया वहां उपस्थित मुसाहिबों और अन्य व्यक्तियों की फुसफुसाहट शुरू हो गई। यथा 'साहब का हुक्का पीने का अंदाज़ निराला है', 'क्या उन्नत मस्तक है', 'नेत्र कितने जीवन्त और चमकदार हैं', क्या ताज्जुब कि वे इतने बुद्धिमान हैं', ' ये तो एक दिन गवर्नर जनरल अवश्य बनेंगे', ' खुदा करे'।
राजा. ''साहब, आप जब गवर्नर जनरल बन जायेंगे तब अवश्य ही गरीबों के हितचिन्तक रहेंगे''।
साहब. (हृदय की गहराई से) ''अवश्य, महाराज''।
राजा. ''और आप गरीब-अमीर सभी की याचिका पर बराबर ध्यान देंगे।''
साहब. ''ऐसा करना मेरा कर्तव्य होगा''।
राजा. (पुकार कर) ''मुंशी।''
मुंशी. (जो पास ही खड़ा था) ''महाराज गरीबपरवर।''
राजा. ''जो याचिका हमने गवर्नर जनरल को भेजी थी, ले कर आइये।''
मुंशी याचिका पत्र लेकर आता है और उसे पढ़ना या यूं कहें कि लयात्मक तरीके से गाना आरम्भ करता है। महाराजा उनके ऊपर अंग्रेज सरकार द्वारा किये गये अन्याय की गाथा सुनते हैं और मैं अपने हाव-भाव से प्रदर्शित करता हूं कि हाय! संसार में ऐसा अन्याय भी संभव है। हिन्दुस्तान में रहने के दौरान मैं बीसियों राजाओं से मिला होऊंगा और ऐसा एक भी नहीं मिला जिसे सरकार से कोई शिकायत नहीं हो। उसे या तो सरकार से शिकायत थी या न्यायाधीश से, क्योंकि प्रायः न्यायाधीश प्रतिपक्षी से घूस लेकर तदनुसार निर्णय देते थे। जहां तक अंग्रेज सरकार का प्रश्न है तो वह गवर्नर जनरल से लेकर नीचे वाले अफसरों तक की हिन्दुस्तानी राजा के उत्पीड़न में आनन्द लेने वाली मानसिकता के कारण था, जिसके कारण अनेक प्रशासनिक पाप जन्म ले रहे थे''।
जब लैंग की आंखें नींद से बोझिल होने लगीं तब उसने महाराज से रात्रि विश्राम की आज्ञा ली और एक परिचारक ने उसे शयनकक्ष तक पहुंचाया। शयनकक्ष के मध्य में एक विशाल पलंग बिछा हुआ था पर कमरे में पर्दे नहीं थे। एक दीवार के सहारे दो विशाल दर्पण टिका कर रखे हुए थे। उसके वहां पहुंचते ही पलंग के ऊपर लगा हुआ पंखा डोलने लगा, जिससे कुछ ही समय में कमरे में ठंडक हो गई। परिचारक ने उससे पूछा कि क्या वह मालिश करवाना पसन्द करेगा? लैंग के हां कहने पर चार मालिश वाले आकर उसके शरीर की मालिश और हाथ-पैर दबाने लगे। उसे पता ही नहीं पा कि वह कब सो गया। प्रातः 8 बजे उसकी नींद खुली। खानसामा ने बताया कि नाश्ते के लिये 'फुतनुम और मीसुम' तैयार हैं। यार्कशायरपाय, गेम पाय, एन्कोवीटोस्ट, मटन चाप, स्टीक और सार्डीन्स, अर्थात साहब लोगों के पसन्द की सभी वस्तुयें तैयार थीं।नाश्ते के बाद लैंग चुरुट पीते हुए बरामदे में टहल रहा था और उसके आसपास एकत्रित परिचारक और मुसाहब लोग उसकी प्रशंसा कर रहे थे, जैसी वह पिछली रात भी सुन चुका था। लैंग की दृष्टि में, इस प्रकार की चाटुकारिता आदत पड़ जाने पर उबाऊ नहीं लगती। तभी महाराज भी वहां आ गये, जिनके हाथ में देहली गड़ेट, मुफिस्सलाइट और कलकत्ता इंगलिशमेन आदि अख़बार थे। उन्होंने अंग्रेजी अख़बार और अन्य सरकारी पत्र-पत्रिकायें पढ़ कर सुनाने के लिये एक व्यक्ति को नियुक्त किया हुआ था।
दैनिक समाचारों का आदान-प्रदान होने के बाद महाराज ने लैंग को बिलिअर्ड खेलने के लिये आमन्त्रित किया जिसे उसने सहर्ष स्वीकार कर लिया क्योंकि वह स्वयं को बिलिअर्ड का एक अच्छा खिलाड़ी मानता था। पर महाराज का खेल देख कर वह समझ गया कि वे जान बूझ कर उसे जीतने का अवसर दे रहे हैं। रंजीत नामक एक युवा, जो कि महाराज का 'बिलिअर्डमार्कर' था की खेल में महारत देख कर वह आश्चर्यचकित रह गया। मेरे पूछने पर महाराज ने बताया कि रंजीत जब एक बालक था तब ही लाइट इन्ड़ेन्ट्री के एक अधिकारी ने उसे यह खेल सिखाया था। उसके बाद वह अनेक अंग्रेजी भोजनशालाओं में काम करता रहा जहां बिलिअर्ड खेला जाता था। रंजीत वर्तमान में अच्छा पैसा कमा रहा था, पर बाद में लैंग को पता पड़ा कि अपनी आदतों के कारण वह एक भिखारी की भांति मरा और उसके क्रिया-कर्म की लकड़ी के लिये पैसे भी नहीं थे।
महाराज ने उसी समय लैंग को अपने साथ कानपुर चलने का न्योता दिया, जिसे उसने सहर्ष स्वीकार कर लिया। एक इंगलैंड की बनी हुई बग्घी बुलवाई गई जिसमें दो बेहतरीन घोड़े जुते हुए थे। बग्घी में हम

दोनों के अलावा तीन और सभ्रान्त व्यक्ति थे। दो हथियार बन्द सैनिक कोचवान के अगल-बगल बैठे थे और भी दो सैनिक साथ थे। आगे का वृतान्त लैंग के शब्दों में इस प्रकार है-

''महाराज बिना रुके बात कर रहे थे। मैंने बग्घी की प्रशंसा की तो वह बोले'' इससे पहले हमारे पास इससे भी अधिक शानदार बग्घी थी जो कि मैंने 25 हजार रुपये में खरीदी थी पर उस बग्घी को जलवाना पड़ा और बेचारे घोड़ों को मरवाना पड़ा''।

''क्यों महाराज''।

÷कानपुर में एक अंग्रेज साहब का बच्चा बहुत बीमार था और वे उसे हवाखोरी के लिये बिठूर लाना चाहते थे। मैंने अपनी वह बग्घी उनको लाने के लिये भेजी थी। बिठूर आते समय मार्ग में ही उस बच्चे की दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु हो गई। ऐसी परिस्थितियों में वह बग्घी और वे घोड़े हमारे किसी काम के नहीं रहेऔर मृत शरीर के वाहक होने के कारण उनका नष्ट किया जाना आवश्यक हो गया÷। यहां यह जानना उचित है कि कोई भी हिन्दुस्तानी अपनी सम्पत्ति को बेचना अपमानजनक समझता है।

''लेकिन महाराज आप वे घोड़े किसी ईसाई या मुसलमान को दे भी तो सकते थे''

''नहीं; ऐसा करने पर अंग्रेज साहब की भावनायें आहत हो जातीं और उन्हें इस बात का दुःख होता कि उनकी वजह से मेरी इतनी बड़ी हानि हो गई

''ऐसे थे नाना साहब के नाम से जाने वाले वह महाराज। मुझे वह सामान्य बुद्धि के धर्मपरायण व्यक्ति लगे। वह स्वार्थी थे, पर कौन स्थानीय व्यक्ति स्वार्थी नहीं है। उन्होंने धार्मिक भावनाओं के कारण बघी को तो नष्ट करवा दिया था पर मुझे यह जान कर खुशी हुई कि वे ब्रांडी पीते हैं और हुक्के में गांजे का भी सेवन करते हैं।''

कानपुर का वर्णन करते हुए लैंग ने लिखा है कि शाम के करीब साढ़े पाँच बजे वे लोग कानपुर पहुंचे। वहां पर मिलने वाले सभी व्यक्तियों और अफसरों ने महाराज का अभिवादन किया जिसका प्रत्युत्तर उन्होंने हिन्दुस्तानी शैली में दिया। बैंड स्टैंड के पासइन लोगों के रुकने पर बहुत से लोग बग्घी के पास आकर महाराज की खैरियत पूछते तो हाल-चाल जानने के बाद महाराज लैंग का अतिशयोक्ति पूर्ण परिचय उन सभी से करवाते, वे चाहे स्थानीय व्यापारी हों या अंग्रेज अफसर। लैंग की घबराहट हर ऐसे परिचय के बाद बड़ जाती और वह मन ही मन सोचता कि क्यों उसके लखनऊ के मित्रों ने इतना बढ़ा-चढ़ा कर उसका परिचय महाराज को दिया था। कानपुर में लैंग की प्रदर्शनी होने के बाद बग्घी को बिठूर की और मोड़ दिया गया। लौटते समय महाराज ने पुनः अपनी शिकायतों का ब्यौरा सुनाना आरम्भ कर दिया। ऊब कर लैंग ने उनसे वादा किया कि बिठूर से लौटते ही वह उनकी शिकायतों के बारे में गवर्नर जनरल और कलकात्ता में स्थित गवर्निंगकौंसिल से बात करेगा। इससे भी बात नहीं बनी तो इंगलैंड वापस जाने पर वह इस बारे में महारानी विक्टोरिया से बात करेगा और उन्हें बतायेगा कि हिन्दुस्तान में किसी भी राजा के दत्तक पुत्र को उत्तराधिकारी माना जाना चाहिये। लैंग ने महाराज के कहने पर उन्हें वचन दिया कि वह उनके वाद के बारे में प्रिवीकौंसिल या बोर्ड औफकन्ट्रोल से बात नहीं करेगा क्योंकि महाराज को विश्वास था कि इन संस्थाओं के सदस्यों को घूस दी गई है, जिसके कारण वे उनके पक्ष में निर्णय नहीं देंगे। इस मामले की गहराई में जाने पर लैंग को पता चला कि कोई अंग्रेज महाराज को मनगढ़ंत कहानी सुना कर तीन लाख रुपये लूटना चाहता था, पर बेचारे महाराज उसकी बात को सच मान बैठे थे।

उस रात्रि को लैंग के सम्मान में नाच का आयोजन किया गया। अगली सुबह वह तीव्र सर दर्द के साथ जागा जो उसे लगा कि शायदउसके ऊपर रात में छिड़के गये विभिन्न इत्रों के कारण था या उन भयंकर कथाओं के कारण, जो उसे सोने से पहले सुनाई गई थीं। नाश्ते के बाद महाराज ने लैंग को अपने हाथी, ऊँट, घोड़े, कुत्ते, कबूतर, बाज़, जंगली गधे, बंदर और विभिन्न प्रकार की चिड़िया आदि दिखाये। तत्पश्चात उसे पिस्तौल, तलवार, खंजर व अन्य युद्ध के साजो-सामान जो उनके संग्रह में थे दिखाये। उनके वाद के संदर्भ में लैंग ने महाराज को मानवीय आकांक्षाओं की निस्सारता पर कई कहानियां सुनाई पर नाना साहब पर उनका कोई असर नहीं हुआ।

तात्या टोपे लैंग ने तात्या टोपे से अपनी भेंट का वर्णन पुस्तक के अन्त में किया है। ध्यान देने योग्य बात है कि उसने उनके बारे में अपनी बिठूर यात्रा के विवरण में कुछ भी नहीं लिखा था। प्रतीत होता है कि 1859 में इंगलैंड से वापस आने के बाद लैंग ने तात्या टोपे का नाम सुना और अपनी 10 वर्ष पूर्व की यात्रा का स्मरण कर, उनके बारे में लिखने का निर्णय लिया। क्योंकि उस समय पूरा ब्रिटिश प्रशासन तात्या के कारनामों के कारण उनसे भयभीत था और उनकी एक महत्वपूर्ण स्वतंत्रता संग्रामी की छवि बन चुकी थी। जब उसने तात्या के बारे में लिखा तब उनको फांसी हो चुकी थी। अतः लैंग द्वारा लिखा गया यह वर्णन अप्रैल 1859 के बाद का है। वह लिखता है कि मैंने इस व्यक्ति को तब देखा था जब वह एक सक्षम फौजी जनरल नहीं बना था और नाना साहब का एक मुंहलगापिछलग्गू था। लैंग मानता है कि जो व्यक्ति उसे 'बेनी' के रूप में याद है वही बाद में तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वह 'बेनी' को महाराष्ट्र का निवासी न मान कर उत्तर भारत के किसी स्थान का निवासी मानता है। उसकी यह भ्रान्ति इस हद तक है कि वह जो विवरण तात्याटोपे की रूपरेखा का देता है वह भी गलत है। 'बेनी' के बारे में उसने लिखा है कि वह सांवले रंग का, चौड़ी-चपटी नाक वाला मध्यम कद का छरहरा व्यक्ति था। 'बेनी' के दाँत गंदे और टेड़े-मेड़े थे। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि तात्या का असली नाम रामचन्द्रपांडुरंगयेवलकर था और तात्या उनका प्यार का नाम था। अतः उनको एक और नाम 'बेनी' कह कर बुलाया जाना सही प्रतीत नहीं होता। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के समय सैनिकों द्वारा तात्या को 'सरदार' अवश्य कहा जाता था। तात्या चूंकि नाना साहब से आयु में बड़े थे और वे दोनों बचपन से साथ-साथ रहे थे अतः उनका एक 'मुंहलगे - पिछलग्गू' जैसा व्यवहार युक्ति सम्मत नहीं लगता। ऐसा प्रतीत होता है कि लैंग को अपनी पुस्तक के प्रकाशन हेतु भेजने से एकदम पहले लगा होगा कि वह किसी 'बेनी' से बिठूर में मिला था और वही आज का प्रसिद्ध सेनापति तात्या है, इसलिये उसका वर्णन पुस्तक में जोड़ देने से पुस्तक का महत्व बड़ जायेगा। अन्यथा उसकी बात किसी भी प्रकार से सही नहीं लगती।

झांसी प्रवास और रानी लक्ष्मी बाई से भेंट (सन 1854) अपने झांसी प्रवास के आरम्भ में लैंग ने उन परिस्थितियों का वर्णन किया है जिनके कारण रानी लक्ष्मी बाई ने अपने दो प्रमुख व्यक्तियों को उसे ससम्मान झांसी लाने के लिये आगरा भेजा था। इनमें से एक था रानी का वित्त मन्त्री और दूसरा था झांसी राज्य का प्रधान वकील। यह

घटना 1854 के आरम्भ की है जब कम्पनी ने रानी के दत्तक पुत्र को मान्यता न देने का निर्णय लेकर झांसी को अपने अधिकार में ले लिया था और 13वीं नेटिवइन्फैन्ट्री को झांसी में तैनात कर दिया था। लैंग के अनुसार रानी द्वारा भेजा गया पत्र सुनहरे कागज़ पर फारसी में लिखा गया था और इसमें उसे रानी के प्रतिनिधियों के साथ ही झांसी आने का निमन्त्रण दिया गया था। झांसी राज्य की वार्षिक आय लगभग 6 लाख रुपये थी जिसमें से राज्य के खर्चे निकाल कर करीब ढाई लाख रुपये बचते थे। राज्य के अधिग्रहण के बाद रानी को मात्र 60000 रुपये सालाना देने का प्रस्ताव था, जिसे रानी ने स्वीकार नहीं किया था और लैंग की सलाह के बाद भी उन्होंने कभी अंग्रेजी खजाने से पैसा नहीं लिया।

[इस सन्दर्भ में कर्नलस्लीमन (जो कि उस समय लखनऊ मेंरेसीडेंट था) का मेजर मार्शल को लिखा गया एक पत्र महत्वपूर्ण है, जिसमें स्लीमन ने जबलपुर, झांसी और सागर के अपने अनुभवों के आधार पर रानी को बेहतर पेंशन देने की अनुशंसा की थी।स्लीमन ने अवध के नवाब को हटाये जाने का भी विरोध किया था पर तत्कालीन गवर्नर जनरल डलहौजी की नीतियों के चलते उसकी बात नहीं मानी गई थी और अन्ततः इस नीति का दुष्परिणाम अंग्रेजों को भुगतना पड़ा था। उसने लिखा कि हिन्दुस्तान में राजाओं के ऊपर निर्भर परिवारों की संख्या बहुत होती है और इन लोगों के पास अन्य कोई कार्य करने का न तो अनुभव होता है न धन, अतः या तो इन सभी लोगों को अपने संरक्षण में नौकरी दी जाये या फिर उनकी वेतन भी रानी की पेंशन में जोड़ी कर दी जाये। झांसी राज्य के बड़े जमींदारों को भी उनकी भूमि के लिये उदार क्षतिपूर्ति दी जानी चाहिये। एक उदाहरण देकर स्लीमन ने लिखा था कि सागर में उसने 8 हजार रुपये प्रति माह की पेंशन वहां की रानी 'बाई जी' को दिलवाई थी जबकि वहां उन पर कोई निर्भर व्यक्ति भी नहीं था।

लैंग के अनुसार रानी ने उसको एक ब्रिटिश प्रशासनिक सेवा के अफसर की सिफारिश पर गवर्नर जनरल के राज्य अधिग्रहण के आदेश को निरस्त करवाने के उद्देश्य से बुलवाया था। उस समय अधिकांश प्रशासनिक अधिकारी राज्यों के इस प्रकार छोटी-छोटी बातों पर अधिग्रहण के विरोधी थे। विशेष रूप से झांसी के मामले में उन लोगों का मत था कि यह निर्णय अराजनीतिक, निस्सार और अन्यायपूर्ण है। राजा गंगाधर राव ने मृत्यु से एक दिन पहले ही सभी महत्वपूर्ण राज्यकर्मियों और अंग्रेज अफसरों की उपस्थिति में तात्कालिक विधिसम्मत प्रक्रिया के अनुरूप गोद लेने की कार्यवाही को संपन्न किया था। राजा ने पूरे होश में गवर्नर जनरल के स्थानीय प्रतिनिधियों की गवाही में आनन्द राव बनाम दामोदर राव को गोद लिया था। इस संदर्भ में अन्य महत्वपूर्ण बात यह भी है कि लौर्डविलिअमबैन्टिंक ने रानी के पति गंगाधर राव के बड़े भाई को राजा की पदवी और राज्य के उत्तराधिकारी के चयन का अधिकार दिया था। गंगाधर राव ने मृत्यु पूर्व के आदेश में दामोदर राव के 18 वर्ष के होने तक राज्य कार्य रानी द्वारा सम्हाले जाने और तत्पश्चात उसे सौंप दिये जाने का विधिसम्मत आदेश किया था। इस पृष्ठभूमि में लैंग की सहानुभूति रानी के साथ पहले से ही थी। एक कुलीन भारतीय रानी के लिये 5000 रुपये प्रति माह की पेंशन के बदले अपने राज्य को छोड़ देना कदापि सम्भव नहीं था।

लैंग के शब्दों में ''आगरा से झांसी की यात्रा दो दिन की है अतः आगरा से शाम को पालकी (असल में यह एक बड़ी बग्घी थी) में रवाना होकर हम प्रातः ग्वालियर पहुंचे। वहां पर सैनिक छावनी से एक-डेड़ मील की दूरी पर झांसी के राजा का एक छोटा सा भवन था, जिसे यात्रा के दौरान रुकने के लिये ही उपयोग किया जाता था। सूर्योदय होने तक हम लोग गंतव्य स्थान पर पहुंचे, नाश्ता किया, हुक्का पिया और मेजबानों के आग्रह पर मैं तुरन्त वहां से झांसी के लिये रवाना होने को तैयार हो गया। दिन गर्म था पर जिस पालकी को मेरे लिये भेजा गया था वह एक कमरे के बराबर बड़ी और आरामदायक थी जिसमें पंखा भी लगा हुआ था। मैं, मंत्री जी और वकील साहब अंदर बैठे।हमारे साथ एक रसोइया और एक सेवादार भी था, जो मेरी आवश्यकतानुसार पानी, बीअर और शराब ठंडी करता जा रहा था। पंखा कुली व कोचवान बाहर बैठे।इस विशालकाय बग्घी को दो शानदार घोड़े खींच रहे थे, जिन्हें राजा ने 15000 रुपये में फ्रांस से आयात किया था। बीच-बीच में सड़क अच्छी न होने के बाद भी हम लोग करीब 9 मील प्रति घंटे (14.5 कि.मी.) की गति से चल रहे थे। रास्ते में दो बार घोड़े बदले गये और लगभग 2 बजे हम लोग झांसी राज्य की सीमा में पहुंच गये। यहां तक हमारे साथ चार घुड़सवार थे पर अब उनकी संख्या बढ़ कर 50 हो गई। इन सभी के हाथ में भाले थे और वे फौजी पोशाक में थे। इसके बाद प्रत्येक 100-200 गज पर और भी घुड़सवार हमारे साथ होते गये और झांसी पहुंचते-पहुंचते लगभग सारी फौज हमारे साथ थी। बग्घी सीधे राजा के बाग़ में रोकी गई, जहां पर एक विशाल, गलीचेदार और आरामदायक राजसी तम्बू में मेरे रहने की व्यवस्था की गई थी, जिसका उपयोग राजा प्रायः अंग्रेज अफसरों से मुलाकात के लिये किया करते थे। यहां पर मेरी हर आवश्यकता की पूर्ति के लिये एक दर्जन नौकर हर समय उपस्थित थे। मेरे यात्रा के साथी ज्ञानवान लोग थे इसलिये चर्चा करते हुए हमारा समय आराम से बीत गया था।÷

लैंग ने लिखा है कि रानी ने अपने ज्योतिषी की सलाह पर हमारे मिलने का समय सायं 5.30 से 6.30 के बीच का निश्चित किया था। ज्योतिषी के अनुसार रानी को यह मुलाकात दिन और रात के सन्धिकाल में करनी चाहिये। लैंग को रानी से मुलाकात का समय सूचित कर दिया गया और इसके बाद बहुत हिचकते हुए मंत्री ने इस मुलाकात के शिष्टाचार के नियमों की बात उसे बताई। उन्होंने कहा कि लैंग को अपने जूते उतार कर कमरे में जाना होगा, जिस पर उसे आश्चर्य हुआ और उसने पूछा कि क्या यही नियम अंग्रेज अफसरों पर भी लागू होते हैं। अन्त में निर्णय हुआ कि मैं जूते उतार कर ही कमरे में प्रवेश करूंगा और सारे समय सर पर हैट लगाये रहूंगा। लैंग के लिये यह विस्मयकारी था क्योंकि उसकी दृष्टि में सम्माननीय व्यक्ति के सामने हैट लगा कर जाना अशोभनीय था और यह इंगलैंड के दरबार में कभी भी स्वीकार्य नहीं होती। लैंग ने भरपेट भोजन कर आराम किया। रानी लक्ष्मी बाई से उसकी भेंट का विवरण उसी की भाषा में इस प्रकार है-

''समय पर मुझे लेने के लिये एक सफेद हाथी लाया गया, जिस पर चाँदी का हौदा, मखमली झूलों और सजावटों के साथ बंधा हुआ था। महावत की पोशाक अति सुंदर थी। हाथी के साथ-साथ मंत्री एक घोड़े पर चल रहे थे और सारे रास्ते पर सुसज्जित सैनिक खड़े थे। मेरे रहने के स्थान से महल करीब आधे मील (लगभग 1 कि.मी.) की दूरी पर था।''

''महल के दरवाजे पर कुछ विलम्ब हुआ। रानी की आज्ञा आने के

बाद दरवाजा खोला दिया गया। हाथी को एक आँगन में रोक कर मुझे स्थानीय लोगों के बीच उतारा गया, जो शाही मेहमान को देखने के लिये वहां उपस्थित थे। मेरी परेशानी को भांप कर मंत्री ने उन लोगों को दूर खड़े रहने को कहा। कुछ समय पश्चात रानी के किसी सम्बन्धी द्वारा मुझे एक कमरे का रास्ता दिखाया गया। उसके बाद 6-7 और कमरों को पार कर हम लोग उस स्थान पर पहुंचे जहां मुझे जूते उतारने थे। कठिनाई से जूते उतार कर मैंने एक सुसज्जित कमरे में प्रवेश किया, जिसमें मुलायम और अति सुन्दर गलीचे बिछे हुए थे और मध्य में एक यूरोपीय शैली की कुर्सी रखी हुई थी। कुर्सी को सुगन्धित फूलों की मालाओं से सजाया गया था। झांसी के सुगन्धित फूल प्रसिद्ध हैं। कमरे के दूसरे छोर पर एक पर्दा था जिसके पीछे से लोगों के बातें करने की आवाज आ रही थी। मैं कुर्सी पर बैठ गया और आदतन हैट उतार कर गोदी में रख लिया पर उसी समय भेंट की शर्तें याद आने पर मैंने अपना हैट पुनः पहन लिया। मेरे हैट ने पंखे की हवा को करीब-करीब रोक लिया जिससे मेरे माथे पर पसीना चुचुआने लगा औरमैंने अपने आप को कोसा कि मैंने मुलाकात की ऐसी विचित्र शर्तों को क्योंमाना।

तभी अंदर से अनेक स्त्री स्वर सुनाई दिये जो किसी बालक को 'साहब के पास जाओ' कह कर मेरे पास आने के लिये उकसा रहे थे। कुछ समय उपरान्त एक शर्मीले, लगभग 6 वर्ष के बालक ने सकुचाते हुए कमरे में प्रवेश किया। मैंने जब उसे प्यार से अपने पास बुलाया तो वह कुछ सामान्य हुआ और मेरे पास आया। उसकी पोषक और आभूषण देख कर मुझे यह अन्दाजा लगाने में देर नहीं लगी कि यह वही बालक है जिसे दिवंगत राजा ने गोद लिया था और अब जिससे झांसी का राज्य अंग्रेज गवर्नर जनरल की कूटनीति ने छीन लिया है। बालक सुंदर और सामान्य मराठों की तरह गठीले बदन का था। मैं स्नेह पूर्वक बालक से कुछ कह ही रहा था कि पर्दे के पीछे से उभरे एक कर्ण कटु स्वर ने मुझे सूचित किया कि यह ही वर्तमान 'महाराजा' हैं। आवाज की कर्कशता के कारण मुझे लगा कि यह सूचना किसी वृद्ध दासी ने मुझे दी है पर तभी बालक ने उसके उत्तर में 'महारानी' कहा, तो मुझे अपनी गलती का अहसास हुआ। रानी ने मुझे पर्दे के समीप आने को कहा और मेरे अपनी कुर्सी में व्यवस्थित हो जाने के बाद वे अंग्रेजों के अन्याय की गाथा सुनाने लगीं। जब-जब रानी वार्ता के बीच में रुकतीं तो उनके साथ बैठी हुई औरतें समवेत स्वर में विषाद व्यक्त करतीं ङ्क 'अन्याय-अन्याय', 'कैसा उत्पीड़न'। यह दृश्य मुझे किसी ग्रीक 'कारुणिक-हास्य' नाटक की याद दिला रहा था।

''मुझे वकील ने सूचित किया था कि रानी साहिबा 26-27 वर्ष की एक सुंदर स्त्री हैं और मैं उनकी एक झलक पाने को उत्सुक था और दैवयोग से ऐसा अवसर उपस्थित हो गया जब बालक ने वापस जाते हुए परदे को जरा सा हटा दिया। एक क्षण के दर्शन ने मेरी उत्कंठा को शान्त किया और मैं यह लिखने में सक्षम हुआ कि रानी लक्ष्मी बाई एक मझोले कद की छरहरी स्त्री थीं। उनका मुखमंडल सुंदर था, जो किशोरावस्था में कहीं और अधिक आकर्षक रहा होगा, पर किसी यूरोपीय व्यक्ति द्वारा सुंदरता के आंकलनकी दृष्टि सेलम्बोतर न होकर गोलाकार था। उनके चेहरे के हावभाव सद्भावपूर्ण और बुद्धिशाली थे। बड़ी-बड़ी आंखें आकर्षक और भावपूर्ण तथा नासिका कोमल और सुगठित थी। न तो वह गौरवर्ण थीं और न ही श्यामवर्ण। आश्चर्यजनक रूप से उनके शरीर पर कर्णफूलों को छोड़ कर आभूषणों का पूर्ण अभाव था।उनके शरीर पर सफेदमलमल की अत्यन्त महीन साड़ी कस कर बांधी हुई थी जिससे उनका शारीरिक सौष्ठव दृष्टिगोचर हो रहा था। चन्द्रमा के कलंक की भांति उनमें मात्र आवाज की कर्कशता का दोष था। पर्दे के इस प्रकार अचानक हट जाने से वे क्रुद्ध नहीं दिखीं वरन मुस्करा कर बोलीं कि हमारे इस प्रकार एक दूसरे को देख लेने से मेरी उनके प्रति सहानुभूति कम नहीं होगी और मैं उनके वाद को बिना पूर्वाग्रह अंग्रेजों तक पहुंचाऊंगा। जिसके उत्तर में मैंने कहा कि ठीक इसके विपरीत यदि गवर्नर जनरल भी मेरी तरह भाग्यशाली होता तो वह अवश्य ही झांसी आपको वापस दे देता। इसके बाद हमारे बीच परस्पर समादर सूचक संवाद का आदान-प्रदान हुआ''

''झांसी के वाद के विषय में हमारे बीच गहराई से विचार-विमर्श हुआ और मैंने रानी को सूचित किया कि वैधानिक रूप से अब यह निर्णय गवर्नर जनरल के हाथ से निकल गया है और रानी को एक याचिका के द्वारा दामोदर राव की गोद लेने की प्रक्रिया की वैधता को इंगलैंड की महारानी के सामने प्रस्तुत करना चाहिये। प्रतिवाद देने के बाद रानी को पेंशन लेना शुरू कर देना चाहिये और इंगलैंड की महारानी के निर्णय का इंतजार करना चाहिये। रानी ने मेरी यह बात स्वीकार नहीं की और जोर देकर कहा कि 'मैं अपनी झांसी नहीं दूंगी'। मैंने रानी को स्थिति की गम्भीरता से अवगत कराया और बताया कि कम्पनी की फौज झांसी के पास ही डेरा जमाये बैठी है जिसमें स्थानीय पैदल सेना और तोपची सम्मिलित हैं। वे कुछ ही समय में रानी की सेना को ध्वस्त कर सकते हैं और यह संघर्ष उनके वाद को भी कमजोर कर देगा। साथ ही यह कदम उनकी स्वयं की स्वतन्त्रता के लिये भी घातक होगा। जैसा कि झांसी का वकील मुझे पहले ही बता चुका था कि झांसी का आम नागरिक किसी भी परिस्थिति में अंग्रेजों की सत्ता स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं, वही बात रानी ने भी दुहरायी।''

रात लगभग दो बजे रानी के साथ लैंग की भेंट समाप्त हुई और वह वापस अपने डेरे पर आया। लैंग को तसल्ली थी कि वह रानी को अपनी विचार धारा के अनुसार काम करने को समझा सका पर रानी पेंशन लेने को तैयार नहीं हुई। लैंग के झांसी से विदा लेने से पहले रानी ने उसे एक हाथी, एक ऊँट, एक अरबी घोड़ा, शिकारी कुत्तों का एक जोड़ा, दो दुसाले और ढेर सारा रेशमी कपड़ा उपहार स्वरूप दिया।

1859 में इंगलैंड से वापस आकर जब लैंग ने यह वृतान्त लिखा है, तब उसने लिखा है कि 1857 तक रानी को झांसी तो प्राप्त नहीं हुई परकालान्तर मेंवे नाना साहब के साथ प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम का नेतृत्व करते हुए वीरगति को प्राप्त हुई।

यहां यह बताना भी आवश्यक है कि लैंग के वापस आगरा जाने के बाद ही अंग्रेजों ने उसे कोलकाता में दो माह के लिये जेल भेज दिया था और जेल काटने के बाद वह इंगलैंड चला गया था। इस घटनाक्रम से स्पष्ट है कि लैंग से इस भेंट का रानी को कोई लाभ नहीं हुआ और वह उनका परिवार भी महारानी विक्टोरिया तक नहीं पहुंचा पाया।

-व्यास भवन, नरसिंहगढ़पुरवा
छतरपुर (म.प्र.)

ऐतिहासिक नगर : भाण्डेर

- डॉ. रामप्रकाश गुप्ता

बुन्देलखण्ड भारत का हिरदय स्थल है। बुन्देलखण्ड के मध्य में जिला दतिया की तहसील का मुख्यालय भाण्डेर नगर है। भाण्डेर एक प्राचीन नगर है। भाण्डेर दतिया से 30 किमी., झांसी से 40 किमी. चिरगांव से 21 किमी. मोंठ से 22 किमी. समथर से 30 किमी. एवं दबोह से 35 किमी. दूर स्थित है। चिरगांव से भिण्ड के बीच राजमार्ग पर भाण्डेर स्थित है। भाण्डेर भौगोलिक दृष्टि से समतल और उपजाऊ भूमि के बीच स्थित है। किन्तु बीच - बीच में छोटी - छोटी पहाड़ियां भी हैं। पहूज नदी भाण्डेर की जीवन धारा है, भाण्डेर पहूज (पुष्पावती) नदी के किनारे ही स्थित है। भाण्डेर का क्षेत्र कृषि प्रधान और उपजाऊ है।

भाण्डेर का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। पौराणिक काल से ही इसका जनश्रुतियों में उल्लेख मिलता है। भाण्डेर का प्राचीन नाम भाण्डकपुर था और यह महाभारत में उल्लिखित युवनाश्व नामक राजा की नगरी थी। सोन तलैया पर राजा भोजनाथ तथा युधिष्ठर ने अश्वमेध यज्ञ किया था। आदि शंकराचार्य अपनी धर्मयात्रा के मध्य कुछ समय तक यहां रहे थे।

मध्यकालीन इतिहास में भाण्डेर के सम्बन्ध में विभिन्न ग्रन्थों में उल्लेख मिलते हैं। पन्द्रहवीं शताब्दी में भाण्डेर मालवा के सुल्तानों के अधिकार में रहा। 1434-35 में ग्वालियर के शासक राय डूंगर सिंह ने एरच पर आक्रमण करते समय भाण्डेर पर अधिकार कर लिया था। मुगल काल में भाण्डेर का महत्व और भी बढ़ गया। अकबर के समय भाण्डेर सूबा आगरा की एरच सरकार में एक महाल था जिसमें जमीन 257042-18 बीघा बिस्वा मालगुजारी दाम 2533449 सयूरगल दाम 100638, सवार 50, पैदल 2000, हाथी 5 (अफ़ग़ान - कायस्थ) नियुक्त थे। ओरछा के महाराजा मधुकरशाह ने 1576 ई. में मुगल सेना के सैयद महमूद बारहा, सैयद मुहम्मद सादिक खाँ, उलुग खाँ, राजा आसकरण और अली कुली को भाण्डेर में पराजित किया था। किन्तु मुगलों ने पुनः भाण्डेर को अपने अधिकार में ले लिया। 1592 ई. में हसन खाँ मुगलों की ओर से भाण्डेर का प्रशासक था। वीरसिंह देव ने 1592 में अपने भाई प्रतापराव और इन्द्रजीत को साथ लेकर भाण्डेर पर अधिकार कर लिया। 1603 ई. में वीरसिंह देव ने हसन खाँ को भाण्डेर से पुनः खदेड़ा। 1634 में ओरछा के राजा जुझार सिंह के विरुद्ध मुगल सेना का जमाव भाण्डेर में हुआ था, और भाण्डेर से ही सुन्दर कवि दूत के रूप में जुझार सिंह के पास गये थे। वर्षा ऋतु आ जाने पर मुगल सेना भाण्डेर में ही रूकी थी। 1653 में वीर योद्धा चम्पतराय बुन्देला ने भी भाण्डेर पर आक्रमण किया था। मुगल सूबेदार मुहम्मद खाँ बंगश ने भाण्डेर में दिलेर खाँ को प्रशासक नियुक्त किया था। महाराजा छत्रसाल बुन्देला ने भाण्डेर पर आक्रमण कर दिलेर खाँ को भगा दिया था। पेशवा बाजीराव भी अपनी सेना के साथ भाण्डेर में रूके थे, इसका उल्लेख डॉ. वृन्दावन लाल वर्मा ने अपने उपन्यास माधव जी सिन्धिया में किया है। 1742 में झांसी के मराठा सूबेदार नारोशंकर ने भाण्डेर को झांसी राज्य में मिला लिया था। 1748 ई. में भाण्डेर सिंधिया के अधिकार में आ गया। भाण्डेर सन् 1848 में ग्वालियर की सेना के रखरखाव के क्षेत्र के रूप में शामिल कर लिया गया। भाण्डेर 1860 में अंग्रेजों के प्रभुसत्ता सम्पन्न इलाके में शामिल कर लिया गया। 1886 ई. में भाण्डेर को मुरार और झांसी के बदले में सिंधिया को लौटा दिया गया। इसके बाद भाण्डेर स्वतंत्रता प्राप्ति तक ग्वालियर राज्य का ही अंग रहा। स्वतंत्रता के पूर्व भाण्डेर पहले भिण्ड जिले में और बाद में ग्वालियर जिले में सम्मिलित रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति और मध्य प्रदेश राज्य के गठन के बाद भी भाण्डेर ग्वालियर जिले में ही सम्मिलित रहा जबकि ग्वालियर जिले की सीमाओं से भाण्डेर तहसील की सीमायें नहीं मिलती थी। जनता की मांग पर नब्बे के दशक में भाण्डेर तहसील को दतिया जिले में सम्मिलित किया जा सका।

1857 के प्रथम स्वतंत्रता आन्दोलन में रानी लक्ष्मीबाई झांसी छोड़कर भाण्डेरी द्वार से भाण्डेर होकर ही कालपी पहुंची थी। द्वारिकेश मिश्र ने अपने 'झांसी की रानी रासो' में उल्लेख किया है -

रानी उतै भोर भाण्डेर पोंच गई, सोन तलैया तीर। एवं

पौंची ती भाण्डेर नों, घेरो तो अंगरेज। बौकर घाइल गिरौ तौ, दे न पाव तौ जेज।।

भाण्डेर में रानी का अंग्रजों से युद्ध भी हुआ था, किन्तु रानी अंग्रेजों को परास्त कर कालपी पहुंच गयी थी।

द्विज नारायण दास कृत माधवानल - कामकंदला कथा और भाण्डेर - माधवानल - कामकंदला की कथा मध्यकाल के अनेक कवियों ने अपने प्रबन्ध काव्यों में वर्णित की है। इस कथा को सर्वप्रथम भाण्डेर के कवि नारायणदास ने संवत् 1567 वि. (सन् 1510 ई.) में प्रबन्ध काव्य की रचना कर किया है। नारायण दास ने अपना संक्षिप्त परिचय देते हुए लिखा है -

साहि सिकन्दर डिल्ली ठौर, सेबे ताहि गाजने गौर।
जंबु दीप बिनें मैमालु, अरि राइनि निसि बासर कालु।।
पुरू भाण्डेरू तासु परिगन्यो, राऊ ढोल तहँ साहिब तन्यौ।
ताकौ पूत भवानी दास, छह दरसन अबलंबे तासु।।
तिहि नगरी कवि जन कौ बासु, माधव बंस नरायन दासु।
गुरू उधरन सुत्रिया संजूत, सनौढिया भीषम को पूत।।
दान जूझ कर सत्रु समेत, औसर खान करे ता हेत।
मन धरि बीरा दीनो राऊ, मोहि भेद माधवा सुनाऊ।।
पन्द्रह सै सरसठि बैशाख, सातें घौस उजियारो पाख।
कीनो करूना नीति सिंगारू, जिहि बिधि मिलै नारि भरतारू।।

उपर्युक्त कथन में कवि का ऐतिहासिक पक्ष यह है कि संवत् 1567 वि. (सन् 1510 ई.) में जब कवि नारायन दास ने माधवानल कथा लिखी उस समय दिल्ली में सिकन्दर लोदी राज सिंहासन पर आसीन था, और भाण्डेर उसके साम्राज्य में एक परगना था। किन्तु ढोलराय का पुत्र भवानीदास भाण्डेर का शासक या राऊ

(राजा) था। कथा आरम्भ करते हुये कवि कहता है -

पुष्पावती नगर सुभ थानु। सात कोस मिति परमानु।।

पुष्पावती नगर भाण्डेर का पुराना नाम है। भाण्डेर पहूज नदी के तट पर बसा हुआ है। पहूज नदी का पौराणिक नाम पुष्पावती है। इसलिए नदी के साथ भाण्डेर को पुष्पावती नगर कहा जाता था। इस प्रकार नारायन दास कवि द्वारा माधवानल कथा भाण्डेर में ही लिखी गयी गयी थी और इस कथा का मूल उद्‌गम स्थल भी भाण्डेर नगर ही रहा है।

वणिक प्रिया के रचनाकार कवि सुखदेव बड़ैरिया - भाण्डेर नगर मध्यकाल में व्यापार और ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के साथ - साथ साहित्यिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण रहा। इसका प्रमाण है यहां के कवियों की महत्वपूर्ण रचनायें जिनमें भाण्डेर का उल्लेख किया गया है। व्यापार - व्यवसाय से सम्बन्धित काव्य कृतियों का हिन्दी साहित्य में अभाव ही है। किन्तु भाण्डेर में जन्मे कवि सुखदेव बड़ैरिया ने बुन्देलखण्ड के व्यापार के साथ-साथ लोक व्यवहार पर भी एक कृति की रचना संवत् 1717 वि. में 'वणिकप्रिया' के नाम से की थी। वणिकप्रिया बुन्देलखण्ड के व्यापारियों में अत्यन्त लोकप्रिय रही और इसकी अनेक प्रतियां बुन्देलखण्ड के पुराने व्यापारियों के पास हस्तलिखित रूप में मिलती हैं। सुखदेव बड़ैरिया का जन्म भाण्डेर के एक गहोई वैश्य परिवार में हुआ था। पुस्तक के प्रारम्भ में कवि ने अपना परिचय देते हुए कहा है -

वणिक प्रिया वणिकन यों प्यारी। ज्यों मसाल हो निशि अँधियारी।।

कार्तिक बदी तृतीया, पुष्य नक्षत्र गुरूवार,

संवत् सत्रा सौ अधिक, सत्रा ऊपर धार।

गोल गोत गहोई बणिक, नाम बिहारीदास,

तिनके सुत सुखदेव कहँ, वणिक प्रिया प्रकास।

जन्म भूमि भाण्डेर सु जानौ, बैक बड़ैरिया कविन बखानौ।

बणिकप्रिया में कवि ने 43 शीर्षकों पर वाणिज्य कर्म और वणिक के लोक व्यवहार के बारे में विस्तार से लिखा है।

भाण्डेर के ऐतिहासिक व दर्शनीय स्थल – भाण्डेर एक पुरातन नगर है इस नगर में ऐतिहासिक और पुरातात्विक महत्व के अनेक स्थल हैं, इनमें मन्दिर, बौद्ध मठ, अठखम्भा पहाड़ की अनन्त गुफा, सिकन्दरशाह की हवेली, सोन तलैया, रामगढ़ की माता, घ्वार की माता, भरौली का शिव मन्दिर प्रमुख हैं।

सोन तलैया – भाण्डेर नगर के पूर्वांचल में उत्तर से दक्षिण तक एक विशाल पर्वत माला है। पर्वत के मध्य में एक विशाल जल कुण्ड है जिसे सोन तलैया (सोनभद्र) कहते हैं। सोन तलैया लगभग 300 फुट ऊँची पहाड़ी की चोटी पर है। यह सदैव जल से आपूरित रहती है, इसका जल आज तक सूखा नहीं है। पहाड़ी पर लक्ष्मणनाथ का मन्दिर भी है।

ध्वार की शीतला माता – भाण्डेर के पूर्वांचल में बहने वाली पहूज के उस पार एक विशाल पर्वत पर शीतला माता का प्राचीन मन्दिर है। ऐसी जनश्रुति है कि आदि शंकराचार्य अपनी धर्मयात्रा के मध्य कुछ समय तक यहाँ रहे थे। यहीं पर तपस्या करते - करते उन्हें प्रेरणा मिली और वे शक्ति के उपासक बन गये। माँ शीतला की मूर्ति का प्रादुर्भाव उसी समय हुआ था।

चतुर्भुजराज मन्दिर – भाण्डेर नगर के मध्य में श्री चतुर्भुजराज (भगवान विष्णु) का एक प्राचीन मंदिर है। मंदिर के सम्बन्ध में एक जनश्रुति प्रचलित है कि एक पुजारी को स्वप्न हुआ कि मूर्ति अमुक स्थान पर जल में पड़ी है उसे निकालो। प्रातःकाल पुजारी ने लोगों के साथ जाकर जलकुण्ड से मूर्ति निकाल कर मन्दिर में प्रतिष्ठापित की।

धामन की बगिया – भाण्डेर के पश्चिमी छोर पर प्रणामी सम्प्रदाय का एक प्राचीन मन्दिर है। कहा जाता है कि भाण्डेर नगर पर पन्ना के महाराजा छत्रसाल ने अधिकार कर लिया था। महाराजा छत्रसाल ने अपने गुरू स्वामी प्राणनाथ की आज्ञा से इस मन्दिर का निर्माण करवाया था। इस मंदिर में वेदों तथा भगवान के मुकुटों की पूजा होती है।

रामगढ़ की माता – माता का मंदिर भाण्डेर के पश्चिमोत्तर में भाण्डेर से 2 किमी. दूर ग्राम रामगढ़ में स्थित है। मंदिर एक ऊँची जगती पर बना है। इस मंदिर का निर्माण ओरछा नरेश महाराजा वीरसिंह देव ने 1618 में कराया था। महाराजा वीरसिंह देव ने जो 52 इमारतों की नींव एक ही मुहुर्त में डाली थी उनमें एक यह मंदिर भी है। मंदिर मध्यकालीन बुन्देला शैली में निर्मित है। भव्य मंदिर 100 बाई 100 में बना है मंदिर का प्रवेश द्वार पूर्व की ओर व निकास द्वार दक्षिण की ओर है। मंदिर में देवी का मूल विग्रह अष्टभुजा सिंहवाहिनी का ही है, जो बुन्देलों की आराध्या देवी हैं। पर काले पाषाण में होने से लोकमान्यता काली की प्रसिद्ध है। चैत्र एवं शारदीय नवरात्रों में यहाँ विशाल मेला लगता है।

भरौली का शिव मंदिर – भाण्डेर से सात - आठ किमी. दूर पूर्व की ओर भाण्डेर - चिरगांव मार्ग पर बायीं ओर दो पहाड़ियों के बीच ग्राम भरौली में लगभग दो हजार वर्ष पुराना विशाल मंदिर स्थित है। जनश्रुति है कि इस मंदिर का निर्माण देवताओं ने एक ही रात्रि में किया था। जिस समय मंदिर का शिखर देवता निर्मित कर रहे थे उसी समय किसी पिसनहारी ने चकिया का डड़ा ठोक दिया इसलिए देवता इसका शिखर अधूरा छोड़कर अदृश्य हो गये। पूरा मंदिर कलात्मक रूप में निर्मित है, किन्तु शिखर का ऊपरी भाग साधारण पत्थरों को रखकर बनाया गया है। मंदिर में चारों ओर द्वार हैं। छत अलंकृत और कलात्मकता लिये है। उत्तर द्वार के निकट नाग मूर्ति है। चारों प्रवेश द्वार एवं गर्भगृह सैकड़ों मूर्तियों से आच्छादित हैं। इस मंदिर का निर्माण सम्भवतः भारशिव राजाओं ने करवाया होगा। भारशिव गुप्त - वाकाटक राजाओं के समकालीन थे।

भाण्डेर पूर्व काल में बौद्ध धर्म का प्रमुख स्थल रहा होगा। भाण्डेर में बौद्धमठ एवं बौद्ध धर्म से सम्बद्ध अन्य स्थल भी मिलते हैं। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के पूर्वज भी चिरगांव में भाण्डेर से ही आकर बसे थे।

- विद्यानगर कॉलोनी

चिरगांव मो. 7007097275

बुंदेली लोक कथाओं में विश्वास और मान्यता

- डॉ. संध्या टिकेकर

इस संसार में , बुद्धिमत्ता के कारण मनुष्य की एक अलग और विशिष्ट पहचान है।तर्कना और कल्पना-ये बुद्धि की दो अद्भुत पक्तियां हैं।तार्किकता के आधार पर मनुष्य करणीय -अकरणीय , योग्य -अयोग्य , न्याय-अन्याय आदि का निर्धारण करता आया है।तर्कों से पुष्ट बुद्धि से वह कर्म करने के लिए प्रेरित होता रहा है और बड़ी सीमा तक सफलताएं भी अर्जित करता रहा है। किन्तु यह मनुष्य की प्रकृति का एक पक्ष है। उसका दूसरा पक्ष वे विश्वास और मान्यताएं हैं जिनमें 'तर्क ', पूर्णतः स्थगित होता है। वहां केवल स्वयं के तथा औरों के अनुभव के आधार पर विष्वास किया जाता है तथा निरंतर किया गया यह विश्वास बाद में मान्यता के रूप में सर्व स्वीकृत होता जाता है। कल्पनाएं इन मान्यताओं की वृद्धि में अनेक बार सहयोगी भूमिका निभाती हैं।

जिज्ञासा होती है कि बुद्धिमान मनुष्य ऐसे विष्वासों और मान्यताओं की ओर जाता ही क्यों है , जबकि बुद्धि से उसके लिए हर कुछ संभव है। ऐसा करना क्या उसके थकने , हारने या निराशा के चिन्ह हैं या यह उसके चमत्कार- प्रिय स्वभाव का एक लक्षण है अथवा बौद्धिक -श्रम परिहार का उपाय भर है , मनोरंजन का साधन मात्र है , कि जीवन को संयमित -व्यवस्थित पद्धति से चलाने की दिषा में किया गया एक काल्पनिक उपक्रम भर है। कारण अनेक हो सकते हैं किन्तु यह सूर्य प्रकाश की भांति विशुद्ध सत्य है कि बुद्धिशील मनुष्य को जीने के लिए तर्कों के साथ साथ विश्वास और मान्यताओं की भी आवश्यकता पड़ती रही है।

हमारे देश का लोक साहित्य में ऐसी अनेक मान्यताओं - विश्वासों से भरा हुआ है। लोकगीत और लोक कथाओं में ऐसे अनेक प्रसंग आते हैं जो पूर्णतः विश्वास - मान्यताओं पर आधृत हैं। बुंदेलखंड़ की लोक कथाओं में इसका विस्तृत रूप देखने को मिलता है। आज भी यहां के लोकांचलों में , दूर बीहड़ों में चौपालों पर , अलाव के आसपास अंचलवासियों के बीच ऐसी लोक कथाएं कही -सुनी जाती हैं , जो जीवन की व्यावहारिकता से जुड़ी हुई हैं। इन कथाओं में आज भी जन समाज कों प्रभावित करने और मार्गदर्शन की सामर्थ्य है। डॉ. बलभद्र तिवारी के शब्दों में -'' ये लोक कथायें स्वयं में पूर्ण हैं और बुंदेलखंड के जन जीवन की एक झांकी प्रस्तुत करती हैं।जनमानस को मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आधार पर परिचालित करने की इनमें अद्भुत शक्ति है। साथ ही उदास से उदास व्यक्ति इनके श्रवण पठन से अपने कर्तव्य पथ पर अग्रसर हो जाता है। कथाओं की रागिनी ऐसे उन्मत्त करती है जैसे मल्हार राग । ''

कथाएं मूलतः कहने-सुनने की विधा है। यह कथा कहने वाले पर निर्भर करता है कि वह कथा को रोचक पद्धति से सुनाये। दूरांचल में , अलाव सेंकते कथा कहने वाले , कहने से पूर्व बड़ी अजीब सी भूमिका बांधते हैं- किस्सा सी झूंठी , बातों सी मीठी , घड़ी घड़ी का बिसराम , जाने सीताराम । शक्कर का घोड़ा , सकरपारे की लगाम छोड़ दो दरया के बीच , चला जाय छमा छम , छमा छम । इस पार घोड़ा , उस पार घास , ना घास घोड़ा खों खाय , ना घोड़ा घास खों खाय । '' आदि आदि । कथा सुनाने वाले आगाह भी करते चलते हैं कि - '' कहता तो कहता पर सुनता सावधान चइये , न कहने वालों को दोष ,न सुनने वालों का दोष , दोषओं को जानें किस्सा रचकर खड़ी की। ''

लोक कथाएं जन समाज में नैतिक आचरण का आग्रह करती हैं, अन्याय का प्रतिकार करने के लिए प्रेरित करती हैं तथा प्रकारंतर से जन समाज को शिक्षित करती हैं। बुंदेलखंड़ की लोक कथाओं में यह जन विश्वास बहुत गहरे तक पैठा हुआ है कि - पसीने की कमाई ही फ्लती है और परिश्रम कभी भी व्यर्थ नहीं जाता है। एक लोक कथा का अत्यंत गरीब ब्राह्मण , पत्नी के कहने पर राजा के पास इच्छानुसार दान पाने के लिए जाता है और कहता है कि - '' मैं और कुछ नहीं चाहता , आप अपने पसीने की कमाई में से मुझे चार पैसे दान दीजिए ।'' राजा चिंता में पड़ जाता है कि इस अकूत रात खजाने में मेरी मेहनत की तो एक फूटी कौड़ी भी नहीं है। तब दान का निश्चय कर वह रानी के साथ मजदूरी करता है। राजा खलात धौंकता है , लोहा पीटता है। रानी कोयला ला -लाकर भट्टी में डालती है, पानी से हौज भरती है और इस प्रकार मजदूरी से कमाये चार पैसे राजा उस ब्राह्मण को दान कर आनंदित होता है। राजा को परिश्रम का महत्व समझ में आता है , उसके मन में श्रम के प्रति सम्मान बढ़ता है। चूंकि राजा ने परिश्रम पूरे मन से किया था इसलिए वह व्यर्थ नहीं जाता । आगे वही चार पैसे ब्राह्मण द्वारा तुलसी चौरे में रोपे जाने से, मोती देने वाले पौधों के रूप में पल्लवित होते हैं और राजा के गाढ़े दिनों में यही टोकरी भर भर मोती , प्रजा को दान देने के काम आते हैं जो राजा की गरिमा को बनाये रखते हैं। परिश्रम का महत्व समझ कर राज निष्चय करता है कि अब वह राज खजाने का एक भी पैसा स्वयं पर खर्च नहीं करेगा।

बुंदेली लोक कथाओं की चर्चा आज के समाज में तभी होती है , जब समाज में किसी न किसी प्रकार का अन्याय देखा जाता है। इन कथाओं का विश्वास है कि समाज में न्याय के लिए अन्यायी , दुष्टों का अंत जरूरी है। सामान्य रूप से यदि दुष्टों का अंत संभव न हो तो , चौदह विद्याओं और चौंसठ कलाओं का उपयोग भी अनुचित नहीं है। एक कथा के अनुसार - एक राजा की आठवीं रानी को उसकी सात बांझ सौतनें , डाहवष ' कागबिडारिन ' बना देती हैं। आठवीं रानी का दोष बस इतना होता है कि वह दो पुत्रों और एक पुत्री को जन्म देती है। सातों रानियां षडयंत्र कर , आठवीं को तिरस्कृत कर , कौए भगाने के काम में लगा देती हैं। आठवीं रानी लंबे समय तक अन्याय और षोषण को सहती है। कालांतर में रानी पद्मिनी अपनी चौदह विद्याओं और चौंसठ कलाओं से , सतरानियों के इस षडयंत्र को भांप जाती है और आठवीं को षडयंत्र मुक्त कर , रानी का सम्मान दिलवाती है।शडयंत्रकारी सातों रानियां दीवाल में चुनवा दी जाती है। यह लोक कथा इस विश्वास को परंपरा में ढालती है कि दुष्ट प्रवृत्ति के लोग समझाइश से नहीं मानते , उनका अंत कर देने में ही भलाई है। यह भी कि - अच्छे लोग हमेशा सम्मान के पात्र होते हैं।

लोक कथाएं समाज की नीति-मार्गदर्शक होती हैं। समाज में व्यवस्था और सुसंस्कारो को चलायमान रखने के लिए ,

नीतिगत बातों के प्रचार -प्रसार के उद्देश्य से कथाएं कहने का चलन बहुत पुराना है। इनमें कल्पनात्मक शक्ति का प्रयोग अपने चरम पर दिखाई देता है। कितनी विचित्र बात है कि लोक कथाएं एक ओर तो बुद्धि की तर्कना शक्ति को लगभग नकारती सी है , वहीं वह बुद्धि की इतर शक्ति अर्थात कल्पना को उसकी अनंत व्यापकता से स्वीकारती है। ऐसा संभवतः इसलिए है कि तर्क की प्रकृति विभेद , विखंडन और अहम् को पुष्ट करने की है , जबकि सामान्य रूप से कल्पना की प्रकृति सौम्य , उदार और एकत्रीकरण या सामूहिकता की रही है। कथा कहने वाला एक होता है ,पर सुनने वाले एकाधिक या समूह में होते हैं। फिर कथा सुनाने का उद्देश्य भी अंततः उदार मनोभावों का प्रसार-प्रचार कर , विभेद और अहम का शमन करना ही रहा है। इन कथाओं में अनेक ऐसे काल्पनिक प्रसंग आते हैं , जिन पर विष्वास करना कठिन होता है किन्तु ये ही कथा में रोचकता लाते हैं यथा- हंसन परी के हंसने से फूलों का और रोने से मोतियों का झरना , स्वर्णकन्या के एक केष से पेड़ को दो टुकड़ों में काटना , साधु का अपनी जटाओं में हड्डियों की पोटली को छिपाना , बांस - वृक्ष से फट कर चंदा -सूरज से दो बालकों का निकलना , नर मुंड को गुंथे आटे में छिपाकर अंत्येष्टी के लिए ले जाना , पोखर के बीच ज्वाला में से , झूलते हिंडोले में बैठे लड़का-लड़की का दिखाई देना आदि आदि । ऐसे प्रसंग सुनने की उत्सुकता को निरंतर तीव्र करते हैं।

‘सबरंग दगाबाज ’की रोचक कथा इस मान्यता को पुष्ट करती है कि चुनौतियों का स्वीकार करने वाला , समाज - देश में सम्मान पाता है। सबरंग एक चालाक चोर है। वह बिना कोई निशान छोड़े चोरी करता है। राजा की हर चुनौती को दुस्साहस से स्वीकार कर , अपनी बुद्धिमानी के कारण वह राजा की नजरों में सम्मान का पात्र बन जाता है। खुश हो कर राजा उसे अपना आधा राज्य दे देता है। अनेक कथाएं यह मानती हैं कि प्रत्येक मनुष्य गुणों- अवगुणों की खान है। उसके गुणों को , योग्यता को पहचान कर , उसका लोक के लिए उपयोग किया जाना चाहिए। लोक कथा ‘ सोन चिड़िया ’ का पात्र ‘ बलराज ’ डाकू है। डाके डालकर वह ग्रामीणों को परेशान करता है किन्तु राजकुमार उस डाकू के गुणों को पहचान कर उससे योग्यतानुरूप काम लेता है। महत्व पा कर डाकू बलराज , राजकुमार और उसके राज्य की अनेक संकटों से रक्षा करता है तथा राज्य में खुशहाली लाने में सहयोगी बनता है। शेष बुराई करने वालों का अंत भी बुरा होता है। बलराज से सारी हकीकत जान लेने के बाद राजा अपने उन तीनों पुत्रों को देश निकाला दे देता है, जो अब तक छोटे राजकुमार के विरूद्ध निरंतर षड्यंत्र रचते रहे थे।

हुनरमंद व्यक्ति दुनिया में अपने तरीके से जीवन गुजारते हैं। दुनिया -समाज के बनाये नियमों की वे परवाह नहीं करते हैं। ऐसे लोग झक्की , सनकी , मक्कार , पागल तक कहाते हैं।ये हुनरमंद जब अपने हुनर का कमाल दिखाने पर आते हैं तो बहुतों का भला कर जाते हैं। उनका हुनर देख लोग दांतों तले अंगुली दबा लेते हैं। ‘ बढ़ई का कुंवर ’ ऐसा ही हुनरमंद पात्र है। वह राजा के लिए एक अद्भुत पलंग बनाकर , उसे आने वाले संकटों से बचाता है। उसके राज्य को धन-धान्य से समृद्ध करता है और बिछुड़े हुए मनों वाले राज परिवार को पुनः एकत्र कर , प्रेम से जीने का अवसर प्रदान करता है। यहां संकेत यह भी है कि अतिषय हुनरमंदों को उनके ढंग से जीने की स्वतंत्रता दी जाना चाहिए। समाज को उनके साथ धैर्य से पेश आना चाहिए ।

अनेक बार पूर्वजों द्वारा , औरों पर किए गए अन्याय - अत्याचार का परिणाम आनेवाली कई पीढ़ियों को भुगतना पड़ता है, इसलिए यह ध्यान रखना आवश्यक है कि अपने व्यवहार से किसी को दुख न पहुंचे। कथा नायक ‘ लाखा बंजारा ’ स्वयं एक भला मानुस है। वह औरों का दुख-दर्द समझता है, लोगों की मदद करता है ,किन्तु जब वह गढ़पैरा के वासियों के लिए तालाब खुदवाता है तो असफल रहता है। तालाब में पानी नहीं ठहरता है। तब गंधर्व से उसे ज्ञात होता है कि - बनजारों ने तालाब की भूमि पर वरूणवंशियों की हत्या की थी इसलिए वहां पानी नहीं ठहरता है। तालाब की धरती को शाप मुक्त करने के लिए तब लाखा अपने बड़े लड़के-बहू की बलि देता है।फिर तालाब जल से लबालब हो उठता है। आज भी ऐसी मान्यता है कि वह तालाब प्रति वर्ष दो बलियां लेता ही है।

बुंदेली लोक कथाओं का वैज्ञानिक आधार कितना ही कच्चा क्यों न हो , श्रोताओं को चमत्कृत अवश्य करता है। अज्ञात स्त्रोत वाली इन कथाओं की लंबाई का भी कोई निश्चित छोर नहीं होता है। खुल जा सिम-सिम की भांति इनकी घटनाएं एक के बाद एक खुलती चली जाती हैं।ये सुनने वालों के मन का बोझ हल्का करती हैं। उन्हें सहज आनंद की स्थिति में लाती हैं। लोकांचल की परतों में दबी , ऐसी अनेक बुंदेली लोक कथाओं को आधुनिक जन संचार माध्यमों से अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाने की आवश्यकता है , जिससे आम जन इन कथाओं की अन्तर्निहित शक्ति को पहचान कर ,उनका आस्वाद ले सकें।

- शासकीय कन्या महाविद्यालय
बीना

बुन्देली गीत-चेतावनी

- शोभाराम दाँगी

जड़कारे खां उन्ना चानें गद्दा और रजाई।
घर में एकऊ पल्ली नइयां का ओड़ै भौजाई।।
कथरी बिछी प्याँर के ऊपर बेई फटी पुरानी।
पिल्लां से पल्ली में पर गय आ गई घरें गिरानी।।
कैसें होत गुजारौ आसों रो रइ वा भौजाई। घर.......
घर में फूटी कौड़ी नइयां कासें ल्यावै पल्ली।
गद्दा किते बिछारव चिमना परै किते वो कल्ली।।
फूटी कौड़ी मिलै कितऊ ‘ना’ सिर पै है मैंहगाई। घर.......
मैंगाई नें आन दबोचों नंगे, बैठे मौड़ी-मोड़ा।
करी मिलावट सबइ तरां से खेलें चंगा-कोड़ा।।
कौन काम की मांगी पिसिया कत में वो झुल्लाई। घर.......

ग्राम व पो.-नंदनवारा,
जिला-टीकमगढ़(म.प्र.)
मोबा.-9753113660

बुंदेली आभूषण परंपराः प्राचीनकाल से अब तक

- डॉ. (सुश्री) शरद सिंह

आभूषण अथवा अलंकार सौन्दर्य को पूर्णता प्रदान करने वाला तत्व है। अलंकार शब्द अलमक़ार से बना है। ''अलम'' का अर्थ होता है बस अर्थात पूर्ण संतुष्टि का भाव। इस प्रकार अलंकार का अर्थ है, पूर्ण संतुष्टि का भाव प्रदान करने वाला। इसी प्रकार आभूषण शब्द ''भूषण'' (अर्थात् धारण करना) में ''आ'' उपसर्ग लगाकर बना है - आभूषण। यहां ''आ'' का अर्थ है पूर्ण रूप से अथवा समग्र रूप से तथा भूषण का अर्थ है सज्जित करने वाला। अर्थात् आभूषण का अर्थ है सज्जा को पूर्णता प्रदान करने वाला।

मानव को अपने हृदय में स्थित कोमल भावनाओं के प्रति चेतना जाग्रत होने की आरंभिक अवस्था से ही प्रसाधन की प्रवृत्ति मानव जीवन का अभिन्न अंग रही है। नागरिक जीवन से दूर रहने वाले अनपढ़ वनवासी मानव भी प्रसाधन को अपनाते हैं, वे कृत्रिम प्रसाधनों के स्थान पर प्राकृतिक प्रसाधनों का प्रयोग करते हैं। कण्व ऋषि की पालित कन्या शकुन्तला के संबंध में कालिदास ने वर्णन किया है कि वह वनलता और वन पल्लवों से अपनी सज्जा करती थी। जब दुष्यन्त ने शकुन्तला को प्रथम बार देखा, और उसकी ओर आकृष्ट हुआ था। शकुन्तला ने उस समय वृक्ष का बल्कल (छाल) पहना था

क्षौमं केनचिदिन्दु पाण्डुतरूणीमा ल्यमाविष्कृतम्।
निष्ठ्यु तश्चरणोंपभोग सुलभो लाक्षारसः केनचिम्।।
कृतं न कर्णर्पित बन्धनम् सखे शिरीषमागण्डविलम्बिकेशरम्।।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव मधुराणां मण्डनं नाकृतिनाम्।।

श्रेष्ठतम वस्त्र धारण करने, अन्य श्रृंगार प्रसाधन उपकरण आदि का प्रयोग करने के बाद भी अपेक्षित सौन्दर्यबोध की कमी रह जाती है। यह अलंकार (आभूषण) धारण करने पर ही पूर्णता को प्राप्त होता है। ऋग्वेद में भी अलंकार धारण करने का उल्लेख किया गया है -

वायवा याहि दर्शतेमे सोमा अरंकृतः। तेषां पाहि श्रुधी हवम्।।

''तिय लिलार की बेंदी'' (बिहारी सतसई) चाहे कामिनी का ''अगनित उदोत'' बढ़ा दे पर अलंकारों की कमी सौन्दर्य के पूर्ण प्रदर्शन में बाधक बन जाती है। आपादमस्तक, अंग प्रत्यंग रत्नजटित आभूषणों से युक्त होने पर किसके मुख से ''वाह !'' न निकले पड़ेगा। यही ''वाह !'' या ''बस !'' का भाव पूर्ण संतुष्टि का भाव है, जिसे अलंकरण उत्पन्न करते हैं।

रामकथा में आभूषण को पहचान के रूप में वर्णित किया गया है। तुलसीदास ने निखा है कि लक्ष्मण श्रीराम से सीता माता के बारे में कहते हैं कि ''नाहं जानामि केयुरे नाहं जानामि कुण्डले । नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादा वन्दनातु ।।'' (न तो मैं इन बाजूबन्दों को जानता हूँ और न इन कुण्डलों को, लेकिन प्रतिदिन भाभी के चरणों में प्रणाम करने के कारण इन दोनों नूपुरों को अवय पहचानता हूं ।) आभूषणों से नारी की रुचि का पता चलते ही है, तत्कालीन आर्थिक और सामाजिक स्थिति की भी पहचान हो जाती है। यदि प्राचीन समय में पैरों में स्वर्णाभूषण या रत्नजटित आभूषण पहने जाते थे, तो तत्कालीन समृद्धि का पता लगा जाना स्वाभाविक है। किसी परिवार की नारी के आभूषणों से उसके स्तर का ज्ञान हो जाता है। कुछ आभूषण सौभाग्य के प्रतीक रूप में मान्य हैं, जिन्हें देखकर परिणीता स्त्री की पहचान हो जाती है। आभूषणें से जूड़े लोकविश्वास लोकसंस्कृति के अवयव हैं। बिछिया बदलने के लिए अच्छे दिन चुने जाते हैं। लोकोत्सवों और पूजा में आभूषण शुभत्व के प्रतीक हैं। संक्षेप में, जीवन के सुख-दुःख के साथ आभूषणों का सार्थक जुड़ाव रहा है। कैकेयी कोप-भवन में जाकर लाखों की लागत के मोतियों के हार तथा सुंदर बहुमूल्य आभूषण अपने अंगों से उतारकर फेंक देती है (रामायण, 2/9/56), जबकि सीता पति के हाथ की मुद्रिका पाकर इतनी प्रसन्न होती है, मानो उनके पतिदेव ही उन्हें मिल गये हों (रामायण, 5/36/4)। इसी तरह के उदाहरण लोकगीतों और लोकगाथाओं में मिलते हैं।

बुंदेलखंड के आभूषणों की एक लंबी परम्परा रही है, जो प्रागैतिहासिक युग से लेकर वर्तमान काल तक जीवित रहकर सौंदर्य-बोध का इतिहास लिखती आ रही है। यहां का पुरातत्त्व, मूर्ति-ल्पि, चित्रकला और ग्रंथ उस इतिहास के साक्षी रहे हैं। इस पथरीले अंचल में पुलिंद, निषाद, शबर, रामठ, दांगी, कोल, भील, गोंड़ आदि जातियां निवास करती थीं । उनके स्त्री-पुरुष पक्षियों के पंखों, कौड़ियों, सीपियों, नागमणियों आदि से अपने अंगों की सज्जा करते थे । पुष्पों और पत्तियों को भी अंगों के अनुरुप गूँथा जाता था । पाषाण युग में पत्थर के और ताम्रयुग में तांबे के हार, कंगन, बुंदे, कटिसूत्र और नूपुर जैसे आभूषण पहने जाते थे, भले ही उनके नाम दूसरे रहे हों । बालों में क्लिपों जैसा गहना होता था । रामायण-काल में वैदिक संस्कृति का प्रसार होने से बैदिक आभूषण-चक्र, कुण्डल, हिरण्यपाणि (अंगूठी), माला, कड़े, बाजूबंद, न्योचनी (करघनी) और बोलियों की घुसपैठ जारी हुई थी।

महाभारत काल : इस समय तक सोने-चांदी के आभूषण पहने जाने लगे थे । स्त्री और पुरुष-दोनों अंगों को सुसज्जित करने में रुचि रखते थे । उत्सवों में देवताओं के प्रतीकों तक को आभूषित करने की प्रथा थी (महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 63, छंद 20-21)। पुष्पाभूषणों का भी प्रचलन था । आदिवासी और निर्धन वर्ग के लोग तांबे के आभूषण पहनकर उल्लसित रहते थे ।

जनपद काल : चेदि और दार्ण सांस्कृतिक इकाई के रुप में परिणत हो गये थे । कुण्डल, स्वर्णमाला, सिक्कों का हार, केयूर आदि

आभूषण प्रमुख रुप से चर्चित थे, पर लोक और विशेष रुप में आदिवासियों के बीच चूड़ा, तोड़ा, पैरी, सतुवा, बहुँटा, झरका, जुरिया, टोडर, टकार आदि प्रचलित थे । लोक ने दोनों तरह के आभूषणों को अपनाकर एक समन्वित मानसिकता से काम लिया, जिसका सहयोग जनपद की स्वच्छंदता ने दिया । बौद्ध-धर्म की लोकपरकता ने लोक की गरिमा को ऊंचा उठाने का महत्कार्य किया था, जिससे लोकाभूषणों को प्रधानता मिली । बुंदेली अंचल के आभूषण इसी लोकाभूषण की चेतना के सुफल हैं।

मौर्य-शुंग काल

इस काल में स्त्री-पुरुष सोने-चांदी के आभूषण पहनते थे । उनमें तरह-तरह की कारीगरी होती थी । भरहुत और सांची की मूर्तियों में कुण्डल, हार, कण्ठे, बाहुवलय, करधनी, नूपुर आदि कई प्रकार के आभूषण उत्कीर्ण हैं, जिनसे उनके प्रचलन की जानकारी मिलती है। पुरुष कानों में कुण्डल, गले में कण्ठा, वक्ष पर हार और बाहुओं में अंगद पहनते थे, जबकि स्त्रियां करधनी, तौक, मोहनमाला, कुण्डल, सीसमांग, कड़े और चूड़ियां धारण करती थीं । कटि का करधनी और गले की तौक कई लरों के होते थे । अंगुलियों में अगूठियां और मस्तक पर बिंदी-टिकुली विशेषरुप में शोभित थीं । करधनी में घंटिकाओं की अलंकृति मन को झंकृत कर देती है। चन्दी, सुर्दाना आदि यक्षिणियों के आभूषण ही लोकप्रचलन में थे ।

नाग-वाकाटक काल

नाग बेसनगर (विदिशा) और पद्मावती (पवायां) को केन्द्र बनाकर लगभग साढ़े तीन सौ वर्ष राज्य करते रहै। वाकाटकों ने कुछ भूभाग पर ढाई सौ वर्ष तक शासन किया और गुप्त नर शेों का भी एक भाग पर अधिकार रहा । बेसनगर की मूर्तियों में कुण्डल, कण्ठा, हार और अंगद सामान्य हैं। पवायां में प्राप्त मणिभद्र यक्ष के गले में हार, भुजाओं में भुजबंद और कलाइयों में कंगन उत्कीर्ण हैं। संगीत-समारोह प्रदर्कित करते एक प्रस्तरखंड में एक नर्तकी के हाथों में चूडियां, पैरों में चूड़े, कानों में झमकीदार कर्णाभूषण और साड़ी के दोनों ओर किंकणियों की झालर आभूषित है। स्पष्ट है कि इस युग से वस्त्रों में टांके जाने वाले आभूषण प्रचलित हो गये थे ।

देवगढ़ (ललितपुर) के विष्णु मंदिर (गुप्तकालीन) में मानवी और दैवी स्त्री-पुरुष आभूषण पहने उत्कीर्ण हुए हैं। कानों में कुण्डल या कर्णफूल, गले में चंद्रहार या एकावली, भुजाओं में भुजबंद या अनन्तवलय, कलाइयों में कंगन, हाथ की अंगुलियों में मुँदरी और कटि में मेखला या कटिसूत्र-स्त्री-पुरुष और देवी-देवता के स्तर के अनुरुप बनक (डिजाइन) में पहने जाते थे । पैरों में नूपुर सभी वर्गो की स्त्रियां पहनती थीं, पर देवीयां अपवाद थीं । नाक में नथनी या नकफूल की अनुपस्थिति खटकने वाली है।

हर्ष काल

बुंदेलखंड की अटवी में शबरों का निवास था, जिनके सेनापति के अलंकरण का वर्णन महाकवि बाण ने 'कादम्बरी' में किया है। शबर घुंघची और मोतियों से गूँथे हुए हार, स्थूल कौड़ियों की मालाएँ तथा सांपों की मणियां आभूषण के रुप में पहनते थे । 'हर्षचरित' के अनुसार कच्चे शी शे का बाला और गोदंती मणि से जुड़ा हुआ रांगे का कड़ा उनका प्रचलित आभूषण था ।

बाण के अनुसार पुरुष कानों में कर्णावतंस (बालियां), त्रिकण्टक (दो मुक्ताओं के बीच पन्ना जड़ा हुआ त्रिकोणकण्टक), कर्णोत्पल, पत्रांकुर, कर्णपूर और कुण्डल या मणिकुण्डल, गले में मुक्ताहार या हार, हाथों में कंकण या कड़े तथा कटि में राना (करधनी) पहनते थे । वे अपने बालों को बालपट्ट से बांधते थे । ये आभूषण स्त्रियां भी धारण करती थीं । इनके सिवा वक्ष पर रत्नों की प्रालम्ब माला, सिर पर के शों में चूड़ामणि मकरिका, माथे पर टिकुली और पैरों में हंसक नूपुर भी पहनती थीं पुष्पों के आभूषणों का भी उल्लेख है। चूड़ामणि मकरिका (मकर की बनक का सीसफू ल) को छोड़कर शेष आभूषण देवगढ़ की मूर्तियों के आभूषणों से मेल खाते हैं।

चंदेल काल

दसवीं-ग्यारहवीं सदी में आभूषणों का प्रचलन बहुत अधिक था। नख-शिख अलंकरण की लोकप्रियता के प्रमाण खजुराहो की मूर्तिकला में स्पष्ट दृष्टिगत् हैं। जिनमें कर्ण फूल, हार, गुलुबंद, अर्धहार, लॉकेट की विविध शैलियां मिलती हैं। बाजूबंद, कंकण, कटि सूत्र की विविध शैलियां मिलती है। पायल, अंगूठी, लौंग (नासिका भूषण), नुपुर, केयूर, बोरला - आदि धारण किया जाना बहु प्रचलित था। दसवीं- ग्यारहवीं सदी में आभूषण निर्माण अपनी चरम कलात्मकता में था। देवी-देवता, राजपुरुष, राज-स्त्रियां सभी वर्ग की प्रतिमाओं पर आभूषणों का प्रचुर अंकन मिलता है।

आल्हा गाथा में नौलखा हार की कथा-सी है, जिससे सिद्ध है कि हार गले का सर्वप्रिय आभूषण था । 'रुपकषटकम्' में वत्सराज की यही मान्यता है (कर्पूर, लोक 21) । खजुराहो संग्रहालय में सुरक्षित कृष्ण-जन्म के ल्पिप में देवकी हार और ग्रैवेयक-दोनों पहने हैं। कृष्ण-संबंधी प्रसंगों को उत्कीर्ण करने के जितने नमूने हैं, उनमें कृष्ण भी हार और ग्रैवेयक धारण किये हुए प्रदर्कित हैं। अन्य मूर्तियों में कण्ठा के साथ खंगौरिया और हमेल जैसे आभूषण दााये गये हैं। एकावली भी बहुत लोकप्रिय थी । मुक्तामाल और वनमाला भी कहीं-कहीं अंकित हैं। कलचुरी मूर्तियों में माला खासतौर से तिलड़ी माला सामान्य थी । पुष्पमालाओं से सज्जा की प्रथा भी थी । कानों में कुण्डल सभी स्त्री-पुरुष पहनते थे, पर कर्णफूल स्त्रियों का आभूषण था (रुपकषटकम्, रुक्मिण. लोक 4) । सिर में सीसफूल एवं बीज सभी स्त्रियां धारण करती थीं (रुपकषटकम् पृ. 137) । कटि में करधौनी या मेखला हर चंदेली और कलचुरी मूर्ति में उत्कीर्ण है। करधनी को सात लड़ी होने के कारण सतलड़ी कहलाने का गौरव मिला था ।

हाथों में केयूर, अंगद, बरा, वलय, कंकण, कंगन, खग्गा, चूड़ियां

और पैरों में नूपूर, सांकर या पायजेब जैसा आभूषण, बिछिया और अनौटा प्रचलन में थे (रुपकषटकम्, पृ. 59, 29, और त्रिपुरी की योगिनी मूर्तियों में उत्कीर्ण)। पुरुष और बालक तोड़े और कड़े भी पहन लेते थे। महोबा से प्राप्त नीलतारा की प्रतिमा के कानों में कर्णवलय या कुण्डल जैसा आभूषण काफी बड़े आकार का है, जिसका प्रचलन मध्ययुग में नहीं मिलता। नाक के किसी आभूषण का पता नहीं चलता, इससे प्रतीत होता है कि नाक के आभूषणों का प्रचलन इस्लामी संस्कृति की देन है। साथे पर टिकुली जैसा आभूषण कंदरीय मंदिर की सुंदरी प्रतिमा में दाााया गया है। वत्सराज के रुपकों में पुष्पों के आभूषणों का वर्णन है।

तोमर काल : 15वीं शती के येष्ठ कवि विष्णुदास हिन्दी की रामकृष्ण काव्य-धाराओं के प्रवर्तक कवि हैं। उन्होंने एक स्थल पर लिखा है-'अति आभरन रुप की रासि', जिससे उनकी इस मान्यता का पता चलता है कि आभरण सौंदर्य की राा हैं। उनकी कृतियों-'रामायणी-कथा' और 'महाभारत' में तथा एक कथाकृति 'छिताईचरित' में आभूषणों का यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है। कृतियों के अनुसार स्त्रियां माथे पर टीका, कानों में तरिका या तरिवन और खुटी, नाक में नकफूली, गले में कण्ठश्री, छूटी, गजमुक्तामाल, मोतीहार, हार; हाथों में चूरि (चूड़ी), पहुंची कंकन और पैरों में नेवर पहनतीं थीं। पुरुष कानों में कुण्डल; गले में कण्ठमाल, कण्ठश्री, हार, चौकी, नवग्रही; हाथों में कंकन और मुंदरी तथा कटि में मेखला धारण करते थे।

बुंदेल काल : बुंदेलों के पहले खंगारों का राज्य गढ़कुण्डार को सांस्कृतिक केन्द्र बनाने में सफल रहा, क्योंकि सौ-डेढ़ सौ वर्षों में जहां खंगारों द्वारा स्थापित मूल्य विकसित हुए, वहां दो सौ वर्षों के दीर्घकाल तक बुंदेलों के आर्दा भी पुष्पित हुए। ओरछा तो 1531 ई. में बसाया गया था और 1539 में उसके दुर्ग का निर्माण हुआ था, अतएव 1531 ई. तक गढ़कुण्डार ही राजधानी बना रहा। इस संदर्भ में गढ़कुण्डार का योगदान लोकपरम्परा को पालने-पोसने में है। उसने हर दिशा में लोकमूल्यों और लोकरीतियों को आगे रखा है। कुछ विद्वानों का मत है कि 'खंगौरिया' खंगारों की देन है। यदि इस मत को न भी माना जाय, तो इतना सही है कि खंगारों के समय में लोकाभूषणों का अधिक प्रचलन हुआ और वे आंचलिक आभूषणों की परम्परा के विकास में सहायक हुए।

गढ़कुण्डार की संस्कृति ओरछा में और अधिक विकास पाकर उत्कर्ष पर पहुँची। 16वीं-17वीं शती में भक्ति की लहरें लोकमन को आंदोलित कर उठीं। एक तरफ विदेशी संस्कृति के तत्व सत्ता का सहारा पाकर अपना जोर आजम रहे थे, दूसरी तरफ संस्कृति की रक्षा के लिए लोकसंस्कृति सबल बन रही थी। इस पृष्ठभूमि में लोकाभूषणों का व्यापक प्रसार हुआ। तुलसी ने राम के राजसी रुप के अंकन हेतु किंकिनी, हार, मुक्तामाल, मणिमाल, मुक्तावली, कंकन, कुण्डल और नूपुर का वर्णन किया है। वे विवाह के समय कटि-सूत्र (डोरे की करधनी), बाहुओं के आभूषण, मुद्रिका आदि पहने हुए हैं। उनके उपने (दुपट्टे) में दोनों पल्लों पर मणियों और मोतियों की झालरों ट।की हैं (मानस-बाल. 327/2-4)। लेकिन वे लोक-आभूषणों का उल्लेख करने में नहीं चूके। पैजनियां, पहुँची, नथुनियां कठुला, बघनहा, लटकन आदि के साथ नगफनियां का विस्मरण नहीं कर सके। ये सभी लोकाभूषण हैं। नगफनियां नाग के फन की आकृति का एक आभूषण है, जो कान में पहना जाता है (गीतावली 1/31,1/28)। वेद के साथ लोक का पुजारी ही नगफनियां जैसे लोकाभूषण की परख कर सकता था। 16वीं शती के भक्त कवि हरिराम व्यास ने भी अपने पदों में लोकाभूषणें को स्थान दिया है। उनमें खुटिला, खुभी, झलमली, पोत, गजरा, चूड़ी और पहुँची प्रमुख हैं। उनके साथ ताटंक, नकबेसर, हार, किंकिनी, नूपुर आदि अभिजात आभूषण भी सम्मिलित हैं। (व्यासजी के पद, सम्पा, वासुदेव गोस्वामी, संख्या 368, 369, 370)।

17वीं शती के लोकप्रचलित आभूषणों की सूची आचार्य केशव के एक छंद में मिलती है, जो निबंध के प्रारंभ में उद्धृत किया गया है। उसमें पैर कीर अंगुलियों के बिछिया और अनौट (अनवट, जो बुंदेली में अनौटा हो गया है), पैरों के बांकों, घुंघरु और जेहर; कटि के छुद्रघंटिका (करधनी), हाथ की अंगुलियों के मुँदरी, हाथ के कौंचा में पौंची, कंकन, वलय और चूड़ी; कण्ठ के कण्ठमाल और हार, कानों के कर्णफूल और खुटिला, नाक के नकमोती, माथे का तिलक, मांग का मांगफूल, सीस का सीसफूल तथा वेणी का वेणीफूल उल्लिखित हैं और बारह आभरण को शास्त्रीयता पूरी करते हैं। इतना निचित है कि उक्त सभी आभूषण लोकाभूषण थे और तीन-साढ़े तीन सौ वर्ष तक लोकप्रिय रहे हैं। इनके आलावा ताटक, कुण्डल, कण्ठश्री और गजरा भी प्रचलित थे।

पद्माकर कविराज ने अपने ग्रंथों में कुछ रियासती गहनों, जैसे-कलंगी, गोापेंच और सिरपेंच का उल्लेख किया है। कलंगी सिर पर पहनने का एक जड़ाऊ गहना है, जिसे कलगी भी कहते हैं। सिरपेंच पगड़ी पर बांधने का गहना है। गोा फारसी शब्द है, जिसका अर्थ कान होता है। गोापेंच कानों में पहनने का आभूषण है, जो विद शेी है।

19वीं शती में आभूषणप्रियता इतनी बढ़ गयी थी कि युद्ध में भी दोषरहित आभूषण धारण किये जाते थे। 'शत्रुजीत रासो' में कवि ने लिखा है- ''तहँ जंग काज दूषन रहित भूषण मंडियो।'' कविवर गुमानकृत 'कृष्णचंद्रिका' में आभूषणों की वही बहार है, जो बोधा या पद्माकर के ग्रंथों में मिलती है। उसमें गुल्क और करत्र नये नाम हैं- 'उतै फैल पाटीन पै गुल्क भारे। मनो नील आकास पै तेज तारे।' (16/9) और 'बिच बाहु अंग करत्र कंकन मेखला कटि सों कसी' (15/24)। पहले उदाहरण में गुल्क मोतियों की

माला है, जो पाटीन (या पटियों) पर पड़ी रहती है। कवि ने पाटीन का अर्थ गले का एक गहना बताया है, जो ठीक नहीं बैठता। शिख-नख के क्रम से वह गले का वर्णन नहीं है। दूसरे उदाहरण में बाहु केर गहने करन्न और कंकन दिये गये हैं। कौंचनग कौंच पर्वत में पाये जाने वाले नग थे, जो आभूषणों में जड़े जाते थे।

ईसुरी का फागों में वर्णित गहने हैं-पैर में पैजना, पैजनियां; कटि में करधौनी, हाथ में ककना, गजरा, चुरीयां, बाजूबंद, बजुल्ला, छापें, छला, मुँदरी गले में छूटा, गुलूबंद, गजरा, कंठा, बिचौली, छुटिया, पोत का गजरा, कठला; कान में कर्णफूल, लोलक; नाक में पुँगरिआ, दुर माथे में बेंदा, बेंदी, बूंदा, दावनी टिकुली। छंदया फाग केर पुरस्कर्ता भुजबल ने एक फाग में अनेक गहनों के नाम दिये हैं, जो क्रमबद्ध रुप से यहां प्रस्तुत हैं-सिर में सीसफूल, बीज; वेणी में झाबिया, माथे में बेंदी, दावनी, टीका; कानों में कर्णफूल, सांकर, लोलक, ढारें, बारी, खुटिया नाक में बेसर, पुँगरिया; गले में सरमाला, चंद्रहार, सुतिया, पँचलड़ीं, बिचौली, चौकी, लल्लरी; हाथ की अंगुलियों में मुँदरी, छल्ला, छापें; बाजू में बरा, बजुल्ला, बगवां; कौंचा में ककना, दौरी, चूरा हरैयां बंगलियां चूड़ी, नौघरई (नौग्रही), पछेला; कटि में करधनी, गुच्छा; पैर में कड़ा-छड़ा, चुल्ला, बाकें, घुमरी, पायजेब, पांवपोा, पैजनियां, पैजना; पैर की अंगुलियों में बिछिया, गेंदें, चुटकी, गुटियां और अनवट।

'लक्ष्मीबाई रासो' (1904 ई.) में सैनिकों की सज्जा के लिए करधौनी बजुल्ला, कंकन, तोड़ा, पौंचियां, मुँदरी, छला, गुंज, गोप, सेली जैसे गहनों का उल्लेख है (भाग 4, छंद 11)। नारी के आभूषणों में मुहरमाला, चिचिपिटी और जेहर नये हैं, जिनमें पहले दो गले के और तीसरा पैर का है।

इस युग के अंत में आभूषणों का जगमगाहट कम होने लगी थी। पैरों में पैजना, बिछिया, अनौटा; कटि में करधौनी, हाथों में बरा और खग्गा, गले में खंगौरिया, हमेल, सुतिया; कानों में कनफूल, बाली; नाक में पुँगरिया तथा माथे में बीज-दाउनी प्रमुख थे। उनमें भी बदलाव ुरु हो गया था। भारी आभूषणों के स्थान पर हल्के आभूषण आ गये थे, जैसे-पैरों में अवनोखा, लच्छा और छैलचूड़ी, हाथों में दस्तबंद, बेलचूड़ी, चूरा और गुंजें, गले में मटरमाल और हार, कानों में ऐरन और झुमकी तथा माथे में बैंदी।

अभी चालीस वर्ष पहले बोरादार पायल चलती थी, जिसकी चौड़ाई डेढ़ इंच और वजन एक सेर होता था। धीरे-धीरे उनकी चौड़ाई और वजन तथा बोरा (घुंघरु) कम होते गये तथा अब सौ डेढ़ सौ ग्राम की बौरादार और बिन बोरा की झूलादार बीस-पच्चीस ग्राम तक बनती हैं। आजकल नगरों में माथे में बेंदी, नाक में नथ और कील, कानों में बाला-झाला, झुमकी, टाप्स; गले में हार, मंगलसूत्र, जंजीर; हाथों में कंगन सैट, चूड़ी, पाटला, अंगूठी; पैर में पायल और बिछिया प्रचलित हैं। गांवों में उक्त आभूषण के अलावा गले में सुतिया और हमेल, कटि में करधौनी, पैरों में बोरादार पायल, अंगुलियों में छला पहने जा रहे हैं।

अब तक गांवों के चलन में बेंदा, टिकुली, छूटा, बिचौली, सुतिया, हमेल, ककना, दौरी, गजरा, बजुल्ला, पुंगरिया, दुर, कनफूल, छापें-छला, चुरियां, करधौनी, पैजना, बिछिया आदि आभूषण प्रमुख हैं।

आभूषण लोकसंस्कृति के लोकमान्य अंग हैं। देह को भांति-भांति के आभूषणों से सजाना मानवीय प्रकृति का एक अभिन्न अंग है। आभूषण उपलब्ध न हों तो उनकी पूर्ति के लिए गोदना (टैटू) बनवाने का चलन आज भी है। बुंदेलखण्ड की लोकसंस्कृति में भी आभूषणों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। चूंकि लगभग मध्यकाल से ही राजनीतिक अस्थिरिता के कारण बुंदेलखंड में आर्थिक विपन्नता का प्रतिशत अधिक रहा लेकिन सोने-चांदी के मंहगें आभूषणों की जगह गिलट के आभूषणों ने ले ली। यद्यपि यह बात भी महत्वपूर्ण है कि बुंदेलखंड के सागर सराफा में निर्मित होने वाले चांदी के गहनों की मांग आज भी दूर-दूर तक है। किंतु ग्रामीण अंचलों में चांदी के आभूषण खरीदने की क्षमता न रखने वाले लोगों में चांदी जैसे सुंदर गिलट के जेवर बहुत लोकप्रिय रहे हैं।

बुंदेलखंड के आभूषणों की एक लंबी परम्परा रही है, जो प्रागैतिहासिक युग से लेकर वर्तमान काल तक जीवित रहकर सौंदर्य-बोध का इतिहास लिखती आ रही है। यहां का पुरातत्त्व, मूर्तिशिल्प, चित्रकला और साहित्य इसके साक्ष्य देते हैं। बुंदेलखंड के प्रसिद्ध कवि बोधा के इस छंद में बुंदेलखंड में पहने जाने वाले आभूषणों का विवरण मिलता है-

बेनी सीसफूल बिजबेनिया में सिरमौर,
बेसर तरौना केसपास अंधियारी-सी।
कंठी कंठमाला भुजबंद बरा बाजूबंद,
ककना पटेला चूरी रत्नचौक जारी-सी।
चोटीबंद डोरी क्षुद्रघंटिका नयी निहार,
बिछिया अनौटा बांक सुखमा की बारी-सी।
राजा कामसैन के अखाड़े कंदला कों पाय,
माधो चकचौंध रहो चाहिकै दिवारी-सी।

इस छंद में बिजबेनिया, बरा, पटेला, पछेला और बेनीपान जैसे आभूषणों का जिक्र किया है। बार बाजू में, पटेला चूड़ियों के बीच कौंचा में और पछेला कौंचा में ही सबसे पीछे पहने जाते थे। वेणीपान वेणी को बांधने वाला पान केर आकार का आभूषण तथा कण्ठिका एक लड़ी का हार होता था। कवि पद्माकर ने भी अपने दंदों में कलंगी, गोपेंच और सिरपेंच का उल्लेख किया है।

उन्नीसवीं शती के अंतिम चरण से लेकर बीसवीं शती के प्रथम चरण तक के आभूषणों का विवरण कवि ईसुरी की फागों में मिलता है। जैसे- चलतन परत पैजना छनके, पांवन गोरी धन के सुनतन रोम-रोम उठ आउत, धीरज रहत न तन के।

ईसुरी का फागों में पैर में पैजना, पैजनियां, कटि में करधौनी, हाथ में ककना, गजरा, चुरियां, बाजूबंद, बजुल्ला, छापें, छला, गुलूबंद, कंठा, कठलाय कान में कर्णफूल, लोलकय नाक में पुंगरिया, दुरय माथे में बेंदा, बेंदी, बूंदा, दावनी टिकुली आदि का अनेक बार उल्लेख है। वैसे समूचे बुंदेलखंड में जो आभूषण प्रचलन में रहे, वे थे- सिर में सीसफूल, बीजय वेणी में झाबिया, माथे में बेंदी, दावनी, टीकाय कानों में कर्णफूल, सांकर, लोलक, ढारें, बारी, खुटियाय नाक में बेसर, पुंगरियाय गले में सरमाला, चंद्रहार, सुतिया, पँचलड़ीं, बिचौली, चौकी, लल्लरीय हाथ की अंगुलियों में मुंदरी, छल्ला, छापेंय बाजू में बरा, बजुल्ला, बगवांय कौंचा में ककना, दौरी, चूरा हरैयां बंगलियां चूड़ी, नौघरई, चुल्ला, बाकें, घुमरी, पायजेब, पैजनियां, पैजनाय पैर की अंगुलियों में बिछिया, गेंदें, चुटकी, गुटिया और अनवट आदि।

आभूषण पहनने के पीछे वैज्ञानिक कारण-महिला का श्रृंगार माथे की बिंदी से लेकर पांव में पहनी जाने वाली बिछिया तक होता है। इसमें हर एक चीज का अपना एक वैज्ञानिक महत्व है। इनको पहनने से शरीर पर सीधे रूप से सकारात्मक प्रभाव होता है। हिंदू महिलाओं में अंगुलियों में अंगूठियां ,हाथो में चूड़ियां, पैरों में पायजेब ,नाक में लौंग, गले में मंगलसूत्र आदि पहनना कई लोगों को फैशन से ज्यादा और कुछ नहीं लगता होगा लेकिन अनेक विद्वानों का मानना है कि अंगूठी, माला, चूड़ियां, लौंग और पायजेब आदि के पीछे आर्थिक के साथ वैज्ञानिक कारण भी रहते हैं। जैसे मांग में टीका पहनने से मस्तिष्क सम्बन्धी क्रियाएँ नियंत्रित, संतुलित रहती हैं एवं मस्तिष्कीय विकार नष्ट होते हैं।

प्रचलित मान्यता के अनुसार कानों में झुमके, बालियां आदि पहनना फैशन ही नहीं, बल्कि इसका शरीर पर एक्यूपंचर की तरह प्रभाव पड़ता है। मस्तिष्क के दोनों भागों को विद्युत से प्रभावशाली बनाने के लिये नाक और कान को छिदवा कर उसमें कोई भी धातु धारण करना चाहिये। कान मे कोई भी धातु धारण करने से मासिक धर्म नियमित होने मे मदद मिलती है। हिस्टीरिया व हर्निया रोग में लाभ कराता हैं। नाक छिदवाकर नथुनी या लौंग धारण करने से नासिका सम्बन्धी रोग जैसे कि श्वास संबंधी समस्या, सर्दी, खांसी में राहत मिलती हैं। शरीर को ऊर्जावान बनाने के लिए सोने के ईयररिंग और ज्यादा ऊर्जा को कम करने के लिए चांदी के ईयररिंग्स पहनने की सलाह दी जाती है।

विवाहित स्त्रियों का कांच की चूड़ियां पहनना शुभ माना जाता है। कांच में सात्विक और चैतन्य अंश मुख्य होते हैं। इस वजह से चूड़ियों के आपस में खनखनाने से जो आवाज़ पैदा होती है वह नकारात्मक ऊर्जा को दूर भगाती है।

हर अंगुली मे अंगूठी का अलग अलग प्रभाव होता है। हाथ की सबसे छोटी अंगुली में अंगूठी पहनने से छाती के दर्द व घबराहट से रक्षा होती हैं। इसके अलावा ज्वर, कफ दम आदि बीमारियों से राहत मिलती हैं। चांदी की पायजेब पहनने से पीठ, एड़ी, घुटनों के दर्द और हिस्टीरिया आदि रोगों से राहत मिलती है। चांदी की पायल हमेशा पैरों से लगी रहती है जो स्त्रियों की हड्डियों के लिए काफी फ़ायदेमंद है। इससे उनके पैरों की हड्डी को मज़बूती मिलती है।

इसके अलावा पायल से उत्पन्न आवाज़ की तरंगें वातावरण से जब मिलती हैं तो वह स्त्री को नकारात्मक ऊर्जा से बचाती हैं।

पैर की जिन उंगलियों में बिछिया पहनी जाती है उसका संपर्क गर्भाशय और दिल से रहता है। जो रक्तचाप को नियंत्रित रखती है। आमतौर पर बिछिया चांदी की होने की वजह से जमीन से जो ऊर्जा ग्रहण करती है वह पूरे शरीर तक पहुंचाती है जो स्त्री के भीतर ऊर्जा को उत्पन्न करती है। पायजेब की तरह ही चांदी की बिछिया भी स्त्री को हर प्रकार के नकारात्मक प्रभाव से दूर रखती है। चूड़ी कलाई की त्वचा से घर्षण करके हाथों में रक्त संचार बढाती है. यह घर्षण ऊर्जा भी पैदा करता है जोकि थकान को जल्दी हावी नहीं होने देता। कलाई में गहने पहनने से श्वास रोग, ह्रदय रोग की सम्भावना घटती है. चूड़ी मानसिक संतुलन बनाने में सहायक है।

वस्तुतः आभूषण लोकसंस्कृति के लोकमान्य अंग हैं। सौंदर्य की बाहरी चमक-दमक से लेकर शील की भीतरी गुणवत्ता तक और व्यक्ति की वैयक्तिक रुचि से लेकर समाज की सांस्कृतिक चेतना तक आभूषणों का प्रभाव व्याप्त रहा है। आभूषणों के उपयोग का प्रभाव तन और मन, दोनों पर पड़ता है। उनके धारण करने से शरीर का सौंदर्य ही नहीं प्रकशित होता, वरन् स्वास्थ्य भी सुरक्षित रहता था। सौंदर्य-बोध में उचित समय पर उचित आभूषण पहनने का ज्ञान सम्मिलित है। शरीर-विज्ञान के आधार पर ही आभूषणों का चयन किया गया है। पायल और कड़े धारण करने से एड़ी, टखनों और पीठ के निचले भाग में दर्द नहीं होता।

कमर में करधनी धारण करने से कमर में होने वाले दर्द से छुटकारा रहता था क्योंकि पहले भूमि पर बैठ कर अनाज पीसने के लिए चक्की चलाना पड़ता था, उस स्थिति में कमर पर बंधी करधनी मांस-पेशियों में संतुलन बनाए रखती थी।

-एम 111, शांति बिहार कॉलोनी
रजाखेड़ी, मकरौनियाँ, सागर

गज़ल

- प्रेम प्रकाश चौबे

करत चाकरी जो तन गओ । खात गोहनी जीवन गओ ।
बा ए बुला के लतिया डारो, जैसे खाली बासन भओ ।
हम थूंकत सो होत अपावन, उन को मैला पावन भओ ।
आवारा लरका मुखिया को हम खों बो ई महाजन भओ ।
''प्रेम'' बड़ी मुस्कल से हासिल, चन्दा तारे रासन भओ ।

-ब्राह्मण मुहल्ला, कुरवाई, मो. 8770911108

बुन्देलखण्ड में बुन्देलखण्ड की उपेक्षा क्यों?

– डॉ. लखन लाल खरे

बहुत विस्तृत है बुंदेलखण्ड पर हमने सागर, छतरपुर, पन्ना, टीकमगढ़, दमोह, दतिया, झाँसी, ललितपुर, बाँदा, हमीरपुर, महोबा, जालौन, उरई, कौंच-कालपी, चित्रकूट के परिक्षेत्र को पूर्ण और विदिशा, रायसेन, होशंगाबाद, हरदा, जबलपुर, नरसिंहपुर तथा भिंड परिक्षेत्र को आधे-अधूरे मन से बुंदेलखण्ड माना है। शिवपुरी, गुना, अशोकनगर, मुरैना तथा ग्वालियर परिक्षेत्रवासी तो न स्वयं को बुन्देलखंडी मानते हैं और न ही 'पूर्ण बुन्देलखण्ड वाले' इन्हें गले से लगाने का प्रयास करते हैं।

किसी क्षेत्र के एक्य का निर्माण उस क्षेत्र की भाषा, बोली, खान-पान, वेश-भूषा, परंपराएँ, रीति-रिवाज करते हैं। 'उपेक्षित बुंदेलखण्ड' की क्षेत्रीय संस्कृति 'पूर्ण बुन्देलखण्ड' की संस्कृति से किंचितमात्र भी पृथक नहीं है। फिर भी 'उपेक्षित बुंदेलखण्ड' की कला-संस्कृति परम्परा और इतिहास की ओर प्रबुद्ध जनों का ध्यान नहीं जाता- यह आश्चर्य है। रन्नौद, सुरवाया, कदवाहा, तेरही, महुआ, गोलाकोट, पारागढ़, पवाया, तूमैन, राई, बजरंगगढ़, सिंहोनिया, पढ़ावली, मितावली, कुतवार जैसे सैकड़ों स्थल हैं जो विशुद्ध रूप से बुन्देली संस्कृति के अंग हैं। सुखई की फागें ईसुरी की फागों से कम लोकप्रिय नहीं है, पर जब हम इन्हें स्वीकार करें तब न?

बुँदेलखण्ड की ऐसी ही उपेक्षित धरोहरों में एक है - सालबाई। दो हजार की आबादी वाला सालबाई (सालवई) ग्राम ग्वालियर जिले के डबरा तहसील मुख्यालय से बारह किलोमीटर दूर डबरा-भितरवार मार्ग पर स्थित है।

मध्यकालीन इतिहास के अध्येता जानते हैं कि अंग्रेजों, सिखों, राजपूतों, मराठों और मुगलिया साम्राज्य के मध्य अनेक संधियाँ हुई थीं। इन संधियों में इतिहास प्रसिद्ध संधियाँ ये हैं -

* अलीनगर की संधि - 9 फरवरी 1757 - बंगाल के नवाब सिराजुद्दोला और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* इलाहाबाद की संधि - सन् 1765 - शाहआलम और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* मछलीपट्टम की संधि - 23 फरबरी 1768 - हैदरअली और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* बनारस की संधि (प्रथम)- सन् 1773 ई. - अवध के नबाव शुजाउद्दोला और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* बनारस की संधि (द्वितीय) - सन् 1773 ई. - राजा चेतसिंह और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* सूरत की संधि - सन् 1775 ई. - मराठों (राघोबा) और अंग्रेजों के बीच
* पुरंदर की संधि - सन् 1776 ई. - मराठा और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* बड़ागाँव की संधि - सन् 1779 ई. - मराठा और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* सालबाई (सालवई)की संधि - सन् 1782 ई. -मराठा और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* मंगलौर की संधि - मार्च 1784 ई.- अंग्रेजों और टीपू सुल्तान के बीच
* बसई की संधि - 31 दिसम्बर 1802 ई. - मराठा और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* देवगाँव की संधि - 17 दिसंबर 1803 ई. - मराठा और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* सुर्जी अर्जुनगाँव की संधि - सन् 1803 ई. - मराठा और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* अमृतसर की संधि - 25 अप्रैल 1809 ई. - रणजीतसिंह और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* पूना की संधि - सन् 1817 ई. - मराठा और अंग्रेजों के मध्य
* उदयपुर की संधि - सन् 1818 ई. - उदयपुर के राणा और अंग्रेज सरकार के बीच
* गंडमक की संधि - सन् 1879 ई. - भारतीय ब्रिटिश सरकार और अफगानिस्तान के पदस्थ अमीर शेर अली के पुत्र याकूब खाँ के बीच
* सुगौली की संधि - 4 मार्च सन् 1816 ई - नेपाल व ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच
* लाहौर की संधि - 9 मार्च सन् 1846 ई. - सिखों और अंग्रेजों के बीच उपर्युक्त राष्ट्रीय स्तर की महत्वपूर्ण संधियों में से सालबाई की संधि ही ऐसी संधि है जिसका निष्पादन बुंदेलखण्ड मे हुआ। इतिहासकारों के अनुसार - गुजरात मे कर्नल गॉडर्ड और

मराठों के मध्य चल रहे युद्ध में अंग्रेज सेना के दवाब को कम करने के लिए नाना फड़नबीस के कहने पर हैदरअली ने कर्नाटक पर आक्रमण कर दिया। निरंतर पराजित होते रहने के कारण हेस्टिंग्ज के कहने पर एंडरसन मराठों से वार्ता करने के लिए नाना फड़नवीस के पास आया। उस समय फड़नवीस डबरा के पास स्थित अपने अधीन छोटे से ग्राम सालबाई में स्थित गढ़ी में डेरा डाले हुए था। गढ़ी में मराठों और अंग्रेजों के प्रतिनिधि एंडरसेन के मध्य विचार-विमर्श होता रहा। अंत में जिस संधि पर दोनों के मध्य 17 मई 1782 को सहमति बनी, वह सालबाई (सालवई)की संधि कहलायी।

इस संधि के अनुसार - 01. सालसेट और ठाणे (थाना) के किले अंग्रेजों के पास रहेंगे।

02. मराठे रघुनाथराव (राघोवा) को पच्चीस हजार रूपये मासिक पेंशन देंगे। इसके बदले अंग्रेज राघोबा का साथ छोड़ेंगे।

03. अंग्रेज माधवराव (द्वितीय) को पेशवा तथा फतेहसिंह गायकवाड़ को बड़ौदा (गुजरात) का शासक मान्य करेंगे।

04. बड़ौदा के जितने भू-भाग पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया था वह सब फतेहसिंह गायकवाड़ को पुनः प्राप्त होगा।

05. इस संधि के अनुमोदन के छह माह के भीतर हैदर अली को जीते हुए प्रदेश वापस करने होंगे। पेशवा, कर्नाटक के नवाब और अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध में वह शामिल नहीं होगा।

06. संधि के विरुद्ध यदि हैदर अली कार्य करेगा तो इसके विरुद्ध महादजी (माधवराव पेशवा) अंग्रेजों का साथ देगा।

वारेन हेस्टिंग्ज ने तो जून 1782 में हस्ताक्षर कर संधि की पुष्टि कर दी। परन्तु नाना फड़नवीस एवं महादजी के मध्य मतभेद उभर आये। हैदर, नाना का विश्वासपात्र और अति प्रिय था जो अब भी अंग्रेजों के विरूद्ध युद्धरत था। ऐसी स्थिति में संधि को स्वीकार करना हैदर के साथ विश्वासघात होता। परन्तु 7 दिसम्बर 1782 को हैदरअली का निधन हो गया। इसके पश्चात् 20 दिसम्बर 1782 को नाना फड़नवीस ने संधि पर हस्ताक्षर किये।

इतिहास के विशेषज्ञों का मत है कि इस संधि के बड़े दूरगामी परिणाम हुए। ईस्ट इंडिया कम्पनी और मराठों के मध्य सन् 1775 में जो युद्ध सूरत की संधि के साथ प्रारंभ हुआ था, 1782 ई. में सालबाई की संधि के साथ समाप्त हुआ। इस संधि के महत्व को रेखांकित करते हुए इतिहासकार मानते हैं कि -

01. इस संधि के कारण मैसूर मराठों से अलग हो गया और यहाँ के शासक हैदरअली को मराठों की सहायता मिलनी बंद हो गयी। यही कारण है कि हैदर की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र टीपू अंग्रेजों से युद्ध करता रहा परन्तु वह मराठों की सहायता से वंचित रहा।

02. इस संधि ने अंग्रेजों को सबल बना दिया। यही कारण है कि अंग्रेजों ने मैसूर को कुचल दिया और मराठों की शक्ति को भी दुर्बल करने का उपक्रम करने लगे।

03. इस संधि ने मराठों की आपसी फूट को स्पष्ट कर दिया जिसका लाभ आगे चलकर अंग्रेजों ने उठाया।

अनेक प्रयासों के उपरान्त तथा क्षेत्र के नामधारी इतिहासकारों से सम्पर्क करने के उपरान्त भी सालबाई के इतिहास के संबंध में कोई प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं हो सकी। ग्राम का भ्रमण करने पर उपेक्षित गढ़ी तथा गढ़ी से संलग्न उपेक्षित मंदिरों की फोटो लेने के अतिरिक्त और कुछ हाथ न लगा। जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर के पूर्व कुलसचिव एवं इतिहास विषय के विद्वान प्रोफेसर डॉ. आनन्द मिश्र ने अपनी पुस्तक-'ग्वालियर एवं दतिया जिलों के दुर्ग एवं गढ़ियाँ' के पृष्ठ 66 पर पिछोर (डबरा) गढ़ी के संदर्भ में लिखा है कि - .... तीन वर्ष के पश्चात् सिंधिया (दौलतराव) के दीवान द्वारा पिछोर राजा से दो लाख रुपये मय ब्याज के माँगे। पिछोर ने इस प्रकार के व्यवहार को बहुत बुरा माना। आपस में संबंध खराब होते चले गये। आखिरकार दौलतराव सिंधिया ने अपनी सेना को पिछोर पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया। कहते हैं, एक वर्ष तक युद्ध चला। इस युद्ध में सालबाई दुर्ग तथा वहाँ के किलेदार ने वीरता का अद्भुत परिचय दिया।

इसी पुस्तक में डॉ. आनन्द मिश्रजी ने सालबाई के लिए पूरा एक पृष्ठ समर्पित किया है। वे लिखते हैं - इस ग्राम का ऐतिहासिक महत्व है क्योंकि यहाँ पर सन् 1782 में महादजी सिंधिया और अंग्रेजों के मध्य अत्यन्त महत्वपूर्ण संधि हुई थी। मस्तूरा ग्राम मूलतः भदौरिया राजपूतों का था। राजौरिया ब्राह्मण भी इस गाँव को अपना मूल स्थान बताते हैं। (यह ग्राम सालबाई से भितरवार की ओर लगभग 8 किलोमीटर है और वर्तमान में यह गाँव जाट बाहुल्य है।) सन् 1751 में सालबाई की गढ़ी पर मराठा सेनाओं ने आक्रमण किया। चूँकि सिंधिया शासकों की यह नीति रही कि या तो स्वेच्छा से इस क्षेत्र का राजा हमारी पराधीनता स्वीकार कर ले, नही तो कोई भी छोटे-मोटे कारण के साथ उससे युद्ध किया जाता था। पिछोर के शासकों का यह मानना है कि सिंधियाओं द्वारा यह युद्ध हमको दबाने के लिए लड़ा गया। जब हमारे पूर्वज पहाड़सिंह को वफादारी के बदले सिंधियाओं ने युद्ध का तोहफा दिया, उस समय सालबाई के

शासक बदनसिंह ने वीरता के साथ छह माह 13 दिन तक युद्ध लड़ा और वीरगति को प्राप्त हुआ। इस प्रकार सालबाई की यह गढ़ी जो उस समय अत्यन्त महत्व की थी, सिंधिया शासकों के हाथों में आ गयी।'' (पृ0 71)

गढ़ी में प्रवेश करने से पूर्व एक मंदिर है जो टूटा-फूटा तो है, परंतु गढ़ी की अपेक्षा स्वस्थ स्थिति में है। मंदिर के मुख्य द्वार से प्रविष्ट होने के पश्चात् बरांडा और फिर छोटा-सा आँगन है। आँगन के पश्चात् दालान में तीन मंदिर स्थापित हैं। दायीं ओर के गर्भगृह में शिवलिंग, बीच के मंदिर में राम जानकी एवं बाएँ मंदिर में राधाकृष्ण की नयनाभिराम प्रतिमाएँ स्थापित हैं। शिवमंदिर के बाहर नंदी एवं दायीं ओर छोटे से चबूतरे पर गणेश प्रतिमा स्थापित है। आश्चर्य यह कि यहाँ पूजा कभी-कभार ही होती है। तीनों मंदिरों की गुंबदें पृथक-पृथक हैं।

गढ़ी का प्रवेश द्वार अपेक्षाकृत सुदृढ़ है। फाटक विहीन द्वार से प्रवेश करने पर विशाल प्रांगण है। परकोटे का अधिकांश भाग ध्वस्त है। बायीं ओर के परकोटे के पास सिंदूरयुक्त हनुमान प्रतिमा का खंडित मंदिर है। इसके सामने दो बुर्जे हैं इनमें से एक बुर्ज आधा ध्वस्त है। एक बुर्ज के पास प्राचीन मजार है। इस पर पोता गया हरा रंग सूचित करता है कि इसका रखरखाव अब भी हो रहा है। आधी ध्वस्त बुर्ज से लगे हुए परकोटे के नीचे एक बुर्ज और उससे संलग्न बावड़ी है। उपेक्षित बावड़ी की संरचना यह प्रदर्शित करती है कि गढ़ी के भीतर जल की आपूर्ति इससे की जाती होगी।

समय ने अन्य सैकड़ों स्थलों की भाँति सालबाई का भी सब कुछ छीन लिया। ग्राम तक तो पक्की सड़क है परन्तु ग्राम की छोटी-छोटी तंग गलियाँ विकास को मुँह चिढ़ाती-सी प्रतीत होती हैं। अन्य फसलों के साथ-साथ धान का विपुल उत्पादक है यह गाँव। इस उत्पादकता में गाँव के ब्राह्मण, सिख, गुर्जर और अनुसूचित जाति बाहुल्य जनों का अवदान है।

गाँव आर्थिक रूप से तो सम्पन्न है परन्तु बौद्धिक सम्पदा से शून्य है। यदि ऐसा होता तो गाँव अपनी महत्वपूर्ण ऐतिहासिक धरोहर को बचाकर रखने में गौरव का अनुभव करता।

- शासकीय महाविद्यालय, करैरा
शिवपुरी म0प्र0

डॉ. हरि की चौकड़ियाँ

-डॉ. हरिकृष्ण ''हरि''

गणपति तुम बुद्धि के दाता, उमा तुम्हारी माता।
सब देवन में प्रथम पूज्य हौं, हर पूजन से नाता।
बल बुद्धि जीखौ चानें सो, तेरे दर पै आता।
'हरिकृष्ण' करनी कौ जौ फल, हर मानस ही पाता ।।1।।

हम तुम हेलमेल सें रहियें, जो मिल रव सो खइयें।
झूठी बात हमें ना करनें, सबकी साँची कहियें।
दिन में काम अथयँ के घर में, खा पी कें सो जइयें।
'हरिकृष्ण' शरणागत होंके, पुण्य की पौध जमइयें ।।2।।

कैसौ मचौ बवेला भाई, आय हमें ना राई।
चै -चै-पैं- पैं मची देश में, खोद रये सब खाई।
भृष्टाचारी और गरीबी, चारऊ तरफै छाई।
हरिकृष्ण ''हरि'' भरे कूप में, जैसे फैली काई ।।3।।

बिटिया दो कुल की फुलवारी, राखत मूंछ हमारी।
बाबुल के घर और सासरें, रखती रिस्तेदारी।
स्वर्ग बनाती दोऊ कुल खौ, बेटा देत गंवारी।
अव तौ ''हरि'' बचाउनें विटिया, लै लो जिम्मेदारी ।।4।।

मनुआँ मन कौ मैल निकारो, अन्दर विष ना गारो।
उठै तरंगै बेमानी की, हौइ उनइँ खौ मारो।
धर्म कर्म कौ सेत बाँध कें, जीवन पार उतारो।
हरिकृष्ण ''हरि'' भरे कूप में, तुम पथरा जिन डारों ।।5।।

कड़ गए ज्वानी के सर्राटे, मद जैसे भर्राटे।
रात दिना उननें नइ देखों, लेत हते खर्राटे।
नशा हतौ उन खौं जा पन कौ, आ गए ते गर्राटे।
हरिकृष्ण अब सबइ चलौ गऔं, रै गए अब झर्राटे ।।6।।

गुइयाँ फागुन हमें सताबै, हँस हँस कै बतराबै।
डाँड़े घरनी जा पूनै सें, मस्ती में मस्ताबै।
आम बौर रए टेसू फूले, कोयल गीत सुनावै।
हरिकृष्ण ''हरि'' जा महिना में, इक आबैं इक जाबैं ।।7।।

ऐसौ जौ जीवन कौ मेला, है जौ नीम करेला।
जाकौ रस जी जी नें चाखौं, चमकों बइकौ सेला।
धर्म की आटे कुकर्म करें जिन, एक दिन भयौ बवेला।
हरिकृष्ण सिघांसन छूटौ, नरकन परौ झमेला ।।8।।

- हरि सदन एकता नगर दतिया(म.प्र.),
मोबा.-7697892753, 6264075891

राजा करन की गाथा

-डॉ. ओमप्रकाश चौबे

राजा करन की गाथा बुन्देलखण्ड में निवासरत वसदेवा गाते हैं। इनकी गायकी के साथ हरेक लाइन के बाद ''हरे मोरे राम'' इनकी गायकी की पहचान है। वसदेवा गायकी का ढंग कथा कहने की तरह सपाट होता है। इनका गायन एक ही लय में किया जाता है। लेकिन इनके सपाट गायन में भी ऐसा जादुई प्रभाव होता है कि श्रोता उस चरित्र को सुनने में रूचि लेने लगता है। इनकी गायकी में परम्परागत् वाद्य चुटकी और पैजना होते हैं। वर्तमान में सामाजिक ढ़ांचे में आये परिवर्तनों के फलस्वरूप अनेक दबावों को झेलते हुए भी वसदेवा गायक अपनी परम्परा का निर्वाह कर रहे हैं। नई पीढ़ी के वसदेवा गायक कथा गायन की सम्पूर्णता के प्रति अपने पूर्वजों की तरह सचेत नहीं हैं। यह गाथा उमरारी, मदैया तथा सिंगपुर के बुजुर्ग वसदेवा गायकों से संकलित की है। वाचिक परम्परा की इस लुप्त गाथा का संकलन आवश्यक है।

भैया राज रे करन से दानी ने होंय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया धरम हेत राजा ओंटी रे देय,
कै हारे मोरे राम ....
देह ओंट राजा बाटें रे सोन,
कै हारे मोरे राम ....
जिनकी रानी ने करे गुड़-खिचरी को दान,
कै हारे मोरे राम ....
भैया लरका करें गऊवन को दान,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बउवें करें कपड़ों के दान,
कै हारे मोरे राम ....

भैया कन्या करे मोतन के दान,
कै हारे मोरे राम ....
भैया पांच पुत्र राजा करन घर होंय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया उड़े रे काग इन्द्रासन जाय,
कै हारे मोरे राम ....
मोरी सुनलियो बात इन्दर भगवान,
कै हारे मोरे राम ....
भैया राजा के करन सो दानी ने होय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया राजा करन ने रचे सिंसार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया तुमरे नाव सब गये हैं भुलान,
कै हारे मोरे राम ....
भैया एक समय गोकुल भगवान,
कै हारे मोरे राम ....
अरे मोरी रे बनाई दुनियां सिंसार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया मोसें जबर जो करन है कौन,
कै हारे मोरे राम ....
भैया करन खों छलन पन बेसुर जायं,
कै हारे मोरे राम ....
भैया सादू भेष धरें रे भगवान,
कै हारे मोरे राम ....
भैया ढूंढ़े ने मिलें करन के दोर,
कै हारे मोरे राम ....
भैया खेलें रे बालका बीच बजार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया राजा रे करन के महल बताव,
कै हारे मोरे राम ....
भैया कौन करन ऐसो दानी होय,
कै हारे मोरे राम ....
बाबा ई नगरी में करन हैं पांच,
कै हारे मोरे राम ....
भैया पैलो करन गांव को कुटवार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया दूजो रे करन जू हैं जात कलार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया तीजो करन बामन के द्वार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया चौथो रे करन बनिया को लाल,
कै हारे मोरे राम ....
भैया पांचव करन रजा है रजपूत,
कै हारे मोरे राम ....
जीके रे महल में हांती के द्वार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बोई करन निशदिन बांटे सोन,
कै हारे मोरे राम ....
भैया पौच गये हैं तपसी दोई द्वार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया आव भगत सें राजा बिठार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया चरन धोय चरनोदक लीन,
कै हारे मोरे राम ....

भैया बूजन लागे देश की रे रीत,
कै हारे मोरे राम ....
भैया कौन देश के तपसी आये,
कै हारे मोरे राम ....
भैया कौन रे देश सें ढ़ोरे हैं पांव,
कै हारे मोरे राम ....
भैया कै तुम करो अन्न के भोज,
कै हारे मोरे राम ....
भैया कै तुम करो दूदे के फरार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया ने हम करें दूद के फरार,
कै हारे मोरे राम ....
भैया कहो तो बकरवा दयें मरवाय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया वन के मिरगवा देउ मरवाय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बकरा मिरगा को कौन है काम,
कै हारे मोरे राम ....
जब बिसरे कुंवर तोरे सुन लई पूत,
कै हारे मोरे राम ....
भैया राजा तो रै गव सनाका रे खाय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बालक तो रानी कै होंय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया मैं रानी सें लेहों रे सलाय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया तुरत-फुरत गढ़ पै रे चलो जाय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया रानी तो दूर सें गई पिहचान,
कै हारे मोरे राम ....
काये सें राजा तुमरे बदल मलीन,
कै हारे मोरे राम ....
रानी दो तपसी मेले हैं अपने दोर,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बेटा रे कुंवर को मांगत मांस,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बेरम्बेर हटको है राजा तोय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया धरम-धुजा रोपो ने दोर,
कै हारे मोरे राम ....
भैया आ गये काल के चारों दान,
कै हारे मोरे राम ....

भैया नाहीं करे सें धरम घट जांय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बेटा रे कुंवर को दै दओ मांस,
कै हारे मोरे राम ....
बेतो राजा रे करन छलबे खों आये,
कै हारे मोरे राम ....
जब राजा ने करन को देखों है सत्त,
कै हारे मोरे राम ....
भैया राजा-रानी ने आरी रे चलाई,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बोटी रे बोटी उनसें कटवाई,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बेटा रे कुंवर को बन गव मांस,
कै हारे मोरे राम ....
भैया पैलो कौर राजा तुम खाव,
कै हारे मोरे राम ....
भैया पाछें कैं सब सादू खायं,
कै हारे मोरे राम ....
भैया पैलो वो कौर राजा लओ है उठाय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया दुर्गा माता ने पकरो वो हांत,
कै हारे मोरे राम ....
भैया दूजो कौर राजा लओ रे उठाय,
कै हारे मोरे राम ....
भैया सत्त दो देव ने पकरो हैं हांत,
कै हारे मोरे राम ....
भैया तीजो कौर जब लगे राजा खान,
कै हारे मोरे राम ....
भैया कृष्ना ने पकरो उनको हांत,
कै हारे मोरे राम ....
भैया देखो है सत्त राजा करन तुमाव,
कै हारे मोरे राम ....
भैया तुम सो सत्त नई दुनियां जहांन,
कै हारे मोरे राम ....
भैया बेटा खो तुम लगाव राजा टेर,
कै हारे मोरे राम ....
भैया जैसई तो करन ने टेर लगाई,
कै हारे मोरे राम ....
भैया सामू सें कुंवर खेलत आ जायं,
कै हारे मोरे राम ....
भैया राजा रे करन ने समजी है बात,
कै हारे मोरे राम ....

भैया मोरे दोर आये हैं भगवान,
कै हारे मोरे राम ....

अनुवादः- इस संसार में राजा करन जैसा कोई दानी नहीं हुआ। दानी के साथ ही राजा धर्म परायण भी थे। धर्म के लिए उन्हें कई तरह की शारीरिक यातनायें सहनी पड़ीं। राजा करन प्रतिदिन स्वर्ण दान करते थे। करन की रानी गुड़ एवं खिचड़ी का दान करती थीं। उनका बेटा गऊदान करता था। पुत्रवधु वस्त्र दान करती थी। राजा की पुत्री मोतियों का दान करती थी। इस प्रकार राजा करन के घर में पांच तरह के दान-पुण्य होते थे। राजा करन की दानवीरता की लोग सराहना करते थे। दान की चर्चा पशु-पक्षियों तक में होती थी। एक बार एक कौवा राजा की दान वीरता की चर्चा के लिए उड़कर इन्द्र के पास जाता है। इन्द्र के समक्ष जाकर कौवे ने कहा हे महाराज, मेरी विनती सुनें, पृथ्वी लोक में राजा करन जैसा कोई दानी नहीं है। संसार राजा करन के गुणगान किया करता है। हे प्रभु, पृथ्वी लोक में लोग आपका नाम लेना भूल गये हैं। एक समय कृष्ण और इन्द्र राजा करन की परीक्षा लेने पहुंचते हैं। इन्द्र को बड़ी चिंता हो रही थी कि करन मुझसे सबल हो जावेगा, जबकि यह संसार तो मैंने ही बनवाया है। राजा करन को छलने उन्होंने साधू वेष बनाया। दोनों करन के राज्य को चल देते हैं। करन की नगरी में साधू वेशधारी पहुंच गये लेकिन करन का महल नहीं मिल रहा। चलते-चलते उन्हें कुछ बालक दिखे, जो खेल रहे थे।

साधुओं ने पूछा कि हमें करन का महल बताओ। बच्चे बोले बाबा जी इस बस्ती में पांच करन हैं, आप बतायें कि आपको कौन-से करन के घर जाना है? महराज जी पहला करन तो बस्ती का कोटवार है। दूसरा करन कलार जाति का है, तीसरा करन ब्राह्मण है, चौथा करन वणिक का बेटा है, पांचवा करन राजपूत राजा है। उसके महल में प्रवेश द्वार हाथी दरवाजा है। वे करन प्रतिदिन स्वर्ण का दान किया करते हैं। ये साधू करन के द्वार पहुंच गये।

राजा ने साधुओं को अपने द्वारा पर आया देख उनका आदर-सत्कार किया। साधुओं के चरण पखारे और उनका चरणोदक लिया। तत्पश्चात् उनके निवास आदि की बात पूंछी, कहा महाराज आप कहां से पधार रहे हैं? इसके बाद राजा ने उनके जलपान बावत् पूछा। हे महाराज, आप अन्न ग्रहण करेंगे या दूध का सेवन तथा फलाहार लेंगे। साधुओं ने कहा कि हम दूध या फलाहार नहीं लेंगे। तब करन ने पूछा कि आप कहें तो बकरा या मृग का शिकार करवा दें।

साधू बोले कि हमें बकरा या मृग के शिकार से क्या लेना-देना। तुम अपने पुत्र को भूल रहे हो। हम उसके मांस का भोजन करेंगे। राजा ने तपस्वियों के ये वचन सुने तो राजा स्तब्ध (सन्न) रह गये। राजा ने कहा कि बेटा तो रानी का है, मैं रानी से सलाह मशविरा करके आपके समक्ष उपस्थित होता हूं। राजा तुरन्त रानी के कक्ष में गये। राजा को इस तरह से उतावली में आया देखा तो रानी समझ गयीं कि कुछ कारण जरूर है, जो राजा का चेहरा उतरा हुआ है, उनके चेहरे पर हवाइयां उड़ रहीं हैं। रानी ने पूछा कि महाराज क्या कारण है जो आपके चेहरे पर गहरी उदासी छायी है? राजा ने कहा कि हे रानी, हमारे द्वार दो तपस्वी आये हुए हैं और वे अपने कुंवर का मांस भोजन में मांग रहे हैं, अब तुम्हीं बताओ कि मैं क्या करूं, उन्हें क्या जवाब दूं। रानी गंभीरता पूर्वक बोली, कहा, महाराज मैंने आपको बहुतेरा समझाया कि इस तरह का धर्म की ध्वजा रोपने का कार्य न करें, उस मार्ग पर चलने में बहुतेरी अड़चने आवेंगी लेकिन आपने मेरी एक न सुनी, अब देखो हमारे बेटे का काल आ गये, हमारे द्वारा पर। ऐसी स्थिति बनी है कि उन्हें मना करो तो धर्म जाता है और हां करने पर बेटा जायेगा। और अंत में रानी ने अपनी सहमति दे दी कि तपस्वियों को अपने बेटे को दान में दे दिया जाये। तपस्वी तो राजा को छलने आये थे।

तपस्वियों ने राजा की बड़ी कठिन परीक्षा ली थी। राजा-रानी ने अपने ही बेटे पर आरा चलाया, उसकी बोटी-बोटी काटी फिर मांस को पकाया, जब उनके समक्ष मांस परोसा गया तो तपस्वियों ने कहा कि राजा तुम इस मांस का पहला कौर खाओ, इसके पश्चात् हम खायेंगे। और जब राजा ने पहला कौर उठाया खाने का उद्यत हुए तो दुर्गा माता ने उनका हांथ पकड़ लिया। दूसरी बार सत्यदेव ने उनका हाथ पकड़ लिया, तीसरी बार कृष्ण ने राजा का हाथ पकड़ा और राजा से बोले कि हे राजन! मैंने तुम्हारा सत्य देख लिया, तुम्हारे समान दुनियां में कोई सत्यव्रती नहीं है। राजन् अपने बेटे को पुकारो .....। राजा ने जैसे ही अपने कुंवर का नाम लेकर आवाज दी तो वह उनके समक्ष उपस्थित हो गया। राजा ने कुंवर को अपने सामने जीवित देखा तो वे समझ गये कि मेरी परीक्षा लेने स्वयं भगवान मेरे द्वार पर आये है।

राजा करन की यह गाथा वर्तमान में विलुप्त प्राय है। इसका संकलन उमरारी एवं मड़ैया के बुजुर्ग वसदेवा गायकों से किया गया है।

- श्रीराम कालोनी, गोपालगंज
सागर (म.प्र.)

नैन तोरे मतवारे

- डॉ. सलमा जमाल

मोरो जियराले गये गोरी नैन, तोरे मतवारे।
लेत करौटा रात बितानी, हो गये जै भुनसारे।।
तुमने कर दई बड़ी अबेरा, तक रये गैल तुमाई।
पुरा-परोसन करें मसखरी, हंसी उड़ाये हमाई।।
गैल तकत अखियाँ पथरा गई, थम गये पाँव हमारे।
संगीसखा सबई समझावै, प्रेमरीत बतलाबैं।।
अनुभव अपनो सबई बखानत, ऊँच-नीच वरसाबें।
कछु न आवे समझ में मोरी, जीवन कैसे संवारे।।

-298, प्रगति नगर, मंडला रोड, जबलपुर

बुन्देली लोक साहित्य के रचनात्मक आयाम

–डॉ. के.बी.एल. पाण्डेय

लोक साहित्य में समाविष्ट लोक शब्द का अर्थ सन्दर्भ और परिवेश के अनुसार भिन्न होने पर भी सामूहिकता के अर्थ में समान है। कभी यह आज के वैश्विकता के सन्दर्भ में पूरे विश्व का वाचक हो जाता है तो कभी यह अभिजात समाज से भिन्न समूह में रूढ़ माना जाता है। व्यापक अर्थ में तो लोक सम्पूर्ण समाज है ही किन्तु सीमित अर्थ में भी वह केवल ग्रामीण अंचलों में निवासरत समाज नहीं है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में लोक केवल जनपद या ग्राम नहीं है बल्कि नगरों और गाँवों में निवास करने वाली समूची जनता है जिसके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं। जिस कृत्रिमता और ऊपरी सभ्यता के आधार पर अभिजात वर्ग को प्रायः लोक से श्रेष्ठ माना जाता है उसके विपरीत लोक के सहज और जीवन के निकट लक्षण उसे अधिक मानवीय सिद्ध करते हैं। इसीलिए डॉ. सत्येन्द्र लोक को अभिजात, संस्कार, पांडित्य की चेतना अथवा अहंकार से मुक्त मानते हैं। हरिराम मीणा ने तो लोक की चर्चा करते हुये उसके तत्व ही गिना दिये हैं। वह कहते हैं कि लोक का अर्थ हमें समाज के बहुसंख्यक वर्ग से जोड़ता है जिसमें नैसर्गिकता, सम्बद्धता, सामूहिकता, समानता, सहजता और गत्यात्मकता होती है। इस अर्थ में लोक की एक दीर्घ परम्परा विकसित होती रही है।

परम्परा लोक का महत्त्वपूर्ण तत्व है पर अपनी गत्यात्मकता के द्वारा लोक उस परम्परा के ग्राह्य को सुरक्षित रखता है और अग्राह्य को निरस्त करता रहता है। साहित्य इस लोक जीवन अथवा लोक संस्कृति के समग्र स्वरूप का भाषिक माध्यम है। लोक जीवन को अभिव्यक्त करते साहित्य का अपना अनुभव संसार है, अपना परिवेश है, अपने जीवन संघर्ष हैं और सम्प्रेषण का अपना शिल्प है।

एक बृहत् समाज के विभिन्न अंचलों का भौगोलिक परिवेश, भाषा, आचार, खानपान भिन्न होते हुए भी उनकी आन्तरिक अनुभूति, उनकी संवेदना प्रायः एक सी होती है। विचार और भाव का जन्म स्थान कोई भी हो पर प्रत्यक्ष बाह्य परिवेश उसके निर्धारण में महत्वपूर्ण कारक होता है। बुन्देली लोक साहित्य में भी लोक जीवन की ऐसी ही अनुभूतियाँ अनुस्यूत हैं। उत्तर में यमुना, दक्षिण में नर्मदा, पूर्व में टोंस (तमसा) और पश्चिम में चम्बल की सीमाओं से आवृत विंध्याचल के पठार पर स्थित बुन्देलखण्ड की धरती पारंपरिक सांस्कृतिक मूल्यों, पुराण और इतिहास के प्रसंगों, मार्मिक कथाओं, पसीने में डूबे श्रम के बाद भी अभावों, चकित करते मानवीय औदात्य, त्याग, करुणा, शौर्य तथा कला और साहित्य की भूमि रही है। यहाँ हीरे भी उपजते रहे और पानी के लिए कुए खोदने पर चट्टानें भी निकलती रहीं। धार्मिक व्रतों, पर्वों, सामाजिक उत्सवों का उल्लास भी यहाँ है और प्रथम स्वाधीनता संग्राम के तुमुल राग का आलाप भी यहीं लिया गया। अक्षरों और आकारों के विराट् स्थापत्य भी यहाँ हैं। राम का वन पथ यहाँ से गुजरता है तो उनका चरित लिखने तुलसी यहाँ जन्म लेते हैं। आचार्य केशव एक साहित्यिक युग का प्राक्कथन यहाँ लिखतेहैं तो छत्रसाल अपनी वीरता से बुन्देलखण्ड का क्षेत्रफल निर्धारित करते हैं। हरदौल का विषपान उन्हें देवता बना देता है तो आल्हा ऊदल शौर्य का अतिलौकिक कथानक बनाते हैं।

इन्हीं विविध अनुभूतियों की अभिव्यक्ति हमें बुन्देली लोक साहित्य के रचनात्मक आयामों में मिलती है। इस रचनात्मकता के दो प्रमुख रूप हैं। एक तो पारम्परिक लोक साहित्य। पारंपरिक लोक साहित्य प्रायः वह माना जाता है जो परंपरा से प्रचलित है और जिसके रचयिता का पता न हो। इस तरह वह सम्पूर्ण समाज की सार्वजनिक संपदा होती है। हालांकि उसका रचयिता होता तो है ही लेकिन वह समय के साथ गौण और विस्मृत होता जाता है। कभी कभी तो कोई लोक साहित्य केवल एक रचनाकार की कृति नहीं होती बल्कि समय के दौर में उसमें कई लोग अपनी तरह परिवर्द्धन और परिवर्तन करते रहते हैं। अधिकतकर लोकगीत, लोक कथाएं, गाथाएँ, लोकोक्तियाँ आदि पारंपरिक ही होते हैं। यह रूप ही वास्तविक लोक साहित्य है। दूसरा रूप है जिस लोक साहित्य का रचयिता ज्ञात है और जो रचना के विर्धारित मानदण्डों को पूरा करता हो।

प्रश्न हो सकता है कि फिर उसे लोक साहित्य मानने का आधार क्या है। इसका उत्तर है-बोली का माध्यम, लोक जीवन के भाषिक उपकरण और लोक जीवन से जुड़े अनुभव। उसकी अपनी जीवन दृष्टि, दर्शन, सामाजिक सम्बन्ध और विधि विधान। इसके अतिरिक्त कभी-कभी परिनिष्ठित साहित्य में भी लोक साहित्य के कुछ तत्व मिल जाते हैं जैसे वृन्दावनलाल वर्मा, मैत्रेयी पुष्पा और केदारनाथ अग्रवाल का साहित्य। यह प्रभाव व्यापक है।

बुन्देली लोक साहित्य के रचनात्मक आयामों में प्रमुख हैं, लोकगीत, लोक गाथा, लोक नाट्य, लोक कथा, नीति कथन, पहेलियाँ और लोकोक्तियाँ। लोक गीतों को लोक काव्य भी कहा जा सकता है क्योंकि ईसुरी जैसे बुन्देली कवियों का काव्य लोक गीत से अधिक लोक काव्य है। इन प्रमुख आयामों के अतिरिक्त पँवारे, राछरे जैसे प्रशस्ति वर्णन भी हैं। गद्य के अन्तर्गत कथाओं के अतिरिक्त वे आख्यान भी हैं जो हैं तो प्रायः काव्य में है लेकिन गाये जाते हैं गीत की तरह, जैसे कारस देव की गोटें।

बुन्देली लोक गीत सम्पूर्ण जीवन के आयामों को और अपने आसपास के संसार को समाहित किये हैं। कहीं देव पूजा विषयक भजन और स्तुतियाँ हैं, कहीं श्रमशील जातियों के अपने रंगराग हैं, कहीं वे संस्कारों को व्यक्त करते हैं, कहीं पर्व और त्योहारों

पर व्यक्त उल्लास का रूप लेते हैं, कहीं आदर्श व्यक्तियों के देवत्व तक पहुँचने की यह गाथा है कहीं पंचतंत्र और हितोपदेश की तरह पशु और मानव समाज के परस्पर सम्मिलन ही नहीं संवाद भी हैं। आज दिन सौने को महाराज/सौने कौ दिन उर सौने की रात, जैसी बधाई शिशु-जन्म का स्वागत करती है, हम पैरें मूँगन की माला हमाई कोउ गगरी उतारौ जैसे गीत से प्रसव के पश्चात् कुआ पूजा जाता है, बने दूला छब्ब देखौ भगवान की। दुलन बनी सिया जानकी तथा मौरे हर सें करौ न ररियाँ। जनकपुर की सखियाँ जैसे विवाह गीत हर साधारण और विशिष्ट वर वधू को राम सीता बना देते हैं। कै आज मोरी सिया जू कौ, चड़त चड़ाव जैसी पंक्ति उस वधू को भी आभूषण पहनाने में कुबेर का कोष खोल देती हैं जिसने सोना चाँदी देखा तक कभी कभी है, जिसकी सारी उम्र गिलट और काँसा पहनने में निकल गयी।

मामुलिया और नौरता के गीत कुमारियों की अच्छे वर प्राप्ति की कामनाएँ हैं तो कार्तिक मास में कृष्ण भक्ति का स्नान विवाहिताओं का गोपी भाव है। गिरधारी मोरौ बारौ री गिर न परै और दहीरा लैकें आ जाऊँगी बड़े भोर, जैसे गीत पूरे बुन्देलखण्ड को वृन्दावन बना देते हैं। जौ नइयाँ धनुस कौ टौरबौ कठिन कंकन गाँठ छौरबौ की व्यंजना बहुत दूर तक जाती है और महिलाओं के सामूहिक स्वरों में गाये रसवारी के भौंरा, हनमत्ता और वैरागी लला जैसे गीत, अकुंठ और मुक्त भाव से उल्लासपूर्वक वह कह जाते हैं जिसे कहने में रीतिकाल भी शरमा गया। कच्ची ईट बाबुल देरी न धरियो, बिटिया न दीजो बिदेस महाराज की मर्मान्तक करुणा अवर्णनीय है। कैसे कैं दरसन पाऊँ री माई तोरी सँकरी किबरियाँ, का देवी गीत आस्था का सपिण्ड समर्पण है।

बुन्देली के इस स्फुट लोक काव्य के अतिरिक्त आल्हा, कारस देव की गोटें, सुरहिन गाथा जैसे प्रबन्ध और आख्यान काव्य भी हैं। आल्हा जगनिक रचित बुन्देली का वह महाकाव्य है जो पूरे हिन्दी प्रदेश की भिन्न बोलियों में प्रचलित हो गया। पृथ्वीराज चौहान और महोबा के राजा परमाल के बीच बावन युद्धों की यह वीर गाथा आल्हा और ऊदल के अप्रतिम शौर्य की कथा है। सहज बुन्देली के प्रयोग, छन्द विशेष और अतिशयोक्तिपूर्ण ओज वर्णन के कारण यह काव्य जिस अंचल में गया वहीं की बोली का हो गया। पठित से अधिक इसका गेय रूप प्रचलित हो गया। बारा बरस लौं, कूकुर जीबै उर सोरा लौं जियै सियार। बरस अठारा छत्री जीबै आँगें जीबे कों धिक्कार की मान्यताओं के समाज का यह काव्य बुन्देली का कीर्ति स्तंभ है।

कारस देव की गोटें कृषक और पशुपालक समाज का आख्यान हैं जिसमें कारस देव को देव रूप में पूजा जाता है, गूजर समाज के कारस देव लोक देवता बन गये। दिन की उअन किरन की फूटन सुरहिन बन कौं, जाय हो माय की सुरहिन गाथा में गाय को खा लेने को उद्यत सिंह की हिंसा में हृदय परिवर्तन है। षड्यंत्रपूर्वक, अपनी भाभी के साथ अवैध सम्बन्धों का आरोप लगने पर राजवंश के निर्दोष हरदौल स्त्री की निष्ठा निष्कलंक रखने के लिए विषपान कर लेते हैं। यह मार्मिक आत्म बलिदान बुन्देलखण्ड की अत्यन्त लोक प्रचलित कथा है।

ईसुरी बुन्देली के महाकवि हैं। चौकड़िया नामक फाग विधा में उन्होंने भक्ति श्रृंगार, लोक जीवन और नीति कथन की जो काव्य रचना की है वह लोक में प्रचलित तो है ही उसमें किसी भी परिनिष्ठित काव्य की उत्कृष्टता है।

बखरी रइयत है भारे की। दई पिया प्यारे की।।
कच्ची भींत उठी माटी की, छाई फूस चारे की।
बेबन्देज बड़ी बेबाड़ा ओई में दस द्वारे की।
किबार किबरियाँ एकउ नइयाँ बिना कुची तारे की।
ईसुरचाय निकारौ जिदना हमें कौन व्वारे की।

बुन्देली लोक साहित्य का एक और आयाम है फड़ साहित्य। इसमें फाग, सैर, ख्याल, मुंज, तड़ाका जैसे काव्यों की मंडलियों के माध्यम से प्रतियोगिताएँ होती रही हैं। यह काव्य उन कवियों द्वारा भी रचित है जो बुन्देली के अलावा उस समय की प्रतिनिधि काव्य भाषा में लिख रहे थे। तीर्थ यात्रा गीत और जातियों में अलग-अलग प्रचलित लोक गीत भी प्रचुर संख्या में हैं।

किसी भी बोली की तरह बुन्देली में भी लोक काव्य की तरह गद्य-लेखन निरन्तर और विकसित नहीं रहा पर वह तत्कालीन शासन-व्यवस्था में सनदों पत्रों आदि के अलावा लोक कथाओं में उपलब्ध है। बुन्देली लोक कथाओं का प्रचुर संग्रह किया जाता रहा है। ये लोक कथाएँ राजा रानी, सामान्य जन और पशु पक्षी जगत के मिश्रित संसार के साहस, आदर्श, आश्चर्य की उत्सुकता पूर्ण कहानियाँ हैं। बुन्देली का लोक साहित्य उस समाज का ऐतिहासिक और सामाजिक विश्लेषण भी प्रस्तुत करता है। वह लोरी से शिशु को सुलाता है और कहानी कह कर उसे जगाता भी है। वह लोकोक्तियाँ कह कर मित कथन का निर्वाह करता है तो पहेलियों से मनोरंजन। आज की व्यक्तिपरकता से भिन्न बुन्देली लोक साहित्य समूहपरक रह कर मूल्यों की मानवीयता सिद्ध करता है।

लोक साहित्य का एक पक्ष और है, एक तो संग्रह का कार्य और दूसरा उसका विमर्श। विमर्श में साहित्यिक समीक्षा के परीनिष्ठित अथवा शास्त्रीय निकष काम नहीं करेंगे क्योंकि उसकी रचना के वही उपकरण नहीं हैं। वही काव्य शास्त्र नहीं हैं। फिर विमर्श केवल साहित्यक कसौटी पर ही नहीं होना चाहिये। विमर्श सामाजिक दृष्टि से और जीवन से जोड़कर भी होना चाहिए। हम संस्कार परक या पर्वो से जुड़े लोक गीत प्रस्तुत करते हैं, उनका उपलक्ष और आशय भी बताया जाता है, पर उनमें झाँकते समाज के जीवन की व्याख्या प्रायः नहीं होती। समाज के जीवन के संघर्ष, अभाव, द्वन्द्व, कामनाएं, सम्बन्ध, रूढ़ि, परम्परा, श्रम की अनुभूतियों का प्रभाव भी लोक रचना में देखा जाना चाहिए। लोक

मन में कितनी विवशता है और कहाँ वह अपने अभावों को काल्पनिक रूप से पूरा करके मन भर लेता है। संग्रह भी किसी एक समय निष्पन्न हो जाने वाली प्रक्रिया नहीं है। बहुत है जो खोज की प्रतीक्षा में अज्ञात है।

लोक केवल भौतिक रूप से भूगोल और समाज में रहने वाला मनुष्य समुदाय नहीं है। उस भौतिक परिवेश में रहते हुये भूगोल और समाज है। उस भौतिक परिवेश में रहते हुये उसके जो सम्बन्ध बनते हैं, जीवन व्यवहार निर्धारित होता है वह विवेचन महत्वपूर्ण है और यह मिलता है लोक साहित्य में। हमें अपने लोक साहित्य के माध्यम से जीवन के मर्म तक पहुँचना चाहिये। लोकोक्तियाँ समाज के अध्ययन के लिये बहुत सहायक हैं।

लोक का एक और महत्त्वपूर्ण अवदान या विधान है। देवत्व या ईश्वरत्व के संदर्भ में हमारे यहाँ एक ब्रह्म के निराकार स्वरूप को भी माना जाता है और ईश्वर के सगुण अवतारों को भी माना जाता है। यहाँ बहु-देववाद भी है, पर जो भी ईश्वरत्व, देवत्व या परमात्मा या अवतार हैं उनका अवतरण ऊपर से पृथ्वी पर माना गया है। लोक के मन में इन सबके प्रति अटूट आस्था है पर वहाँ नया यह है कि उसके देवत्व का आरोहण होता है। वह पृथ्वी से उठकर अपने विशेष महत्व के कारण ऊपर जाता है। यहाँ मनुष्य अपने अतिलौकिक गुणों के कारण देवता बन जाता है। लोक उसे उसी भावना से पूजता है। लोक का अलौकिक हो जाना मानवीय महत्ता का आख्यान है। हरदौल और कारसदेव जैसे अनेक लोक देवताओं का देवत्व मनुष्य का ऐसा ही आरोहण है। मनुष्य से देवता हो जाने के इन प्रसंगों में लौकिकता के संदर्भ लोक को अपने लगते हैं। उन्हें आश्वस्त करते हैं।

ईसुरी जैसे कवियों के काव्य में शिल्प सौन्दर्य तो किसी भी श्रेष्ठ काव्य की अभिव्यक्ति चारुता को चुनौती देता है, प्रस्तुत लोक काव्य में भी कलात्मक अभिव्यक्ति के सुन्दर उदाहरण हैं। वह चाहे किसी की लिखी गारी हो या पारम्परिक रचना पर वचनवक्रता उसमें अद्भुत है-

जौ नैयाँ धनुस, कौ टोरबौ, कठिन कंकन गाँठ छोरबौ

कंकन की गाँठ छोरना, केवल एक धागे को खोलने की कठिन क्रिया नहीं है। कंकन खोलने का अर्थ है दाम्पत्य का जीवन भर निर्वाह और वह साधारण नहीं होता। धनुष तोड़ने की वीरता उसके सामने छोटी है।

गिरधारी मौरौ बारौ री गिर न परै, 'में 'गिरधारी' और बारौ' शब्दों की व्यंजना उनके अर्थवैपरीत्य में ही निहित है। बेटी की विदा पर रोते हुए माता-पिता के आँसुओं से बेलाताल जैसे जलाशय भर जाना लोक की मार्मिक कल्पनाशीलता का उदाहरण है।

लोक के अध्ययन की बहुत सी संभावनाएँ अभी विभिन्न पक्षों में शेष हैं।

-70, हाथीखाना, दतिया

धरोहर-

बसन्ती भोर

–स्व. भानुप्रताप शुक्ल 'भानु'

बगिया के विरछन पै, बोलीं चिरईयाँ
उतर आई बरिया सें, अँगना उरईयाँ।।
आ गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ।
छा गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ। (1)
कगरन कछारन, पहारन की घाटी।
रँगदई बसन्ती लै, खेतन की माटी।
'ऋतुपति' ने धरती पै सेना उतारी।
बगरी बा! खेतन की मेंडन पै सारी।
'नगरन' से 'गाँवन' लौ, घेर लईं मँड़ईयाँ।।
आ गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ।
छा गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ। (2)
दानन कीं सेलीं, दमरिंयन नें गोदईं।
कुंजन नें मधु कीं कटुरियां निचोदईं।।
पन्तन के बिजना, डुला रईं बचरियों।
ओढ़ कढ़ों 'सूरज' बसन्ती चुनरिया।
लेंय 'भानु' भूतल हाँ, ओली में कँईंह्वयाँ।
आ गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ।
छा गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ। (3)
बौरन के बीच छिपी, बौरिन बा! छलिया।
कूक रही अमवाँ की डाली, कोयलिया।।
पी पी पराग छूके, गारये 'कहरवा'।
रोंद चले सरसों के, बिरवा भँवरवा।
फूलन के भार झुकीं कँपरई डरईयाँ।।
आ गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ।
छा गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ। (4)
मौंसम नें मस्ती की भँगिया दै घोटी।
वेलन ने भर लई, लै झुमके न सेंझोरी।।
पूरब में देखअरी! उड़ रईं वैजन्ती।
जाग! सखी! जागं, मंन रंग ले बसन्ती।।
रंग-रसधांरन में, घोले जा! मुँईया।
आ गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ।
छा गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ। (5)
होंन लगे जंगल में, मंगल के जलसा।
ऊँखन नें छलकायें, गोरस के कलशा।।
केसरिया किरनन की तान पिचकारी।
कलियन के गालन पै, 'ऊषा' नें मारी।।
बगिया के विरछन पै बोलीं चिरईंयाँ।।
आ गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ।
छा गई बसन्त, उठ! देख मोरी गुईयाँ।

महात्मा गाँधी और बुन्देली लोकसाहित्य

– डॉ. वीरेन्द्र 'निर्झर'

पूज्य मोहनदास कर्मचंद गाँधी, जिन्हें जनता बड़े आदर से 'बापू' के नाम से जानती है, उन्होंने अपना समग्र जीवन भारत माँ की परतंत्रता की बेड़ियों को काटने में लगा दिया। सादा जीवन और उच्च-विचार के प्रतीक गाँधी जी कर्मठ व्यक्तित्व के धनी, कुशल संगठक, राजनीतिज्ञ, आध्यात्मिक और धर्मसहिष्णु वैष्णव जन थे। जनता के हृदय में उनकी छवि दीनानाथ की थी।

त्रेतायुग में श्रीराम ने अवतार लेकर जिस प्रकार रावण के अत्याचार से लोक को मुक्त किया और द्वापर में श्री कृष्ण ने कंस के उत्पीड़न से मुक्ति दिलाई ऐसे ही महात्मा गाँधी का अवतार देश को अंग्रेजों की दासता से स्वतंत्र कराने के लिए हुआ था। लोक कवि ने कृष्ण और गाँधी की तुलना ठीक ही की है -

द्वापर में मोहन भये, कलियुग मोहनदास।
एक थे जन्मे जेल में, इक रए कारावास।।

विदेशी शासन के विरुद्ध लड़ते हुए महात्मा गांधी ने अपना अधिकांश समय बंदीगृह में ही व्यतीत किया था। उन्होंने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए आन्दोलनों का नेतृत्व ही नहीं किया अपितु सामाजिक और सांस्कृतिक पुनरुत्थान को भी बल दिया। उन्होंने सामाजिक बुराइयों और विद्रूपताओं के विरोध में भी आन्दोलन छेड़ा और जीवन के रक्त की एक-एक बूँद देश के लिए समर्पित कर दी। उनकी सत्य निष्ठा और अहिंसा की शक्ति के सामने भाले और तोप भी पराजित हो गए।

इस धरती के कण-कण में गाँधी की सुगंध रची बसी है। उनके कार्यों की गीता का यह देश कायल है। गाँधी के जीवन-चरित्र और उनके आत्मबल की लोकप्रियता लोकगीतों में अनुगुंजित आज भी जनमानस को प्रेरित करती सत्य, अहिंसा, प्रेम, समता, मानवता आदि गुणों को उद्‌बुद्ध करती है। बुन्देली लोकगीतों में स्वाधीनता आन्दोलन का प्रखर तीक्ष्ण और उद्‌वेलन से भर । स्वर उसकी अपनी मिट्टी का असर है। बुंदेलखण्ड की स्वातंत्र्य प्रियता को लेकर महात्मा चाणक्य ने सम्राट चन्द्रगुप्त को दशार्ण (बुन्देलखंड का प्राचीन नाम) एवं यहाँ के लोगों को न छेड़ने में ही राजनीतिक बुद्धिमानी बताते हुए इन्हें 'दुष्टा च पुष्टाच' कहा था। तात्पर्य यह कि यहाँ के लोग स्वतंत्रता का अपहरण करने वाले अततायियों के संख्या बल और शस्त्र बल से पराजित होकर यदि अधीनता स्वीकार करने को विवश भी हो जायें, तो भी चुपके-चुपके बल संग्रह करके स्वतंत्रता के लिए विद्रोह करे देते हैं और अपनी बफादारी को नकारते हुए शत्रु के छल को पराभूत करते हैं। इसीलिए आततायियों की दृष्टि में बुंदेलखंड के लोग सदैव दुष्ट और पुष्ट ही रहे, और इसीलिए स्वतंत्रता हेतु महाराज परीक्षित तथा झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई द्वारा छेड़ी गई स्वाधीनता आन्दोलन की आग को समय की विपरीतता में भी बुझने नहीं दिया। इस महायज्ञ में समवेत वीरों के साहस शौर्य और बलिदान की भावना को यहाँ के कवियों ने शत्-शत् कंठों से सराहा है। व्यास जी एक छन्द देखें -

सुवन स्वतंत्र निज देश का बढा दे मान
घटा दे गुमान शाह कामी क्रूर कोही का।
राजपूतानी के नीके दूध को पुनीत कर
सबक सिखा दे उसे छुद्र छलछोही का।
कूद पड़ सिंह सा दहाड़ शत्रु सेना पर
विश्व को दिखा दें व्यास विक्रम सिरोही का।
बेजा मत मान ले जा ले जा शीघ्र भेजा फाड़
नेजा पर टाँग दे कलेजा देश-द्रोही का।

बुन्देलखंड में नरमपंथी वफादारी की अपील, प्रार्थना आदि को प्रश्रय नहीं मिला। उनका तो मानना था कि देश के लिए कुछ माँगना है, तो देश की माँ-बहनों से क्रान्ति के लिए उनके लालों को माँगने की आवश्यकता है। पंक्तियाँ हैं -

आज भिखारी आया द्वार,
माँग रहा है हाथ पसार।
ए माँ, बहनों, बहू, बेटियो, लाज रखो माता की आज
दे दो अपनी झोली के धन, दे दो अपने सिर का ताज।

बुंदेलखंड के उग्रवादी स्वभाव को यद्यपि नरमपंथ स्वीकार नहीं था, किन्तु स्वदेशी आन्दोलन और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के रूप में उन्हें अपने अनुकूल वातावरण अवश्य मिला और लाल-बाल-पाल की भावना लोकगीतों के माध्यम से जन-जन तक प्रसारित हुई तथा ''छोड़ो सब अंग्रेजी चालें, चलन स्वदेशी पैचानौ'' के रूप में स्वराज्य की भावना एक क्रान्ति की तरह ही लोक में आत्मसात् हुई। अंग्रेजी वस्तुओं को छोड़ने और स्वदेशी को अपनाने की इस सफलता ने अंग्रेजों को विचलित कर दिया। दासता से लोहा लेने के लिए बायकाट एक जबरदस्त राजनैतिक हथियार सिद्ध हुआ। स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार और विदेशी वस्तुओं के तिरस्कार के रूप में अपनी संस्कृति और अपनी वस्तुओं के प्रति गौरव की भावना ने राष्ट्र के पराधीनता में जकड़े होने के बाद भी एक अमोघ शक्ति के रूप में समाज को जीवन्तता प्रदान की। पं. गौरीशंकर द्विवेदी'शंकर' के शब्दों में यदि कहें तो -

वस्त्र विदेशी बने थे, सचमुच शत्रु समान।
बापू ने सब से प्रथम, किया उसी का ज्ञान।।

विदेशी वस्त्र न केवल वस्त्र थे वे हमारी दासता की जंजीर थे। सबसे बड़े शत्रु थे। इसलिए विदेशी वस्त्रों की होली अंग्रेजों के विरोध के रूप में जलाई गई। उसने हमें एक नई ऊर्जा एक बल प्रदान किया। खादी, चर्खा आदि स्वदेशी उत्पादों ने जन-जन तक राष्ट्रीयता और देश-प्रेम का अजस्र स्त्रोत प्रवाहित किया, जिसमें स्ना हो जनमन पुनीत हो गया। इससे अस्तित्व के प्रति

विश्वास तो बढ़ा ही, आर्थिक स्थितियाँ भी सुधरीं। एक लोकगीत प्रस्तुत है -

राँटा लगै पिया सें प्यारो....
लगै पिया से प्यारो।
सब दिन हात रहत हतिया पै, तगा चलै अनियारो
सुन लो मोरी पुरा परोसिन, टका मिलै तमियारो।।

गाँधी के स्वदेशी आन्दोलन को स्त्रियों ने अपने गीतों का विषय बनाया और विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार कर स्वदेशी अपनाने की सलाह बन्नी (नववधू) तक को दे डाली।

हुकुम गाँधी कौ निभाओ प्यारी बन्नी।
मेरी बन्नी पहरौ स्वदेसी साड़ियाँ
विदेसी को वापस करौ प्यारी बन्नी।।

गाँधी की प्रेरणा से खादी केवल एक वस्त्र नहीं रहा, एक विचार, एक शक्ति, एक भावमय क्रान्ति का प्रतीक बन गया था। स्वाधीनता और सद्भाव के जागरण मंत्र की तरह जनता ने उसे अपने जीवन में उतारा। गाँधी का चरखा कृष्ण के सुदर्शन चक्र की तरह आतताइयों की पराधीनता से मुक्ति का विश्वास बन गया था। एक लहर सी सम्पूर्ण देश में फैल गई कि महात्मा गाँधी के विचारों और कार्य पद्धति से देश की स्वतंत्रता प्राप्त की जा सकती है, अतः यह आन्दोलन चालू रहे। स्त्रियों के लोकगीतों में आन्दोलन को चालू रखने का यह स्वर एक रूपक के रूप में सुनाई पड़ता है, जिसमें गाँधी जी को दूल्हा बनाया गया है, सरकार को दुलहिन और दहेज में स्वराज्य प्राप्ति की भावना अभिनिहित है।

देखौ टूटै न चरखा कौ तार,
चरखवा चालू रहै।
गाँधी बाबा दूल्हा बने हैं, दुलहिन बनी सरकार
सबरे वालेन्टियर बने बराती, नउआ बनो थानेदार।।
सब पटवारी गाबैं गारी, पूड़ी बेलें तैसिलदार।
गाँधी बाबा नेंग में मचले, दायजे में लेंगे सुराज।।

गाँधी जी के निर्भीक और उदात्त व्यक्तित्व ने लोक के हृदय से अंग्रेजों के भय को दूर-दूर तक निष्कासित कर दिया था। अंग्रेजों के अत्याचार अब कोई कँपकपी भी पैदा नहीं करते थे बल्कि हमारे साहस को और बढ़ाते ही थे। निर्भीकता का स्वर सर्वस्व निछावर करने के लिए तत्पर दृढ़ता के रूप में बुन्देली स्वभाव के अनुरूप-''जबरदस्ती से लेंगे स्वराज, हमारा कोई क्या करेगा''-सुनाई पड़ता था।

गाँधी जी के सिद्वान्तों, उनकी जनसेवी भावनाओं और देशभक्ति को गाँवों-गाँवों में प्रश्रय मिला और जनता ने उन्हें जनसभाओं, चौपालों और विभिन्न मंचों पर प्रस्तुत कर स्वर दिया। यहाँ के कवियों ने नई-नई रचनाएँ लिखकर स्वतंत्रता की भावना को बल दिया, लोक तक पहुँचाया। भाई माधव शु1ल 'मनोज' ने भी विभिन्न मंचों से गाँधी जी की भावनाओं को मुखरित किया। गाँधी जी के उद्देश्यों के प्रतीक 'तीन बंदरों' पर उनकी एक रचना के अंश देखें -

गाँधी जू के जे बँदरा।
आँख कान मूँदे दो देखौ / एक रखैं मूँ में अँगूरा।
मानो वो कहते हैं -
अच्छो देखौ-सुनौ भी अच्छौ / कड़वी बानी बोलें ने
शीतल शान्त करौ मन सबकौ
रखौ न कोऊ पै अँगरा।

सत्य अहिंसा समता के जो/तीन तिरंगा बैठे हैं
समझो इनैं और समझाओ
बनौ न मैं-मैं के बुकरा।

आजादी के लिए समर्पित गाँधी यद्यपि दुबले पतले थे पर उनमें अद्वितीय स्फूर्ति और जोश था। वे आजादी की यात्रा में पैदल ही जनजन में जागरण का मंत्र फूँकते फिरे। सत्य अहिंसा उनके मनोभावों की साफ स्वच्छ चादर की तरह थी, जो सदैव उनका बल रही। उन्होंने जाति-पाँति के भेदभावों में फंसी गुलामी की परवशता में भारत माता को रोते बिलखते देखकर स्वयं के सभी सुखों को छोड़कर सिर्फ एक लँगोटी लपेट ली और अपना सबकुछ निछावर करने ठानी। लोक कवि की पंक्तियाँ हैं -

हम जानी कै तुम जानी
देखी भारत मैया उनने / अँखियन अँसुआ ढरकाउत
जाति पाँति में धँसी गरीबी / भूखी नंगी सरमाउत
गओ तिलमिला गाँधी कोमन
रहन लगे वे कुटिया में
छोड़े वसन सुखों की घड़ियाँ
ठाँड़े एक लँगुटिया में

उनके इस संवेदनशील, स्वाभिमानी, सत्याग्रही व्यक्तित्व को देखने सुनने और उनके आचरण को अपनाने के लिए हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई सभी में एक उत्कंठा जाग उठी थी। त्याग, बलिदान, और आजादी की दीवानगी से लोग भर गए थे। खादी, गाँधी टोपी, चरखा आदि के रूप में स्वदेशी का व्रत आजादी का उद्घोष बन गया। लोग गाँधी को देखने और उनकी वस्त्रहीन ऊर्जा को महसूसने के लिए दौड़ पड़े। लोक कवि फकीरे ने लोगों की उत्सुक्ता और गाँधी के दर्शन के लिए एक-दूसरे से आग्रह के चित्र लोकमन की अभिलाषा तथा विश्वास को भी व्यंजित करता है -

दरसन खों चलौ चलिए
गाँधी बब्बा जू हैं आए।।टेक।।
हिन्दू मुसलिम सिख ईसाई, सब खों कंठ लगाए।
मिलजुर कें इक मानवता की, धरमधुजा फैराए।
बड़े बड़े राजा-महाराजा, गाँधी टोपी लगाए।
घर घर चरखा चलन लगे, खादी गाँधी लै आए।

दससन कों चलो चलिए.....।

गाँधी जी पर जनता के विश्वास और आस्था का एक और अंश देखें -

जागो रे किसान भैया, जगने की बेला है।
जीके संगै गाँधी है, को कहै अकेला है।
गाँधी बब्बा अलख जगाएँ
सत्यग्रह की धूम मचाएँ
हरिजनन कों गले लगाएँ
दारू पीबो बंद कराएँ
जेलन की कोठरियन में बंदियन कौ मेला है।
जागो रे किसान.......।

तुम भी हे किसान भैया संघर्ष करते हुए तन मन निछावर कर दो, क्योंकि ''देह का है आदमी की, मिट्टी कौ ढेला है।'' भारत माता की दासता की जंजीरें तोड़कर उसे स्वतंत्र कराने के लिए कुछ ऐसी ही भावनाओं को सहेज कर क्रान्ति वीर आगे बढ़े थे और अंगरेजों के सामने अन्यायी शासन को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए डट गए थे। उस समय का प्रेरक गीत था-

चलने दो हाथ निहत्थों पर/जत्थों पर जत्थे आएँगे।
गाँधी के एक इशारे पर/लाखों मत्थे चढ़ जायेंगे।
इस अनार के शासन को/हाथों हाथों चर जायेंगे।

जिस प्रकार चाँदी की चवन्नी चमकती है उसी प्रकार की गांधी की कीर्ति पग-पग पर मार्ग प्रशस्त कर रही थी। लोक की यह उपमा-''एक चवन्नी चाँदी की जय बोल महात्मा गांधी की। मानो देश के लिए आस्वस्ति थी कि बिना ढाल 'एक अधनंगा गाँधी सतय अहिंसा के बल पर कमाल कर रहा है। ''चमक उठी तलवार सरीखी, सत्य अहिंसा गाँधी की'' - बापू की उस अहिंसा की ताकत के सामने अंगरेज परास्त हो गए । लोकगीत के बोल है -

चली बापू ने अहिंसा की चाल
फिरंगियों की नानी मरी।
अंगरेजों की गल न पाई दाल
फिरंगियों की नानी मरी।

आजादी मिल गई। तिरंगा लहरा उठा। एकता की नदी के प्रवाह में शताब्दियों का अंधकार विदीर्ण हो गया और नारी कंठों से एक स्वर उभरा-''प्यारे महात्मा गाँधी हमारे''।

भारत में एकता की नदियाँ बहाईं
सत्य अहिंसा की ज्योति जगाई
अँधियारे में कर दये उजियारे।
हमारे प्यारे महात्मा गाँधी
भारत माँ के दुलारे हमारे.....प्यारे.....।

गाँधी जी ने पूरे देश को एकता के सूत्र में समवेत कर राजनीति की ऐसी गहरी चाल चली कि-''रोक दई अँगरेजों की चाल.....मोरे लाल।'' समूचा हिन्दुस्तान उनके आह्वान पर एकत्रित हो गया। उनके नेतृत्व में भारत माता निहाल हो गई। उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिम सभी दिशायें गाँधी के पराक्रम से निनादित हो उठी। उन्होंने जहाँ स्वाधीनता की परिकल्पना को साकार किया वहीं समाज में फैली विसंगतियों, जाति-पाँतिगत भेदभाव, छुआछूत, आर्थिक असमानता, अशिक्षा, अन्याय आदि के विरुद्ध भी जागरण का मंत्र फूंका और एक स्वच्छ-स्वस्थ भारत के विकास को बल दिया जिसका जन मन ने पूरी तन्मयता से स्वागत किया और लोकगीतों के माध्यम से प्रचारित-प्रसारित किया। देश में व्याप्त दहेज, घूस आदि की कुप्रवृ8ा पर भी गाँधी की आँधी के प्रभाव से लोक में परहेज की भावना उद्भूत हुई। गीत है-

गाँधी की आँधी चली, उड़ गए सब अंग्रेज रे
हिंसा घूस दहेज से करियो सब परहेज रे।।

इस प्रकार गाँधी ने सत्याग्रह के सहारे-बारे का बूढ़े बना दये सिपइया-बालक और वृद्ध सभी को अहिंसक सेना का सिपाही बना दिया। उनकी असाधारणता के आगे जनता निछावर हो गई और लोक ने उनका भरपूर यशोगान किया और जिया भी। उनके व्यक्तित्व पर कुछ पंक्तियाँ और देखें -

काँधे पै लँगोटी एक तकली लिए है हाथ
पास में न तेग है न तीर है कमनियाँ।
मोहिनी पढ़ो है ऐसो मोहित कियो है हिन्द
चलत इसारे पर लोग अनगिनियाँ।
इनके अँगारूँ चल सकत किसी की नहीं
ऐसो है निसंक संक मानत है दुनियाँ।
बिन सस्त्र ही के सत्रु दलन पछारें देत
लंदन हिलाएँ देत भारत कौ बनियाँ।।

संदर्भ-गंथ :-

1. गाँधी लोक गीत-डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त, श्री माधव शुक्ल 'मनोज' (आदिवासी लोक कला परिषद) एवं जुगल किशोर नामदेव के बुंदेली संकलन
2. स्वाधीनता आन्दोलन और बुंदेलखण्ड का लोक साहित्य-डॉ. वीरेन्द्र 'निर्झर'
3. बुन्देली लोक साहित्य-डॉ. रामस्वरूप श्रीवास्तव 'स्नेही'
4. स्वातंत्र्योत्तर साहित्य में गाँधी का प्रभाव-डॉ. वीरेन्द्र 'निर्झर'
5.बुंदेलखंड की संस्कृति और साहित्य-रामचरण हयारण मित्र

- एम.बी.-120, पार्ट बी. (पानी की टंकी के पास)
न्यू इन्दिरा कॉलोनी, बुरहानपुर (म.प्र.), 450331
मो0- 9425951297

अनुरोध

रचनाकारों से निवेदन है कि हस्तलिखित के स्थान पर हमें कम्प्यूटर से टाईप कराकर रचनायें भेंजे तो हमें सुविधा होगी।

नदी बेतवा की आत्मकथा

–कल्याण दास साहू 'पोषक'

हमाई आत्मकथा सें परिचित होवै के लाने 'अपुन' खों हमाय संगै-संगै यात्रा करने परहै। तबईं अच्छी तराँ से जान सकत, समज सकत। फुरसत होय तौ चलौ। घूमबे कौ घूमबौ होजै, अच्छीं-बुरइं सब प्रकार की जानकारियाँ हासिल होजें। हाँत-पाँव पसर जें, मन बिहल जै। मजा 'न' आय तौ नाव फेर दिओ।

आदिकाल सें कैबे को मतलब-जब सें सृष्टि की रचना भयी तबइं सें हम घने जंगल, घाटियाँ, समतल भूम, पथरीली भूम में सें होकें ई धरा-धाम पै टेढ़ी-मेढ़ी चाल सें बउत आ रय हैं। हमाय देखतइ-देखत कित्तान जुग गुजर गये, करोड़न बरसें बीत गयीं। जानें कितनीं सदियाँ बीत जानें, कित्तान जुग बीत जानें कछू ठिकानों है का? हमें तौ एसइ बउत रानें। ईश्वर सें जेइ प्रार्थना है-बुन्देलखण्ड की प्रसिद्ध नदियन में हमाई गिनती होत रए। सन्त-महात्मा मोखों 'बेत्रवन्ती' के नाव सें पुकारत, विद्वान मनीषियन ने 'बेत्रवती' के नाव सें स्थापित करौ। आम जनता 'बेतवा-मइया' के नाव सें जै-जै कार करत, असनान-ध्यान करत पूजा-अर्चना करत। दुनियाँ जगत्तर में जादाँतर हमें 'बेतवा' के नाव सें ही जानों जात है।

पुराने जमाने में हमाय आसपास और दूर-दूर लौं खूब घने जंगल हते। इतने घने कै-दिन में भी अंदियारौ छाव रत तौ। जंगली जानवरन की भरमार हती। ओर सें छोर लौं निर्जन स्थानन के सिवा कछू नइं हतौ। केवल हमाये कल-कल स्वर की गूँज मची रत ती। कभउँ-कभार रिषि-मुनियन के दरसन जरूर हो जात ते। पौराणिक ग्रन्थन में भी हमाव उल्लेख है, जा-जानकें हमें गर्व कौ अनुभव होतइ।

कैसौ-कैसौ समऔ बीत गओ। अब 'न' तो ऊसे घने जंगल हैं, 'न' अब जंगली जानवर बचे। और तौ और हमाई ओली में खेलबे वारे मगरमच्छ, मछलियाँ, पक्षियन के झुण्ड भी हिरात जा रय। फलदार बिरछा बिला गये। निर्जन स्थान भी इनै-गिने रै गए। आबादी-चारऊ तरफन फैल गयी। जमानों बदल गओ, धरती पै बदलाव हो गवो। येइ सें 'उनइसवी सदी' के उत्तरार्द्ध सें इ अपनी विकास यात्रा सें परिचित करवा वौ जादाँ उचित समझत हैं।

सबसें पैलाँ हम 'अपुन' खों अपने उदगम स्थल पै लुवा चल रए। जौ है मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल सें लगो भओ जिला 'रायसेन'। इतै कुम्हर्रा नाव के स्थान पै घने जंगलन के बीच 'विन्ध्याचल परवत माला' की पहाड़ियन सें कुदरती पानी की झिर फूटत है। जा झिर, झरना कौ रूप धरकें पानी की मोटी धार धरती पै जहान लगत है। जौइ है हमाव उदगम स्थल। हम इतइं सें भए पजे हैं। वैसें कछू जनें, जिनैं पतौ नइयाँ, 'वे' कत हैं कै-'मैं' भोपाल के 'तला' सें निकरी हौं। कैबें वारे येंन कत रयँ, सइ बात जेइ है, कै-मोरौ जनम रायसेन रियासत की पावन भूमि सें भवो है। इतै मोरौ वजूद कछू खास नइयाँ। काय कै ''गाँव कौ जोगी, जोगिया, आन गाँव कौ सिद्ध'' जा कानात पूरी तराँ मो पै फिट बैठ गई। रायसेन जनपद में 'जा' बात हमें अच्छी लगी कै-इतै बुन्देली भाषा के बोलबे वारे, समझवे वारे लोग-मान्स भौत कछू हैं।

तनक आँगें बढ़े तौ ''महात्मा बुद्ध'' की तपोभूम 'साँची नगरी' में भरपूर लाड़-दुलार पाकें हमाव हौसला बढ़ जात, रूप-सौन्दर्य बढ़ जात। पैचान बढ़ जात। हल्के-बड्डे सब चींनन लगत। बड़ी हुलक और हिम्मत के साथ आँगें डग धरी तौ विदिशा नगरी में बड़ें ही धूमधाम सें हमाव स्वागत होतइ। हौसला अफजाई होतइ। हम फूल कें कुप्पा हो जात। दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि होन लगत। सुन्दरता में निखार आ जात। कदर बढ़वे सें उपयोगिता बढ़न लगत। हरियाली खुशहाली छान लगत। ख्याति दूर-दूर लौं फैल जात।

मालवा की धरती पै मर्यादा में रैक हमने खूब अठखेलियाँ करीं। चमन बरसा दओ। लोग-बागन ने खूब मानों-गोंनों। जै-जैकार करी। येइ इलाके में हमाई दायीं ओर बड़े सागर तरफ धसान नदी धूम मचाउत है, तो बायीं तरफ गुना-अशोकनगर तायँ सिन्ध नदी धाँक जमाउत है। जे दोइ गुइयाँ मोय भौत चाउतीं, भौत याद करतीं। दूरइ सें मोखों धीरज बँधाती, हिम्मत बढ़ात रातीं। देवगढ़ की सो कनें काँ है....। मालवा के बाद अब हमाय कदम बुन्देलखण्ड में परे। की तराँ से हमने भुक्कड़ इलाके खों चगन-मगन, कर दओ ई कौ साक्षात् उदाहरन पूरौ 'ललितपुर' जिला है।

बुन्देलखण्डियन ने ललितपुर रियासत और चन्देरी रियासत के बीचाँ मोखों छेंक लओ और राजघाट नाव कौ बड्डौ बाँध बना लओ। भलाई करबे की प्रवृत्ति के कारन हमने भरपूर सहयोग दओ। जानौं नजर पसारौ पानी अई पानी दिखान लगौ। बंजर धरती की प्यास बुझ गई। धरती उपजाऊ हो गई। जौंन आदमी भूखन मरत, दाने-दाने खों तरसत ते 'वे' महाजन बन गये। मूँछन पै ताव देन लगे। की-की बदौलत-हमाई बदौलत।

अब हम तुमें लुवा चल रय 'तालबेहट' रियासत में। इतै माताटीला स्थान पै पहाड़ियन के बीच में बाँध बनाकें फिर सें छेंकबे, की कोशिश सफल हो गई। क्षेत्र की भलाई जानकें जितनी बनी, हमने खूब मदद करी। ई बाँध सें शिवपुरी, दतिया, जिलन की जागीरन खों लाभ भओ सो तो ठीक है, लेकिन झाँसी जिला की तौ किस्मतई चमक गई। बिजली पैदा होन लगी। हर तराँ सें जल कौ उपयोग होन लगौ। पूरे क्षेत्र में हरियाली और खुशहाली फैल गई। हम अपने खों धन्य समझन लगे।

'माताटीला' के बाद अब अपुन पौंच रय कितै? सिकवाँ-ढिकवाँ की डाँग में। इतै सोउ दो पहाड़ियन के बीच में हमें रोको गवो, बाँध बनाव गवो। अपने सुभाव के अनुसार इतै भी सहयोग में कमी नइं रन दयी। बाँध भलाँई इतै हल्कौ है, लेकिन हमाई सुन्दरता में इतइं सें चार चाँद लगवौ शुरूँ हो जाता। अपुन भी

धरती मइया खों धन्यवाद देत कल-कल स्वर में गीत गाउत आँगें बढ़त रए। सुन्दरता बिखेरत भए हम और अपुन सब पौंच रय अब। ऊ धरती पै जियै संसार भर में ओरछा धाम के नाव से जानों जात है मानो जात है। तक पौंचत-पौंचत हमाई सुन्दरता में इतनौं निखार आ गओ कै-हम कै नइं सकत। अपनें मौं से बड़वाई करबौ अच्छौ नइं होत। फिर भी कये बिना राईं नइं आउत। तौ सुनो। ओरछा-धाम और श्री रामराजा सरकार की किरपा सें ही दुनियाँ भर में हमाई कीरती फैली है। इतै कौ राजा साई पुल, इतै के महल, हवेलियाँ, ऊचे-ऊँचे दिवाले सुन्दर-सुन्दर घाट, चट्टाने, पत्थर कीं सिलाटें, गोल बटइंयाँ, पेड़-पौधन की भरमार, निर्मल जलधारा, पशु-पक्षी सब कछु तौ है ओरछा की पावन धरती पै, मन मोहबे के लाने। देसी-विदेसी यात्रियन की चहल-पहल तथा सन्त-महात्मन के दरसन पाकें 'मैं' तौ धन्य होत रत। अपनी किस्मत खों सराहत रत।

तनक आँगें बढ़त तौ का देखत कै हमाई मौसेरी बैन 'जामुनी नदी' आकें लिपड़ जात। ऊ कौ डील-डौल मो सें कौऊ गुना बढ़ौ है। बरसात के मौसम में ऊ कौ रौद्र रूप देख के दहसत सी होन लगत। वैसें सैज भले में 'वा' हमाई पींठ ठोकत रत, साबासी देत रत, कै-बैन होय तौ बेतवा जैसी, जियै बिल्कुल घमण्ड नइंयाँ। मोखो अपने संगै मिलाकें भौत एहसान करो।

जैसइ हम दोइ नदियन कौ मिलन भओ तौ हमाव रुतबा, हैसियत, प्रभाव सब कछू चौगुनो हो गवो। बरुआसागर की जागीर नोटघाट पै हमें देखकें नर-नारी दाँतन में ऊँगरियाँ दाबन लगत। हाय-हाय करन लगत। सब जनें हमाई सम्पन्नता देख कें दंग कें दंग रै जात। इतै हमाई खूब तारीफ होत। रंग रूप में, आकार में, सुन्दरता में सबकौ ध्यान अपनी ओर खेंच कें हमें सकून मिलत है। अबै अपनी यात्रा पूरी नइं भयी। तुम तौ हमाय संगै चलें चलौ। अब अपुन पौंच रय झाँसी जिला के पारीछा बाँध पै। इतै सोऊ हमें बिलमाव गवो। खूब बड्डो बाँध बनाव गवो। सिंचाई के संगै-संगै बिजली उत्पादन में हम ई-बाँध कौ हर तराँ सें सहयोग करत रत। उजयान भीतरी, चिरगाँव, मोंठ, दतिया, समथर की धरती की प्यास बुझत रत। इतै भी हमाय बड़प्पन में कभी नइं रत। हमेसाँ गज भर छाती फूली रउत है। कभउँ-कभउँ इतनी हाल-फूल होतइ कै-खुशी के अँसुवा निकर परत। बुन्देलखण्ड में सइतराँ सें मोरो उपयोग करकें जानों है-तौ, वौ ललितपुर वारन ने और झाँसी वारन ने।

अब अपुन जालौन जिला के किनारे-किनारे आँगें बढ़ रए। हरियाली और खुसहाली बाँटत आँगे बढ़तइ जा रए। अब अपुन पौंच रये उत्तरप्रदेश के हमीरपुर जिला की धरती पै। जितेक मान-सम्मान हमें ललितपुर, ओरछा, झाँसी रियासत में मिलौ, उतनौं हमीरपुर रियासत में नइं मिल पाओ। इतै हमाई जादाँ रीज-बूज नइं भयी। ऊ कौ कारण 'जमुना-जू' की मौजूदगी। उनकी उतै अच्छी धाँक जमीं है। 'वे' हमसें हर मामले में बड़ी हैं। अच्छी हैं, खूब सम्पन्न हैं। हम कै मुठी हैं उनकें आगे? 'जा' हम जानत और तुम जानत कै-बड़न के आँगे हल्कन कौ उतनौ महत्व नइं रत। हमने कोशिश करी उनसें आँगें निकरबे की, लेकिन नइं निकर पाये। येइ सें अपनों अन्तिम पड़ाव जानकें, अपनी भलाई समझ कें, अपनी मंजिल जानकें, हम जमुना-जू की ओली में गिर परे।

उनने बड़े प्रेम सें हमें दुलार करो मूड़ पै हाँत फैरो और छाती सें लगा लओ। बोलीं वेतवा बैन हम तोय कभऊँअलग न करें। जा जानियौ हम, तुम हैं तुम, हम हौ। ई तराँ सें हमाइ दो-ढाई सौ कोस यानि चार-पाँच सौ मील की यात्रा पूरी भयी।

अब बैठ लो, तनिक सुस्ता लो। हम तुमें वे बाते बताउन चाउत 'जो' गैल में नइं बता पायीं। कछु खास-खास बातें रै गइं उनै और सुन लो। जा-जानियो 'जा' हमाई अन्तर-आत्मा की आवाज है। तो सुनों-हमाय ऊपर सें रोजाना सैकरन रेल गाड़ियाँ गुजरती हैं, हजारन वाहन गुजरत हैं। जे सब हमाई छाती पै होकें धड़घड़ात चले जात। हमाई छाती धक्क-धक्क होन लगत। तौइ हमें खुशी-खुशी बोझा सउत रत। करोड़न बींघा धरती की हम परवरिश करत, प्यास बुझाउत। पेड़-पौधन की, जीव धारियन की जरूरतें हमइं पूरी करत। बदलें में हमें का मिलत? उपेक्षा, शोषण के सिवा कछु नइं मिलत। इतनें पै भी हम अपनों धरम पूरी तराँ से निभा रये।

हम नइं जानत ते मानव जाति इतनीं स्वार्थी हुइयै। इतनी नादान हुइयै। अपने पाँव पै खुदइं पथरा पटकै । भइया औरें एक तरफ तो हमाई पूजा कररय, जै-जैकार कर रय, आरती उतार रय। उतइं दूसरी तरफ मुरदा बुआरय, मरगटा की राख बुआरय, मूर्तियन खों सिरारय, किनारन पै गंदगी कर रय। और तो और कारखानन कौ, शहर की नालियन कौ गंदौ पानी, होटलन की गंदगी सब नदियन में पटक रए। ऐसे बरताव से हमें बुरओ लगत। भौत पीड़ा होत, अपनी किस्मत पै रोवौ आ जात। काँ तौ हम प्रानियंन कौ उद्धार कररय, भलाई कर रय। ऐबी आदमी हमें प्रदूषित कर रय। दुष्ट लोग हमाय किनारे के हरे-भरे बिरछन खों काट रए। जंगल नष्ट कर रय। कछू बिना नाथ के खैला मशीनन सें रेत कौ खनन करकें हमाई सकल-सूरत बिगार रये। इतनों खराब जमानौं।

कभउँ-कभउँ हमें भौत रंज होत। कछू जनें गैराई में उतर कें अपनी जीवन लीला समाप्त कर देत। कछू जनें बाढ़ में बै जात। कछू जनें मुसरयाई करत और खट्टौ खात। ई में हम का कर सकत। विधि कौ जैसो विधान है, ऊ कौ पालन करने परत। लेकिन दुख तौ हौतइ है। नुकसान काउ कौ होय क्षति तौ देस की होतइ। हमाई क्षति भयी तौ देस की क्षति और तुमाई क्षति भयी तौ देस की क्षति। ईसें हमाव तौ जेऊ कैबौ है कै-अपुन सब तन खों पवित्र करबे के लाने हमाय जल में डुबकी लगाउत हौ, तन तौ पवित्र कर लेत लेकिन ! मन पवित्र नइं करत। ई सें भइया मन खों पवित्र करबौ भौत जरूरी है। जी सें हमाव और तुमाव दोइअन कौ हित होत रय। हरियाली और खुशहाली फैलत रए। इनइं शब्दन के साथ हम अपनी वाणी खों विराम दै रए। ''जै-बुन्देलखण्ड''

-किले के पास, पृथ्वीपुर, जिला-निवाड़ी (म.प्र.), 450331,
मो0- 9981087763

कनक भवन की स्यामा हो गई राममई

-डॉ. जवाहर लाल द्विवेदी

वीरन भूमि बुन्देलखण्ड जौ, नोने कौ नौंनों फीको लगबे ईके आगे, हीरा मोती सोंनो। हमाये बुन्देलखण्ड की सबरी माटी में अकेलो वीर भाव नोई वसो इमें तो कन-कन में भकती रस सोउ रचौ वसो है। इते भगत सिरोमनि कोशल्या सरीखी रानी गनेश कुँवरि जू के भकती और तपस्या के कनई भगवान श्री राम जू खों पनी प्रानन सें पियारी जनम भूमि जी खौं देखवे सरग के देवता तरसत रत पे रानी जू के प्रेम पगे व्योहार के कारन उने अजोध्या छोड़ कें ओड़छे में आउने परौ। संसार भर में गजे बजे हिन्दूपत महाराज मधुकर शाह जू देव की सोउ भगती और भगवान के लाने समरपन की कानियाँ आज सोउ बच्चा-बच्चा और बूड़े बारन के मौपे रचि वसी हैं। जब कभहुँ गाँव के चौतरन पै रात विरात कोड़े पै आदमी वेठत हैं तो उनकी कीरत गाथा गावे सें नई चूकत। उनने और उनके बाद भये सबई सिंघासन पै बेठवे बारे राजन ने हिन्दू धरम के तीरथन और धामन में बने भये जौन अस्थान जो पुराने होकें टूटै फूटै गये तो उने सब कौ मरम्मत कराकें नयौ स्वरूप दवो है। जौ काम अबै रूको नोई गवो वो तो आज वोई प्रकार सें चलत जा रवो। एई से जौ राजपरिवार भारत में नई कओ चईये के सकल जहान में मान सम्मान पाउत हैं। चाय अजोध्या कौ कनक भवन मंदिर होवै चाय नेपाल में बनो भओ जनकपुर कौ श्री जानकी मंदिर होय उतै बन्न-बन्न कौ नय चलन को निर्मान होतई रत। भलई देश में आजादी आबे के बाद सत्ता राज घरानन से चली गई हो पर आज भी इन राजघरानन द्वारा ट्रस्ट बनाकें भगवान की आठोयाम सेवा, पूजा करिवे की पूरी-पूरी विवस्ता करी जा रई। जौ सव देखकें देस और विदेस के दर्सन करने वाले देखकें रे जात के ओडछा के पावन श्री रामराजा मंदिर में सलामी गारद देवे की अटूट परंपरा सदियन से चली जा रई। जौ सब देखकें मन प्रसन्न होवे से नई चूकत। जा सोउ लगत के ऐसी अनूठी परंपरा हो सकत हैं कै सबरी दुनियाँ भर में कउँ न हुई है। इतनउ भर नोई है बरस भर के सबरे तीज तियोहार इन मंदिरन में खूब धूमधाम से मनाय जात हैं। ओड़छा की साँउनतीज की महिमा तौ को कै सकत। काय उ बीचा वेतवा अपने पूरे जोवन पै होत है और उते की वन सम्पदा की हरियाई साँचउ उये हरियारी तीज को रूप दे देत। जंगल में कुलाचे भरते भय हिरन के झुंड यात्रियों के मन खों भारी सांती देत हैं।

टीकमगढ़ राज घराने जो पेला ओड़छा राज घरानो हतो पै रामराजा के पधारवे के बाद महाराज मधुकर साह ने रानी की सरत के अनुसार अपनो राज बदल लावो तो। महाराज द्वारा ओड़छा के राम राजा मंदिर के साथ-साथ जनकपुर और अजोध्या के कनक भवन की सेवा के सारे इंतजाम करे जात रये। ओई सिलसिला में तियोहारन में काम के लानें टीकमगढ़ से महाराज ने एक घुरिया भिजवाई ती जी कौ नाव हतो-श्यामा। बचपन सें लैके पूरे जीवन भर स्यामा ने मंदिर की मन से सेवा करके अपनौ जीवन किरतारत कर लवो तो। जौ आये मिरतलोक जीने इते जनम लओ उये एक ना एक दिन अपनों चौला छोड़ने परत हैं सौ स्यामा सोउ जब विरधापन के ऐंगर आई तौ मंदिर के करता-कामदारन ने जा सोच कें कै ईको अब मंदिर के काम में तो आउन्ने नईंयाँ सो इये अब टीकमगढ़ काय न पौंच दओं जाय। जा बात मंदिर के मेनेजर ने महाराज के ध्यान में ल्याई। सोउ ईके लाने रेलवे विभाग सें चिट्‌टी पाती लिखकें केटल पारसल (पशुओं को ले जाने वाला विशेष डिब्बा) की परमीसन लई गई। और वा दुक्खभरी वेरा सोउ आ गई जब स्यामा खौं एक बैलगाड़ी में बिठाकें अजोध्या प्लेटफार्म कौं पौंचा दवो गओ। श्यामा की बूड़ी आँखन सें अँसुअन की धार टपकत जा रई पर ऊअनबोलना जानवर की भावना कौ जान सकत तो। पर स्यामा जा अपने मन में सोचत जा रई ती कै हम कितते अभागे हैं कै पूरो जनम तौ रामजी की अजोध्या में कट गवो और जब मरवे की बेरा आई तो मोये टीकमगढ़ जाने पर रवो है। मंदिर के करता कामदारन ने उये रेल के डिब्बा में बिठाराई दवो।

पर भगवान खौं तो औरई कछु मंजूर हतौ। भगवान ने स्यामा की सोची समजी बात जरूर सुनलई। स्यामा बारो डिब्बा रात में चलवे वारी पेसेन्जर गाड़ी में जुड़के लखनऊ जाने हतो। भगवान की लीला तो अपम्पार है सो वो डिब्बा पैसेन्जर में बिना लगें रै गओ और गाड़ी चली गई। जब उठत भुन्सरा स्टेशन मास्टर ने उये देखो तो हक्को-बक्को रै गओं। जा तौ भौत बड़ी लापरवाही आये ईमें तौ हमाई नौकरी पै भी आ सकत। स्टेशन मास्टर ने तुरंत कुली कौ बुला के पूंछी कै बताओ आखिर ऐसी गलती भई तौ कैसे भई। कुली ने कई के ये हम रात में पैसेन्जर सें जोड़वो भूल गये अब जौ भगवान कौ मंजूर हुई है वे हुईये। भगवान तौ करूनानिधान आयें। वे सब पै एक सौ प्रेम बाटत हैं। जमादार खौ भेज कै जब डिब्बा में देखौ तो लगो के स्यामा तौ मर गई हैं। उने जा बात मास्टर खौ जाके बताई और उनने जा सूचना कनक भवन के मैनेजर कों पौचा दई। जी के बाद मैनेजर ने स्यामा की सेवा में लगवे वारे गंगादीन खों पौचाओ। स्टेशन मास्टर ने कई के जी जानवर कों बुक करौ गवो तो वो तौ अब मर चुको है तौ अगर तुम चावो तौ इये ले जा सकत हो नईतर हम तो अपने कानून के अनुसार कार्यवाही करकें उये दफना दे। जा बात सुनकै गंगादीन ने डिब्बा में मरी डरी स्यामा के कान में जोर से कई कै स्यामा उठ बैठो अब तुमें टीकमगढ़ नई जाने पर है इतई सुनतन सें अमरतसने वोल जैसई उके कानन से दिल में पौछे तो आँखे मिलमिलान लगीं और तनक देर में तौ स्यामा उठ बेठी। रेल विभाग के हाकम जौ भक्त और भगवान कौ चमत्कार देख कें भारी अचरज में पड़ गये। धन्य है स्यामा जैसे पसु जोनि के जीव जौ अनबोले होकें भी राम के और राम के धाम के हो कैं रनचाउत हैं।

जा घटना के बाद स्यामा अपने जीवन के बचे खुचे पाँच सालें और जियत बनीरई और पेंला जैसी ककनक भवन में उड़ रई कड़ोरन भक्तन की चरनन की रज सें पावन होत रई।

धन्य हैं जा बुन्देलखण्ड की माटी जीमें नामी गिरामी भगतन ने तन धरकें जनम धरो और ई माटी कौ तीरथ बना दवो। इतनौई नई उनकी अमर कानियाँ संसार भरे में कई जा रही हैं और उन कानियन से कैउ नये-नये भगतन कौ भक्तीरस को लाभ लेवे की प्रेरना मिलत जारई। जौ संसार जी पे दुनिया भरे के मान्स गरव कर रये जौ सब पानी केसौ बलबूजा भर आय। एक न एक दिन ईये मिट जाने है। कंउ अच्छौ काम कर जेऔ तो वेउ तुमाय नाम कौ काल की मारवे से बचा सकत हैं। आज भी भक्तन की गाथा यें नाभादास द्वारा रचित भक्त माल में भरी पड़ी हैं। कनक भवन के अंगना में जब कौनउ बुन्देलखण्ड कौ रेवे वाओ पौचत हैं तो उके मन में अपने महाराजा और उनके सबरे पूर्वजन जिनके कारन आज राम रस कौ समुन्दर जन-जन में हिलौरें ले रहा हैं उके लाने सबको माथौं झुक जात हैं। ई धरती पे केउ भक्त हो गये और केउ भक्त हो जाने जबनौ चन्दा और सूरज रये गंगा और जमुना में पानी रये तौलो स्यामा की गाथा अवध धाम के कनक भवन में गूँजत रये। रामचरितमानस के वानर, जटायु नल-नीर से स्यामा कोनऊ मामले में कम नई आँकत।

- प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय राघौगढ़

साहित्य दर्पण में:-

ऐतिहासिक उपन्यास राजनर्तकी

- ओमप्रकाश तिवारी ''कक्का''

बुन्देलखण्ड का नाभिकेन्द्र एवम् बुन्देला राजवंश की प्राचीन राजधानी ओरछा एक ख्यातिनाम धार्मिक, ऐतिहासिक, साहित्यक, एवं सांस्कृतिक नगर हैं। बेतवा एवं जामिनी नदी के पावन संगम पर अवस्थित प्रकृति के सुरम्य आंगन में नैसर्गिक सुषमा से परिपूर्ण यह नगर हर जनमानस को अपनी ओर आकर्षित करने में समर्थ हैं। यहॉ, का राजप्रासाद, जहाँगीर महल, प्रवीण महल ,रामराजा सरकार का मंदिर, राजमहल ,चर्तुभुज मंदिर ,लक्ष्मी मंदिर, फूलबाग ,हरदौल बैठका ,आदि अनेक महलो के भग्नावशेष आज भी इसके वैभव का गुणगान करते हैं। जब देश में केन्द्रीय सत्ता मुगलो के आधिपत्य में थी । और आगरा के राज सिंहासन पर मुगल बादशाह आसीन था। उस समय औरछा के राज सिंहासन पर बुन्देला राजवंश के गौरव महाराज मधुकर शाह जू आरूढ़ थे । मधुकर शाह की मृत्यु उपरांत उनके ज्येष्ठ कुँवर श्री रामशाह ओरछा के राजसिंहासन पर आसीन हुए । इस ऐतिहासिक राजर्नतकी उपन्यास का मूल कथानक इसी काल का हैं। महाराजा मधुकर शाह जू ने अपनी मुत्यु के पूर्व अपने राज्य का बँटवारा करते हुए अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री राम शाह को ओरछा का राजा और इन्द्रजीतसिंह को कछौवा की जागीर सहित ओरछा का कार्यवाहक राजा नियुक्त किया था । अपने अन्य पुत्रों श्री वीरसिंह जू को बडौनी का, रतन सेन को पिछोर हरिसिंह को शिवपुरी और अन्य पुत्रों को इसी प्रकार की जागीरे प्रदान की थी । महाराज श्री रामशाह जहॉ अपने पूज्य पिता श्री मधुकर शाह जू की भांति श्री कृष्ण भक्त थे , वहीं वह साहित्य, संगीत, कला आदि के अनुरागी थे । उनके राज दरवार में जहॉ भाषा के प्रथमाचार्य श्री केशवदास जी जैसे राजकवि थे वहीं उनके दरबार में रायप्रवीण, नवरंग, विचित्र ,नैना आदि छैः नर्तकियॉ नियुक्त थी जो समय- समय पर राजदरबार एवं श्री जुगलकिशोर मंदिर में नृत्य गायन कर दरवारियो का मनोरंजन करती थी।

महाराज श्री रामशाह के श्री कृष्ण भक्त होने के कारण इनका अधिक समय वृन्द्रावन में व्यतीत होता था। इस कारण राव राजा श्री इन्द्रजीत जू ओरछा के कार्यवाहक राजा के रूप में ओरछा राज्य की देखभाल करते थे । श्री इन्द्रजीत सिंह भी साहित्य एवं कला अनुरागी होने के साथ-साथ वह आचार्य केशव के बाल सखा थे , और धीरेन्द्र उपनाम से कविता करते थे।

राजनर्त की उपन्यास में रायप्रवीण और श्री इन्द्रजीत सिंह की प्रेम परक कथा को उपन्यासकार श्री उमाशंकर खरे उमेश ने बड़े ही सुन्दर और मनोरम ढंग से उत्कृष्ट भाषा शैली में चित्रित किया है। श्री उमेश जी साहित्य ,. संगीत, चित्र कला , अभिनय कला जैसी बहुआयामी विधाओं के धनी हैं । वहीं वह कुशल कवि नाटककार रंगकर्मी संगीतज्ञ होने के साथ कुशल साहित्य सेवी भी हैं । इसी कारण इस उपन्यास में उनकी सम्बाद शैली एवं उपन्यास में समय -समय पर संगीत आदि गायन को बडे सुन्दर ढंग से समाबेशित किया हैं। यहॉ उन्होने समयानुसार राग -रागिनियों में निवद्ध गीत संयोजित किये हैं।

उपन्यासकार नें इस उपन्यास मे अपनी कल्पनाओं के रंग भरे है ,अपनी कल्पनाओं के सुन्दर चित्र उकेरे है, लेकिन उसने इस बात का विशेष ध्यान रखा हैं कि इतिहास, इतिहास ही बना रहे इस कारण इतिहास को तोड़ा-मरोड़ा नहीं गया हैं ,यही इस उपन्यास की बडी विशेषता हैं । उपन्यास में प्रवीण राय तो मुख्य पात्र हैं ही . इसके साथ इन्द्रजीत , केशव , एवं महाराज श्री वीरसिंह जू देव प्रथम के उदात्त चरित्र का चित्रण कर उन्हें महिमा मंडित करके एक सारस्वत यज्ञ की सम्पूर्ति की हैं। हिन्दी साहित्य में प्रवीण को केवल आचार्य केशव की शिष्या के रूप में ही दर्शाया गया है जिसके लिये आचार्य केशव ने ''कविप्रिया'' और ''रसिकप्रिया'' जैसे ग्रंथों का सृजन किया, लेकिन इस उपन्यास में श्री उमाशंकर खरे ने उसे एक कुशल कवियत्री के साथ -साथ एक कुशल सुयोग्य नृत्यांगना के रूप में चित्रित कर राजर्नतकी जैसे पद पर प्रतिष्ठित किया हैं । इस उपन्यास में उपन्यासकार ने प्रवीण का परिचय गौण रखकर इसकी सर्जना की हैं । बुन्देलखण्ड के ख्यातिनाम साहित्यकार पं.श्री रतिभानु तिवारी ''कंज'' ने इस उपन्यास की भूमिका में निम्न पंक्तियां उद्धत कर जो गरिमा प्रदान की वह स्वागतेय है -

''इस उपन्यास को पढ़कर मुझे ठीक वैसी ही आनन्द की अनुभूति हुई जैसी डॉ.वृन्द्रावन लाल वर्मा के उपन्यास मृग नयनी और विराटा की पद्मनी को पढ़कर हुई थी।''

- ग्राम /पोस्ट ज्यौरामौरा, वि.ख.पृथ्वीपुर,जिला-निवाड़ी (म.प्र.)

आशा-सें आसमान

-ओ.पी. रिछारिया

- माधोसींग सपरखोर कें पौर में आ गए ते...। खुद के भोजन कर बे से पैल - ''दुलारी''... के पेट की चिन्ता करत हते.... ।- जनका ने जब कोनऊँ उत्तर नई दवो... तो माधोसींग खिच्चया परे... और चिल्लया के दौरे - जनका तुमाऐं कानों में रूई घुसी है, का ... ? हम पूछ रहे, है के - ''दुलारी'' ने दूध पी लओ के नई ... ? ... सो बोलत काय नइयाँ ...?

जानकी बाई खों अपने पति माधोसींग को गुस्सा नोनों नई लगो... । सो उखड़ पर और बोली तुमें हमाओं काम पहार दिखात है...। भूल जात हो..। - मनों - '' 'दुलारी' -खों - नहीं भूलत... ?

माधोसींग बोले - का काम भूल गऐ हम...? तुमावो। मैंने कई ती के - एक धुतियापोलका बहू खों ले अइयों और हर किसना खों जीन्स को पेन्ट ले अइयो ... सो ले आऐ का ...? कबै लिया हो ? जब, बे औरे-घरै आ जै है ...? जनका ने कई।

माधोसींग ने लापरवाही से कई-के जनका तुम - बड़ी भोरीं हो, - तीन सालें हो गई - आज तक हरकिसना ने या ओकी - घर बारी ने - तुमाई खबर लई है - कबऊँ...? - का के कें गऐ ते के हम औरे शहर जा के धन्धो-पानी जमा के जल्दी लौट के आहें और फिर - मताई-बाप खों अपने संगै लुवा ले जैहें। - संगै रख के सेवा समार कर हैं ...? - जब सें गऐ - सों, आज लो नई...लौटे...? तुम अब लो आसा लगाऐं?

माधोसींग और घरबारी-जानकी बाई कें - एकई औलाद भई ती।... हर किसन मौड़ा। जैसे-तैसे - मेहनत मजूरी - लरका खों - पढ़ाओ-लिखावो और बी.ए. पास कराओ ...।

साल भर बाद ... पास के गाँव के पटैल की मौड़ी भागबाई से बियाव करा दऔ। - वियाव भऐं दो बरस भऐ - कै लरका-बहू ने अपने तराभाव दिखावो शुरू कर दओ...। - नौकरी-धंधे के लानें - शहर जावे की अड़ी कर लई...। माधव और जनका ने समझावो के बेटा काम धंधों गाँव में भी कछु कर सकत हो। मगर एक नें मानी - फिर बहू भागवती ने जिद कर के - ''मकान'' - खों अपने पति के नाम - हरकिसन के नाँव करा लऔ....। माधोसींग ने पूँछी ... बेटा इत्ती उलात् काऐ परी है तमें। मकान तो - तुमाओ है, सो रै है.... । - हरकिसन ने कई उदयोग विभाग से - हमें धंधे के लोन लेने है, सो-अपने नाम की - सम्पत्ति - के कागज बैंक में - लगाने पर है, माधव ने हरकिसन की ज़िद पूरी कर दई और मकान - हरकिसन के नाम करवा दओ.... ।

साउन किर पूनों के दिन-हरकिसन को जनम दिन परत है, - सो मताई खों - पूरी आसा लगीती कै -अबकी बार- मोरे बेटा-बहू जरूर घरै आहै। - सो जानकी ने अपने पति माधव सें - आठ दिना पैलें से कै राखी ती बहू के लाने- एक धुतिया-पोलका और मौड़ा खों - एक जीन्स की पेण्ट लऐं - आइयों ...। माधवसींग खों तो पूरोभरोसो हतो के - हर साल जैसे आसों की सालें भी न लरका खों आने न बहू खों आने...। मनों - मताई जानकी खों तो आशा से आसमान टँगो हतो...। सो पूरी बाट हैरे हती।

दोपहर के भोजन करत में माधो ने घरवारी जानकी से कई - ''जनका....मैंने.... हरकिसना से ज्यादा अब - ''दुलारी'' खों - अपनों सगो मान लओ है ....। हम ओ खों - भूखो-प्यासो नई देख सकत-ऐसें ''दुलारी'' - खों टेम-टेबल से - ''दूध-रोटी'' - धर देओ....करबी करे। ई में चूक ने करियो।

असल में माधोसींग छै: मइना पैले- एक भूरी बिलैया को चिनुवाँ उठा लाऐ ते। अपने घर को सूनोपना मिटावे के लाने। जानकी और माधव ने बड़े लाड़-प्यार से आखों - मौड़ी-मौड़ा जैसो पालन पोषण करो।-ओ को नाम रखो - ''दुलारी''....। बिलैया को चिनुआ - अब बड़ो हो गओ तो - जैंसई ओ को नाव पुकारें - ''दुलारी'' - कहूँ होवे पुरा-परौस में - सो तुरतईआ जावे.... ''म्याऊँ-म्याऊँ'' करन लगै.... । - जा माने के माधव और जानकी के प्रान बसन लगे ते - ''दुलारी'' में.... ।

साहुन की पूनें के एक दिना पैलें जानकी ने - ''लरका-बहू'' - के आवे की हाल-फूल में - घर की लीपा - पोती कर डारी.... । ओढ़त-बिछात के कपड़ा बदल डारे... । - माधव जीन्स की पेन्ट लियाएं हतै। ओखों-तीन बैरे उठा के धर चुकी ती जानकी। फिर परोसन काकी खों - जानकी - ''बहू'' की नई धुतिया बतावे ले गई। - परोसन काकी ने खूब बड़वाई करी - वा का कैने -सास होवे तौ - ऐंसी....कैसी नौनी धुतिया-पोलका ले आई। भागवती खों। खूबई उम्दा फब है, बहू खुशी हो जैहे.... ।

आधी रात तक - खुरमा-बतिऐं, गूजा, पपरियां, बनाऊत रही जानकी। - माधव तो बियारी करके पौर मे सो गऐ ते.... । जग रई ती तो जानकी और ''दुलारी'' खो समझो दओ - घर में तुमाऐ दूसरे मालक-मालकन आ रए हैं, सो उधम ने करियो - बेटा...। तुम तो परोसन-काकी के भग जइयो .... । ''दुलारी'' - जानकी को एक टक देख रही ती, मानो सब कछू समझ रई होय।

-सबरो काम निबटा कें-जानकी-बिछौना में जा बैठी हती। - तबई - कोऊ ने जोर से दरवाजे की साँकर बजाई...

जानकी उदक परी ऐ मोरे भाई .... इaी राते को आ गओ .... ? – किबार खोले – तो देखों .... के परोसन काकी को नाती– हतो.... बोलो – ''दादी'' – शहर से हरकिसन चाचा को फोन – आओ है? चलो बात कर लो।

– जानकी हड़बड़ा के उठी और बिना चप्पलों की – परोसन काकी के दौड़ी – पीछे–पीछे ''दुलारी'' – सोई कूँदत गई ....। – जानकी ने फोन सुनो .... ''हरकिसन'' – बोल रऐ ते – ''अम्माँ'' .... हम कल नई आ रहे हैं ....। अबे हमें छुट्टी नई मिल पा रही है।... मनों हम आठ–दस दिना बाद–जरूर आ रह हैं। – जानकी – चुप सुनत रई।

दूसरी तरफ से फोन कट गओ....। –जानकी – भारी कदमों से धीरे–धीरे .... वापिस अपने घरे लौट आई और चुपचाप–बिछौनों में सो गई।

भुँनसारे भोत अबेर तक जब जानकी सो कें न उठीं– तौ माधव पास आऐ और बोले – ''काय जनका....? अबै लो परी हो ....?'' उठो ....? आज ढेर भरो काम हैं, आजई तुम झेल कर रई हो...?''लरका–बहू'' – आ जैहे: तौ का कै हैं ....? – जनका चुपचाप परी रही....।

माधव ने कंधा पै हाँथ धर कें जोर सें हलूसो....सो देखों के बुखार में आँग तप रओ....। माधव सकपका गऐ....बोले.... ''जनका'' तुम्हें तो भारी जुर चढ़ो है....? तुमने हमें काय नई बताई ....? आधी रात लो जगत् रई–हैरान होत रई....।''लरका–बहू'' – तो आ रऐ सो का – कहूँ के भगवान आ रहे.... जो इत्ती तबियत बिगाड़ लई। बताओ .... राम–राम।

जानकी धीरे से उठकर बैठ गई। फिर बोली – ''कोऊ नई आ रवो इते....।'' हमाओ को बैठो है, सगो...। –माधव बोले – अब हमाई तो बात तुम सुनतई नईयाँ...। केऊ सालों सें तौ देख रऐ हैं, हम.... वो कितेक चाहत है,–अपने बऊ दद्दा खों ....? – तुम फिकर कर–कर के बीमार हो गईं....। ओखों कुछ– गरज नईयाँ। चलो पैलें–डॉगघर के चलें –दवाई कराओ – फिर – हमाई मानो तो कहूँ तीरथों खों चलो तुमाओ – जी बहल जैहै। – और भगवान को नाम पुण्य–धरम आँगे–आड़े आ है – चलो कर लो तैयारी तीरथों की।

–जानकी – बोली – ''हरकिसना आठ–दस–दिना बाद आवे की तो के रओ तो ... अपन तीरथ चाले गऐ और बो घरे आ गओ तो ....?''

–माधव खुन्सया परे – और चचेड़ के बोले अब तुम – उल्टी नें मरो ....। ओ झुँठेला और दगाबाज को भरोसो ने करो – । वो न आ है।

– जानकी बोली – जैसे तुम जानो। आशा में आसमान टँगो हैं ....। सो आय मै कै रईती।

– माधव ने – जानकी की तबियत–ठीक होने के बाद – जानकी की एक न सुनी –तीरथ यात्रा पे जावे की तैयारी करन लगे। –बिस्तर बिछा कें ओ में – दरी–चादर धर रहे ते –के बीच–बीच में ''दुलारी'' – बिस्तर में घुस रई ती...। लोट रई तो – ऐसो लग रवो तो ओ खों पतो चल गवो – कै हमें छोड़ के – मालक–मालकन कहुँ जा रहे है, सो ''दुलारी'' तैयारी न करन देवे ....। बार–बार बीच में आ के हैरान करन लगै।

माधव को – देखत–देखत गुस्सा आ गई सों उननें ''दुलारी'' खो रस्सी से बाँध के–दूसरे कोठा मे ले जा कें ऊँची खिड़की पे बैठार दओ....। खिड़की में – जाली लगी हती – ''दुलारी'' के निकलवे की गुंजाईश भी न हती। और बाहर से – जा सोच कें – कोठा में तालो लगा दओ – के जाती बिरियाँ – तालो खोल के – ऐखों बाहर निकार दे हैं।

ओई बखत–जानकी –अपनो सामान ले के आ गई....। ओर बिस्तर बँधवाने के बाद, खाने–पीने को सामान– धरो फिर – कपड़ा धरे जमाऐ। थोड़ी देर में परोसन काकी ने आ कें कहीं – ''स्कूल की खाली बस'' – रोड तक छोड़ दै है,– जल्दी करो – ओर एई बस में – सहर तक निकल जावौ...., हमने बस रोक लई है। हड़बड़ा के माधव और जानकी ने परोसन काकी की मदद से – सामान बस में रख लओ ओर तालो लगा के – बस में बैठ गऐं। थोड़ी देर में बस स्टेशन की तरफ दौड़न लगी।

माधव और जानकी–जब रेलगाड़ी से सफर रकत भऐ – तीन स्टेशन आँगे निकर गऐ–तब अचानक खबर आई – ''दुलारी'' – के कमरा कौ तारौ तौ – डरो रह गओ
– अब का हुईरे? पति–पत्नि एक–दूसरे को मुँह देखत रह गये....। सिवाय – अफसोस और पछतावे के का–धरो तो....?

माधव – बोले मो से – अन्जाने में – भोत बड़ी गलती हो गई। – जनका – बोली अब का हुइये – ''दुलारी'' –को। – तुमने मों से काय नें कई – मैं तालतो खोल देती – माधव बोले – जोने देवता की परकम्मा खो घर से निकरे हैं, सो बेई रक्षा कर हैं ....। – हमारी दुलारी सई सलामत रहे प्रभु....।

– पूरो एक मईना परकम्मा में निकर गओ। खूब– तीरथ करें। – और आज अपने घर खो लौट रऐ हते। – माधव और जानकी।

रात के दस बजे .... स्टेशन सें–उतर कें माधव और जानकी–अपने घरे पौंचे ....। घर के दरवाजे पै तारे के ऊपर तारो डरो देख कें – पति – पत्नी –अंचेंभ में – पर गऐ एक तारो – अपनी चाबी से खोल कें – वे सोच में पर गऐ .... दूसरों तारों .... की ने डार दओ।

माधव कैन लगे – हो सकत है – परोसन काकी ने – सुरक्षा – के लानें–अपने तरफ से लगा दओ होय ... चलौ

चलकें – काकी सें पूँछें।

जानकीं और माधव खों – परोसन काकी ने – पूरो किस्सा सुना दओ .... तुमाएं लरका और बहू ने .... मकान बेच दवो है, खरीददार ने – अपनो तारो डार दओ है ....। सुनकें – हक्के–बक्के रे गए .... माधव–जानकी....।

– कलेजे पे पथरा घर कें बोले .... भलों बेंच दओ .... हमाओ रिश्तो–नातो खतम हो गओ हरकिसन ने अपने मन की कर लई ....। हमाई जिन्दगी हम तेर कर लैहै ....।

-''और .... दुलारी ....? .... ओ को का भओ ....। परोसन काकी बोली-तुमाऐं-घर की खिड़की में बैठी-बैठी .... हमाऐ गमला के फूल और रूई खों निहारत रैत है ....? - ''रूई'' - निहारत है ? माधव ने पूँछी ....। दुलारी रूई खों सायद मक्खन कौ गोला समझ रई ती और सोच रई ती-कै एक ना एक दिना हम जबई खिड़की से निकर है, तो - जरूर ''मक्खन'' के भ्रम में ''रूई'' खों देख के आशा और उम्मीद के सहारे - एक मईना सें बिना कछू खाऐं-पिऐं .... ''दुलारी'' जिन्दा है।

माधव और जानकी ने .... जैसे-तैसे .... परोसन के घर में रात गुजारी ....। भुँनसारे .... पीरे बादरों उठ के .... माधव और जानकी के संगे परोसन काकी उनके घरें आई और ''जबरन'' - को तारो पथरा सें टोर के फेंक दओ ....।

जानकी .... ''दुलारी'' .... के .... कोठा .... की तरफ दौड़ परी फिर साँकन खोल के - ओ के गरे की .... रस्सी टोर दई ....।

- ''दुलारी'' - मानो - सब कछू भूल सी गई ती .... रस्सी को बंधन छूटो - सो ''दुलारी'' रपक के .... परोसन काकी की छत पे चढ़ गई .... फिर गमला के नेंचे - रखी - रूई गप्प से - मों में भर लई ....। मनों जो को भओ .... ''दुलारी'' - तो उतई पसर कें गई ....। परोसन काकी और माधव जानकी .... दौड़े .... ''दुलारी'' के प्राण पखेरू उड़ गऐ ते ....। -शायद .... ''रूई'' गरे में फँस गई .... चिबक गई ....? कै का गत् भई? सो राम जाने ....?

- जानकी खों .... हरकिसना से बिछुड़वे को दुःख नई भओ ....। घर बिकवे को दुःख नई भओ ....। मनो - ''दुलारी'' की मौत देख के .... पछाड़ खा के ....गिर पड़ी....। मुँह सें आह निकरी - ऐं। मोरो बेटा ''दुलारी'' जो का हो गओ। जानकी भी ऐसी गिरी ....के दोबारा .... नें उठी ....।

माधव और गाँव के संगी-साथी .... ''जानकी'' की आखिरी बिदा की तैयारी करन लगे ....। माधव सोच रऐ हते अब कौन-सी आसा बची जिन्दगी जीवे के लानें ....।

-रिछारिया घाट, परकोटा, सागर (म.प्र.)
मो0 - 9755811972

बुन्देलखण्ड

–श्री मौलवी मंजर साहब

(1)

हम आवोदाना जब तेरा खावें बुन्देलखण्ड।
फिर क्यों ने तेरी रागिनी गावें बुन्देलखण्ड।
धन-धान अपना तुझ पै लुटावें बुन्देलखण्ड।
गैरों के दर पै सर न झुकायें बुन्देलखण्ड।
बुन्देलखण्डी खुद ही बनायें बुन्देलखण्ड।

(2)

जिस दिन तू बा खबर था, जमाना था बेखबर।
जिस दिन तेरी निगाह से रोशन थी हर नजर।
जिस दिन तेरे जमाने का जलवा था सरबसर।
जिस दिन तेरी जबान का जादू था पुर-असर।
वह दिन कहाँ से ढूढ़ कर लावें बुन्देलखण्ड।

(3)

आ जाय अपने हाथ अगर अपना बोस्तां।
गुल रंग हो जमीन तो खुश रंग आसमां।
हर फूल की निगाह से रूपोश हो ख़िज़ां।
अपना ही बाग़ो राग हो अपना ही बागवां।
दुनियाँ को फिर बना के बतायें बुन्देलखण्ड।

(4)

आजदियों का दौर हो, सर मस्त ज़िन्दगी।
खुशबू चमन-चमन हो, शिगुफा कली-कली।
दिन हों हँसी खुशी के तो रातें बहार की।
दुनियाए दिल कशी में हो ज़लवों की सादगी।
क्या-क्या न पायें तुझको जो पाएं बुन्देलखण्ड।

(5)

इक साथ मिल कर जोर लगायें जो हम वतन।
थक कर गिरे हुओं को, उठायें जो हम वतन।
नारे लगायें शोर मचायें जो हम वतन।
पिछड़े हुओं को अपने मिलायें जो हम वतन।
आजाद तुझ को आज करायें बुन्देलखण्ड।

(6)

तेरे चिरागे हुस्न की मध्यम सी रोशनी।
कुछ-कुछ है ओरछे में अभी झिल मिला रही।
परवानों की नज़र है उसी पर जमी हुई।
हो जाय 'देव' कृपा तो अहले वफ़ा अभी।
जैसा था तुझ को वैसा बनायें बुन्देलखण्ड।

(ओरछेश मधुकर शाह जू के सौजन्य से)

''बख्सी हंसराज रचित 'चुरेरिन-भेष' कृति''

–ओ.पी. रिछारिया

बुन्देली धरा आदि काव्य की प्रसवनी भूमि है। जिसके कण-कण में कविता के बोल ध्वनित होते हैं। इसीलिये इसे काव्य के सृजन का श्रेय मिला है। जहाँ अगणित काव्य विभूतियों ने काव्य-रचना को प्रस्थापित किया है। जिसकी सर्जना से प्रकृति एवं प्राकृत-पुरूषों के क्रिया-कलापों और लीलाओं के दर्शन से समस्त समाज अभिभूत हुआ है। कवि कोविद 'वरूसी हंसराज' ने अपने काव्य-कौशल से मां भारती को समृद्ध किया है। चतुर आप की 'चुरेरिन-भेष' कृति अति महत्वपूर्ण है। जिसमें श्री राधा-कृष्ण लीला के दर्शन से समाज उपकृत है। 'चुरेरिन-भेष' की पाण्डुलिपि मुझे अपने कुल-बस्तों में मिली है। अतएवं इसका सांगोपांग विवेचन यहाँ प्रस्थित है।

'चुरेरिन-भेष' एक 16 पृष्ठ की पुस्तिका है जिसका मुख-पृष्ठ व पीछे का पृष्ठ हल्के बादामी रंग का है। इसकी साइज 8''× 5'' है और सिलाई एक मटमैले धागा से की गई है। पृष्ठों की साइज 6 1/2 × 4 1/2'' है। जिन पर दो हरे ब्लॉंक में 5 1/2 × 3'' में मटमैले हल्के स्याही बादामी रंग के कागज पर लाल और काली से 1/2 से से.मी. हाँ 1/2 के मोटे अक्षरों में लेखन है। जिसमें पूर्ण-विराम या अर्द्ध-विराम नहीं है तथा सरल बुन्देली भाषा में दोहा और चौपाई छंदों में वर्णित है, जो इसकी प्राचीनता के घोतक हैं।

शुभारम्भ :- 'चुरेरिन-भेष' कृति का शुभारम्भ भी परम्परागत रूप से कवि ने श्री गणेश, सरसुती एवं गुरू वन्दना से किया है जिसकी सुन्दर बानंगी दृष्टव्य है -

वंदना -

''सिध्यि श्री गनाघपते नमहां
श्री सरसुती जू परम गुरभेर नमहां
श्री क्रस्न जुया नमहां
श्रयां चुरहेरन भेष लिष्यते''

इसी प्रकार कृति का समापन कवि ने इस प्रकार किया है-

''इते श्री सनेह सागर लीला श्री वगसी
हंसराज विरचते चुरेरिन भेष संपूर्ण।''

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने वख्सी हंसराज को पुत्र मुरलीधर लिखा है। इनको महाराज हृदयशाह पन्ना नरेश का राज्याश्रयी कवि माना है। इन्हीं ने आपको 'वकसी' की उपाधि प्रदान की थी। आप सखी भाव के उपासक थे। इनके ग्रन्थों की रचनाओं में सनेह सागर विरहविलास राम चंद्रिका एवं बारहमासा हैं। इनमें 'चुरेरिन भेष' लीला का उल्लेख यहाँ नहीं किया गया हैं जो सम्भवतः बख्सी हंसराज की अंतिम कृतियों में हो सकती है। इस प्रकार यह कृति वारहमासा(सं.1811वि.)से पूर्व की रचना हो सकती है।कवि हंसराज वक्सी की समग्र रचनाएं इस प्रकार दी गई हैं-

1. श्री गेदालाल मेहराज चरित्र
2. श्री कृष्ण जू की वारी
3. सनेह सागर
4. विरह विलास
5. फाग तरंगिनी
6. चुरहारिन लीला
7. राम चन्द्रिका बारहमासा (सं.1811वि.)
8. चोबदार लाला

महाराज हृदयशाह ने इन्हें 'बख्सी' का पद सं. 1768 वि. में प्रदान किया था। आप की मृत्यु सं. 1796 वि. लिखी मिलती है।

कृष्ण-लीला का दर्शन :-

ज्ञान-वैराग्य और भक्ति में भक्ति श्रेष्ठ है। श्रीमद्‌भागवत के दशम स्कन्ध में राघव जी का नाम लिये बिना ही लीला पुरूषोतम श्रीकृष्ण की बाल-लीलाओं का अदभुत वर्णन है। सूरदास आदि कवियों ने इन लीलाओं का गान साहित्य में देखने को मिलते हैं। वास्तव में भक्ति प्राकृतिक प्रवृत्तियों का यौगिक आचरण है जिसमें राम और कृष्ण की लीलाओं का अनुपम चित्रण है। इसमें श्रृंगार के साथ मानवीय प्राकृत प्रवृत्तियों के आधार पर अहिनिशि बालक कृष्ण (गोपाल ब्रह्म) का चिंतन करना उद्देश्य है। राधाबल्लभ भक्ति में कृष्ण को ही पुरुष माना गया है। शेष सभी प्राणी इसकी गोपियाँ (स्त्रियाँ) ऋचायें हैं। जो प्रौढ़ता प्राप्त कर अपना सर्वस्व लीलाधर को अर्पण कर देती हैं। यही रहस्य श्री कृष्ण लीलाओं का है। इसे रास-लीला कहा गया है।

बुन्देलखण्ड के अनेक कवियों ने कृष्ण लीलाओं का अद्‌भुत वर्णन किया है। आचार्य चतुर्भुज 'चतुरेश' मसनेह झाँसी ने छोटी-छोटी पुस्तकों के माध्यम से दानलीला पनघट उराहना लीला और रास लीलाओं को प्रणीत किया है। यही के निवासी श्री बलराम शास्त्री ने 'विसातन-भेष' जैसी पुस्तक लिखी है, जो ब्रज की 'लिलिहारी' लीला से उत्कृष्ट है। इन सभी से कृष्ण जो 'ब्रह्म' है, की अलौलिक लीलाओं को 'लीलामृत' मान कर साहित्य पटल पर दर्शाया गया है। अतएव 'चुरहेरन-भेष' जैसी कृति बकसी हसंराज ने लिखकर हिन्दी साहित्य की अनुपम सेवा की है। जिनके साहित्य पक्ष का सार-संक्षेप यहां देना समीचीन है।

चुरहे, रिनभेष कृति का साहित्यिक आधार :-

इसकी कथा पौराणिक है। इसकी बुन्देली (ब्रजबुल) भाषा सरल और भावपूर्ण है। जिसमें कृतिकार ने आंचलिक दृश्य पटल निर्मित कर काव्य कौशल प्रदर्शित किया है। अतएव इस कृति का साहित्य निरूपण बिन्दुवार यहाँ प्रस्तुत है।

1. इस कृति का शुभारम्भ काव्य परम्परानुसार मंगलाचारण से कविबकसी हंसराज ने किया है।
2. इसमें श्रृंगार प्रेम रसों का परिपाक उत्तम है।
3. उपमा-उपमेय का सुन्दर चित्रण है। यथा -
   1. मानो श्याम छटा के ऊपर दामिन दमक रही है।
   2. चुटीला बंधन जैसे तारे छिटक रहे है।
   3. शीश फूल की शोभा नभ के तारों की भाँति शोभित है।
   4. माया का मंडप जस के जामुन की डाली से छाई हैं।
   5. आदर की आगौनी और
   6. चित्र केचौक जैसी उपमायें अपरिमेय है।

चुरहेरिन भेष कृति को प्रदेय - इसे बख्सी हंसराज ने इस प्रकार दिया है-

सुने प्रीत सौ भेष-चुरेरिन, गावै गाउनवार
जो कोइ सुनहै भेष चुरेरिन, प्रति सहित जो गावै।
श्री कृस्न कौ ध्यान जु धरकैं,सो बैकुंड सिधारवै।

इस प्रकार कवि बख्सी हंसराज की कृति में बुन्देलखण्ड में संस्कृति, संस्कार और भक्ति के साथ काव्य-कला कौशल प्रस्तुत किया गया है। इसलिये यह एक अनुपम कृति है।

- रामायण, 695/3, सिविल लाइन
झाँसी (उ.प्र.)

बुन्देलखण्ड की यात्रा की याद

– डॉ. शिवकुमार तिवारी

हमें अपने बचपन की एक ऐसी यात्रा ऐतिहासिक लगती है जो प्राचीन भारत के नागदेय से प्रारंभ हुई। हमारे बचपन तक भारत के विन्ध्यक्षेत्र का नागदेय समकालीन नागौद हो गया, हम इस ऐतिहासिक स्थान से यात्रा करते हुये जिस गन्तव्य तक पहुंचे उसका कोई इतिहास न था।

पुराने समय से ही लोग यात्रावृत्तों में दिलचस्पी लेते रहे हैं। यात्रावृत्त जितना पुराना हो अमूमन हमें वह उतना ही अधिक दिलचस्प लगता है, मसलन हमें अपनी जिन्दगी की जो यात्रा आज भी यादगार लगती है उसकी तुलना हम बहुत सोचने पर यूरोपियन पर्यटकों के मेमॉयर्स से कुछ हद तक कर सकते हैं।

मेमॉयर्स और 'खोजी यात्रावृत्त' अलग अलग हैं पर यूरोपीय साहित्य में बीसवीं शती तक भी दोनों खूब लोकप्रिय रहे। मेरे लिये मेमॉयर्स भी कम रोचक नहीं रहे भले ही उनमें 'खोजी' तत्व हो न हो। मेमॉयर्स के विवरणों में एक बात शायद हमारे ध्यान से उतर जाती है वह यह कि जब ये सब वर्णन लिखे जाते रहे तब वे उस कालखण्ड की यथार्थता थे उस काल में वे सभी विवरण, जो आज इतिहास की वजह से अनोखे हो गये हैं अपने समय के सामान्य जन जीवन के ही विवरण थे।

इतिहास कब बदल जाता है, यह हम नहीं जानते, न ही हम यह जानते कितने समय बाद कोई वर्णन या वस्तु इतिहास हो जाती है। हम यह इसलिये कहना चाह रहे हैं क्योंकि- हम बुन्देलखण्ड में अपने द्वारा बचपन में की गई जिस यात्रा को ऐतिहासिक मानते हैं वह यात्रा इन अर्थों में ऐतिहासिक नहीं है कि उस वक्त हमने कोई बहुत समय तक याद रखने वाला किसी भी दृष्टि से कोई महत्वपूर्ण कार्य किया था। उसकी ऐतिहासिकता महज इसलिये है कि उसे बीते अब आधी शताब्दी से अधिक का वक्त गुजर चुका है। यदि इतिहासकारों की माने तो दो पीढ़ियों का वक्त गुजर चुका है। वह ऐतिहासिक इसलिये भी है कि वह कम से कम मेरे जीवन के इतिहास की घटना तो निष्चित ही है।

यह जरूरी नहीं है कि इतिहास के संबंध में मेरी निजी मान्यताओं को इतिहासकार कोई मान्यता प्रदान करें। मुझे तो किसी भी वक्त का वह अन्तराल इतिहास का एक नया कालखण्ड लगता है जिसमें समाज के जीवन में पर्याप्त बदलाव आ गया हो। अपनी बात को मुकम्मल करने के लिये मैं बुन्देलखण्ड का एक उदाहरण रखना चाहूँगा। हमने वर्ष 2019 में एक पुस्तक देखी जो बारह खण्डो में है और जिसका प्रकाशन वर्ष 2009 में हुआ था। यदि इस पुस्तक को केवल देख लिया जाये या कि उसका केवल नाम सुन लिया जाये तब इस पुस्तक के महत्व का पूरा पता नहीं चलता। इस पुस्तक की भूमिका को पढ़कर ही इस पुस्तक की ऐतिहासिकता और उसके महत्व को समझा जा सकता है। इस बेशकीमती पुस्तक का नाम है 'बुन्देलखण्ड का इतिहास' इस पुस्तक के लेखक है दीवान प्रतिपाल सिंह, इस बेजोड़ पुस्तक की खासियत केवल इस बात से नहीं है कि यह पुस्तक बुन्देलखण्ड के इतिहास ज्ञान का समुद्र है। खासियत इसमें भी है कि बीसवीं शती के पूर्वार्ध में जब लेखक निब वाले होल्डरों से स्याही भरी दावातों में डुबा-डुबा कर एकाध पृष्ठ भी लिखते थे तब वह सावधानी पूर्वक किया गया अत्यंत श्रमपूर्ण कार्य हुआ करता था। एक लगातार सोच रहे लेखक को उस समय न जाने कितनी दुनियादारी के कामों से निपटना होता था। फिर तो प्रतिपाल सिंह राज्याधिकारी थे उनकी व्यस्तताओं का कहना ही क्या? उन्होंने सैकड़ों पृष्ठ लिखे ऐसे पृष्ठ जिनमें तथ्य कूट कूट कर भरे हुये थे, उन्हें पढ़कर मैं उनकी शख्सियत का, उनके कार्य से उनका प्रशंसक बना। दीवान साहब ने अपना यह कार्य पुस्तक के प्रकाशन से 79 वर्ष पहले पूरा किया था।

प्रष्न उठता है अपने यात्रा प्रसंग में मैंने दीवान साहब की इस अनमोल कृति को, उनकी शख्सियत को और उनसे जुड़े उनके उन परिवार जनों-संबंधियों को क्यों याद किया? इसकी दो वजहें हैं। पहली वजह यह है कि मैं जिस यात्रा के संबंध में कुछ लिखना चाह रहा हूँ उस यात्रा के दोनो छोर सन् 1947 के पहले विन्ध्यक्षेत्र की दो प्रिन्सली स्टेट या रजवाड़े थे। सन् 1952 की यह यात्रा जब प्रारंभ हुई तब देश को स्वतंत्र हुये महज आधा दशक ही बीता था। तब यह पूरा इलाका नई राजनैतिक इकाई विन्ध्यप्रदेश था। इस नये विन्ध्यप्रदेश में वे दोनों पुरानी प्रिन्सली स्टेट अपना पुराना वजूद खो चुकी थीं। बचपन में जिस जगह से मैंने यात्रा प्रारंभ की थी उसका नाम नागौद था जो पहले प्रिन्सली स्टेट थी। नागौद उस रजवाड़े की राजधानी भी थी। और अब यह सतना जिले की तहसील है। कुछ गलत फहमी संभावित थी तो वह हमारे गन्तव्य को लेकर थी हमें पुरवा पहरा नाम की जगह जाना था जो नये छतरपुर जिले में खजुराहों से 12-13 किलोमीटर दूर बसा एक छोटा सा गाँव था। पर इसी विन्ध्य प्रदेष में स्वतंत्रता के पहले एक दूसरी प्रिन्सली स्टेट भी थी।

इस दूसरी प्रिन्सली स्टेट का नाम पहरा था पर पुरवा (शाब्दिक अर्थ ग्राम) न थी। प्रतिपाल सिंह इसी पहरा के दीवान थे। दो लगभग समान नामों में भ्रम हो जाना सहज है। इस तरह हम अपने पहरा पुरवा को जब याद कर रहे थे तब हमें दूसरा पहरा याद आया। दूसरे भ्रमित न हों इसलिये गन्तव्य को स्पष्ट किया।

पहरा के प्रतिपाल सिंह को इस यात्रा के संदर्भ में याद रखना कुछ और भी जरूरी है वह इसलिये कि उन दिनों तक विन्ध्य प्रदेश का यह विशाल भाग सघन वनों की दुर्गमता और आज्ञानान्धकार के लिये अधिक प्रसिध्द था। देशभक्त तो उन दिनों भी बुन्देलखण्ड के छत्रसाल प्राणनाथ, ईसुरी, लालकवि, कविवर व्यास इत्यादि विभूतियों को जानते थे पर उन दिनों तक अंग्रेजी भाषा में लिखे साहित्य को पढ़ने लिखने वालों की कद्र थी, देश भले ही स्वतंत्र हो गया रहा हो अंग्रेजी ढंग से सोचने वालों का अब भी सामाजिक सम्मान था। हिन्दी लेखन कितना भी ऊँचे दर्जे का रहा हो उसे 'वर्नाक्युलर' कहते हुये दोयम दर्जे की मानसिकता थी।

प्रतिपाल सिंह जैसे उच्च स्तर के लेखकों की रचनायें भले ही तब तक लिखी जा चुकी थीं पर उनका प्रकाशन नहीं हुआ था, यदि हो चुका हुआ होता तो आलोचकों को जबाब दिया जा सकता था। हमने अपनी बात यूरोपीय 'मेमॉयर्स' से प्रारंभ की थी। बुन्देलखण्ड से प्रतिवर्ष प्रकाशित होने वाले 'बुन्देली बसन्त' में हमने स्लीमन की

एक यादगार यात्रा पढ़ी, जो बुन्देलखण्ड के रजवाड़ों की थी। यह स्लीमेन का मेमॉयर ही था।

बचपन में जब हमारी उम्र लगभग नौ दस साल की रही होगी तब हमें अपनी ननिहाल नागौद से पहरा पुरवा तक की एक यात्रा करनी पड़ी। इस यात्रा को किये अब लगभग छियासठ-सड़सठ वर्ष को भले ही पूरे हो चुके हों पर आज भी पूरी यात्रा स्मृति पटल में साफ है। अब जब ननिहाल से की गई यात्रा की बात हो तब नाना नानी का परिचय न लिखा जाये तब बात अधूरी रहेगी। सन् 1950- 52 तक के दिनों में रजवाड़ों की स्टेट नौकरियों में लगे हुये लोगों का रूतबा अलग था। हमारे नाना जी भी 'स्टेट सर्विस' के चिकित्सक थे, कहने को तो उन्हें प्रजा की सेवा करने के लिये रखा गया था, पर उनकी खिदमतदारी राजा के प्रति विशेष थी।

प्रश्न यह उठ सकता है कि स्वतंत्रता के चार पांच बरसों बाद के समय में और छोटी वय में मैं उन्हें राजा के प्रति समर्पित कैसे कह सकता हूँ जबकि उन्होंने भी बदलते वक्त में स्वयं को राष्ट्र के प्रति समर्पित घोषित कर दिया था और अब वे खादी के वस्त्र धारण करने लगे थे। तथ्य यह है कि अब जब वक्त ही बदल रहा था सो राजा साहब ने भी नाना जी की बदली पोशाक पर गैर जरूरी आपत्ति नहीं उठाई, राजा साहब बदलते वक्त की खूबियों को जानते थे। यही कारण है कि जब स्वतंत्र भारत में हमने राजा साहब और नाना जी के मधुर संबंधों को देखा तो हम बाल सुलभ प्रसन्नता से भर गये। बात यह थी कि राजा साहब कभी कभी अपनी मोटर गाड़ी में हमारे घर तक आ जाते थे। पर घर पर उनके चरण कभी नहीं पड़े। नाना जी उनके स्वागत में कार तक पहुंचते, दो चार मिनिट वार्ता होती और फिर वे चले जाते। लौकिक व्यवहार में यह बड़ा सौहार्द था उन दिनों कारों के दर्षन वैसें भी मुष्किल से होते थे फिर राजा साहब की कार भले ही 'एक्स एच.एच.' की रही हो पर उसका घर तक आना थी तो मुहल्ला वासियों के लिये बड़ी बात। हमारी बाल बुध्दि को न जाने क्यों इस मिलाप की गहराई में जाने की इच्छा हुई।

बड़ी खोज बीन करने पर जानकारी उपलब्ध हुई। बड़ी मन्नतों के बाद हमारी नानी जी ने हमें धीरे से बतलाया कि तुम्हारे नाना 'बूटी' (भांग की बर्फी) बनाने में सिध्दहस्त है। राजा साहब को बूटी पसन्द है इसलिये जब तब आ जाते हैं।

हमारी नानी बुन्देलखण्ड के पन्ना जिले के एक गाँव की थीं वे बचपन में हमारे शुध्द ज्ञान की जिज्ञासा को शान्त करती थीं परन्तु कभी कभी वे कुछ ऐसी बातें बतलाती जिनका मन्तव्य तो हम समझ जाते पर उन विवरणों में प्रयुक्त शब्दों में से कुछ शब्दों के अर्थ को समझने में मुझे महीनों तो क्या बरसों लग गये। हुआ यूं कि जिज्ञासावश हमने नानीजी से एक बार यह पूछ लिया कि आपके जमाने में जब बसें नहीं थीं तब यात्रा कैसे की जाती थी। तब नानी जी ने एक घोड़ा गाड़ी का जिक्र किया जिससे पुराने समय में यात्रायें की जाती थीं। इस घोड़ा गाड़ी का नाम उन्होंने 'मालकेट' बतलाया।

'मालकेट' शब्द हमारे लिये तब तक नया ही बना रहा जब तक हम कालेज में पढ़ने नहीं गये। इस गूढ़ार्थ शब्द का सामान्य अर्थ हमने बचपन में बहुतों से पूछा पर निराशा ही हाथ लगी। दरअसल 'मालकेट' एक अंग्रेजी शब्द 'मेलकार्ट' का देशज संस्करण था। अंग्रेजों के जमाने में एक स्थान से दूसरे स्थान पहुंचाने के लिये इनका उपयोग किया जाता था, परन्तु इन्ही गाड़ियों में यात्री भी बैठा लिये जाते थे। हमारी नानी के जमाने तक भी बुन्देलखण्ड में यात्री बसों का भारी टोटा था। यह टोटा तब तक भी उतना न सही किसी न किसी मात्रा में उन दिनों भी मौजूद रहा जब हमने यात्रा की। हमने भले ही अपने बचपन में बुन्देलखण्ड की यात्रा 'मेलकार्ट' में न की भी रही हो पर हमारी यात्रा का एक भाग 'बुलककार्ट' द्वारा पूरा हुआ। यद्यपि उन दिनों तक राजे रजवाड़े खत्म हो चुके थे पर बुन्देलखण्ड में राजसी शान शौकत की अपनी क्षेत्रीय ठसक थी। वे सभी लोग जिनका बुन्देल राजाओं से दूर का भी सम्बन्ध रहा, वे अपनी जीवन शैली में जितना कुछ बनता उतना अनुसरण अवश्य करते। अपनी बचपन की इस बुन्देली यात्रा में हमें कुछ याद हो या न हो बुन्देली लोक व्यवहार खूब समझ में आया।

हमारी यह यात्रा हमारे फूफा भुवानीदीन (शुध्द नाम भवानी दीन) के यहाँ पौत्र रत्न की प्राप्ति के उपलक्ष्य में सम्पन्न हुई थी। पूष - माह के कड़ाके के ठंड के दिनों में यह मात्रा की गई थी। पौत्र प्राप्ति से हर्षातिरेक में डूबे फूफाजी, जो ग्राम पहरा पुरवा के जमीनदार भी थी, स्वयं नागौद आये थे। उन दिनों निकट संबंधियों के घर जाकर आमंत्रित परिवार के सदस्यों को लेने जाने का दस्तूर था। सामान्य आचार व्यवहार में साथ ले जाये जाते सदस्य महिलायें और बच्चे हुआ करते थे, क्योंकि वापिसी के लिये आमंत्रित परिवार का मुखिया जाया करता था। हमारी इस यात्रा में हमारी मौसी महिला सदस्य थीं तथा उनका पुत्र तथा मैं बालक सदस्य थे। दरअसल हमारे नाना-नानी के पुत्र न था अन्यथा मामा का परिवार जाता। नाना-नानी ने अपनी एक पुत्री अर्थात् हमारी मौसी को अपना उत्तराधिकारी चुन लिया था। इस यात्रा की वापिसी में हमारे मौसा जी पर हमें घर लाने का दायित्व था। मैं इस यात्रा में पुस्तक की 'परिशिष्ट' जैसा ही था।

इस यात्रा के कुछ वर्षो बाद जब कुछ और बड़ा हो गया और मेरी सामाजिक रिश्तों की समझ कुछ और बढ़ी तब मैंने पाया कि नाना और फूफा का मुझसे तो निकट का संबंध हो सकता है, पर इनका आपस में इतना आत्मीय संबंध होना जिसमें जमींदार फूफा स्वयं परिवार को लेने पहुंचे, कुछ आश्चर्य की बात थी। चूंकि फूफा जमींदार थे इसलिये उनके साथ उनका एक नौकर भी आया था जो उनका निजीसहायक से लेकर सेवादार तक था।

बहुत समय बाद यह गुत्थी सुलझी जब हमें बतलाया गया कि नाना और फूफा दोनों कहीं न कहीं राजदरबारों से जुड़े थे। नाना एक चिकित्सक के तौर पर तथा फूफा रजवाड़े के एक महत्वपूर्ण प्रशासक की हैसियत से। मुझे यह भी बतलाया गया कि इस तरह के संबंधों की डोर उन दिनों बड़ी मजबूत हुआ करती थी।

मेरे लिये सामाजिक संबंधों का यह एक ऐतिहासिक तथ्य था, जिसे कहीं भी नहीं लिया गया था। मेरे लिये यह बघेली और बुन्देली लोक संस्कृतियों का मिलन ही था।

नागौद बघेलखण्ड की एक छोटी प्रिन्सली स्टेट भले ही रही हो पर उसका अतीत गौरवपूर्ण था। बुध्द के काल का भरहुत स्तूप के ध्वंसावशेष कनिंघम को यहीं प्राप्त हुये थे। मध्यप्रदेश के लब्ध प्रतिष्ठ इतिहासकार डा0 आर.के. शर्मा नागौद की ऐतिहासिकता के संबंध में लिखते हैः

'इस जगह का मूल नाम नागदेय था....कनिंघम नागदेय की पहचान आधुनिक नागौद से करते हैं, जो कि सही प्रतीत होता है क्योंकि

नागदेय नागौद का संस्कृत रूप है जिसका निहितार्थ 'सरोवर में नाग' है'
इस तरह नागौद ईसा की छठवीं शती में मौजूद ग्राम था। मध्यकाल में इसका इतिहास सन् 1344 ई. से प्रारंभ होता है। यहाँ पर उच्चकल्प राजवंश के राजाओं से लेकर परिहार, गहरवाड़, चंदेल, तेली, बुन्देल और बघेलवंष के राजाओं का राज्य रहा।'
(साभारः शर्मा, आर.के. 'ए डिशनरी ऑफ हिसटोरिकल नेम्स आफ मध्यप्रदेश, 2019)
बौध्दों के इस महान स्तूप के ध्वंसावषेषों को हमने उन्हीं दिनों अपने पड़ोसी तमेरों के साथ जाकर देखा था। नागौद में हमारी ननिहाल के करीबी तमेर थे उनमें से एक की ससुराल उचेहरा में थी, जहाँ पर भरहुत के ध्वंसावशेष है। उन दिनों हमारे पड़ोस के सभी तमेर हमारे प्रिय मामा थे जिनमें से एक के परिवार के साथ संयोगवश मैं उनकी ससुराल चला गया था। यह एक दीगर बात है तब तक हमें या तमेर मामा भरहुत के महत्व का पता न था।
बचपन में हम अतीत के गौरव की बात खूब सुनते थे। बाद के वर्षो में अवष्य प्रगतिशील लेखकों ने भरसक यह बतलाने की चेष्टा की कि भारत का कोई उल्लेखनीय अतीत था ही नहीं फिर वह गौरवपूर्ण कैसे हुआ। उन्होंने यह भी बतलाया कि भारत के इतिहास में समान्तवादी, साम्राज्यवादी और प्रतिक्रियावादी ही प्रभावी रहे इसलिये इस देश में ज्ञानान्धकार, जड़ता और मूढ़ता का वातावरण रहा।
हमारी उम्र के बच्चों को इतिहास की उतनी ही समझ थी जितनी वह हमारे पाठ्यकपुस्तकों में लिखी थी। इन पाठयपुस्तकें में अकबर महान का जिक्र था तथा भारतीय कला की जानकारी के लिये ताजमहल का सचित्र वर्णन था। हमारे लिये बुन्देलखण्ड शब्द भले ही सामान्य रहा हो पर चन्देल शब्द इतिहास की ऊंची कक्षाओं की पुस्तकों में था। उन दिनों तक खजुराहो पूरी तौर पर गुमनाम जगह नहीं थी, उसके बारे में हमने कुछ कुछ सुन रखा था, यहाँ यह महत्वपूर्ण है कि जब हम अपने फूफा जी के साथ पुरवा पहरा जाने वाले थे तब हमें रास्ते में खजुराहो में रूकना था यह सूचना हमारे लिये सुखद थी। उन दिनों लोकभाषा में 'खजुराहो' का उच्चारण 'खजराये' या कुछ इस तरह का था। बचपन में खजुराहो शब्द की व्युत्पत्ति या उसका भाषा वैज्ञानिक सदर्भ हमारे लिये उतना ही व्यर्थ था जितनी खजुराहो की रतिलीन मूर्तियों की हृदयग्राही सुन्दरता। मैं था भी तब उम्र के उस पड़ाव में जहाँ खूबसूरती का आकर्षण तो रहता है पर आवष्यक रसाभास नहीं होता।
वह दिन भी आ गया जब हमारे आदरणीय फूफा जी हमारी ननिहाल पहुंच गये। उनके स्वागत में घर के फर्षो की बढ़िया लिपाई कराई गई थी। उनको एक चौकी में वस्त्र बिछाकर बड़ी कांसे की थाली में पांच कटोरियों में विविध बुन्देली व्यंजनों के साथ भोजन कराया गया। मेरे लिये यह सत्कार अभूतपूर्व था। फूफा जी का अभिजात्य उनके वस्त्रों से मुखरित था। उन दिनों पहने जाने वाली उनकी डबलकफ की कमीज की बटन सोने की थीं, कीमती कोट, शाल और जूते उनके वार्धक्य को बड़ी हद तक छुपा रहे थे। वे हाथ में एक नक्काशीदार छड़ी लिये थे, हमें बाद में बतलाया गया कि वह 'गुप्ती' नाम का एक शस्त्र है। वे शाम को आये थे और दूसरे दिन प्रातः आठ बजे की बस से हमें उनके साथ जाना था। यद्यपि वे एक रात और कुछ घंटे ही रूके पर उनेक स्वागत में कोई कोर कसर न रखी गई।
फूफा जी का ननिहाल में किया गया अभूतपूर्व स्वागत हमारे बालमन में कुछ इस तरह बैठा कि हम इसे बरसों न भुला पाये। बहुत वर्षो बाद जब हमने इस स्वागत का विश्लेषण किया तो हमें लगा कि यह मात्र औपचारिकता तथा संबंधियों के स्नेह से बढ़कर भी कुछ था, जिसे हम बचपन में नहीं समझ पाये थे।
संभव है कि बुन्देल और बघेल राजवंशों की सेवा में रत दोनों बुजुर्गो में, निज आन मान मर्यादा का, प्रभु ध्यान रहे अभिमान रहे, का भाव प्रबल रहा हो। अर्थात् हमारे फूफा जी भले ही बुन्देल क्षत्रिय न रहे हों पर शासक वर्ग में तो थे ही इसलिये उन्हें भी बुन्देली शान की फिक्र थी। बुन्देलखण्ड में बुन्देल क्षत्रियों के अलावा भी अन्य लोगों में भी बुन्देली शान का ध्यान रखने के उदाहण मौजूद है। कहा जाता है जब बुन्देलखण्ड की वीर प्रसविनी भूमि में गठेवरा का महायुध्द हुआ जिसमें सवा लाख वीर बुन्देली 'अपनी आन बान और शान' में आपस लड़कर वीर गति को प्राप्त हो गये, तब युध्द के दो दर्शकों को जो वीर बुन्देले नहीं थे, को लगा कि यदि इस तरह के महायुध्द को देखकर भी उनमें वीररस का संचार न हुआ तो उनका जीवन धिक्कार है, तब उन्होंने युध्द क्षेत्र में मृत दो वीरों की तलवारें उठाई और आपस में तब तक युध्द किया जब तक उन्हें भी वीरगति प्राप्त नहीं हो गई।
बघेल वंश के क्षत्रियों की वीरता तो प्रसिध्द है ही उनके मातहतों की वीरता का वर्णन भी इतिहास में दर्ज है। कहा जाता है उत्तर मध्यकाल में एक बार शत्रुओं की सेना ने बघेल राजा पर आक्रमण कर दिया। यद्यपि बघेल वीर प्राणपण से लड़ रहे थे पर पांसा उलटा पड़ता दिख रहा था इसे देखकर राज्य के तिवारी ब्राह्मणों ने तलवारें उठाई और शत्रुओं पर धावा बोल दिया। बस फिर क्या था, बघेल विजयी हुये। बघेल राजा ने जब तिवारियों को राज्य का एक हिस्सा देना चाहा तो उन्होंने विनयपूर्वक राज्य लेने से मना कर दिया। तब बघेल राजा ने उन्हें प्रशासकीय पद दिये साथ ही उन्हें 'सिंह' उपनाम लिखने का खिताब दिया। इस तरह बघेलखण्ड में 'लक्ष्मण सिंह तिवारी' या 'अनिरूध्दसिंह तिवारी' नाम आज भी प्रचलन में है। हमारे नानाजी को बघेली आन बान का पता था।
तात्पर्य यह है कि हमारे फूफा और नाना दोनों ब्राह्मण होने के कारण 'वीर' शब्द का अर्थ युध्द के अलावा भी जानते थे, संस्कृत साहित्य में 'दानवीर' इत्यादि शब्द है। इन दोनों बुजुर्गो ने इन्ही अर्थो में बघेली और बुन्देली 'वीरता' के गौरव का स्मरण किया। करीबी रिश्तेदार न होने पर भी जमीदार फूफा जब आये तब नानाजी ने भी उनकी बढ़िया खातिरदारी की। दोनों ने 'राजसी' प्रवृत्ति दिखलाई, इनमें से एक की प्रवृत्ति बुन्देली तो दूसरे की बघेली थी।
कुछ खाली बचे समय में नानाजी और फूफाजी की लम्बी वार्तायें हुई; जो शायद व्यक्तिगत किस्म की नहीं थी पर फिर भी जिनके चलते घर में अपेक्षित अनुशासन रखा गया। मध्यवर्गीय आय के परिवारों में बच्चों को बड़ों के कमरे से दूर रखकर इसे बनाये रखा जाता है।
उन दिनों भी नागौद से छतरपुर तक बस चलती थी। जो बस नागौद से छतरपुर जाती थी वह देवेन्द्रनगर, पन्ना और बमीठा में रूकती थी। हमें बमीठा में ही रूकना था, उसके आगे छतरपुर नहीं जाना था। बमीठा में बस छोड़कर किसी अन्य वाहन से खजुराहो तथा वहाँ से

पुरवापहरा जाया जाता था। नागौद में जब हम बस में चढ़े तभी बस के ड्राइवर और कण्डक्टर ने फूफा जी को और हम सबको बड़े आदर पूर्वक बस में बैठाया। ड्राइवर और कण्डक्टर को बस स्टेशनो के 'बड़े लोगों' के बारे में पहले ही सूचना मिल जाती थी, बस मालिक की भी हिदायत रहती थी कि इन पैसेन्जरों को कोई असुविधा न हो। इस तरह इस बस में फूफा जी के साथ उनका नौकर तथा हम तीन लोग अर्थात् मैं, मेरी मौंसी जी और मौसेरा भाई सभी व्ही.आई.पी. पैसेन्जर थे।

उन दिनों बसों की रफ्तार कम होती थी, रुकती भी अनेक जगहों पर थीं, पर हमारी उस यात्रा में बस में भीड़-भाड़ नहीं हुई समय अवश्य बहुत लगा पर शाम को चार बजे बमीठा पहुंच गये। बमीठा एक छोटा गाँव था जहाँ पर हम बस से उतरे। इस पूरी यात्रा में जहाँ जहाँ बस कुछ देर तक रुकी वहाँ वहाँ हम भी उतरते चढ़ते रहे। देवन्द्रनगर में फूफा जी ने हमें वहाँ का प्रसिध्द 'खुरचन' खिलाया, वैसे तो खुरचन नागौद में भी मिलता था, पर यहाँ का खुरचन खास कहा जाता था। इसके पष्चात् पन्ना में भी हम कुछ देर तक रूके थे यहाँ भी जलपान हुआ। कुछ मिलाकर हमारी यह बस यात्रा काफी सुखदायी रही।

बमीठा में हम बहुत थोड़ी देर ही रूके यहाँ से अब बैलगाड़ी यात्रा प्रारंभ हुई बैलगाड़ी यात्रा का पहला चरण बमीठा से 'खजराये' तक था। यह एक बड़ी सी बैलगाड़ी थी, इसे फूफा जी के किसी परिचित ने भेजा था जो हमें 'खजराये' तक पहुंचा कर लौटने वाली थी। इस बैलगाड़ी में बैठने से पूर्व हम सभी को खुले आकाश के नीचे खड़े होकर हाथ पैर फैलाने का आनन्द प्राप्त हुआ। बस में घन्टों बैठने के बाद यह बदलाव अच्छा लगा, फिर भले ही वह बैलगाड़ी में बैठने का क्यों न रहा हो। बमीठा में भी फूफा जी से कुछ लोग मिले, जिनमें से एक व्यक्ति हमारे लिये अजूबा सा था। इसके एक हाथ में बर्छी या भाला जैसा बड़ा डंडा था जिसमें घुंघरू बंधे थे। यह उस पुराने ग्रामीण बुन्देलखण्ड का 'चिट्ठीरसा' था।

फूफा जी अब तक बहुत कम बोल रहे थे, परन्तु बमीठा आते ही उनके व्यक्तित्व में हमें बदलाव दिखा। यहाँ आकर उनका स्वभाव एक अधिकार सम्पन्न व्यक्ति का हो गया। उनकी वाणी अधिक आदेशात्मक हो गई। पास खड़े लोग उन्हें उनके मातहत की भांति उन्हें सुन रहे थे।

कुछ ऐसा लगा मानो जिस ऊर्जा को अब तक दबाये हुये बैठे थे उसे फूट निकलने का मौका मिला। ऐसा भी प्रतीत हुआ कि जैसे अब वे अपनी 'टैरिटरी' में आ गये हों।

हम सभी कुछ देर में 'खजराये' पहुंच गये। 1952 तक इन मन्दिरों की भव्यता की और यहाँ के बेजोड़ मूर्ति शिल्प की बातें होने लगीं थी। स्वतंत्र भारत के केन्द्रीय शासन को इन मन्दिरों में पर्यटन की छुपी संभावना दिखने लगी। धीरे-धीरे बहुत कुछ सरकारी कागजों और फाइलों में होने भी लगा। उन दिनों तक भारतीय पुरातत्व में चार प्रकार की जन अभिरुचियाँ देश में जाग्रत हो चुकी थीं। समाजवादी सरकार इनमें पर्यटन द्वारा कमाई देख रही थी, विश्वविद्यालयों के इतिहास और पुरातत्व विभागों के शोध छात्र और अध्यापक इन मन्दिरों और मूर्तियों के अध्ययन से कालजयी विद्वान होने के रास्ता ढूंढ़ चुके थे इन विद्वानों की प्रारंभिक टिप्पणियों और आलेखों से इस पुरातत्व का वैश्विक महत्व समझते हुये मूर्तियों के तस्कर और मूर्तियों के नीलामी से लगे लोग यहाँ अपना सुनहरा भविष्य देखने लगे थे एक और चौथी लोकाभिरुचि भी थी उसे मन्दिरों या मूर्तियों के शिल्प से ज्यादा वास्ता न था पर उसे उम्मीद थी कि यदि भविष्य में इन मन्दिरों को संवारा गया तो आस पास के क्षेत्र में रास्ते बगैरह बन जाने से उनके खेतों और जमीन की कीमत बढ़ जायेगी। इस तरह खजुराहो के मन्दिर और मूर्तियाँ लोकचतुष्टय में धीरे धीरे अपना स्थान बना रहे थे।

आगे के वर्षो में पुरूषार्थियों ने बहुत कुछ पाया इस पर टिप्पणी न करते हुये उस समय के भारतीय बौध्दिक जगत की कुछ भूली बिसरी उन मान्यताओं की ओर भी हम ध्यान दिलाना चाहेंगे जो केवल खजुराहो से संबंधित न थी वरन् खजुराहो जैसे कुछ अन्य मन्दिरों यथा कोणार्क आदि के मन्दिरों से भी जिसका संबंध था।

खजुराहों के विशाल और भव्य मन्दिरों में विदेशी वास्तुकारों और मूर्ति विज्ञानियों को इन मन्दिरों की छतों की सुन्दर नक्काषी, या उत्तुंग षिखरों की कलात्मकता से कई गुनी अधिक रुचि उन युगल मूर्तियों में थी जिनमें रति मूर्तिमन्त थी। सरकार के लिये भी यही रूचि महत्वपूर्ण थी। इससे बड़ी संख्या में विदेषी पर्यटक आकर्षित हो सकते थे। परन्तु उन्ही दिनों भारत में एक ऐसा बुध्दिजीवी वर्ग भी था जिसे हम चाहें तो 'प्यूरिटन' कह सकते है जिसे स्त्री पुरूष के मिलन में घोर अश्लीलता दिखती थी, उसका अभिमत था कि खजुराहो का यह शिल्प अश्लील है साथ ही अनैतिक भी है। इन विचारकों से एक सलाह यह तक आई कि खजुराहों का यह शिल्प मिट्टी से भरवा देना चाहिये। परन्तु सरकार में भी कम हुनरमन्द लोग नहीं थे उन्होंने इस विचार की काट के लिये धर्म और अध्यात्म के उन गुणी गुरूओं को आगे किया जिन्होंने रतिमूर्तियों को भारतीय धर्म के चार अंगों 'धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष' में से एक अति आवश्यक अंग बतलाया। बिना काम के मोक्ष कहाँ पर विद्वत्तापूर्ण लेख लिखे गये, तिस पर भी यह सोचते हुये कि कहीं 'प्यूरिटन्स' बखेड़ा न खड़ा करें दर्शनशास्त्र के उन मनीषियों को आगे किया गया जिन्होंने रतिक्रियाओं में 'तंत्र' की गहराई देखी थी। अब ऐसे मनीषियों के अनुभूत ज्ञान को कौन चैलेन्ज करता, सो सरकारी विद्वानों की जीत हुई और शासन ने अच्छे फोटोग्राफरों द्वारा खजुराहों के मन्दिरों में तंत्र' की अधिक गहराई वाले शिल्पों को कीमती चिकने पन्नों की पत्रिकाओं में रंगीन चित्रों में छपवाया, अंग्रेजी में विद्वतापूर्ण विवरण लिखवाये और इस प्रकार सरकार लोक कल्याणकारी योजना में प्रवृत्त हुई। कहा जाता है कि उद्यम से ही सिध्दि होती है। सरकार के इस समाज कल्याणकारी कदम द्वारा देर सबेर ही सही भारत के देसी युवावर्ग में भी खजुराहो की मूर्तिकला लोकप्रिय हुई।

अब हम पुनः उस कालखण्ड में पहुंचते है। जब हम बाल्यकाल में थे, और इन मन्दिरों तक पहुंच चुके थे, धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की समझ आने में अभी कुछ वर्ष शेष थे। इस कच्ची समझ में हमने जब खजुराहो के मन्दिर देखे तब उसमें हमें उस समय मन्दिर के भीतर हो रही चमगादड़ों की फड़फड़ाहट से घबराहट हुई। मन्दिरों के बाहर अजीब सी नीरवता थी। खजुराहो के मन्दिरों के पास एक बड़ा तालाब था। उसका तट ही बैठने लायक साफ सुथरी जगह थी, जहाँ हमारा मौसेरा भाई अपनी मातु श्री के साथ बैठकर चाय बनना देख रहा था।

हमारे फूफा जी की आज्ञानुसार ग्राम पुरवा पहरा से दो छोटा

बैलगाड़ियाँ हमें ले जाने के लिये यहाँ पहुंच चुकी थी। इन्हें 'तँगड़ियाँ' कहा जाता था। इनमें जुतने वाले बैल 'नटवा' थे, वे हमारी प्रतीक्षा में एक खूंटे में बंधे हुये थे। जिस बैलगाड़ी में हम आये थे उसमें और इन तंगड़ियों में वही अन्तर था जो लद्दू टट्टू और सवारी के घोड़े में होता है। उन दिनों खजुराहो में चाय की दुकान नहीं थी इसलिये आस पास से ईंधन जुटाकर चाय बनाई जा रही थी। मैंने देखा कि बैलगाड़ियों के चालकों के साथ दो व्यक्ति और थे जो 'तुबक' (भरमार बन्दूक) लिये हुये थे। इस तरह सात आठ लोगों के लिये चाय बन रही थी। बघेलखण्ड में रहते हुये मैं बचपन में बघेली-बुन्देली साझी संस्कृति से परिचित था जिसमें कप-बसी में चाय देने की अपेक्षा छोटे छोटे लोटे भर चाय पीने पिलाने की प्रथा थी। यह संभव है इसलिये भी था कि तब छूत-अछूत की भावना गहरी थी। सामान्यतौर पर बच्चे रास्ते में खा सकते थे पर बड़े बुजुर्ग इतनी मात्रा में खूब मीठी चाय पीते थे कि नाश्ते पानी की कुछ न कुछ भरपाई हो जाये।

हम सब खजुराहो पहुंचकर जब सरोवर के तट पर रुके तब मैंने दूर से खजुराहो के गगनचुंबी मंदिर देखे, जब मैंने उन्हें पास जाकर देखने की जिद की तब फूफाजी ने अपने उस अंगरक्षक को जो उनके साथ नागौद आया था, मेरे साथ कर दिया। वह व्यक्ति बड़ा फुर्तीला था और तेजी से चलता था। मैंने लगभग दौड़ते हुये चलकर बहुत से मन्दिर देखे। उन दिनों मैंने उससे कुछ प्रश्न भी पूछे पर वह ठेठ ग्रामीण आदमी था उसे इतिहास से या पुराशिल्प से भला क्या वास्ता होता। इन मन्दिरों की भव्यता से मैं अपने बचपन में बड़ा प्रभावित हुआ, सब कुछ इतना नया लगा कि मुझे लगा मैं किसी स्वप्नलोक में पहुंच गया होऊँ।

सुन्दरता कैसी भी हो व्यक्ति की हो, निःसर्ग की या स्थापत्य की हो वह मनुष्य को हर उम्र में अभिभूत कर देती है पर उस सौंदर्य की अभिव्यक्ति के लिये शास्त्रीय अध्ययन की आवश्यकता होती है। खजुराहो की खूबसूरती को तभी समझा जा सकता है जब उन पुराणों को ज्ञान हो जिन के विवरण पर मंदिर शिल्प निर्धारित हुये। अपराजितपृच्छ, रूपमण्डन और समरांगणसूत्रधार जैसे ग्रन्थों के अध्ययन से पता चलता है कि मंदिर शिल्पों को कैसे नियमबध्द किया गया। बीसवीं शती के वे ग्रंथ जो,कृतिदेव यहां आइकनोग्राफी, पर बी.सी. चटर्जी, जे.एन बनर्जी एवं भट्टसालि आदि भारतीय विद्वानों ने लिखे या कि फिर वे ग्रंथ की जिन्हें स्टेला क्रेमरिख जैसे विदेशी विद्वानों ने लिखे पठनीय हैं, इनमें मंदिर शिल्प की बारीकियों को गहराई तक समझा जा सकता है। मैंने जिन ग्रंथों की बात यहाँ की वे हमारे बचपन के काल में भी मौजूद थे पर उन्हें पढ़ने और समझने वाले बहुत ही बिरले लोग थे।

समय बीतते खजुराहो के मन्दिरों पर न जाने कितने हिन्दी और अंग्रेजी में ग्रंथ लिखे गये। पर यह सब कुछ तब हुआ जब खजुराहो का परिदृश्य पूरी तौर से बदल चुका था। जिस खजुराहो को हमने देखा था उसके मन्दिरों के सामने हमने स्वयं देशी खजूर (छीन) एक ग्रामीण बेचने वाले से खरीदी थी, पर तब हमें यह न मालूम था कि खजुराहों का नामकरण इसी 'खर्जूर' से संबंधित है। हमारी स्मृति में मंदिर की सुन्दरता के साथ 'खर्जूर की मिठास और चमगादड़ों की फड़फड़ाहट से उत्पन्न घबराहट सदा के लिये अंकित हो गई। हम जब मंदिरों के भ्रमण के पश्चात् सरोवर तट पर पहुंचे तब तक 'तंगड़ियाँ' तैयार थी। एक में नागौद से आये हम लोग बैठे साथ ही हमारी सुरक्षा के लिये गाड़ीवान के साथ एक 'तुबकची' बैठा। दूसरी 'तंगड़ियां' में बाकी सब बैठे।

ये तंगड़ियाँ द्रुतवेग से उसी राह से चल पड़ी जहाँ आज पांच सितारा होटल है, जहाँ शानदार एयरपोर्ट है। पर उन दिनों यह सारा इलाका 'विरल वनों से आच्छादित था।

हमने यहां तगड़ियां की आवाज से डरकर भागते हुये कुछ ऐसे वन्य पषुओं को देखा जिन्हें हमने पहली बार ही देखा था ये बड़ी बड़ी गायों के समान थे। पास बैठे तुबकची ने मुझे इनका नाम 'रोझ' (नीलगाय) बतलाया।

उन दिनों बुन्देलखण्ड का यह इलाका डाकू ग्रस्त था। फूफा जी ने हमारी सुरक्षा के लिये ही 'तुबकचियां' को बुला लिया था। बाद के वर्षो में हमें पता चला वस्तुतः फूफा जी को किसी भी मुख्य डाकुओं के गिरोह से कभी कोई खतरा न था, और इसीलिये सन् 1947 तक वे सफलतापूर्वक अपने क्षेत्र में 'राज' कर चुके थे। लोकश्रुति के अनुसार स्वतंत्रता के पश्चात् बगैर ईमान धरम वाले डाकू पैदा हो रहे थे, जिनसे सतर्क रहना जरूरी था।

शाम होते होते हम पहरा पुरवा पहुंच गये। यह एक बहुत छोटा सा गाँव था जिसके बीचों बीच हमारे फूफाजी की एक छोटी सी किलानुमा हवेली थी जिसका मुख्य दरवाजा काफी बड़ा और बुन्देली राजसी की नकल था। हमारी यह यात्रा पूरी हुई जिसमें हमने खजुराहों के मन्दिर जिस अवस्था में देखे थे उसकी अब कल्पना भी करना संभव नहीं है।

अब सब कुछ बदल चुका है। अब खजुराहो के मंदिर साफ सुथरे हैं। खजुराहों भारत का प्रमुख पर्यटन स्थल है। वह अब 'विश्वविरासत' है। प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले प्रतिष्ठित खजुराहो नृत्य समारोह ने खजुराहो की लोकप्रियता में बहुत अधिक वृध्दि की है। खजुराहो के मंदिरों में शिल्पित नृत्य-संगीत की दृश्यावलियाँ अगर अपने 'अतीत' की गूंज लाती हैं, तो वर्तमान की नृत्यांगनायें भरत नाट्यम, मोहनी अट्टम, कथक, ओडिसी, मणिपुरी आदि नृत्य विधाओं को प्रस्तुत करते हुये यह याद दिलाती है कि कलाओं की यह मिली जुली 'साखी' दर्शकों के लिये एक आनंददायक अनुभव है।

खजुराहो नृत्य-समारोह के अवसर पर एक कला मेला भी लगता है। नृत्य पर परिसंवाद भी होते है। कलाकार षिविरों (आर्टिस्ट कैंप) में दो-तीन पीढ़ियों के समकालीन चित्रकार मूर्तिषिल्पी हिस्सा लेते है। मुझे इस बात का संतोष है कि काल पथ की लंबी यांत्रा के दोनों छोर मैंने देखे हैं जिनमें से एक कालखण्ड कला सुप्ति का था तो दूसरा पूरी तौर पर कला जाग्रति का है। बुन्देलखण्ड की यह यात्रा मेरे लिये अविस्मरणीय है।

-जबलपुर (म.प्र.)

चौकड़िया - डॉ. जगदीश रावत

जौ तन कछू काम नइ आनें, माटी में मिल जाने।
इये बुढ़ापे में बिजना-सौ, कंपने, कोढ़ चुचाने।
खासी आने और कढ़ी बासी, सौ इये बसाने।
भज जगदीश्वर अगर जरापन में जी खों सुख चानें।।

– कमला कॉलोनी, छतरपुर

बुन्देली लोकगीतों में सामाजिक दृष्टिकोण

–विनोद मिश्रा 'सुरमणि'

साहित्य, संगीत एवं धार्मिक रूप से बुन्देलखण्ड का लोकांचल उन समस्त लोकखण्डों का लोकक्षेत्रों की तरह धनाड्य है जो अपनी परम्परा, संस्कृति और संस्कार से पहचान रखते हैं। हर क्षेत्र की अपनी लोकविद्या, संगीत, साहित्य, संस्कार व रीति-रिवाज होते है और यही सब मिलकर समाज के लोक तत्वों का निर्माण करते हैं क्योंकि लोकाभिव्यक्ति, लोकहित, लोकरंजन ही लोकतत्वों का मूसलाधार होते हैं।समाज निर्माण में इन महत्वपूर्ण लोकतत्वों की भूमिका रहती है। सुदृढ़ समाज पारम्परकिता की उपज होती है, मात्र साहित्य ही समाज का दर्पण नहीं कहा जा सकता, यहां यह कहना भी न्यायोचित होगा कि संस्कार, परम्परा और लोक संसाधन भी समाज को मार्गदर्शित करते हैं ओर उन्मुखि निर्माण से सहभागी होते हैं, अर्थात् समाज में लोक संसाधनों का महत्व हर विधा से माना जाता है।

बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक विरासत लोक ही है, उसके प्रकार, विभाग या विधाओं के स्वरूप भले ही पृथक-पृथक रूप से कार्य कर रहे हो, यहाँ की लोक संस्कृति, लोक साहित्य एवं लोक भावनाओं ने समाज के सचेतन में सदैव कंधा मिलाकर कार्य किया है। आधुनिकता की दौड़ में हमें उक्त विषयों पर चर्चा करने की आवश्यकता महसूस होने लगी है। पर आज भी वजूद अपने बलवूते पर अढक बना हुआ है। बुन्देलखण्ड का मूल निर्माण बुन्देला वंश से है जिसका 15वीं शताब्दी में रूद्रप्रताप के रूप ने प्रादुर्भाव होता है। वीरता और आध्यात्म, साहित्य व संस्कृति को साथ लेकर चले इस नेतृत्वधारी राजा-महाराजाओं ने बुन्देलखण्ड को पहचान दी थी । एक कवि के अनुसार -

छत्रपति छत्रसाल की मिसाल मिले कितै
दुष्ट दल दर्प की धरा है जौ बुन्देलखण्ड
दानवीर वीरसिंह देव की तुला सी भासी
वासुदेव न्याय मुखर। है जा बुन्देलखण्ड
धर्मवीर हरदौल मधुकर शाह जू की जन्मभूमि
पावन धरा है जौ बुन्देलखण्ड
हुलसी के नन्दन ने चंदन घिसौ है इत्तै
भारत की तुलसीघरा है जौ बुन्देलखण्ड।।
- वासुदेव गोस्वामी

भारत के मध्य में आँगन रूपी क्षेत्र में पवित्र तुलसीघरा के रूप में बुन्देलखण्ड की संरचना कवि वासुदेव गोस्वामी जी की है। यहाँ की संस्कृति और परम्परा का मान यहाँ की बोली बुन्देली बढ़ाती है। आज सारा देश हिन्दी संरक्षण की बात कर रहा है। आयोजन, प्रयोजन और आख्यान हिन्दी के संरक्षण के लिए निरन्तर जारी हैं परंतु यहां यह कहने में कदापि संकोच नहीं है कि अगर हिन्दी को बचाना है तो उसकी लोकबोलियों को बचाना होगा, संरक्षित करना होगा, बोलियाँ बचेगी तो हिन्दी सुनिश्चित रूप से स्थापित बनी रहेगी।

बुन्देलखण्ड की स्थानीय बोली बुन्देली माधुर्य, मधुरता और मिठास की मीठी खुशबू है। मधुकर मिश्र ने लिखा है कि -

ऐसी नौनी लगत बुन्देली, जैसेंनार नवेली
संस्कृत की बिटिया है जो बृज की परम सहेली
केशव तुलसी सूर ईसुरी, इनके घर में खेली
मधुकर जाकी जा मिठास पै, मौ मिठयात जबेली।

स्वयं मैंने अपनी एक चौकड़िया में लिखा था -

ऐसी है बुन्देली माटी, मिसरी जैसी घाटी
चंदन घिस कवि बन गए, तुलसी अवधी संग में बाटी
मीठो सीठो स्वाद वो जानो, जीने जाये चाटी
कात विनोद बचा लो जाये पुरखन की परिपाटी।।

बुन्देली की मिठास का वर्णन करते हुए कवि निर्भीक जी लिखते है-

''बुन्देली के बोलतन परतई ऐसौ चैन, जैसे पौड़ा   ऊख कौ चौखत भैया बैन''

कवि प्रकाश जी ने लिखा है कि -

'ईसुरी जा जग मैं जस कर गए
हिन्दी के माथे पें बिन्दी बुन्देली की धर गए।।

लोक कवि ईश्वर प्रसाद अड़जरिया 'ईसुरी' ने अपनी चौकड़ियों से समाज के हर वर्ग, हर विषय को स्पर्श किया है, वह श्रृंगार को लिखकर होली के उत्सवों की पहचान बने हैं तो कहीं चेतनात्मक रचनाओं से समाज के प्रेरक भी।

प्रेम की पराकाष्ठा का स्वरूप उनकी चौकड़ियों में व्याप्त है-

जब सें भई प्रीत की पीरा सुखी नहीं जौ जीरा।
कूरा माटी भऔ फिरतहै इतै उतै मन हीरा।।

सामाजिक सरोकारौ के कवि ईसुरी ने हर बात अपनी अनुभूति अपनी घटित समस्याओं से लेकर समाज की बात कही है। उन्होंने जीवन के मूल तत्व की ओर इशारा करते हुए लिखा था-

बखरी बसियत हैं भारे की, बिना कुची तारे की

जीवन के यथार्थ को लोककवि अपनी रचना के माध्यम से समाज के सामने रखता है ।

बुन्देलखण्ड के पारम्परिक गीतों ने सामाजिक सौहार्द्र का कार्य भी किया है। वर्तमान में बढ़ते अपराधों की वजह विलुप्त होती पारम्परिकता, संस्कार गीत का पलायन लोक उत्सवों की ओर से लोगों का रुझान कम होना भी है। आज अत्याचार और दुष्ट व्यवहारों के बढ़ते ग्राफ का कारण भी हमारा सांस्कृतिक धरोहरों से भागना है। राजा हरिश्चन्द्र की नौटंकी नाटक या कहानी हमारे जीवन को मोड़ देने तक की सामर्थ रखती थी। विवाह संस्कार में गाये जाने वाले गीत हमारे चरित्र का निर्माण करते थे। बुन्देलखण्ड के विवाह

उत्सव पर विदा के समय गाया जाने वाला गीत 'कच्ची ईट बाबुल देहरी न रखियौ बेटी न दिये परदेस मोरे लाल' एक ऐसे रिश्ते की ओर इंगित करता है जिसके परिणाम में हमारी पारम्परिकता बन्धन व सच्चरित्र स्पष्ट नजर आता है। गाँव के बेटी का विवाह मैं उस वक्त गाया जाने वाला यह लोकगीत (गारी) जब गाँव की बेटी विदा होती है, रोती बिलखती पालकी में रोते हुए कहारों के साथ चली जा रही बेटी गाँव के गेहूड़े (शहर) से अलगाँव की राह पकड़ती है तब उसे बिछुड़ते परिवार की याद सताती है। ऐसे करूणात्मक विषय में उसे एक बरेदिया (चरवाहा) जो अपनी छोटी-छोटी बकरियों को घास-फूस चरा रहा है दिखाई देता है उसे देखते ही वह पालकी से झोंकती कहती है -

बीचई में मिल गए भैया वरेदिया
वाबुल खौ दियो सन्देस मोरे लाल
मोरे खेलत की धरीं पुतरियाँ
गंगा में दियौ बहाये मोरे लाल।।

उक्त पंक्तियाँ भावना का उत्कृष्ट उदाहरण है। गाँव के वरेदिया को अपना भाई बनाकर अधिकार स्वरूप उसे सन्देश वाहक बनाना। यह भावना हमारे लोकगीतों में ही मिल सकती है। आज भी अगर सही भाव के गीत हमारी नई पीढ़ी के अंतस में स्थापित रहे तो बालिकाओं सें होने वाले यौन उत्पीड़न कभी भी अपनी घुसपैठ नहीं कर पायेंगे। संस्कारों से कटते युवा व्यभिचारों और आधुनिकता की असभ्यता में लिप्त होते जा रहे हैं।

विवाह संस्कार में ही जुगिया जो वरपक्ष की महिलाएँ बारात गाँव से चली जाने के उपरान्त खेलती हैं। वह सिर्फ मनोरंजन मात्र का साधन नहीं है। मनोरंजन के साथ कुँआरि कन्याओं को दी जाने वाली नैतिक शिक्षाओं का माध्यम है। जिस घर से बरात चली जाती है वहाँ सिर्फमहिलाएँ ही घर पर रहा करती हैं। ऐसी स्थिति में रात भर का जागरण (जुगिया) जैसी विधा को जन्म देता है। वहीं एक और महत्वपूर्ण बात विवाह के अवसर पर देखने को मिलती है कि वरपक्ष के घर महिलाओं का ही मात्र रहने की स्थिति में सुरक्षा की दृष्टि से गाँव के मेहतर बाबा या दादा रात भर एक डण्डे के सहारे सुरक्षा प्रदान करते हैं यहाँ इस बात पर गहन चिंतन करना चाहिए कि जिस जाति को हम छूत-अछूत के माध्यम से उपेक्षित करने की बात करते हैं । उसी समाज का व्यक्ति एकमात्र स्थिति में सुरक्षा कवच का कार्य करता है। यहाँ स्पष्ट हो जाता है कि जातिगत छुआछूत हम सबकी बनाई हुई मानसिकता है। वही लोक-परम्पराओं में एक दूसरे की सहभागिता एवं सहयोग के बिना कोई भी कार्य निष्पादित नहीं हो पाता था। कुम्हार कलश और घड़े विवाह घर में देता है, धोबिन मण्डप के नीचे सुहाग देती है, मालिन रस्कश की रस्म कराती है, नाईन सुहाग की पूर्ण तैयारी, ढीमर जल व्यवस्था, कुशवाहा मिष्ठान आदि कुल मिलाकर बुन्देलखण्ड की परम्पराओं में समाज एक परिवार है जहाँ विभिन्न जाति वर्ग के लोग एक साथ कार्य कर सहभागी होते हैं। यह सब यहाँ के पारम्परिक गीतों में मिल जाता है।

बुन्देलखण्ड में कुवांरि कन्याओं (लड़कियों) द्वारा खेला जाने वाला संस्कार खेल 'सुआटा' जहाँ संस्कृति और कला का उत्कृष्ट उदाहरण है वहीं सामाजिक समन्वय का भी महत्वपूर्ण उदाहरण है। रंग संयोजन, गीत गायन, चित्र निर्माण इस संस्कार खेल के वह आयाम है जो लड़कियों को प्रारंभिक स्त्रोत से सीखने को मिल जाते हैं। बिना साधनों के वह रंग निर्माण, स्थानीय कंकणों-पत्थरों से करना, उनके द्वारा सुआटा के चबूतरे पर भूमि अलंकरण करना इस प्रक्रिया को करते समय गीतों का गायन करना यह सुआटा की रीति होती है। सुआटा पर गाये जाने वाले गीत चार चरण में होते हैं पहला सुआटा निर्माण, दूसरा गौर (पार्वती) का श्रृंगार तीसरा भस्कू और चौथा फु रसत के समय बैठकर गायन करना। यह चरण बड़ा ही महत्वपूर्ण होता है। इस अवसर पर लड़कियों की स्मरण शक्ति परीक्षात्मक होती है। अपने-अपने परिवार के समस्त सदस्यों के नाम लेकर गायन करना तो सहज है । ही परन्तु मोहल्ला के लोगों के नाम सपरिवार याद कर गायन करना स्मरण शक्ति का उदाहरण होते हैं। वे गारी है -

सूरजमल के गुल्ला छूटे, चंदामल के गुल्ला छूटे

रज्जू के गुल्ला छूटे, संजू के गुल्ला, छूटे-आदि नाम लेकर गीत को बढ़ाती है वहीं चौथे चरण का उतरार्द्ध सबसे अधिक महत्वपूर्ण होता है जिसमें वह मोहल्ला भर के लड़कों को अपना भाई बनाकर कहती है -

जे मेरे भैया-चंदा मल भैया
सूरज मल भैया
माँ के जाये
गोद खिलाये
लिवाहुन जैहैं, पठावन जैहें
सूखे ताल भरावत जैहैं
बंद कुआँ उगरावत जैहैं
लाल छड़ी चमकावत जैहैं
नंगी ढुकरियाँ पहनावत जैहैं।

वह अपने संगे एवं पड़ौस के भाईयों से अपेक्षा करती है कि वह मेरी शादी उपरान्त जब हमें लेने-भेजने जायें तो सामाजिक कार्य करते हुए जायेंगे। यहाँ इस गीत में जल पर्यावरण के साथ भाईचारे का महत्वपूर्ण सन्देश दिया गया है। एक-दूसरे के प्रति प्रेम स्नेह इन गीतों के साथ जोड़कर रखता है। यह सब जबसे दूर जाने लगा या विलुप्त होने की स्थिति में है तब से ही व्यवहारिकता में बदलाव आया है। समाज में जैसा दिखाया जायेगा लोग वैसा ही अनुसरण करते हैं।

-संगीत गुरुकुल, मधुकर मार्ग,
पकौरिया महादेव, दतिया (म.प्र.), 475661

फारसी लिपि में लिपिबद्ध :

केशव कृत राम चन्द्रिका की हस्तलिखित प्रति

-उदय शंकर दुबे

वाल्मीकि रामायण की समय-समय फ ारसी भाषा में अनूदित कई पाण्डु लिपियाँ विभिन्न संग्रहालयों और पुस्तकालयों में सुरक्षित है। रजा लाइब्रेरी-रामपुर (उ.प्र.) के संग्रह में सुरक्षित पंडित सुमेर चंद द्वारा फारसी में अनूदित वाल्मीकि रामायण की सचित्र प्रति चित्रकला की दृष्टि से बेजोड़ प्रति है, यह प्रति तीन भागों में प्रकाशित है। इसी प्रकार गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित रामचरित मानस की फारसी लिपि में लिखी हुई हस्तलिखित प्रतियाँ मौलाना आजाद लाइब्रेरी मुस्लिम विश्वविद्यालय-अलीगढ़ खुदाबख्श लाइब्रेरी-पटना (बिहार), तुलसी शोध संस्थान-नया गाँव-चित्रकूट (सतना म.प्र.) के संग्रह में वर्तमान है किन्तु हिन्दी के प्रसिद्ध कवि केशवदास कृत रामचन्द्रिका ग्रंथ की फ ारसी में लिप्यांतरित या अनूदित पाण्डुलिपि की जानकारी उपलब्ध नहीं थी।

आज से लगभग एक दशक पूर्व छतरपुर (म.प्र.) के मेरे मित्र हिन्दी के वरिष्ठ लेखक और कवि डॉ. गंगा प्रसाद गुप्त बरसैंया जी दिनांक 22 मार्च, सन् 2003 ई. को मेरे पास एक पत्र भेजा और उसी के साथ रामचन्द्रिका की फ ारसी लिपि में लिखी पाण्डुलिपि के दो पृष्ठों की फोटो स्टेट प्रति भी। डॉ. बर सैंया ने अपने पत्र में लिखा था, वह यथावत इस प्रकार है- ''ओरछा कीकिसी के शव जयंती में किसी विद्धान ने अकबर के दरबार में रहीम और केशव के संबंधों की चर्चा करते हुये यह रहीम ने अनुमान व्यक्त किया था कि केशव की रामचन्द्रिका की फारसी में प्रतिलिपि तैयार कराई थी। चूँकि कथन का कोई प्रमाण नहीं था अतः बात आई मई हो गई। उसी समय कभी डॉ0 रामस्वरूप आर्य-बिजनौर (उ.प्र.) ने रामचन्द्रिका की फारसी प्रति के तीन पृष्ठ भेजे थे, जो हिजरी सन् 1169 अर्थात् ईसवीं सन् 1751 की प्रतिलिपि है। डॉ0 आर्य ने पत्र में यह भी लिखा था कि रामचंद्रिका की अब तक उपलब्ध प्राचीनतम प्रति है। ऐसा डॉ. विजयपाल सिंह भी मानते हैं।'' आगे उन्होंने पत्र में पुनः लिखा है कि ''रामचंद्रिका की रचना सन् 1601 में हुई। अकबर की मृत्यु सन् 1605 में हुई। उसी वर्ष जहाँगीर गद्दी पर बैठा। केशवदास की मृत्यु सन् 1623 ई. में मानी जाती है और रहीम की सन् 1627 ई. में। सन् 1601 ई. से लेकर सन् 1623 ई. तक की लंबी अवधि में रहीम और केशव की अंतिम दिनों में लगभग एक सी दुर्गति भी हुई। हो सकता है कि कभी केशव ने रहीम को रामचंद्रिका दी हो ओर रहीम ने फारसी में प्रतिलिपि की व्यवस्था करवाई हो। यद्यपि यह प्रतिलिपि बहुत बाद की है। इसी अनुमान के आधार पर मैं ये तीन पृष्ठ भी उस निबंध में देना चाहता हूँ। पृष्ठों की छायाप्रति संलग्न है। कृपया इसे पढ़वायें और अपनी राय शीघ्र लिखें। छपने के पूर्व स्थिति स्पष्ट होनी चाहिए।''

डॉ. बरसैंया जी का पत्र पाते ही मैंने सर्वप्रथम प्रो. रामस्वरूप जी आर्य को एक पत्र इस आशय का लिखा कि श्री बरसैंया जी का ऐसा पत्र आया है जिसमें रामचंद्रिका की फारसी लिपि में लिखित प्रति का उल्लेख है। कृपया प्रति के विषय में तत्काल सूचित करें। आर्य जी मेरे सुपरिचित थे। वे नागरी प्रचाारिणी सभा काशी के साहित्यान्वेणक के अपने जिले के स्थानीय निरीक्षक थे। मेरे प्रस्ताव पर उन्होंने 14 सितंबर सन् 1994 ई. को अपने संग्रह की बहुत सी सामग्री हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के संग्रहालय को भेंट की थी। सम्मेलन ने उसी वर्ष उन्हें साहित्य महोपाध्याय की उपाधि प्रदान की थी। उनके बहुत से पत्र मेरे पास सुरक्षित हैं। उस समय मैं स6मेलन में कार्यरत था। प्रो. आर्य ने सम्मेलन कार्यालय में ही मुझे फोन किया कि दुबे जी दुःख के साथ बता रहा हूँ कि मेरी बहुत सी सामग्री रख-रखाव के अभाव में नष्ट हो गई। फारसी में लिखी बिहारी सतसई और रामचंद्रिका आदि पाण्डुलिपियाँ कीड़े खा गये, कुछ गल गई। मैंने कहा कि आर्य जी जो कुछ भी सुरक्षित बचा हो सम्मेलन संग्रहालय को भेंट कर दें। आर्य जी ने कहा कि आपका प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार है और उन्होंने सन् 1994 ई. में स्वयं बची हुई सामग्री सम्मेलन को भेंट कर दी अर्थात् फारसी में लिखित रामचंद्रिका काव्य कवालित हो गई। उसके तीन पृष्ठों की फ ोटो स्टेट श्री बरसैंया जी के पास साक्ष्य हेतु सुरक्षित है।

रहीम तुर्की, फारसी, संस्कृत, हिन्दी भाषा के ज्ञाता थे। कुशल लेखक ओर कवि थे। उन्होंने वाल्मीकि रामायण (फारसी में अनूदित) की शाती प्रति का बादशाह अकबर से अनुमति लेकर उसकी प्रतिलिपि कराकर अपने चित्रकारों से चित्रित कराया था। इसके साथ ही रहीम ने इसी प्रति के प्रारंभ में अपने स्वाक्षरों में वाल्मीकि रामायण की भूमिका भी लिखी। उनकी निजी यह प्रति फ्री पर आर्ट गैलरी-वाशिंगटन (अमेरिका) में सुरक्षित है तथा उसकी माइक्रो फील्स, भारतीय मनीषा सूत्रम्, दारागंज, प्रयाग के संग्रह में है। रहीम रामकथा प्रेमी थे। केशवदास ने संभव है उन्हें रामचंद्रिका की प्रति भेंट की हो। रहीम स्वयं हिन्दी भाषा के जानकार थे, वे फ ारसी लिपि में प्रतिलिपि क्यों कराते? तत्कालीन किसी भी तवारिखं में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता कि रहीम ने रामचंद्रिका ग्रंथ को फारसी में लिखवाया। आर्य जी के संग्रह की प्रति सन् 1751 ई. की है। रामकथा के किसी काव्यप्रेमी ने अपने पढ़ने लिये इसे फ ारसी में लिपिबद्ध कराया होगा। सन् 1700 ई. से लेकर सन् 1900 ई. के मध्य हिन्दी के कई महत्वपूर्ण ग्रंथ फारसी में लिपिबद्ध किया गये थे।

-साहित्य कुटीर, कठारी बाजार, पो.-खमरिया,
जि.-भदोही (उ.प्र.), पिन-221306

महिला कथाकार और बुन्देली लोक संस्कृति

-डॉ. अवधेश चंसौलिया

बुंदेली माटी में जन्मी महिला कथाकार आज भले ही बुंदेलखंड से दूर अपनी रचना धर्मिता में संलग्न हों, लेकिन उनके संस्कारों, में उनके मन में, रोम-रोम में बुंदेली जन-जीवन रचा-बसा है। यही कारण है कि जन्म से मरण तक के संस्कारों, रीति-रिवाजों एवं यहाँ के तीज त्यौहारों का जीवंत चित्रण इनके कथा-साहित्य में सहजता से प्राप्त हो जाता है। बुंदेली महिला कथाकारों में मैत्रेयी पुष्पा का नाम सर्वोपरि है। इन्होंने बुंदेली ग्राम खिल्ली जिला झाँसी उ.प्र. में अपना अधिकतर जीवन व्यतीत किया और बुंदेलखंड महाविद्यालय झाँसी से एम.ए. हिन्दी साहित्य विषय से उर्त्तीण किया। मैत्रेयी जी ने बुंदेली समाज को बहुत नजदीक से देखा-परखा है। इसलिये इनके कथा साहित्य में बुंदेली जन-जीवन पूरी सूक्ष्मता, गहन आत्मीयता के साथ रूपायित हुआ है। बुंदेलखंड ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत के सभ्य समाज में पुत्री की अपेक्षा पुत्र जन्म पर लोगों को अधिक प्रसन्नता होती है। पुत्र जन्म पर दिल खोलकर खर्ल किया जाता है नेग बांटे जाते हैं जबकि पुत्री जन्म पर लोग जन्म संस्कार से जुड़ी दाई का मेहनताना देने भी संकोच भी करते हैं। ऐसी स्थिति में बसोर (दलित) जाति की दाई, पुत्र-पुत्री में भेद न करती हुई सोहर गाती है-

''जसोदा जी सें हँस-हँस पूँछत दाई,
नंदरानी जी से हँस हँस पूँछत दाई,
रातैं तो मैं लली जनाय गयी
लालन कहाँ से ल्याई। जसोदा जी सें ....।1

भारतीय समाज विशेषकर रूढ़ियों से ग्रस्त बुंदेली समाज में पुत्र को जन्म देने वाली माता को जो सम्मान प्राप्त है, वह पुत्री जन्मने वाली माता को नहीं है। 'तुम किसकी हो बिन्नी' कहानी में पुत्री की मां की मानसिक संघर्ष की स्थिति का सूक्ष्मांकन दृष्टव्य है - ''बिना पुत्र की जननी बने, वे माँ के गौरवान्वित पद को स्वीकार नहीं कर पा रही थीं।...... अधूरेपन का एहसास मकड़ी के जाले सा मन पर चारों ओर लिपट गया। सामाजिक परिवेश कटीला सा हो चला। तीज त्यौहार चिढ़ाते-बिराते से निकलने लगे। कलेजे में हीनता की हूंक सी उठती, तो वेचारगी में पलट जाती.... यह एक बात उनके कलेजे को निरंतर उधेड़ती रहती कि-वे बेटे को जन्म नहीं दे सकी।''2 पुत्र जन्म की प्रसन्नता अवर्णनीय होती है। यथा - ''चाची आ गयीं। गोमा ने बालक को जनम दिया है। चाची थाली बजाने लगीं..... घर-घर बुलावे दिये जा रहे हैं। चौक पूरकर सांतियां धरे जायेंगे। चाची कोरा चरूआ भर रही हैं। बत्तीसा डालकर उबालने धरेगीं। गोमा को बत्तीसा का पानी पीना है। नेग सगुन हो रहे हैं.... सोहर गाये जा रहे हैं-

ऐसे फूले सालिग राम डोलें, हाथ लिय रूपइया,
ए लाला के बाबा, आज बधाई बाजी त्यारे।। 3

मैत्रेयी पुष्पा के 'अल्मा कबूतरी में' बच्चे की छठी संस्कार का चित्रण बहुत ही यथार्थपरक है। कदम बाई कबूतरी ने बेटे को जन्म दिया है। कबूतरें के डेरों पर गाँव के पंडित जी तो आते नहीं अतः पंडिताई का कार्य मलिया काका ही करते हैं। बच्चे का पालना बाहर निकाला गया। चौक जगमगाने लगा। सरमन की औरत देवर को गालियाँ देकर हल्की हो चुकी थी, सो सोहर गाने लगी। आधा गज नया कपड़ा भी ले आयी-कुर्ता टोपी के लिए।

डॉ. छाया श्रीवास्तव की कहानी 'असगुनी' में भी पुत्र जन्म पर खुशी में सोहर गाते हुए स्त्रियों के मनमोहक दृश्य हैं। ननद के कहने पर छोटी भाभी गाती है-

''हमको तो पीर आवें, ननद हँसत डोलें।'' 5

बच्चे के जन्म के पश्चात पंडित जी उसका नामकरण करते हैं। इन्हीं की कहानी 'पिपासित' में इस संस्कार का भी जिक्र हुआ है।

सेवढ़ा (दतिया) की डॉ. कामिनी ने 'गुलदस्ता' कहानी में सातवें महिने के गर्भ के समय लड़की के मायके से आने वाले पच की बात इस प्रकार की ''बिटिया के अगर लड़का हुआ तो पच के लिए दो धोती, अच्छा ब्लाउज, बच्चे को कपड़े, दामाद को कुर्ता-धोती चाहिये। मिठाईयाँ, गेहूं, दालें, चावल अलग। सोने की नहीं तो चाँदी की हाथ की पुतरिया, तबिजिया चाहिए। गिरिजा को तीन-तीन बिछियाँ नहीं, तो गाँव वाले नाम धरेंगे। कोई क्या कहेगा कि घर में जुआरा बँधा है। खेती भी है और कुछ न भेजा। 6 बुंदेली महिला कथाकारों ने विवाह से सम्बन्धित अनेक रीति-रिवाजों एवं संस्कारों का बहुत ही सुंदर चित्राकन किया है। सामाजिक रीति-रिवाजों की जितनी विस्तृत ओर यथार्थ जानकारी महिला लेखिकाओं को है, उतनी पुरूष लेखकों नहीं है। इसलिये महिला लेखिकाओं के चित्रण अधिक सजीव और यथार्थ बन पड़े हैं। डॉ. छाया श्रीवास्तव कहानी 'विकल्प' में लकड़ी देखने का दृश्य इस प्रकार उपस्थित करती हैं - ''कानपुर के सब-इंजीनियर आये थे, दलबल सहित मां, दो बहिनें, एक भाई के साथ। पिता ने आदर सत्कार में कमी नहीं रखी थी। लड़के ने भाँति भाँति से इंटरव्यू लिया था। बहिनों ने तो नचाकर देखा था। पूरे दो दिन में वे महीनों का हिसाब बिगाड़ गये थे।'' 7

'जीवन पथ कहानी' में छाया श्रीवास्तव ने वर-वधू के विवाह की रस्म का सुन्दर चित्रांकन किया है। इस कहानी में बेटी की विदाई का बहुत ही कारुणिक और हृदय विदारक दृश्य उपस्थित कर पाठकों को भी द्रवित करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। विदा के पश्चात जब वधू ससुराल पहुंचती है, तब का दृश्य इसी कहानी में दृष्टव्य है। -''वर-वधू के आगमन का समाचार सुनकर समस्त स्त्रियां वधू की अगवानी के लिए दरवाजे की ओर झपटीं। कमला

भी अपनी सबसे छोटी देवरानी के स्वागतार्थ थाल सजाकर द्वार पर आ खड़ी हुई। सब स्त्रियों को ठेलकर वह आरती का थाल लिये वर-वधू के सम्मुख आ खड़ी हुई।'' 8

डॉ. पद्मा शर्मा (शिवपुरी की कहानीकार) ने 'रेत का घरोंदा' कहानी में वधू के ससुराल आने पर कंगन खोलने के रिवाज का बड़ा ही मनोरंजक चित्र उपस्थित किया है। इस कहानी में ससुराल में नई वधू से गाना गाने को कहा जाता है, इस प्रथा को दादरे गाने की रस्म कहा जाता है। घर परिवार नाते-रिश्ते एवं मुहल्ले की औरतों के समक्ष नई वधू को दादरे गाने पड़ते हैं। नई वधू के समक्ष यह बहुत ही दुविधा की घड़ी होती है। वह सोचती है क्या गाऊँ, क्या न गाऊँ। पता नहीं, जो गाऊँ उसकी क्या प्रतिक्रिया हो? इसी कहानी में नववधू स्मिता ढोलक पर थाप देकर गा उठती है -

''राजां की ऊँची अटरिया, दइया मर गई, मर गई
सासू कहे बहू रोटी कर लो, सब्जी कर लो,
राजा कहे मेरी रामकली की ऊँगली जल गई।''

लड़की के विवाह में लड़की के मामा द्वारा भात लाने की परम्परा बुन्देली समाज में बहुत महत्व रखती है। इस अवसर पर लड़की के मामा अपनी सामर्थ्य के अनुसार दान दहेज की व्यवस्था करते हैं। भतैयों के स्वागत में बहिनें गाती हैं। इस समय की इसी कहानी का यह दृश्य उल्लेखनीय है -

''सुनो भैया करूं विनती समय पर भात दे जाना
ससुर को सूट सिलवाना, सास को साड़ी ले आना
अगर इतना न हो, भैया तो खाली हाथ आ जाना।
मंडप की शोभा रख जाना।।'' 10

मैत्रेयी पुष्पा के कथा संसार में सामाजिक रीति-रिवाजों को जैसा विशद ओर सुंदर चित्रण है वैसा अन्य किसी बुंदेली कथा लेखिका के कथा लेखन में नहीं है। इस दृष्टि से उनके उपन्यास, 'इन्दन्नमम्', वेतवा बहती रही, 'अल्मा कबूतरी' 'झूला नट', तथा कहानी संग्रह ललमनिया तथा अन्य कहानियां, नामक कथा संग्रह अत्यंत महत्वपूर्ण है। कहानी 'ललमनिया' तो बारात चित्रण का विहंगम एवं मनमोहक दृश्य उपस्थित करने में बेजोड़ तो है ही। इस दृष्टि से उनके उपन्यास भी पीछे नहीं है। 'इनन्नमम्' उपन्यास में नव वधू की 'रोटी छू आई' का दृश्य इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। जिसमें बुढ़िया जब पुराने नाम ले लेकर नव वधू को बुलाती हैं तो वह झट से बाहर निकल आती है और उसका नाम ससुराल में नर्मदा पड़ जाता है। मैत्रेयी जी के कथा साहित्य में बुंदेली वाद्य यंत्रों को भी यथा स्थान महत्व प्राप्त हुआ है। मंगल अवसरों पर यहाँ रमतूला बजाया जाता है। मन्दाकिनी की पख्यात में रमतूला बजा टू ऊंटू ऊं। बुलउआ दिये गये। कुसुमा का स्वर मंगल गीतों में सबसे ऊपर है।

सिया बारी बनरी, रघुनंदन बनरे।
को को बरातें जाय मोरे लाल।''10

बुंदेलखंड में जब नव वधू आती है तब उसकी गोद में छोटे देवर को बिठाया जाता है। इस रस्म का सजीव चित्रण मैत्रेयी पुष्पा 'झूला नट' उपन्यास में विस्तार से करती हैं।

मैत्रेयी पुष्पा चूंकि अलीगढ़ में जन्मी और बुंदेलखंड में उनका जीवन बीता। अतः इनके कथा साहित्य में ब्रज एवं बुंदेली जीवन को सुंदर समन्वय स्थापित हुआ है। 'ललमनिया' लोकनृत्य ब्रज में बारात आगमन के समय प्रस्तुत किया जाता है। इस लोकनृत्य का नयनाभिराम चित्रण 'ललमनिया' कहानी में बड़ी सजीवता से हुआ है। लोक नृत्यांगना नाचती गाती हुई गाती है -

ओ जुल्फन वारे तू देख ललमनिया
लाल टाई वारे, ओ कारे चस्मा वारे तू देख ललमनिया।।

वह बिजली की तरह तड़पती गति से घुमेर ले रही थी। देह का नग-नग लचकाकर। बाराती देखते रह गये। ठंडा पेय भूलकर ठगे से......ब्रज..... के गाँवों में फिर ललमनिया।''12

बुंदेली महिला कथाकारों ने बुंदेली संस्कृति का अपने कथा साहित्य में जिस सिद्दत के साथ संरक्षण किया है। संस्कृति के प्रति वैसा समर्पण का भाव, पुरुष कथा लेखन में अप्राप्त है। ग्रामीण संस्कृति की झलक हमें इन इन महिला कथाकारों में पूरी तन्मयता और तीव्रता के साथ दृष्टिगत होती है। मेले, दंगल, होली, दिवाली, रक्षाबंधन आदि त्यौहार विशेष सजधज के साथ इनके कथा साहित्य में उपस्थित होते हैं। करवा चौथ भारतीय नारियों का विशेष पर्व है। इसका चिंत्राकन रजनी सक्सेना ने अपनी कहानी 'अन्तर संवाद' में बहुत ही अच्छी तरह से किया है। इसी कहानी में शारदीय नवरात्रि का दृश्य भी अवलोकनीय है। डॉ. शरद सिंह ने ''पिछले पन्ने की औरतें'' उपन्यास में चंदेरी (गुना) में लगने वाले बेड़नियों के मेले में 'राई नृत्य' का सुंदर चित्रण किया है-'मशालों के इर्द-गिर्द पचासों दलों के रूप में सैकड़ों पुरुषों की भीड़ और उन दलों के मध्य पूरी सज-धज के साथ पचासों बेड़नियां....। रंग पंचमी की रात को ग्राम करीला में बेड़नियों को विराट मेला लगता है। समूची पहाड़ी बेड़नियों और उनके सोहबतियों के नाच रंग से नहा जाती हैं-13

मैत्रेयी पुष्पा के लोककवि ईसुरी पर आधारित उपन्यास ''कही ईसुरी फाग'' में बुंदेली लोक संस्कृति में रची-बसी फागों के अनेक दृश्य जीवंत हो उठे हैं। मैत्रेयी जी के कथा साहित्य में नौटंकी, रास, राई नृत्य, सुअटा खेल आदि लोक नृत्यों का दृष्यांकन बहुत ही आकर्षक रूप से हुआ है।

'नारे सुअटा' बुंदेली क्वांरी कन्याओं का एक महत्वपूर्ण पर्व है। 'अंगन पाखी' उपन्यास में क्वार के महिने में इस पर्व की मनोरम झाँकी प्रस्तुत हुई है। क्वाँरी कन्याओं के द्वारा सुअटा की मूर्ति के सामने पूजा-अर्चना कर प्रभाती गाये जाने का दृश्य इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है।-

''उठो सूरज मल भैया भोर भये
उठो-उठो चन्दुमल भइया भोर भये
नारे सुअटा, मालिनी खड़ी तेरे द्वारा

इन्दर गढ़ की, मालिनी नारे सुअटा, हाटई हाट बिकाय''14

इन्हीं के उपन्यास 'इदन्नम' में दिवारी पर्व पर बुंदेली लोक नृत्य, दिवारी का बहुत ही मनोहारी चित्रण बरबस ही लोगों का ध्यान अपनी ओर खींच लेता है।

दिबरिया लोग, गाते हुए नाचते हैं। होऽऽ ! होऽऽ ! होऽऽ !
दिबारी माय लक्ष्मी माय। हो मोरे गनपत महाराजहोऽऽज !

नाच जमने लगा। मोर पंख हिल रहे हैं। लोग डूबे हुए हैं रंग में। एक दिबरिया भागता हुआ आया और जा मिला समूह में.... बऊ थाली में खील बतासा गुड़ धरकर ले आयीं।''15

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि बुंदेली महिला कथाकार बुंदेली संस्कृति के लुप्त होते स्वरूप को पुनर्जीवित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रही हैं। उनका कथा लेखन सो उद्देश्य है और वे अपने मिशन में पूरी तरह सफल भी हो रही हैं। महिलाएँ सचमुच लोक संस्कृति की सच्ची वाहिकाएं हैं। लोकसंस्कृति के संरक्षण में बुंदेली महिला कथाकारों के इस योगदान को निरंतरता मिलनी चाहिए।

सन्दर्भ :-

1. मैत्रेयी पुष्पा-कहानी रिजक, कहानी संग्रह, ललमनियां तथा अन्य कहानियाँ पृ. 18
2. वही, पृष्ठ 126
3. मैत्रेयी पुष्पा, कहानी गोमा हंसती है कहानी संग्रह-ललमनिया तथा अन्य कहानियाँ, पृ. 167-168
4. मैत्रेयी पुष्पा-अल्मा कबूतरी, पृ. 34, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004
5. डॉ. छाया श्रीवास्तव, कहानी असगुनी, कहानी संग्रह-आकांक्षी पृ. 40, राजीव प्रकाशन, टीकमगढ़, सन् 1997-98
6. डॉ. कामिनी, गुलदस्ता, पृ. 46 आराधना ब्रदर्स, गोविन्द नगर, कानपुर 1991
7. डॉ. छाया श्रीवास्तव, 'कहानी विकल्प, कहानी संग्रह-आकांक्षी, पृ. 60
8. डॉ. छाया श्रीवास्तव परित्यक्ता (उपन्यास) पृ. 8, अमन प्रकाशन 1/20, महरौली, दिल्ली, सन् 1981
9. डॉ. छाया श्रीवास्तव परित्यक्ता (उपन्यास) पृ. 32, अमन प्रकाशन 1/20, महरौली, दिल्ली, सन् 1981
10. डॉ. छाया श्रीवास्तव परित्यक्ता (उपन्यास) पृ. 105-106, अमन प्रकाशन 1/20, महरौली, दिल्ली, सन् 1981
11. मैत्रेयी पुष्पा-इदन्नमम पृ. 106, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1999
12. मैत्रैयी पुष्पा-ललमनियां तथा अन्य कहानियां, पृ. 71-72
13. डॉ. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, पृ. 278 सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005
14. मैत्रेयी पुष्पा, अगनपाखी, पृ. 24-25, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 2003
15. मैत्रेयी पुष्पा, अगनपाखी, पृ. 312, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 2003

-डी.एम. 242, दीनदयाल नगर, भिण्ड रोड, ग्वालियर(म.प्र.), 474005, मोबा.- 9425187203

बसे लोक में राम

-पं. रतिभानु तिवारी 'कंज'

जन-जन के हिय में बसे इतै लोक में राम।
राम भजन सों होत हैं सबके पूरन काम।। 1
भारी महिमा राम की घर घर पूजे जात।
बखरी भीतर बैठकें मूरत बन मुस्क्यात।। 2
राम रमें है लोक में सबै राम सें प्रीत।
कौल करत हैं राम कौ बड़ी अनौंखी रीत।।3
शुभ कारज में रामखों, सबइ बुलावें टेर।
लाज हमाई राखिऔ, आकें अबकी बेर।। 4
नोनो नीको कायदौ, शहर नगर घर ग्राम।
हात जोर कें करत हैं, सबरों सीताराम।। 5
सब नामन सें लोक में राम नाम सिरमौर।
राम भजन सें मिलत है, उतै सुरग में ठौर।।6
राम मान कें लोक में, पथरा पूजौ जात।
मठके ऐंगर भाव से बूढे तक बुल्यात।।7
गारी फागें सैर में गीत राम के गांय।
तिरियां गारी गाउती भजनी भजन सुनाय।।8
दुखियां दीन गरीब की, राम निबारें पीर।
लोक आस्था है इतै, बिपत हरत रघुबीर।।9
वर कन्या के व्याह में राम सिया को घांय।
बरा बरी खों लोंक में बराबरी सों गांय।।10
भुंसारे से सपर कें, जोरे दोई हाथ।
लोकरीत है राम खों, सबइ झुकावें माथ।।11

राम दरस की आस में, मन नहिं होत उचाट।
दरसन दीजौ राम जू, कबकी हेरें बाट।।12
माला लैकें हात में, भजते सीताराम।
मोरौ जनम सुदारियौं, बिनती आठों याम।। 13
बारेपन सें जनम भर, जिऐं राम के हेत।
चलती बिरिआं लोक सें- नाम राम कौ लेत।। 14
लोक समानों राम में, बसे लोक में राम।
पारबिरम परमात्मा, और बेइ घनश्याम।। 15
इतै लोक में राम खों, मानत हैं औतार।
सबके दाता राम हैं, जग के पालनहार।। 16
भुन्सारे सें दोर में, डारत सबइ उरैन।
राम नाम खों जपत हैं, सुख की खिलत पुरैन।। 17
राम भजन सों मिलत हैं जीवन में सुख चैन।
सुमरन करबें राम कौ, पलक झपें ना नैन।। 18
राम नाम के दिया सों, उजयारौ हो जात।
बूढ़े वारे भगत सब, सुरग नसैंनी कात।। 19
राम भजन के बिना जौ, जनम अखारत जात।
भजलो सीताराम खों, माला लैलो हात।। 20

- बुन्देली धाम
नैगुंवा, जिला-निवाड़ी (म.प्र.)

खेलन चलौ आज बरसाने

–सुधा रावत 'क्षमा'

एक दिन हमारे बड़े भैया बैठे हुये अपनी धुन में कुछ गा रहे थे। जैसे ही उनके बोल मेरे कानों में पड़े, मेरे हाथ रोटी बेलते-बेलते रूक गये। जल्दी से गैस बंद करके मैं भागी ओर भैया के पास जाकर खड़ी हो गई। बचपन की कुछ सुखद स्मृतियाँ स्मृति पटल पर तैरने लगीं, मेरी आहट से उनकी तन्द्रा भंग हुई और भैया अचानक चुप हो गये। मैने कहा-''ये वही गीत है न? जिसे वे महात्मा गाते थे? और हम सब उन्हें घेर कर खड़े हो जाते, और मंत्र मुग्ध होकर सुनते रहते।'' भैया खिलखिला कर हंस पड़े और बोले-''हाँ और फिर तुम और पुशी रात दिन जोर-जोर से इसे दोहराती रहती थी और सब लोग खूब हंसते थे। दूसरे ही क्षण जैसे दीदी का स्वर मेरे कानों में गूंजने लगा -

एक समय श्री कृष्णा जू ने लीने सखा बुलाये
(बुलाए) बात कही एक प्रेम की सो-सबखों दई सुनाए

मैं पूछ बैठी - '' भैया वे कौन थे जो यह गाते थे?'' भैया बोले - वे रम्मू कक्का के मामा जी थे। उन्होंने बहुत पहले सन्यास ले लिया था और वृन्दावन में रहने लगे थे। उनका शुभ नाम तो मुझे याद नहीं, हाँ इतना याद है कि वे चंदैरा के रहने वाले थे। कभी-कभी अपनी बहन तथा भान्जे-भान्जियों से मिलनें टीकमगढ़ आया करते थे। अपन भी उस समय कोलकाता में थे और कभी कभार टीकमगढ़ आया करते थे इत्तेफाक से 2-4 बार ही उनसे मुलाकात हो पाई। चूंकि वे रम्मू कक्का के मामा थे, अतः सभी बच्चे उन्हें मामा कहकर ही बुलाते थे। इसलिये उनका नाम सुना न जाना।

मामा जब भी आते हम लोग बस यही अदभुद कृष्ण लीला सुनने की जिद ठान लेते। मामा गाते भी बड़ा ही मधुर थे। अपनी बड़ी-बड़ी आँखे मटकाते हुये शुरू हो जाते-एक समय श्री कृष्णा जू भैया ने आगे गाना शुरू किया -

खेलन चलौ आज बरसाने। हंस के श्याम बताने!

उन्हें बीच में ही टोकते हुये मैनें कहा - 'भैया एक मिनिट रूकिये! मैं भाग कर अपना पेन व डायरी ले आई और लिखने बैठ गई रचना काफी लम्बी थी। भैया तो बस धारा प्रवाह उसी चिर-परिचित धुन में गाये चले जा रहे थे और मैं जल्दी-जल्दी लिख रही थी साथ ही भूली बिसरी स्मृतियों में गोता भी लगा रही थी। भैया गाते-गाते बीच में कही अटकते तो मुझे याद आज भैता ओर मैं कहीं भूलती तो भैया कड़ी जोड़ देते। इस तरह कड़ियाँ जुड़ती गई हमने एक ही बैठक में काफी कुछ लिख लिया परंतु अंत तक आते-आते हम फिर अटक गये। भैया ने फिर मस्तिष्क पर जोर दिया और आगे की पंक्तियाँ याद करके लिखवाईं। लेकिन अंतिम 2-4 लाइनों में हमारी गाड़ी रूक गई। बहुत सोच विचार के बाद भी जब कुछ याद नहीं आया तब मन उदास हो गया। लगा अब शायद यह रचना कभी पूरी नहीं हो पायेगी 1योंकि जिन पुष्पान्जलि दीदी का हमने ऊपर जिक्र किया वे हाल ही में दुनियाँ से चलीं गईं। उन्हें तो जैसे पूरी कविता शब्दशः रटी हुई थी! मैं अपने आप को कोसने लगी ! काश पुशी दीदी के रहते ध्यान कर लेती तो पूरी रचना प्राप्त हो सकती थी!खैर!अब क्या हो सकता है। इस बात को हुये दो-तीन महिने बीत गये! अगस्त 2018 में रक्षाबन्धन के समय हमारी दूसरे नम्बर की बड़ी बहन रमा दीदी आईं। बातों-बातों में मैया ने उनसे पूछा-''दीदी आपको याद है चंदेरा वाले मामा श्री कृष्ण लीला गाया करते थे?'' हाँ-हाँ दीदी की आँखों में एक चमक आई और वे भी ऊँचे स्वर में गा उठीं-एक समय श्री कृष्णा जू ने ...... जहाँ हम अटक गये थे उस दिन उन्होंने उसको पूरा कर दिया। रचना के अंत में उन्होंने कहा -

भुजबल सिंह दास गिरधर के, को कर सकत बखाने
जे हैं उनमें वे हैं इनमें प्रभु घर-घर में ।।

यह सुनकर मैं उछल पड़ी-अरे यह तो भुजबल सिंह जी की रचना है! अंतिम पंक्तियाँ याद न होने के कारण मैं हमेशा सोचती थी कि पता नहीं यह दुर्लभ रचना किस रचनाकार की है!

शायद यह रचना अब तक अप्रकाशित और अप्रसारित है! क्योंकि तब से यानी अपने बाल्यकाल से लेकर अब तक हमने इसे ना तो कहीं पढ़ा और ना ही किसी और से सुना! रचना किस छंद में लिखी गई यह तो मुझे ज्ञात नहीं है। पर इतनी मधुर, कर्णप्रिय और रसमयी रचना मैंने अनयत्र नहीं सुनी। जिस जोशीले अन्दाज में इसे गाया जाता है। उतने ही भाव-विभोर होकर श्रोता इसे सुनते हैं। गाने बैठो तो पूरा गाये बिना आप रुक नहीं सकते। ना तो गाते हुये जि5या थकती है, न सुनते-सुनते कान अघाते हैं। श्री कृष्ण की माखन चोरी के सजीव चित्रण से ओत-प्रोत यह रचना कवि भुजबल सिंह जी की सर्वश्रेष्ठ रचना प्रतीत होती है। जो लोक साहित्य को समृद्ध करने में सक्षम है और हम पाठकों के लिये धरोहर समान है! इस धरोहर को कैसे सम्भाला जाये? कैसे इसे अधिक से अधिक लोक-साहित्य प्रेमियों और शोधकर्ताओं तक पहुँचाया जाये? विचार आया क्यों न इसे बुन्देली बसंत 2020 के लिये भेजकर डॉ. बहादुर सिंह जी के जिम्मेदार हाथों में सोंप कर संरक्षित कर दिया जाये तो प्रेरित है बुन्देली बसंत के प्रबुद्ध पाठकों के लिये एक अद्भुत और अनमोल उपहार।

एक समय श्री कृष्णा जू ने लीने सखा बुलाय।
बात कही एक प्रेम की, सबखों दई सुनाय।।
खेलन चलौ आज बरसाने।
हँस के श्याम बताने।
ग्वाला कात-सुनौ गिरधारी।
तुमने अच्छी बात बिचारी।
जैसी मान्यता हती हमारी।
सो तुम जानी।।
आँगे-पाछें हो गये ग्वाला।

जिनके बीच भये नंदलाला।
खेलत हँसत जात दै ताला।
इत-उत हेरी।।
इतवत-चितवत खोर में, सैनन लगे बताने।
कैसें जायें सखी घर, लागे मन्त्र कमाने।।
सखी कौ नाव हते उलछारी।
अपने मन में सोच बिचारी।
बैठी कहा करों सरतारी।
लागी दद मथने।।
कमती देखो जल बृज रानी।
ऊसई छोड़ी मटक-मथानी।
जौ लौं भर ल्याओं मैं पानी।
जाऊँ जमने।।
कुनरी, गागर हाँत में सो दीने दोई किवार।
बा डगरी जल भरन खों, सो इनके सुनों विचार।।
भीतर घुसे नंद के लालन।
संग में सखा ग्वाल औ वालन।
ढूढ़त फिरत दूध औ माखन।
जाँगन-ताँगन।।
धरौ हतो माखन छींकें पै, तको नंद के काने।
नैनन-सैनन बात भई, सो देखत सब हरसाने।।
हिर ने ताकी घात लगाई।
दीनौ एक सखा न्योराई।
ताके काँधै चढ़ो कन्हाई।
खैंचो माखन।।
सब कोउ बाँट-बाँट कें खाबै।
खाटो-मीठो स्वाद बतावै।
हाँतन पोंछत चाटत जावै
धन प्रत पालन।।
वा गूजरी जल भरन सें आई अपने द्वार।
ऐरौ पाऔ सखन ने, सो भूले सकल विचार।।
कर रये हराँ-हराँ बतकाव।
करिये कैसौ कौन उपाव।
कै रये तुम अक्कल बतलावो।
काँ हो जायें कड़कें?
कौनऊँ कुठियन-बंडन, कौनऊँ ओंदे डरे चिमाने।
भीतर आई वा सखी, सो देखत हर मुस्काने।।
हिर खों पकरो भुवन में, सखी रही खिसयाय।
जौनौ खिरखन-दोरन हों, कड़ गये सखा डराय।।
हिर सें पूछ रही बृजवाला।
गुन तौ खूब सीक गये लाला।
तुम खों है चोरी कौ ख्याला।
का बतलावैं।।
कोऊ चौंटियाँ लै रईं, कोऊ लगी खिसयाने।
हिलकन रोबैं श्याम रे, सो नैनन-नीर बहाने।।
हा हा कर विनती करता, वचन कात गिगयानें।।
सखी कहै जसुदा कने लै चलौ सीख लग जाने।।
दीनी एक सखी नै सैन।
हरि की बइयाँ पकरी ऐन।
ग्वालन चली उरानों दैन।
जसोदा कइयाँ।।
पौंची जब जसुदा के द्वार।
लीनों लम्बौ घूंघट मार।
सर पै तिरलोकी करतार।
बन गये सइयाँ।।
ग्वालन के पति बन गये, जानी न बाला ने।
गौरा-गौरा, मइया-मइया, सुनीं टेर जसुदा ने।।
बाहर निकरी माय जसोदा, ग्वालन बोली बैन।
सुनी न समझी कछु नईं, लगी उरानौ दैन।।
बोली-ग्वालिनियाँ खिसयाने।
तुम खों काँ लौ देंय उराने।
चोरी कीनीं आज लला ने।
घर गौरस की।।
पक्के कैऊबरस के जोरे।
इनने भिड़ा धरे हैं मोरे।
सीजे-सीजे बासन फोरे।
पर-त्योरस के।।
इतनईं मोरे कात की, और कहीं न जाय।
खिच्चा कें वा माय जसोदा, बोली अति खिसयाय।।
सुन तौ-सुन तौ मोरी गुइयाँ।
पकरें ठाँड़ी की-की बइयाँ।
मोरौ कान? कै तोरौ सइयाँ
देखो घूंघट उघार।।
पति की बइयाँ पकरें ठाँड़ी।
मन में भौतई लज्जा बाड़ी।
मो पै दई जात न छाँड़ी।
अब गई हार।।
ऊसई रै गई चकित सी मन में भौत लजानी।
मैं गई लाई लाल तिहारौ, फिर का भई को-जानी?
लवरौ, झूंटौ कातीं करतीं सबरे बृज में सोर।
राँणें मोरे कुंवर खाँ सो काती माखन चोर।
ऐसई इनखा लीला करनें ऐसई माखन खाने।
भुजबल सिंह दास, गिरधर के को कर सकत बखाने।।
जे हैं उनमें वे हैं इनमें
प्रभु घर-घर में।। (इति)

यह रचना मुझे सौंपने के दो माह बाद ही हमारे भैया श्री प्रकाश रावत गो लोक गून कर गये

-एफ-7, गीत बंगलो फेस 2 दुर्गेश विहार, जे.के. रोड,
भोपाल-23, मो. - 8889114193

वीर गाथायें और इतिहास

–डॉ. रामस्वरूप ढेंगुला

मानवीय क्रियायें, चाहे वे राजनैतिक हों, अथवा सांस्कृतिक-परम्परावादी, आर्थिक गतिविधियाँ हों, या केवल लड़ाई का अतिरंजित वीरतपूर्ण वर्णन हो, उस अतिरंजित वर्णन में असम्भव सी घटनाओं का लेखा हो, जैसे, ''हाथ पटक दऔ पातर पै, तौ हलुआ उड़ौ पचत्तर हाथ'' आदि। ये सारी प्रवृत्तियां अथवा सामाजिक लेखाजोखा आम आदमी के समीप रहता है, वह उनके पास से ही गुजरता है। इसलिये इसे सबको इतिहास का घटनाक्रम कहने में किसी इतिहासकार को संकोच नहीं करना चाहिये न ही इसे किसी संदर्भ की जरूरत है। उदाहरण के रूप में बुन्देलखण्ड और राजस्थान के भूभाग में अनेको सती चीरे गांव-गांव में पाये जाते हैं, जिनमें पती-पत्नी, राजा-रानी अथवा ठाकुर-ठकुराइन या किसी वीर रानी का उल्लेख भर होता है। इस प्रकार के स्मरण चिन्ह, संकेत और उदाहरण वीर गाथायें ही हैं, जिन्हें गांव-कुनबे में मौखिक आख्यान के रूप में सुना जा सकता है। बुन्देलखण्ड भूभाग में ऐसे अनेक चबूतरे मिलते हैं, जिन्हें ''बरूआ'' जी देव स्थान कहा जाता है, इन स्थानों की पूजा गांव-ठकुरस के लोग पूरे सम्मान से करे है। ये सारे स्थान किसी न किसी वीरता की घटना से जुड़े हैं और गांचों में भ्रमण कर आसानी से संकलित किये जा सकते हैं। यह भी मौखिक आख्यान के स्वरूप में मिलने वाली वाली वीर गाथायें हैं, जो अप्रकाशित इतिहास श्रेणी की हैं। परन्तु इनका जनभावना के रूप में बड़ा सम्मान हैं। अब किताबी श्रेणी के अंधभक्त अध्येता या संदर्भ श्रेणी को ही अपने मन में बिठाये रखने वाले विद्वान कह दें, कि भाई इसे हम इतिहास नहीं मानते हैं। यह तो लोक संस्कृति भर है, इसके कोई संदर्भ नहीं मिलते हैं। तो ऐसे सोच और विद्वानी समझ द्वारा, जन इतिहास की यह एक बड़ी उपेक्षा होगी। वीर गाथायें चाहे वह लिखित हो अथवा अलिखित दृश्य रूप हों अथवा केवल मौखिक परम्परा के स्वरूप में हों, वे इतिहास के लिये अत्यन्त उपयोगी हैं। ऐसी घटनायें जिनके ब्यौरे गांव-गांव, पूरे-खेरा में मौजूद हैं, इतिहास के ऐसे शोधकर्ताओं को आमंत्रित करती हैं, जिन्हें फील्ड बर्क करने में गहरी आस्था है। बुन्देलखण्ड के डंगाई भागों में, जिनके अन्तर्गत मध्यप्रदेश का पन्ना, छतरपुर और उत्तरप्रदेश का बांध, महोबा, हमीरपुर, आदि को क्षेत्र आते हैं। इन भागों के अधिकांश गांवों में गौड़ की सत्ता थी, गौड़ों के विषये में इन गावों में अनेक कथायें प्रचलित है, इन गौड़ों के चबूतरों की पूजा की जाती है। ये गौड़ों की वीर गाथायें हैं, जिन्हें इतिहास में उचित स्थान नहीं मिल सका है। ये चबूतरे के राजनैतिक इतिहास को भी बहुत कुछ देने में सक्षम हैं, उदाहरण के रूप में महाराज छत्रसाल बुन्देला की सत्ता के केन्द्रित होने में किन परिस्थितियों ने योगदान दिया था, इन क्षेत्रों से गौड़ों की सत्ता क्यों लुप्त हुई थी, इनके संभावित राजनैतिक कारण क्या हो सकते हैं ? ऐसी वीर गाथाओं के मौखिक-सामाजिक उल्लेख दीर्घकाल तक शोध कार्य में रुचि रखने वाले अध्येताओं को मार्गदर्शन कर सकते हैं। शिवपुरी-पिछोर क्षेत्र के भागों में गढ़कुड़ार के खंगार शासकों के और मीणाओं की सत्ता के उल्लेख बुन्देलाओं की सत्ता के आगमन के पूर्व के वीर भावनाओं के रूप में गांवघर में सुने जा सकते हैं। इस प्रकार के मौखिक अख्यानों पर सही दृष्टिपात करने पर शोध के माध्यम से शोधकर्ताओं को, छात्रों को और क्षेत्रीय इतिहास को बहुत कुछ मिल सकता है। यह स्पष्ट है कि चबूतरे या स्मृति-चिन्ह, आदि वीर गाथाओं के मौखिक आख्यानों के बड़े उदाहरण हैं, राजनैतिक इतिहास इनसे बहुत कुछ ले सकता हैं। शोधकर्ता गांव घर से सर्वे कर, बुजुर्गों के बयान को लेखबद्ध कर, अपने दृष्टिकोण को व्यापक कर इस कार्य को कर सकता है। ये वीर गाथा आख्यान हिन्दी विषय, इतिहास विषय के स्वरूप के मिलेजुले शोध-क्षेत्र हैं।

हिन्दी-साहित्य ने वीर गाथा के काल को दसवीं सदी से चौदहवीं सदी के अंत तक माना है। पर इतिहास के दृष्टिकोण से इसी समय से चारणों, कवियों तथा प्रशस्ती लेखकों ने राजपूत शासकों के वीरतापूर्ण इतिहास के कृत्यों को काव्य रूप में लिखना शुरू किया था और इतिहास लेखन की यह प्रवृत्ति सदियों की सीमा को लांघती हुई सन् 1857-58 के स्वतन्त्रता संग्राम तक तो पूर्ण वैभव के साथ दिखाई देती रही थी। सभी प्रकार के रायसौ, राछरों, पवाड़े, कटक आदि वीरकाव्य इतिहास के वीरगाथा काल को 10वीं सदी से 19वीं सदी के अंत तक निर्बाध रूप से अपने में सहेजे रहे थे। हिन्दी साहित्य के विद्वान यह स्वयं स्वीकार करते है कि उनका साहित्यिक काल विभाजन किसी भी काल की पहचान उसकी केवल विशिष्ट और मुख्य प्रवृत्ति के आधार पर निर्धारित हुआ है। उसका आशय यह कदापि नहीं हैं, कि वीर काव्य लिखित या मौखिक रूप में हिन्दी साहित्य के निरन्तर चले अभियान के अंग केवल 9-14वीं सदी में ही रहे थे। वीर काव्य प्रवृत्ति तो इतिहास लेखन की एक परम्परागत शैली है,और मध्यकालीन, पूर्व मध्यकालीन एवं अंग्रेजकालीन इतिहास को जानने का आज एक महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। इतिहास लेखन कभी यह नहीं कहता और न ही चाहता है, कि शोध अध्येता तथ्यों का समयानुकूल उचित परीक्षण न करे, वह परीक्षण करें शुद्धता की जांच करें, पर जनभावों की उपेक्षा न करे। राजस्थान का इतिहास या राजपूताने का इतिहास या राजपूतों का इतिहास आज हमारे सामने जिस रूप में है, उसका बहुत कुछ श्रेय अंग्रेज अधिकारी कर्नल जे6स टाड को है जाता है, जो भारत वर्ष में 1800-1822 ई0 के बीच विभिन्न पदों पर रह कर कम्पनी सरकार की सेवा में रहा था। राजपूतों के विभिन्न ठिकानों की वंशावलियों, वीरकाव्यों, प्रशस्तियों, ख्यातों के साथ अन्य उपलब्ध स्त्रोतों का सत्त् अध्ययन और परीक्षण कर उसने राजस्थान के इतिहास का प्रसिद्ध ग्रन्थ, ''एनल्स एन्ड एण्टीक्यूटीज आज राजपूताना'' लिखा। उसका यह ग्रन्थ राजस्थान

के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुआ, इसके पहले राजपूतों के इतिहास की कड़िया विभिन्न क्षेत्रों, समूहों में विभाजित रहकर अज्ञात अवस्था में बिखरी पड़ी थी। कहने का तात्पर्य यह है, कि प्रशस्तियां, वंशावलियों, वीरकाव्य और विविध घरानों की ख्यातों का अध्ययन और परीक्षात्मक विश्लेषण कर टाड ने राजस्थान का इतिहास एकीकृत अवस्था में तैयार नहीं किया होता, तो आज राजस्थान के इतिहास की इतनी बड़ी पहचान शायद ही होती। वीर गाथाओं की प्रवृत्तियों का सही अध्ययन इतिहास के तथ्यों को प्राप्त करने की दृष्टि से टाड ने किया था। जेम्स टाड जैसे विश्व प्रसिद्ध इतिहासकार ने वंशावलियों को, प्रशस्ति काव्यों को चारणों की गाथाओं को और पृथ्वीराज रायसौ आदि वीरकाव्यों को अपने लेखन में प्रथामिकता दी थी, तो आज हमे वीरगाथा काव्यों की ऐतिहासिक उपयोगिता पर प्रश्न उठाने की क्यों जरूरत महसूस होती है। लेखक का विचार है, कि उपलब्ध हुय वीरकाव्यों का उपयोग शोधकर्ताओं को अपने विवेक से करना चाहिये। ये वीरकाव्य हिन्दी साहित्य की विकास यात्रा के भी गवाह हैं और राष्ट्रीय भावों के प्रेरणा स्रो भी हैं। विश्व प्रसिद्ध इतिहास के विद्वान और इतिहास के क्षेत्र में नटनागर शोध संस्थान को स्थापित करने वाले महाराज कुमार रघुवीर सिंह का मानना था, कि देश के विकास और इतिहास के अध्ययन की दृष्टि से हिन्दी भाषा में लिखे गये इतिहास अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं क्योंकि हिन्दी भाषा की अभिव्यक्ति जनसामान्य के मनोभावों को ठीक से प्रभावित करती है और विषय वस्तु को भी सही रूप में प्रस्तुत करने में सक्षम है।

जगनिक कवि द्वारा लिखा गया आल्हा, बुन्देलखण्ड के इतिहास की वीरगाथा का महाकाव्य है, वह गाँव-गाँव में पढ़ा और गाया जाता है, उसकी प्रसिद्धि बुन्देलखण्ड के मामले में, रामचरितमानस से भी अधिक है। पर इतिहासकार उसको इतिहास नहीं मानते हैं, क्योंकि उसके विवरण अतिशयोक्तिपूर्ण ढंग से लिखे गये हैं। आल्हा गायन बुन्देलखण्ड में मध्यकाल से आज तक निर्बाध गति से प्रचलित है, इसलिये समय-समय पर गायकों की विविध टोलियों ने अपनी-अपनी शैलियों में कुछ न कुछ अतिशयोक्तिपूर्ण ढंग से जोड़ लिया है। यह समय का प्रभाव है, लोकभावना का प्रभाव है, और यही मानवीय प्रवृत्तियों का लेखाजोखा भी है, वीर पूजा की अप्रतिम भावना की अभिव्यक्ति भी है, देश के नवीन इतिहास निर्माण की भावना को वह किसी न किसी रूप में प्रभावित जरूर कर रही है। महाराज कुमार रघुवीर सिंह ने, अपने प्रसिद्ध लेख ''भारतीय इतिहास में राजपूतों के इतिहास का महत्व'' में लिखा है, कि राजपूत आपस में केवल इस काल में इसलिये लड़ा करते थे कि देश-समाज उनके महत्व, वीरता को जाने, वे इसलिये कदापि नहीं लड़ते थे, कि उन्हें अपने राज्य को बढ़ाने की इच्छा थी। इस ऐतिहासिक दृष्टि को समझने के लिये, इतिहास के शोधकर्ताओं को आल्हाखण्ड जैसे वीरकाव्यों का सहारा लेना पड़ता है। चंदेल, चौहान, राठौर आदि 11वीं सदी के अंतिम वर्षों में आपस में खूब लड़ रहे थे और अपार जनघन हानि कर रहे थे। बाद में परिणाम मुसलमानों से उनकी हार के रूप में सामने आया था। आल्हाखण्ड तमाम नवीन गाँव व स्थानों का उल्लेख करता है, इतिहास के अन्वेषण में इन सभी स्थानों के राजनैतिक इतिहास का महत्व है, ऐसा कोई इतिहास का ग्रन्थ अभी सामने नहीं आया है, जिसमें इस दृष्टि से इस वीर काव्य पर विचार किया गया हो। इतिहास यह क्यों नहीं जानना चाहता है, कि इस वीरकाव्य की लोकप्रियता, सदियों के समानान्तर क्यों बढ़ी है, वह इसे लोक संस्कृति का विषय कह कर क्यों टाल देता है। इतिहास तत्कालीन समय की व्यर्थ युद्धों की परम्परा में जनहानि, कृषक और कृषि हानि तथा लोक कल्याणकारी भावना की हानि के कारणों को क्यों नहीं खोजना चाहता है। सही यह है आज का शोध छात्र टेबिल पर ही बिना अग्नि के खीर पकाना चाहता है और अधिकांश, शोध मार्गदर्शक प्राध्यापकों को अनावश्यक थोपी हुई लिखापढ़ी से और अपनी मलाई दार सेवा की खिचड़ी के पार देखने और मूल ग्रन्थों को खोजने व पढ़ने का अवसर ही नहीं मिलता है। कोई भी कारण सभी अध्येताओं पर लागू नहीं होता, प्रत्येक वस्तु के उत्तम से उत्तम विकल्प प्रस्तुत करने वाले सम्मानीय लोग भी होते हैं। पर आज के संदर्भ में ऐसे सम्मानीय लोगों का अभाव सत्ता की बदली प्रवृत्ति और संस्कृति के कारण हो गया है। खैर आल्हाखन्ड वीरकाव्य के रूप में अध्येताओं का ध्यान अपनी ओर खींच रहा है, कि इतिहास हमसे कुछ जरूर ले सकता है, और उसे लेना चाहिये।

महाकवि केशव द्वारा 17वीं सदी के आरंभ में लिखा गया वीरसिंह देव चरित भी वीरकाव्य श्रेणी का ग्रन्थ है, कम से कम 1990-95 के काल तक इसे ऐतिहासिक महत्व का ग्रन्थ नहीं माना जाता था। परन्तु डॉ0 भगवानदास गुप्त के विश्लेषणात्मक प्रयासों से अब बुन्देलखण्ड इतिहास के क्षेत्रीय लेखकों का ध्यान इस ओर आकर्षित जरूर हुआ है किन्तु अकबर पर लिखे गये महत्वपूर्ण शोध-ग्रन्थों में अभी-भी ''वीर सिंह देव चरित'' को उचित स्थान नहीं दिया जाता है। इस समय के प्रसिद्ध इतिहास लेखक और मुगल इतिहास का विश्लेषण करने वाले भी वीरसिंह देव चरित का उल्लेख नहीं करना चाहते हैं। क्योंकि उनकी दृष्टि में वीर सिंह देव शासक के रूप में क्षेत्रीय नेता था और उसने जहांगीर बादशाह का सहारा पाकर गलत कामों से धन जोड़ लिया था। लेखक की दृष्टि में वीर सिंह देव चरित केशव द्वारा लिखा गया समकालीन इतिहास का ऐसा सच्चा दस्तावेज है, जो किसी भी समकालीन मुगल तबारीख के विषय-कलेवर से मुकाबला ले सकता है। इसमें तत्कालीन बुन्देलखण्ड के प्रशासन का स्वरूप मिलता है, बुन्देलखण्ड के वो प्रसिद्ध स्थान मिलते है, जहां वीरसिंह देव अधिकांशतया अकबर की सेनाओं से मुठभेड़ करने के बाद छिपने के लिये उपयोग करते थे। ये स्थान उस काल के मार्ग के गाँव के पड़ाव थे, इन्हीं मार्गों से वीरसिंह देव इलाहाबाद सलीम-जहाँगीर के पास गये थे। इन स्थानों का नक्शा बनाने पर और मार्गों

को जोड़कर देखने पर समकालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास समझा जा सकता है। ओरछा के मंदिरों का वैभवपूर्ण वर्णन, इस ग्रन्थ के अलावा कही नहीं मिलता है। बुन्देलखण्ड की सामान्तवादी प्रवृत्ति का लेखाजोखा और राज्य के कर्मचारियों के कर्तव्य तथा शासक के लिये सनातनी मान्यताओं के उल्लेख इस वीरकाव्य की विशेषता है। समकालीन समय के प्रसिद्ध राजपूत वीरों के नाम भी इसमें दिये गये हैं। बुन्देलखण्ड के वन, तालाब, बगीचों, फूलपत्तों की भी जानकारी इस ग्रन्थ में मिलती है। समकालीन मुगल बादशाह का नाम और बुन्देलखण्ड के प्रमुख बुन्देला शासकों के नाम भी इसमें मिलते है। दतिया के विद्वान बाबूलाल गोस्वामी के पास इस ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति थी, उन्होंने इसके सहारे इतिहास का विस्तृत ग्रन्थ लिखने की योजना बनाई थी। वे डॉ. गुप्त से भी इस विषय में सहायता प्राप्त करने की अपेक्षा रखते थे। दतिया के सेवानिवृत्त हिन्दी के प्रोफेसर विद्वान डॉ. पांडे जी को भी इसकी जानकारी थी। लेकिन समकालीन स्त्रोत ग्रन्थ वे नहीं जुटा पाये, बाद में उनका स्वर्गवास हो गया था। निवेदक ने उनका लिखा हुआ वह अधूरा काम देखा था, वह उसे आसानी से उस समय मिल भी सकता था, परंतु वह किसी को मुगलता देने का इच्छुक न था। बाद मे व अयोग्य हाथों में पड़ काल कलवित हो गया। बाबूलाल गोस्वामी को बुन्देलखण्ड की समकालीन क्षेत्रीय राजनीति और संस्कृति की अच्छी समझ थी और उनके पास इतिहास पर प्रकाश वाले कुछ वीर काव्य भी थे। वीरकाव्यों के विषय में एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि ऐसे वीरकाव्यों की विभिन्न जगहों पर अलग-अलग प्रतिलिपियाँ मिलती हैं, जिनमें पाठान्तर भी होता है। यह पाठान्तर इतिहास के शोध की दृष्टि से बड़े काम का होता है, अलग क्षेत्रों की राजनीतिक प्रवृत्ति को इससे समझने में सहायता मिलती है। उदाहरण के रूप में दतिया के 18वीं सदी के कलात्मक शासक शत्रुजीत के ऊपर लिखा ''शत्रुजीत रायसौ'' की प्रत्येक प्रति में पाठान्तर है और इतिहासकार इसके इतिहास की तथ्यों की दृष्टि से पैनी नजर से इसकी व्याख्या करना चाहता है और हिन्दी का अध्येता इनमें अंलकार खोजता है। इसलिये वीरकाव्यों का गइराई से शोधकर्ताओं को अवश्य अध्ययन करना चाहिए।

कवि जदुनाथ कृत ''खांडेराव रायसौ'' की रचना 18वीं सदी के मध्य में हुई थी, रायसौ के रूप में यह बृहद् ग्रन्थ एक महाआख्यान जैसा लगता है। इसके प्रथम भाग में कवियों का वर्णन दिया गया है और काव्य के नायक खांडेराव की वंशावली भी दी गई है। दूसरे भाग में 18वीं सदी के नरवरकालीन और शिवपुरी के पोहरी, कोलारस, राजस्थान के बारा जिले के शाहबाद आदि क्षेत्रों का इतिहास काव्यरूप में दिया गया है। इस दुर्लभ ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रतिलिपि, सीतामऊ के नटनागर शोध-संस्थान में उपलब्ध है। इतिहास की घटनाओं को खोजने की दृष्टि से इसे रायसौ का सटीक उपयोग, नरवर के मध्यकालीन इतिहास के लेखक डॉ0 माहेश्वरी-डॉ0 मिश्र ने किया है। इस ग्रन्थ की प्रतिलिपि महाराजकुमार को जाबरा, रतलाम के गोबर्धन ओझा से प्राप्त हुई थी। शिवपुरी, राजस्थान के धंधेरे-चौहानों एवं नरवर के कछवाहों के बीच जो अनवरत युद्ध चले उनका इस रायसौ ग्रन्थ में बखूबी वर्णन दिया गया है। मराठों के इस क्षेत्र में सक्रिय होने के पूर्व एवं महादजी शिंदे द्वारा इन भागों में अपनी सत्ता के पैर जमाने के पूर्व की राजनैतिक स्थिति की अच्छी जानकारी इस ग्रन्थ से मिलती है। इस वीरकाव्य की इस क्षेत्र में अनउपल4धता के कारण क्षेत्रीय इतिहास के शोध कर्ताओं का ध्यान इस ओर नहीं जा सका है। बुन्देलखण्ड के इतिहास की भूली कड़ियों को जोड़ने में भी इस रायसौ का महत्व है। बुन्देलखण्ड में इंदुरखी की गौड़ परम्परा के इतिहास पर भी इससे प्रकाश पड़ता है। इस क्षेत्र के आपसी झंझटों की प्रवृत्ति के कारण बाद में अंग्रेजों ने इन भागों में स्थाई छावनी बनाकर, इन्हीं मार्गों से राजस्थान के कोटा-बूंदी के हाड़ा क्षेत्रों पर कब्जा जमा लिया था। खांडेराव रायसौ इतिहास की कड़ियों को जोड़ने वला प्रामाणिक ग्रन्थ है। महाराजकुमार रघुवीर सिंह ने इस रायसौ-ग्रन्थ को इतिहास के लिये उपयोगी माना है। कछवाहों के पतन का लेख और समकालीन मुगल राजनीति व पतन की गाथा पर भी, इस रायसौ से प्रकाश पड़ता है।

बुन्देलखण्ड के ''कटक काव्य'' भी, वीरकाव्य श्रेणी के काव्य हैं, वीरगाथायें और वीरकाव्य एक दूसरे के समानार्थी हैं और इतिहास लेखक को, इतिहास लेखन की दिशा देने में सक्षम है। जैतपुर, वर्तमान में उत्तरप्रदेश के पूर्व बुन्देलखण्ड का भाग, जिला महोबा अंतर्गत है, यहाँ के बुन्देला शासक पारीछत ने सन् 1841-42 में समीप की अंग्रेजों की छावनी कैथा को लूट लिया था। बुन्देलखण्ड में राजा पारीछत के इस बहादुरीपूर्ण कारनामे पर कवि द्विजकिशोर ने ''पारीछत कौ कटक'' काव्य लिखा हैं। आज भी क्षेत्रीय जनता इस कटक काव्य को गाती है। बुन्देलखण्ड के स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में ऐसे कटक काव्यों का अमूल्य योग है। बाद में अंग्रेजों ने कैथा से अपनी छावनी हटाकर, नौगांव सुरक्षित क्षेत्र में अपनी छावनी बना ली थी। बुन्देले हरबोलों की गेयरूप की वीर गाथायें भी इतिहास को बहुत कुछ दे सकती हैं पर इनका संकलन और तलाश सबसे मुश्किल काम है, क्योंकि इस पीढ़ी के आदमी अब दूरदराज के गाँवों में ही मिल सकते हैं, कोई शोधार्थी ऐसी कठिन जहमत नहीं उठाना चाहेगा। दतिया राज्य के कवि कल्याण सिंह कुड़रा ने झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के 17 जून, 1858 ई. में ग्वालियर में बलिदान के 11 वर्ष, 2 माह 9 दिन बाद अपनी लक्ष्मीबाई पर रायसौ लिख पूर्ण कर लिया था। इस रायसौ के गहन अध्ययन से शोधार्थी को यह जानकारी हो जाती है, कि दतिया की जनता की पूरी सहानुभूति झाँसी की रानी केसाथ थी। दतिया के भूभागों में झाँसी के पलायन से हुई जनता को आश्रय मिला था। दतिया राज्य से चोरी छिपे हथियार भी दिये गये थे। और दतिया के राजा ने ओरछा की लड़ाई सरकार व उनके सेनापति नत्थे खां को कोई सहयोग रानी के विरोध में नहीं दिया था। इस रायसौ की ऐतिहासिकता निर्विवाद है।

-कुंजनपुरा, ढेंगुला गली, दतिया (म.प्र.)

साहित्यिक भड़या

–राजीव नामदेव 'राना लिधौरी'

पैला कें टैम के भड़िया केवल एकई तरां के होत हते, जौ कै धन की लूटपाट करो करतते, पै अबे तौ मुलकन क्षेत्रन में बन्न-बन्न नये के भड़या हो गये हैं, जो कलजुग कौ प्रभाव है। जैसे नेता रूपी कछँ भड़या, रेत खनन माफिया,भू-माफिया, बैकिंग डाकू, ए.टी.एम. हेंग करवे वारे भड़िया, शहरन में हफ्ता बसूलने वारे टुटपूंजियां भड़िया, मुंबइयाँ डान उर इन सबसें हटकर एक और नओ तरां कें भड़या कछू टैम से इ धरा पै अवतरित भय हैं जो कै खासकरकै हिन्दी साहित्य कौ मटियामेट करवें में लगे रात है। जे भड़या 'साहित्यिक भड़या' कहाये जात है। इने केवल साहित्यिक बिरादरी के लोंगइ पैचान पाउत है बाकी जनी मांस जो मालदा अमाइ तरां मालदार होत है पे इनके जाल में फँसके कछू धन चंदा के नाव पे या सदस्यता के नाव पे पइसा देके बच जात है इके बदले में इने सम्मानित करवे कौ गोपनीय मंत्र दओ जात हैं जिसे प्रभाव से जे दुने पइसा आयोजकन कौं दे देत है वर्ना इन लोगन से सामान्य आदमी तो एक दमड़ी भी नइ पा सकत है। जे मछली पकड़वे के लाने केंचुएँ की तरां काम करत है। जे भड़या पुराने भड़याइन सें अलग कृत्य करत हैं।

जे साहित्यिक भड़या अब भौत लुकलुकात भय सक्रिय होन लगे है। आपको प्रायः हरेक शहरन में दो-चार तो मिलइ जैहे। इ तरां के भड़या जबरन कब्जा करवे में चंट रात है। चूंकि जे लोग साहित्यिक भड़या होत है, तो जाहिर सी बात होत है कै जे साहित्यक क्षेत्र मेंइ पनौ कब्जा जमावे की कोशिश करत रात हैं। सबसें पैला तो इने गेटअप, मेकअप, पहनावौ सोउ बिलकुल भड़यन घाईं होत है बड़ी-बड़ी मूँछें राखत है बुढ़ापे के कारण बार सुपेत होवे के कारण जे उये छुपावे केलाने पने मूड़ खौं पगड़ी से या फिर साफे से बाँद कै रखत है जे बात अलग है कै कूछ पनी चाँद या गंज खौ दुकावे में सोउ सफल हो जात है। मजे की बात तो जा है कै जे सस्तौं सों साफा या गमछा बांद कें खुदइं खौ कउ खौं लाट साब या राजा समझन लगत है पै करम इनके भड़यन वारेइ होत है। कछू सींग कटाकें बछड़न में शामिल होवे केलाने मुँछमुढ़ा लेत है उर वे जा सोचत है कै हमें देखकै शायद कोनउ कवियित्री दिल दे बैठे उर हम पचपन से बचपन की यादन में खों जाय। तन पै इनकें सुपेत उन्ना होत है पै भीतरे सें मन भौत भड़यन घाई कारौं होत है।

जे खुदई तो कछू कर नइ सकत पे शेख चिल्लन की तरां सपने बड़े-बड़े उर बुढ़ापे पे भी रंगीन देखत है भलेउ इनके गटा फूट गये हों, हाँ बातें करवे उर ऊँची-ऊँची गप्पें मारवे में जे भौत फरचंट है इस मामले में इनें कम पढ़े लिखे होवने के बाबजूद भी बिनइ कागज गुदेरेइ पी.एच.डी. जरूर मिली है। जीसे ये मेट्रिक पास होवे पै भी जे बड़े शान से पने नाव के अगाउ डॉ. लिखकै अन्य शहरन के लोगन को बेबकूप बनावे कौ निरंतर प्रयास करत रात है। कछू हद सफल होके जे कुख्यात सोउ हो जात है।

जे साहित्यिक भड़या कौनउ भी कार्यक्रम हो शुरू होवे कौ जाने टैम कारड में छपौ भओ हुइए उसे ठीक पन्द्रह मिनिट पैला आ धमकेगे उर मंच के तरे की सबसे पैला की लेन में बीच वारी कुर्सी हथिया लेह उर उ पै पनो एक भौत पुराना खास किसम कौ बैग जी पै कौनउ बड़े शहर कौ नाव उर कार्यक्रम की दिनांक संस्था के नाव के सहित छपी होत है कनज की दार झोला में दिल्ली लिखौ हो तो सोने पे सुहागा। जे झोला ठीक हाती के दाँत के समान केवल दिखावे के लाने रखौ जात है भलइ उमें केवल एक डायरी उर डाँन धरो हो। जै झौला इने कैसे मिलौ या कैसे उनने इय हथियालओ जो शोध कौ विषय हो सकत है। जो झोला (बैग) इने की तरां के साहित्यिक योगदान के लाने मिलौ है जे इनकी शैक्षणिक योग्यता कौ पतौ करके पतौ चल जात है। जे इतके बड़े वारे होत है कै पने कवि परिचय में शैक्षणिक योग्यता नइं लिखत कायसें कै इसे इनकी पोल खुलवे कौ डर रत है। जे साहित्यिक भड़या है तो कछू काम छुपके करत है एंव कछू गुप्त रात है।

इनकौं सबमें प्रमुख गुण होत है कै जे साहित्यिक डाकू मंच पर बैठने की जुगाड़ में लगे रात है चूंकि कार्यक्रम में पैलां सेइ अध्यक्ष उर मुख्य अतिथि कौन हुइए जो तै रत है ईसें जे विशिष्ट अतिथि या वरिष्ठ साहित्यकार बनवे की जुगाड़ में लगे रात उर मंच पै बगल में बैठवे के लाने आयेजजनकन के अगाउँ-पछाउँ फिरत रत उर मौका मिलतनइ जौंक की तरां से चिपक जात है उर कार्यक्रम झटटई शुरू करावे की फिराक में रत है भलइ मुख्य अतिथि न आय हो। ये देर होवे की उर काउ औरउ जागां पै जावे की लाबरी धमकी सोउ दे देत रात सो कछू आयोजक कै देते कै तुमै मंच पे बिठाय है। जे जब तक मंच के इतायं उतायं धमा चौकड़ी मचात रत है जब तक कै इनकी दाल मंच पै बैठवे के लाने नइ गल जाय वर्ना सामने की पैला लैन कौ तो जै झौला धरके रिजर्वेशन करा चुकेहै। कार्यक्रम शुरू होतइ जै ऐन कोशिश करवे के बावजूद भी कजन की दार इनकी दाल उतै नइं गली तो जे पनो फन पटकके पैली लेन में मुरदा सें धर रत, तब उ टैम में इनकी सूरत देखवे लायक रत है। मैं तो हरेक कार्यक्रम में इनके पछाई बैठके इनकेंजेइं क्रियाकरम देखके कार्यक्रम का भौत मजा लेत रात हूँ। जे साहित्यिक भड़या जो कै मंच हथियाने में भौत फरचंट रत है, पै दुर्भाग्य से उदना उनकी दार नइं गली, तो जे पनौ एक रामवाण उपाय सात लेकेइ आउत है जो कि कभउ असफल नइ होत, वो जो है कै आमंत्रण कारड में से पढ़कै जो भी मुख्य अतिथि उदना आउत है उकौ सम्मान करवे की कै के मंच पै कब्जा जमावे की कोशिश करत है कजन की दार मंच नइं हथिया पाय तो फोटों खिंचावावे के लाने एक नारियल उस सस्ता सौ शाल ले आउत है उर मुख्य अतिथि महोदय कौ सम्मान कर देत

है। भलेइ जे दोनों एक दूसरे कां जतइ नइया, ईंसे कोनउ फरक नइं पड़त है फोटो खिचंवावे या इचयावें के लाने कैमरे से उर कोनउ सामे वारे को जबरन पनौ मुबाइल देके उसे फोटों खीचवें के लाने कै देत है। एक दार फोटों खिंच गई फिर तो जे कार्यक्रम में 'गदे के सींग की तरां' पाँचइ मिनट में गायब हो जात हैं उर हाँ जात-जात कार्यक्रम में सस्था के रजिस्टर में पनी उपस्थिति नाव उर मुबाइल नंबर जरूर लिखत है।

कछू साहित्यिक भड़या भलइ कम पढ़े लिखे हो पे वे पने नाव के अगाउ डॉ. तो ऐसा लिखत है जैसे इनें डॉ1टरी स4जी मंडी में मिल गयी हो। आश्चर्य की बात जा है कै कछू मंच संचालक सोउ जोन इनके भौत खासम-खास के चमचेरत होत है वे सोइ इनें डॉक्टर साहब कै के बुलाउत है तो ये गरव सें गुब्बारे की तरां फूल जात है उर इनकी हवा तब निकल जात है जब कोनउ जे पूँछत है कि अपुनने डॉक्टरी की विषय से करी है सो जै ये चिमा के रै जात जैसे इनकी मताई मर गयी हो। या इने साँप सूँघ गओ हो। वे चमचे सोउ धन्य है जो कै इनके महागुरू है डॉक्टर-डॉक्टर बोलकै-खेलकै इनेंइ सुई लगा देत है वो भी बिना दरद के मजाक-मजाक। जे है कैउ खों घमडं में डूबे भय समझइ नइ पाउत। समझने के लाने अक्ल सोउ चाउने रत, जो कै इनकी डॉक्टर की डॉ. के अगाउ धरी बिंदी में समा गयी है।

जे साहित्यिक भड़िया येनकेन प्रकारेण से प्रत्येक कार्यक्रम में अपने आपको हाइलाइट करवे की जुगाड़ में लगे रत है। भौतइ सफाई एवं चालाकी से मुख्य अतिथि एवं बड़े साहित्यकार के संगे फोटो खिंचावे में जरूर इने लगत है कि डॉक्टरी हासिल कर ली है। ऐसौ इनके फेसबुक रिकार्ड कों देखकै आप जरूर समज सकत हैं। फोटो खिंचतनइ जे फेसबुक में डालवे में झेल नइं करत, जा बीमारी तो ये अपने आप को डॉक्टर मानते हुए भी नइं छुटा पाउत फिर लोगन कौ इलाज कैसे करत हुइए जे सोचवे वारी बात आय।

इन साहित्यिक भड़ियन की आत्मा मंच के ऐंसरेइ भटकत रत है जे कार्यक्रम में कुर्सी पे बैठे-बैठे सोउत रत उर नास्ते, भोजन की बाट हेरत रत, पे जैसइ कोनउ पोथी कौ विमोचन होने हुइए या कोनउ कौ सम्मान होवे वारो हुइए तो जे कूद कैं जबरन बिना बुलायइ एक असली भड़िया की तरां मंच पे आ धमकत है उर बिना फोटो खिंचावे जो यमराज सोऊ इनें नई के जा सकत हैं मलेर जीने कार्यक्रम कराओ हो उनकी फोटो न आ पाय, जे बगल वारे कों तब लो धकियात रहे उर हात से हटाउत रेंहे उर कोशिश में लगे रहते है जब तक कै जे फोटो के फ्रेम में न आ जाय।

-शिवनगर कालौनी, टीकमगढ़ (म.प्र.), 471001
मोबा.-9893520965

मोल कभऊँ ना आँको

-ग्यासीराम गुप्त 'अटल'

पूर्व जनम की करतूतन सें प्रतिफल ऐसौं पाऔ।
तौऊ कुमारग पै चल रऔ है अबैऊ होश ना आऔ।
छोड़ कें निरमल जल कों पापी पी रऔ पाँई तला कौ।
रे मन तैने मनुष जनम कौ मोल कभऊँ ना आंको ।। 1।।

बढ़ती देखी नैक पराई तुरतई प्रानन पर गई।
तेरी जौ कलुषित काया ईर्षा-नल में जर गई।।
अधम निलज्ज नई नैकऊ भारी बोझ धरा कौ
रे मन तैने मनुष जनम कौ मोल कमऊँ ना आंको ।। 2।।

हाय हाय तिकड़म बाजी में जनम निकर गऔ सारौ।
मन में ना संतोष तनक है फिर रऔ मारौ मारौ।।
विष के बीजा ऐसे बो दये काम न आय पुरा कौ।
रे मन तैने मनुष जनम कौ मोल कभऊँ ना आंको ।। 3।।

जैसी करनी वैसी भरनी कर विचार अंतर में।
रीत नीत की डगर पकर लै, फूल खिलै बंजर में।।
जीवन की अंधियारी मिट है परै बलत सौ धांकौ।
रे मन तैने मनुष जनम कौ मोल कभऊँ ना आंको ।। 4।।

घटियां काम छोड़ कें चढ़ जा सदाचार की घटिया।
कछू दिनन में लठिया लैहे फिर पर रैहे खटियार।।
परौ परौ फिर पछतैहै गौ कोऊ न आय जराँ को।
रे मन तैने मनुष जनम कौ मोल कभऊँ ना आंको ।। 5।।

राम नाम की मणी छोड़ कें फिर रऔ है ककरन में।
कायर, पापी घोर कुकरमी प्राणी नींच नरन में।।
छोड़ कुचालें अरे अभागे भज लै राम लला कों।
रे मन तैने मनुष जनम कौ मोल कभऊँ ना आंको ।। 6।।

पामर अपनी शक्ति न जानी अज्ञानी अभिमानी।
जौन ठौर पै लात मार दै होंई निकर है पानी।।
खुद की कीमत भुला कें मूरख औरन कौ मौ ताकौ।
रे मन तैने मनुष जतनम कौ मोल कभऊँ नाआंको।। 7।।

मानवता के धवल भाल पै है कलंक कौ टीका।
इंसानन के बीच में रैकें नैन न आऔ सलीका।।
हरौ बगीचा देख और कौ छाती होत धमाकौद्ध
रे मन तैने मनुष जनम कौ मोल कभऊँ ना आंको ।। 8।।

नईं भरोसा है मालिक पै तजी नियम की बैठक।
चुगलीं, डंडे और बुराई ओछे कर रऔ नाटक।।
तेरी समझ में एक न आहै, तैं है पात्र पनाः को
रे मन तैने मनुष जनम कौ मोल कभऊँ ना आंको ।। 9।।

-आलमपुर, भिण्ड (म.प्र.)

ग्रामीण बुंदेलखण्ड में बालपन

-डॉ चित्रगुप्त श्रीवास्तव

बुंदेलखण्ड भारत के मध्य में होने के कारण देश का हृदय प्रदेश कहा जाता है।[1] इसके उत्तर मे यमुना नदी और उत्तर पश्चिमी सीमा एवं पश्चिमी सीमा पर सिंध नदी है।[2] वहीं पूर्वी सीमा पर टोंस नदी और मिर्जापुर की विंध्याचल की पर्वत श्रेणियां हैं।[3] प्राचीन काल में पुलिंद देश, चेदी, दशार्ण, जिझौति, जैजाकभुक्ति आदि कहा गया है।[4] ऐतिहासिक दृष्टि से बुंदेलखण्ड को वैदिक काल में चेदी राष्ट्र के रूप में जाना जाता था।[5] रामायण में इसका उल्लेख दशार्ण के अंतर्गत मिलता है। भगवानराम ने अपने चौदह वर्ष के वनवास का अधिकांश समय यहां के चित्रकूट क्षेत्र में बिताया था।[6] महाभारत में भी चेदी राष्ट्र के रूप में उल्लेख है।[7] बौद्ध ग्रंथों में चेदी राष्ट्र का उल्लेख 'चेतिय चट्ट' के रूप में है।[8] सम्राट अशोक का गुर्जरा शिलालेख यहां मिलता है। शुंगकाल में यह शुंग साम्राज्य के अतर्गत रहा।[9] यहां नागवंशी राजाओं ने भी राज्य किया।[10] जिनके सिक्के झांसी के एरच नगर में अब भी पाये जाते हैं। चंदेल वंश ने महोबा से बुंदेलखण्ड पर शासन किया।[11] वहीं बुंदेलों ने गढ़कुण्डार, ओरछा और पन्ना राजधानी बनाकर यहां राज्य किया। मुगल शासन के अंतर्गत बुंदेलखण्ड का अधिकांश भाग इलाहाबाद के सूबे में था।[12] कुछ दूसरे भाग जैसे कालपी, एरच और चंदेरी आदि आगरा और मालवा सूबों में थे।[13] बुंदेलखण्ड में चंदेलों के शिलालेखों और विदेशी यात्रियों के विवरणों के अनुसार इस प्रदेश का नाम जैजाक भुक्ति या जुझौति था।[14] उत्तर कालीन मुगलकाल में बुंदेलों के साथ-साथ यहां कई क्षेत्रों में मराठे और गोसाई शासन कर रहे थे। गोसाई राजाओं में राजेद्र गिरि [15] और हिम्मत बहादुर [16] का ऐतिहासिक उल्लेख मिलता है। वहीं कुछ जागीरें कायस्थों को भी प्रदत्त की गई थीं। जिनमें मोंठ क्षेत्र की जागीरें प्रमुख थी।

बुंदेलखण्ड मे ग्रामीण जीवन परंपरागत और विभिन्न सांस्कृतिक रंगों से साराबोर था। इन्हीं रंगों में सबसे इंद्र धनुषी रंग बाल्यपन था। बचपन मे मनुष्य का मन कोरी स्लेट की भांति होता है और संस्कारों से इस मन पर विभिन्न रेखाऐं उकेरी जातीं थी। बुंदेलखण्ड में व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु तक विभिन्न संस्कारों और रीति-रिवाजों के बीच बंधा रहता था। लेकिन इस बीच जन्म के बाद से लेकर किशोरवय उम्र तक का बाल्यपन व्यक्ति के लिए सबसे रोमांचक और सुखद समय होता था। शिशु जन्म के तुरन्त पश्चात सोहर ग्रह (प्रसव कक्ष) में अजवायन का धुवां करने की परंपरा था। अजवायन में पर्यावरण का शोध और वातावरण को गर्म रखने के आयुर्वेदिक गुण होते हैं। शिशु के जनम के पश्चात गोबर से लीपी गयी दीवार पर गोबर से एक चक्राकार सांतिया बनाकर जौ के दानों को चिपकाया जाता था। जौ के दानों को बाधाओं के मुकाबले की प्रतीक और जौ धन्य धान एवं समृद्धि दायक मानी जाती थी। वहीं सातिया एक तो भगवान गणेश का प्रतीक और दूसरी ओर सांतिया गतिशीलता तथा प्रगति का प्रतीक माना जाता था। जन्म के कुछ दिनों के बाद शिशु को घृत, मधु, स्वर्णकर्ण चटाने की परंपरा कुलीन परिवारों में थी। वहीं साधारण घरों में खीर चटायी जाती थी।

ग्रामीण बुंदेलखण्ड में संस्कारों को क्षेत्रीय परंपराओं और आवश्यकताओं के हिसाब से अपनाया गया था। लेकिन तत्कालीन उत्तर भारत में प्रचलित अधिकांश परंपराओं को कुछ परिवर्तन के साथ मान्यता प्राप्त थी। उत्तर भारत में जन्म के चालीसवें दिन नाम रखा जाता था।[17] शिशु के जन्म के बाद नामकरण हेतु पंडित या ज्योतिषी से उसके लिए नाम रखवाया जाता था।[18] ज्योतिषी शिशु के जन्म का समय पूंछ कर पत्रा से देखकर घटी पल के हिसाब से जन्म राशि निकाल कर राशि के हिसाब से नाम रखते थे। वहीं राशि के अनुसार घर के बुजुर्ग या बुआ बच्चे का नाम सुझाते थे। कमजोर वर्ग के लोग शिशुओं के नाम उनके रूप-रंग, शरीर की बनाबट आदि को देखकर रख देते थे। नामकरण के लिए अधिकांशतया देवी-देवताओं नदी-पहाड़, संतों, तीर्थों आदि के नाम से ही मिले जुले नाम रख दिए जाते थे। वहीं मुस्लिम वर्ग में पैगम्बर एवं उनके पारिवारिक सदस्यों तथा सूफियों के नामों के आधारित नामकरण किया जाता था। शिशु के जन्म पर जातकर्म संस्कार होता था। जन्मपत्री बनायी जाती थी।[19] बालक या बालिका कुछ माह की हो जाती तो बुंदेलखण्ड में मूड़नों या झालर उतराई कार्यक्रम द्वारा मुंडन संस्कार सम्पन्न किया जाता था। यहां कुलीन परिवरों में मुंडन संस्कार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। नाते-रिश्तेदारों और गांव के लोगों को भोज दिया जाता था। साधरण वर्ग के परिवार किसी मंदिर या लोक देवता के चबूतरे पर पहुंचकर बच्चे का मुंडन कराते थे। और अपने सामर्थ्य के अनुसार खानपान कराते थे। मुंडन होने के बाद बच्चे के सिर पर हल्दी और गाय का देशी घी मिलाकर लेप किया जाता था। मुंडन के बाद उतारे गये बालों को आसपास के पुण्य क्षेत्र. के प्रवाहित जल में विसर्जित कर दिया जाता था। शिशु के मनोरंजन के लिए उसके बड़े भाई बहन अथवा परिजन बच्चों को कईयाँ और गोदी लेकर खिलाते थे। नैन कदईया(पीठ लेकर) कंधे पर बैठाकर चलना, झप्पी करना, पैरों पर लिटाकर झुलाना जिसे धु-तु पालकी कहते थे। गाया जाता था- धू-तू, धू-तू पालकी, जय कन्हैया लाल की। उपनयन संस्कार को बुंदेलखण्ड में जनेऊ संस्कार कहा जाता था। सवा दो गज लम्बे एक सफेद धागे को मंत्र उच्चारण के साथ बालक की कमर में बांधा जाता था।[20] ब्राम्हण वर्ग के बालक के जिए जनेऊ संस्कार अनिवार्य था। लेकिन क्षत्रिय, वैश्य और कायस्थों में भी जनेऊ संस्कार प्रचलित था। लेकिन उनके लिए हमेशा धारण किये रहना अनिवार्य नहीं रह गया था। जनेऊ धारण के बाद शिक्षा की शुरूआत होती थी। जिसे बुंदेलखण्ड के ग्रामों में पट्टी पूजा भी कहा जाता था। गुरूकुल की परंपरा का इस

काल में ह्रास हो चुका था। लेकिन जहां-तहां संतो के गुरूकुल मौजूद थे। लेकिन शिक्षक गांव में ही रहकर अध्यापन का कार्य करने लगे थे। जहां अध्यापन का कार्य होता था, उस स्थान को पाठशाला कहा जाता था। गांव में इन अध्यापकों को काफी सम्मान मिलता था। छात्र-छात्राऐं इनको फीस के बदले घरेलू सामग्री भिजवा देते थे। वहीं मुस्लिम बालकों की शिक्षा का प्रारंभ बिसमिल्ला ख्वानी से होता था, जो एक त्यौहार की तरह मनाया जाता था। मुस्लिम शिशु के चार वर्ष, चार माह तथा चार दिन की आयु पूरी होने पर यह उत्सव हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता था।[21] गांव में बने मकतब या मस्जिद में ही मौलवी विद्यार्थियों को प्रारंभिक शिक्षा देते थे। बालक को सर्वप्रथम वर्णमाला का ज्ञान, उच्चारण, विराम चिन्हों व स्वर चिन्हों सहित कराया जाता था। संयुक्त अक्षर का ज्ञान अर्जित करने में बच्चों को काफी समय लगता था। संयुक्त अक्षरों का ज्ञान हो जाने के बाद उन लघु वाक्यों को पढ़ना और लिखना सिखाया जाता था, जिनमें उन शब्दों को प्रयोग बार-बार होता था। अध्यापक प्रतिदिन याद करने के लिए पाठ दिया करते थे। अभ्यास हेतु दिये पाठ को विद्यार्थी बार-बार तख्ती पर लिखकर अभ्यास करता था। जिससे उनमें पढ़ने और लिखने की कला आ जाती थी। पाठशाला में विद्यार्थी को अपने घर से टाट पट्टी लेकर जाना होता था। जिस पर आलथी-पालथी मार कर धरती पर बिछाकर बैठा जाता था। अपनी गोदी के एक सिरे पर तख्ती या किताब रखते थे। विद्यार्थी सरकण्डे की कलम से अपनी तख्तियों पर लिखा करते थे, जिन्हें पाठ की समाप्ति पर धोकर साफ किया जा सकता है। इसके अलावा पत्थर की स्लेट बनायी जाती थी, जिसको आयताकार रूप दिया जाता था और चारों कोनों को लकड़ी की कमचियों से जोड़ दिया जाता था। इस स्लैट पर खड़िया या बरतली से लिखा जाता था। पास मे गीला कपड़ा रखा जाता था। जिससे लिखे हुए को साफकिया जा सके। मुस्लिम बच्चों को कुरान के पाठ का प्रशिक्षण भी साथ में दिया जाता था। वहीं हिंदू बच्चों को गीता, गायत्री मंत्र और पंचतंत्र की कहानियों की शिक्षा दी जाती थी। अक्षर ज्ञान और लिखना-पढ़ना सीखने के साथ-साथ अंकगणित और ज्यामिति की शिक्षा भी दी जाती थी। इसके अतिरिक्त गिनती, पहाड़ा, जोड़-घटाना, गुणा-भाग, वर्गमूल, घनमूल आदि में कुशल किया जाता था। हिंदू-मुस्लिम बालिकाओं में शिक्षा व्यवस्था अधिकांशतया घर तक ही सीमित थी। केशव के वीर चरित में वीर सिंह देव के महलों की रानियों को पढ़ने और पढ़ाये जाने के उल्लेख से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उच्च श्रेणी की कुछ स्त्रियां अवश्य ही पढ़ी लिखी होंगीं।[22] बालकों उनके वर्ग/जाति एवं परंपरागत व्यवसाय में पारंगत करने के लिए बाल्यावस्था से ही प्रयास किया जाता था, इसके लिए उन्हें उस व्यवसाय में साथ बिठाया जाता था। अपने से बड़ों की देखा-देखी वह उस व्यवसाय को सीखना शुरू कर देते थे। वैश्य वर्ग गांव में अपने घरों में ही दुकान चलाया करते है। जिसमें बचपन से ही उनके घर के बालक - बालिका बैठने लगते थे और व्यापार के विविध आयाम सीख लेते थे। इसी प्रकार कुंभकार, शिल्पकार, ताम्रकार, चित्रकार, सुनार आदि भी बचपन से ही अपने घरों के कार्यों को होता देखकर उस कला में पारंगत हो जाते थे। इसका लाभ यह होता था कि युवा होने पर उन्हें रोजगार के लिए इधर-उधर नहीं भटकना नहीं पड़ता था। खेती-किसानी करने वाले परिवारों में बालक-बालिकायें अपने माता-पिता और घर के बुजुर्गो के साथ खेत-खलिहान जाते थे। पिता के साथ-साथ हल चलाना, जुताई करना, निदाई, बुवाई, मढ़ाई आदि कार्य सीखते थे। फसल को समय पर सिंचाई करना, कीट-पक्षियों से सुरक्षा करना सीख लिया करते थे। बालिकाओं को घर की बुजुर्ग महिलाऐं अपने साथ में लगाये रहतीं थीं, जिससे बालिकाऐं गृह कार्य में दक्ष हो जातीं थीं। उस काल में लड़कियों को खाना बनाना बहुत अच्छे तरीके से आना चाहिए होता था, स्वादिष्ट खाना बनाने वाली गृहणियों की तारीफमायके और ससुराल दोनों में बहुत होती थी। इसलिए बालिकाओं को विभिन्न प्रकार के पकवान बनाना, अचार, पापड़ बनाना सिखा दिया जाता था।

पर्यवेक्षण काल में बुंदेलखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में बालक-बालिकाओं के मनोरंजनार्थ अनेक खेल-खिलौने लोकप्रिय थे। बालक जब चलने लायक होता था तो उसे लकड़ी की तीन पहियों की सायकिल दे दी जाती थी, जिसके सहारे वो धीरे-धीरे चलना सीख जाता था। शैशवकाल में लकड़ी से बने अनेक खिलौने दिये जाते थे जैसे झुंझना, मिट्टी के बने पशु-पक्षी आदि। घर के बड़े भाई-बहन उसे मिट्टी के खिलौने बना दिया करते थे। मिटटी के घरोंदें, गाय-बैल, तोता, कबूतर, हाथी आदि खेलने के लिए तैयार किये जाते थे। यहीं खिलौने पकी मिटटी के बनाकर कुंभकार बाजारों और मेलों में बेचते थे। बालकों के प्रिय खेलों में गेंद खेलना[23] और गेंद फेंकना प्रमुख था। उस समय गेंद को कपड़े की कई तहों को लपेटकर तैयार किया जाता था। खुले मैदान में और कभी-कभी गांव की गलियों में गेंद से बच्चे खेलते नजर आ जाते थे। बच्चों के खेलों में बंटा सर्वाधिक लोकप्रिय था। लाल कवि छत्रप्रकाश में लिखते हैं-

''असवारी में मचावै, मन के संग तुरंग नचावै,
चौगनन में खेलत छवि छावै, बंटा सब तै अधिक उड़ावै।।
सब शिकार की जानी घातैं, रूचतीं दान जूझा की बातैं ।
ग्यारह वरष बहिक्रम बीत्यौ, खेलत आखेटक श्रम जीत्यौ।।''[24]

वीर चरित्र की निम्न पंक्तियां भी दृष्टव्य हैं-

''बैझो मारि गिराई भुव बान नरेश सुजान ।
खेलन लागे कुंवर सब, चतुर चारू चौगान।।[25] गुल्ली डण्डा[26] उन दिनों बालकों में बहुत लोकप्रिय खेल था। बहुत आसानी से गुल्ली और डण्डा बना लिए जाते थे। इस खेल में कम से कम दो बालक अधिक से अधिक 10 से 12 बालक तक खेलते थे। जमीन में एक रेखीय रेखा खींच कर उसको गहरा कर दिया जाता था। जिसे गुच्चू

बोला जाता था। उस गुच्चू के ऊपर गिल्ली रखकर खिलाड़ी अपनी पूरी ताकत से दूर उछाल देता था। यदि विपक्षी बालक ने गिल्ली को लपक लिया तो खिलाड़ी खेल से बाहर हो जाता था। यदि गिल्ली नहीं लपकी गयी तो वह बालक उस गिल्ली को एक सिरे पर डण्डे से प्रहार कर उछालता था। गिल्ली जैसे ही उछलती उसको दुबारा डण्डे से प्रहार कर दूर फेंक दिया जाता था। डण्डे को वापस गुच्चू पर रख दिया जाता था। अब विपक्षी टीम का कोई बालक गिल्ली को दूर रखे डण्डे में प्रहार करने की कोशिश करता था। यदि गिल्ली डण्डे में लग गयी तो जिसकी चाल होती थी, वह खिलाड़ी खेल से बाहर हो जाता था। यदि गिल्ली डण्डे में नहीं लग पायी तो दोबारा चाल वाला खिलाड़ी गिल्ली को डण्डे से उछालता था। उस समय गिल्ली डण्डा इतना अधिक लोकप्रिय था कि गांव के मैदान में बच्चे दिन भर इस खेल को खेलते रहते थे। कई बार तो आसपास के गांव की टीमों को मिलाकर वर्तमान टूर्नामेंट की भांति प्रतियोगितायें भी आयोजित कीं जातीं थी। पशुपालकों द्वारा शुरू किया गया खेल 'गोट पड़ा' बुंदेलखण्ड के ग्रामों बहुत लोकप्रिय था। पूरे दिन जंगली मैदानों में जानवरों को चराने के दौरान समय व्यतीत करने लिए चरवाहे इस खेल को खेलते थे। इसमे दो खिलाड़ी भाग लेते थे। इसमें 4 पड़ा और 20 गोटियां रहतीं थीं जो चौपड़ जैसी आकृति भूमि पर बनायी जाती थीं गोठियां कहीं से भी कंकड़ों को बीनकर बना ली जातीं थी । चरवाहों में लोकप्रियता के साथ-साथ यह खेल घरों में भी बालक-बालिकाओं के बीच चाव से खेला जाता था। घर के बाहर खेले जाने वाले खेलों में सिलाईमार डण्डा भी लोकप्रिय था। इसमें 10-12 बालक एक वृक्ष के पास पहुंचते थे। अधिकांशतया आम का वृक्ष चुना जाता था। क्योंकि उसकी डालें अपेक्षाकृत नीची और मजबूत हुआ करतीं । एक डण्डे, जो तकरीबन एक या दो फुट लम्बा हुआ करता था, को पैर के नीचे से तिरछी दिशा में पूरी ताकत से दूर फेंका जाता। जिस लड़के के ऊपर धाम होती थी, वह दौड़कर उस डण्डे को उठाने जाता था, तब तक साथी लड़के लपक कर पेड़ पर चढ़ जाते थे। अब उस लड़के को अपनी धाम को खत्म करने के लिए पेड़ पर चढ़कर किसी एक साथी को छूना पड़ता था, जिस लड़के को वो अगर छू ले तो उसकी धाम खत्म हो जाती थी और स्पर्श होने वाले लड़के पर घाम चढ़ जाती थी। उसको भी वही प्रक्रिया अपनानी पड़ती थी। बुंदेलखण्ड में कांच की गोलियां से खेलना भी बहुत लोकप्रिय हो चला था। इन कांच की गोलियों को कंचा या अंटी कहा जाता था, वहीं बांदा क्षेत्र में इसे चिंगा बोला जाता था। इसका एक प्रकार 'इकपरी-सबपरी' था, जिसमें अनेक गोलियां एक छेद में फेंकीं जातीं थीं। 'गुथा' खेल में सारे लड़कों की अंटियों को एक निर्धारित मात्रा में जमीन पर चूने से रेखित किये गये गोलाकार आकृति में सजाकर रखा जाता था। फिर एक-एक करके खिलाड़ी अपनी उंगली में कंचा लेकर उन गोले में रखे कंचों में निशाना लगाते थे। जितने कंचे बाहर निकल आते थे, वह उस खिलाड़ी के हो जाते थे। 'गोलियां' खेल में वे दो छेदों में फेंकी जातीं थीं। खिलाड़ी प्रत्येक बार, जब उसकी गोली दूसरी को पीट देती थी या छेद में चली जाती थी तो एक या दो पैसे ले लिये जाते थे। उत्तर भारत सहित बुंदेलखण्ड में मुस्लिम बालकों में 'अक्ल ख्वाजा' भी गोलियों और दो छेदों में खेला जाता था। इसमें खिलाड़ी की गोली जितनी बार दूसरी गोली को पीट देती या छेद में चली जाती, उतनी बार एक गिना जाता था । जो पहली दस की गिनती पुरी कर लेता, वही जीत जाता था। इसमें हारने वाले को विभिन्न प्रकार की सजा मिलती थी।[27] लट्टू , फिरकनी का खेल होता था। चकई एक प्रकार की डोरी चढ़ी हुई छोटी चर्खी होती थी। जो हाथ के इशारे से बारी-बारी से खुल जाती या चढ़ जाती थी ।[28] गुलेल[29] एक प्रकार की गुटिका धनुष होती थी। जो किसी वृक्ष के द्विशाखा युक्त तने को काटकर बनायी जाती थी। इसका प्रयोग चिड़ियों पर निशाना साधने और पेड़ से फलों को टपकाने में बहुतायत में होता था। बुंदेलखण्ड सहित उत्तर भारत के बालकों में प्रायः गुलेल लोकप्रिय थी। दौड़ का खेल भी ग्रामीण बालक खेलते थे। इसमें दो या अधिक बच्चों में रेस लगायी जाती थी। गांव में विभिन्न त्यौहार पर आयोजित मेलों में सार्वजनिक दौड़ की प्रतियोगिताओं आयोजित होती थी। इसके अलावा घुड़दौड़, बैलगाड़ी दौड़ आदि भी प्रतियोगिताऐं उन दिनों आयोजित होतीं थीं। कबड्डी[30] खेल बालकों में पूरे उत्तर भारत में समान रूप प्रचलित था। जिसमें बालक दो टीम बनाते थे। जिसमें एक टीम में खिलाड़ियों की संख्या 2 से 8 तक होती थी । मैदान में एक आयताकार पाला बनाकर बीच में एक रेखा खींच दी जाती थी। एक टीम एक पाले की ओर और दूसरी टीम दूसरे पाले में खड़ी हो जाती थी। पहले दल का एक खिलाड़ी दूसरे दूसरी टीम के पाले में जाकर धावा बोलता था, इसके लिए वह एक ही सांस में कबड्डी-कबड्डी बोलता हुआ विपक्षी टीम के सदस्यों को स्पर्श करने की कोशिश करता था। यदि वह ऐसा करने में सफल हो जाता, तो विपक्षी टीम के खिलाड़ी 'मरा हुआ' मानकर खेल से बाहर कर दिए जाते थे। लेकिन यदि उक्त खिलाड़ी पकड़ा जाता या न लौट पाता, तो उसका भी वही परिणाम होता था। यह प्रक्रिया दोनों टीमों की ओर से बारी-बारी से अपनायी जाती थी। उस पक्ष को विजयी घोषित किया जाता था, जिसमें सभी विपक्षियों के 'मारे जाने' के बाद कुछ खिलाड़ी 'जीवित' बचे रहते थे। उत्तर भारत के मुस्लिम बाहुल्य गांवों में मुस्लिम लड़कों में 'काजी-मुल्ला'[31] नाम का खेल खेलते थे। जिसमें एक लड़का काजी बनता तो दूसरा मुल्ला। मुस्लिम बाहुल्य गावों में ठीकरी मार, सात कुदी, झाड़ बंदर, चण्डोल गदागर बोल, चद्द चपोल, वजीर बादशाह, काले पीले देव, छल्ला चपोल आदि। इनके अलावा 'अंधला बादशाह' एक प्रकार की आंख मिचौनी का खेल हुआ करता था। शेर-बकरी या बाघ-बकरी, बरो छपजा, एक तारा-दो तारा, बूझा-बूझी भी मुस्लिम बाहुल्य गांवों में प्रचलित थे। लेकिन उक्त खेलों में हिन्दू और मुस्लिम बच्चों ने साथ

खेलना प्रारंभ कर दिया था। उक्त खेलों के अतिरिक्त शतरंज,चौसर, चौपड़ आदि भी ग्रामीण जमीदार एवं सम्पन्न परिवारों में लोकप्रिय हो गये थे।

बुंदेलखण्ड में बालक-बालिकाओं के लिए सावन का महीना हर्ष-उल्लास लेकर आता था। भीषण गर्मी के बाद बारिश में बच्चे झूमकर नहाते थे। सावन माह में कई जगह मेलों का आयाजन किया जाता था। जिसमें ग्रामीण अपने बच्चों के साथ भारी संख्या में पहुंचते थे। जहां बच्चों के लिए विभिन्न प्रकार के मनोरंजन के साधन मौजूद रहते थे। इन मेलों में झूले और अन्य मनोरंजक साधन होते थे। सावन तीज के दिन मंदिरों झूले लगाये जाते थे, जिन पर उस मंदिर के इष्ट का सिंहासन सजाया जाता था। ग्रामवासी भगवान को झुलाकर अपने परिवार की खुशहाली की प्रार्थना करते थे। इसके साथ घरों में भी झूले में भगवान को झुलाया जाता था। उन दिनों गांव के लगभग सभी घरों के आंगन में नीम का पेड़ बहुतायत में पाया जाता था। जिसकी शाखाओं पर झूले टांगकर बच्चे झूला करते थे। बलिकाओं के लिए झूला सबसे प्रिय मनोरंजन का साधन हुआ करता था। एक लड़की झूले पर बैठती, तो दूसरी लड़की नीचे खड़े होकर झूले को धक्का लगाया करती थी। कभी-कभी एक लड़की को झूले पर बैठाकर दूसरी लड़की झूले पर खड़ी होकर पैर से झूले को धकेलती थे, ऐसा करने से थोड़ी ही देर में झूला हवा से बातें करने लगता था। इस दौरान बालिकाऐं और किशोरियां सावन गीत भी गातीं थीं। बालिकाओं के खेलों में आंख-मिचौनीं, लुका छिपी, चपेटा, नागिन-टिप्पू, घर-घूला, अष्टाचंदा, इक्का-दुकी आदि शामिल थे। बालिकायें और किशोरियां गुड्डा-गुड़िया का व्याह भी रचातीं थीं। गुड्डा-गुड़ियों को बुंदेलखण्ड में पुतरा-पुतरिया भी कहा जाता था। इस खेल को गौरईया कहा जाता था। अष्टाचंदा के खेल में इमली के बीजों को तोड़कर पासे बना लिए जाते थे, जिनको चिया कहते थे। जो संख्या में पांच होते थे । पांसे के रूप में कभी-कभी कौढ़ियों का भी इस्तेमाल होता था। इसमें जमीन पर या किसी लकड़ी के पटिये पर वर्तमान लूडो समान आकृति बना दी जाती थी। वर्गाकार आकृति में चार खिलाड़ी चारों दिशाओं में बैठते थे। बालिकाओं को मेंहदी लगाना और हथेली पर विभिन्न प्रकार की आकृतियां बनाने को शौक पूरे उत्तर भारत में था । हाथों पर फूल-पत्तियों, पशु-पक्षियों, तथा अन्य ज्यामितिक आकृतियां बनाना गांव की बालिकायें सीख जातीं थीं। छोटी बालिकाऐं उछल कूद भी भरपूर करतीं थीं। इसके लिए उनके खेल में नागिन टिप्पू, रस्सी कूद, जनजीरा, रेडी पे रेडी, विश्राम विष आदि खेल थे। नागिन टिप्पू में एक पैर ऊपर करते हुए उछलते हुए वर्गाकार आकृतियों में चला जाता था। जनजीरा में लड़कियां एक-दूसरे का हाथ पकड़कर जंजीरनुमा बनाकर खेलतीं थीं। विश्राम विष में दौड़कर अचानक रूक जाना या शिथिल हो जाना होता था। इसके लिए जिस लड़की पर धाम होती थी। वह खड़ी या दौड़ रही लड़की को छूने का प्रयास करती थी लेकिन विश्राम अवस्था में बैठी या शिथिल अवस्था में लड़की को नहीं छुआ जाता था। धाम वाली लड़की किसी दौड़ती हुई लड़की को छू लेती थी तो उसकी धाम खत्म हो जाती थी और स्पर्श होने वाली लड़की की धाम शुरू हो जाती थी। उसे भी अपनी धाम छुड़ाने के लिए वही प्रक्रिया अपनानी पड़ती थी।

बुंदेलखण्ड में लोक संस्कृति का पारंपरिक क्रीडा उत्सव था- 'सुआटा'। यह बालिकाओं और किशोर-किशोरिओं में अत्यधिक लोकप्रिय था। यह खेल शारदीय नवरात्रि से शुरू होकर शरद पूर्णिमा तक खेला जाता था। अर्थात यह पांच चरणों में भाद्रपद पूर्णिमा से आश्विन पूर्णिमा तक चलता था। यह बुंदेली संस्कृति का अतिविशिष्ट क्रीडात्मक उपासना पर्व है। सुआटा का प्रथम चरण 'मामुलिया' से शुरू होता था। जिसमें कन्यायें एक कांटेदार झाड़ पर विभिन्न प्रकार के फूल सजाकर गांव में निकलतीं थीं। ग्रामवासी कन्याओं के पैर छू कर उन्हैं अनाज, पैसा इत्यादि देते थे। इस दौरान वह गीत गातीं हुई चलतीं थीं -

' मामुलिया के आए लिबौआ, छमक चली मोरी मामुलिया,
ल्याऔ ल्याऔ गेंदा चमेली के फूल सजाओ मेरी मामुलिया।
ल्याऔ ल्याऔ घिया तुरैया के फूल, सजाओ मेरी मामुलिया,
जहां जहां आजुल के बाग, वहां मेरी मामुलिया। '

मामुलिया को दुलहन की तरह सजाया जाता था। पूरे गांव में भ्रमण करके उसे गांव के तालाब में विसर्जित कर दिया जाता था। उसके बाद किशोरियां उस स्थान पर एकत्रित होतीं थीं, जहां सुआटा खेलना होता था। सुआटा बनाने से पहले दीबार पर ताजे गोबर से लीप कर चित्राकृतियों से सजाया जाता था। इसके ठीक नीचे सिंहासननुमा रूप मिट्टी से बनाया जाता था। अब किशोरियां गाते हुऐ उस दीवाल पर गोबर कीं थपियां चिपकातीं थीं। उसके बाद चन्द्रमा को प्रणाम करके अपने घरों को लौट जातीं थीं। प्रातः फिर से उसी स्थान पर एकत्रित होकर उन थपियों को निकालकर रख दिया जाता था, जिन्हैं अन्तिम दिवस तालाब में विसर्जित कर दिया जाता था। सुआटा क्रीडा उत्सव के द्वितीय चरण में 'नौरता' का खेल आयोजित होता था। यह अश्विन शुक्त प्रतिपदा से अष्टमी तक नवरात्रि में चलने के कारण नौरता कहलाता था। इसमें सुआटा नाम के असुर राजा की प्रतिमा मिट्टी-गोबर से बनाकर कांच, कौढ़ियों आदि से सजाया जाता था। पास में ही गौरी की प्रतिमा बनाकर पूजा की जाती थी। सुआटा की प्रतिमा पर नित्य पूजा कर दुग्ध चढ़ाया जाता था । बुंदेलखण्ड में सुआटा की पूजा करना या लोक उत्सव के रूप में मनाने को लेकर कई मत हैं। गांवों में सामान्य रूप से प्रचलित कहानी थी कि सुआटा नामक एक राक्षस था, जो क्वारीं कन्याओं को परेशान करता था। उसी को खुश करने के लिए पूजा करने की शुरूआत हुई । साथ में गौरी की पूजा करने का तात्पर्य यह था कि देवी के भय से उस राक्षस को मुक्ति मिल जायेगी। फिलहाल सूआटा उत्सव मनाने को कारण कुछ भी हो लकिन इस लोक उत्सव पर

किशोर-किशोरियां आनंद बहुत उठाते थे। अष्टमी के दिन चंदा इकटठा करके सामूहिक भोज होता था, जिसे 'भसकूं' कहा जाता था। इस भोज में सूआटा खेलने वाले किशोर-किशोरियां भाग लेते थे। सुआटा खेल के तीसरे चरण में बालक 'टेसू' खेलते थे। यह आश्विन शुक्ल अष्टमी से शरद पूर्णिमा तक मनाया जाता था। कहा जाता है कि सुआटा के आतंक से टेसू नामक बुंदेली वीर पुरुष ने मुक्त कराया था। टेसू को मिट्टी से पुतले के रूप में बनाया जाता था। जिसकों रंग बिरंगे कांच के टुकड़ों और कौढ़ियों तथा कभी-कभी अनाज के दानों से चिपका कर सजाया जाता था। इसे एक टोकरी या लकड़ी के छोटे बक्शे में रखकर कोई एक बालक अपने गले में लटका लेता था। शाम होतें ही इसके साथ सरसौं के तेल का जलता हुआ दीपक रखकर पूरे गांव में घर घर जाकर चंदा मांगा जाता था। उक्त बालक के साथ कई और बालकों का झुण्ड होता था । इस झुण्ड में गांव के अमीर, गरीब और लगभग सभी बच्चे शमिल होते थे। टेसू को लेकर जब बालक गांव में किसी के दरवाजे पर पैसा या अनाज आदि लेने पहुंचते थे।[32] तो वहां गीत गा-गा कर उक्त घर के लोगों को हंसाया जाता था। तत्कालीन बुंदेलखण्ड में टेसू को लेकर अनेक गीत बने थे, जो गांव में प्रचलित ऊंटपटांग बातों से परिपूर्ण होते थे-

''टेसू आए बाउन वीर, बाथ लए सोने कौ तीर,
एक तीर सैं मार दओ, राजा सैं व्यौहार करौ।
नौ मन पीसें, दस मन खॉय ,
घर-घर टेसू मांगन जाय,
पड़ा बोलै आंय, आंय, आंय।''

एक अन्य गीत में -

''टेसू राय जब घंट बजायै
नौ नगरिया दस गांव बसायै
टेसू राय की सात बहुरियां
नाचें कूदैं चढ़ै अटरियां ''

जब बुंदेलखण्ड में रेलगाड़ी का दौर शुरू हुआ और रेलगाड़ी गांव के करीब से होकर गुजरने लगी तो अंग्रेजी काल में रेलगाड़ी पर भी लोकगीत बन गया-

''रेल चली भाई रेल चली, नौ सौ डिब्बा छोड़ चली
एक डिब्बा आरंपार, उसमें बैठे लाट साब
लाट साब की काली टोपी, काले हैं कल्यान जी
भूरे हैं भगवान जी, सीता जी के सामने कूद पड़े हनुमान जी''

लेकिन जब गृहस्वामी का मन नहीं पसीजता था या वो बालकों के अनुसार पैसा नहीं देता था तो उस समय गीत गाया जाता था-

'' टेसू अगर करै, टेसू झगड़ करै,
तांबे कौ पईसा लैखैई टरै ।
टेसू बब्बा हैईं खड़े, खाबे खौं मांगे दही बड़े,
छही बड़े में मिर्चा भौत, कल जानै है कांजी हौज
कांजीं हौज में चढ़ी पतंग, बापै लेटे टेसू मलंग।

जब तक पैसा या अनाज नहीं मिलता था तब तक बालकों की भीड़ हास्य भरे तीखे गीत गाते रहते थे। अंत में गृहस्वामी कुछ ना कुछ देकर टेसू की टीम को विदा कर देता था।

सुआटा लोक उत्सव के चौथे चरण में बालिकाएँ नवमी से चतुर्दशी तक 'झिंझिया' खेलतीं थीं। मिट्टी को एक घड़ा लेकर उसमें दर्जनों छेद कर दिए जाते थे। घड़े अन्दर अनाज रखकर एक दीपक रखकर ढिरिया बनाया जाता था। इसे लेकर किशोरियां गांव के घर-घर जाकर पैसा और अनाज मांगतीं थीं। दीपक का तेल लेकर गृहणियां उसमें अपने घर से नया तेल लेकर उस दीपक में भर देतीं थीं। ढिरिया के तेल को औषधीमय और शकुन का तेल भी माना जाता था। सुआटा लोक उत्सव के पांचवें चरण में किशोर-किशोरियां मिलकर टेसू और झिंझिया का ब्याह रचाते थे। बालक ढोल-नगाड़े, घंटे, रमतूला बजाते हुऐ टेसू की बारात निकालते थे। बालिकाएँ और किशोरियां झिंझिया नृत्य करतीं थीं। विवाह के बाद सुआटा को लूटा जाता था। उसके हाथ-पैर तोड़कर फेंक दिऐ जाते थे। उसके आभूषण, कौढ़ियां इत्यादि लूटकर बालक अपने घर ले जाते थे। जिन्हैं घर की तिजारी में रखना शुभ माना जाता था। विवाह के अवसर पर बढ़िया पकवान बनाकर सामूहिक भोज का आयोजन किया जाता था और पूरी रात धूम मची रहती थी। इस के साथ ही यह बुंदेली लोकोत्सव समाप्त हो जाता था।

बुंदेलखण्ड में त्यौहार भी बच्चों के लिए सुखद मनोरंजन प्रदान करते थे। होली के त्यौहार का बच्चे और किशोर-किशोरियां पूरे वर्ष इंतजार करते रहते थे। होली के त्योहार को कुछ दिन पहले से गांव और आसपास के बाजारों और मेलों में रंग-गुलाल एवं बच्चों के लिए पिचकारियां मिलना शुरू हो जातीं थीं। होलिका दहन के लिए गांव के बालक और किशोर कुछ पहले ही से घर-घर जाकर लकड़ी, कण्डे और पैसा इकट्ठा करने लगते थे। होलिका दहन के बाद जमकर रंग खेला जाता था। होली के अवसर पर लोकगीतों में 'फागें' गा-गा कर एक दूसरे पर रंग लगाया जाता था। दीवाली पर मौनियां नृत्य गांव के लड़के इकट्ठा होकर करते थे। रात के समय जमकर आतिशबाजी की जाती थी। दिन के समय ताश खेलने का चलन था। दशहरे पर रावण के पुतले का दहन गांव के बाहर किया जाता था। उसके बाद पान खाकर एक-दूसरे को दशहरे की बधाई दी जाती थी। मकर संक्रांति पर आसपास के जलस्रोत नदी, तालाब आदि पर पहुंचकर स्नान किया जाता था। इस त्यौहार पर जलस्र्रोतो पर मेलों को आयोजन किया जाता था ,जिनमें पहुंचकर बच्चे बहुत आनंद लेते थे। इसके अलावा गांव में मदारी डुगडुगी बजाकर बंदर और भालू लेकर पहुंचते थे। जिनके करतबों को देखकर बच्चे बहुत खुश होते थे। सपेरे अपनी बीन लेकर काले भयंकर सांपों को नचा कर बच्चों में रोमांच उत्पन्न कर देते थे।

बुंदेलखण्ड में विभिन्न अवसरों पर लगने वाले मेलों में भी बच्चे बहुत आनंद उठाते थे। चित्रकूट में अमावस के समय लगने वाले मेलों में भारी भीड़ पहुंचती थी। ओरछा में मकर संक्रांति, पुष्य नक्षत्र, गंगा दशहरा और रामनवमी को विशाल मेले का आयोजन किया जाता था। पूर्णमासी का मेला कार्तिक शुक्ल पंद्रहवीं को लगता था। विवाह पंचमी के मेले में हजारों की संख्या में श्रद्धालु ओरछा पहुंचते थे।[33] समथर(झांसी) में रामनवमी के अवसर पर विशाल मेले का आयोजन किया जाता था।[34] मेले का धार्मिक महत्व यह भी था कि अनेक साधू-महात्मा और उनके अखाड़े इस मेले में पहुंचते थे।[35] मेले में रामलीला का आयोजन किया जाता था, जिसे देखकर बालक-बालिकायें अत्यंत प्रसन्न होते थे। झांसी के किले पर शिवरात्रि पर मेले का आयोजन किया जाता था। झांसी से तकरीबन 50 किमी की दूरी पर स्थित मोंठ किले पर भी मेले का आयोजन किया जाता था, यहां से तकरीबन 7 किमी की दूरी पर सेवरा पहाड़ पर कपिल मुनि के मंदिर पर भी मेले का आयोजन होता था।[36] बुंदेलखण्ड के लगभग सभी क्षेत्रों में विभिन्नों मौकों पर मेलों को आयोजन चलता रहता था। जिनमें ग्रामीण अपने बच्चों के साथ पहुंचते थे। बच्चों के मनोरंजन के लिए विभिन्न प्रकार के झूले, खेल-खिलौने, जादूगर, पशु-पक्षी आदि का खेल दिखाने वाले मदारी, बाजीगर आदि मेलों में पहुंचते थे। जिनके दिखाए करतबों को देखकर बच्चे बहुत प्रसन्न हो जाया करते थे।

संदर्भ

1- डॉ भगवानदास गुप्तः बुंदेलखण्ड केसरी महाराजा छत्रसाल (मप्र हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल, 2004), पृ0 1

2- डॉ भगवानदास गुप्तः झांसी राज्य का इतिहास और संस्कृति (राजकीय संग्रहालय झांसी, 2008), पृ0 1

3- वही

4- गोरेलाल तिवारी - बुंदेलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास(काशी), पृ0 1 ; जिला गजेटियर झांसी(1965), पृ0 12

5- राधाकृष्ण बुंदेली एवं श्रीमती सत्यभामा बुंदेलीः बुंदेलखण्ड का ऐतिहासिक मूल्यांकन, भाग-1,(बुंदेलखण्ड प्रकाशन बांदा, 1989), पृ0 2

6- अयोध्या प्रसाद गुप्त कुमुदः सांस्कृतिक बुंदेलखण्ड(नमन प्रकाशन उरई, 2004), पृ 13

7- वही

8- वही

9- जिला गजेटियर जालौन (1989), पृ0 17

10- डॉ मोहन लाल गुप्त 'चातक': बुंदेलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास और सिक्के(राजकीय संग्रहालय झांसी,2006),पृ0 11-12

11- गोरेलाल तिवारीः पूर्वोद्धृत, पृ041-71

12- डॉ भगवानदास गुप्तः मुगलों के अंतर्गत बुंदेलखण्ड के इतिहास संस्कृति के हिन्दी साहित्यिक स्त्रोतों का मूल्यांकन (झांसी, 2001), पृ0 2

13- डॉ भगवान दास गुप्तः झांसी राज्य का इतिहास और संस्कृति, पृ 1-2

14- गोरेलाल तिवारीः पूर्वोद्धृत, पृ0 42

15- ए0एल0श्रीवास्तवः अवध के प्रथम दो नवाब (आगरा,1957), पृ0 177 ; डॉ त्रिवेणी दत्त त्रिपाठीः हिंदू मठ (वाराणसी,1988), पृ0 104 ; ओंकार पुरीः दशनामी संत तथा हमारा राष्ट्र (प्रयाग,1966),पृ0 9, ओमशंकर 'असर': झांसी क्रांति की काशी (राजकीय संग्रहालय, झांसी, 2008), पृ0 33

16- पदमाकरः हिम्मत बहादुर वृदावली (सं0 भगवानदीन,),

17- बाबू किशोरीदासः डोमस्टिक मैनर्स एण्ड कस्टम्स ऑव दि हिन्दूज ऑव मॉडर्न इण्डिया(वनारस,1860) पृ0

18- डॉ भगवानदास गुप्तः मुगलों के अंतर्गत बुंदेलखण्ड के इतिहास संस्कृति के हिन्दी साहित्यिक स्त्रोतों का मूल्यांकन , पृ0 103

19- वही

20- राजवली पाण्डेय- हिंदू संस्कार(वाराणसी,2014सं0), पृ0224-225 ; सर टॉमस रो एण्ड जान फ्रायरः ट्रेवल्स इन इण्डिया इन द सेवेन्टीथ सेंचुरी (लंदन,1873), पृ0 392

21- जी0ए0 हरक्लोट्स(अनु0): कानून-ए-इस्लाम, द्वितीय संस्करण(मद्रास,1863), पृ0 27-29

22- केशवदासः वीरचरित्र, उद्धृत डॉ भगवानदास गुप्तः मुगलों के अंतर्गत बुंदेलखण्ड के इतिहास संस्कृति के हिन्दी साहित्यिक स्त्रोतों का मूल्यांकन , पृ0 99

23- बरू चण्डीदासः श्री कृष्ण कीर्तन (बंसत रंजन राय,कलकत्ता),पृ0 80-120

24- लालकविः छत्रप्रकाश (सं0 श्यामसुंदर दास और कृष्ण बलदेव शर्मा), नागरी प्रचारिणी सभा काशी, 1903, पृ0 67

25- केशवदासः वीरचरित्र, पूर्वोद्धृत, पृ0 102

26- जाफर शरीफ कानून-ए-इस्लाम (जी0ए0 हरक्लोट्स अनु0, लंदन, 1832), परिशिष्ट-8, पृ0 54-55

27- वही

28- वही, पृ0 56

29- विलियम क्रुक (सं0): इस्लाम इन इण्डिया (ऑक्सफोर्ड,1921), पृ0 338

30- जाफर शरीफ पूर्वोद्धृत, पृ0 55

31- वही, परिशिष्ट 8, पृ0 56

32- इंशा अल्ला खां इंशाः दरिया-ए-लताफत(दारूउल नाजिर प्रेस लखनऊ), पृ0 131-132

33- मोतीलाल त्रिपाठी अशान्तः ओरछा दर्शन (झांसी, 1989), पृ0 93-94-95

34- डॉ ईश्वरदयाल गुप्ताः समथर राज्य का इतिहास(नई दिल्ली, 2014), पृ0 266-267

35- वही, पृ0 267

36- वही, पृ0 268

- मोंठ (झांसी)

दो रंग दो दिशाएं (मात्रा व्रत्तांत)

– नंद किशोर पटेल

जीवन चलने का नाम चलते रहो शुभ हो शाम की भावना के साथ लेखक कृपाशंकर तिवारी चालीस दिवस के प्रवास पर अपने पुत्रों से मिलने अमेरिका गए। इस यात्राव्रत्तांत में वहाँ के अनुभवों का लेखाजोखा विश्लेषणात्मक और तुलनात्मक अध्ययन के साथ प्रस्तुत किया है। भारत और अमेरिका की सभ्यता, संस्कृति, जीवनमूल्य, खान-पान, रहनसहन, आर्थिक उन्नति, शिक्षा, तकनीकि, दुनिया में चल रही अंधप्रतियोगिता के साथ-साथ प्राकृतिक सुषमा का सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक ढंग से वर्णन प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक में पैंतीस शीर्षक हैं जिनके माध्यम से लेखक ने अपनी अभिव्यक्तियाँ दी हैं।

आज चार पुरुषार्थों में अर्थ की प्रधानता चरम पर है। उसी की उपस्थिति से व्यक्ति का कद और व्यवहार तय होता है। वैश्वीकरण के इस युग में पूंजीवादी ताकतों ने विश्व के उच्च बौद्धिक मानव संसाधनों को अपनी ओर आकर्षित करने का सफल प्रयास किया है। आज अमेरिका कर सभ्यता, आर्थिक उन्नति और वैभव की ओर भारत सहित अनेक देश के लोगों को आकर्षित किया है। इन बदलते हुए समीकरणों ने भारतीय सामाजिक और पारिवारिक संरचना में हलचल पैदा करदी। उन बच्चों के माता पिता एकाकीपन का जीवन जीने को मजबूर होने लगे जिनके बच्चे सुदूर देशों में जा बसे। लेखक अपने प्रवास के दौरान लगातार अनुभव करते हैं कि आर्थिक उन्नति और वैभव के बीच आत्मिक सुख और प्रसन्नता कितनी आवश्यक है। उन्होंने जब जब अमेरिकी उन्नति और भौतिक विकास की चर्चा की तब तब वो भारत के आध्यात्मिक सुखचैन पारिवारिक रिस्तों का प्यार अपनापन, मित्रों के बीच मनोविनोद आदि को याद करते हैं। केवल भौतिक और आर्थिक उन्नति ही जीवन का अंतिम लक्ष्य नहीं होना चाहिये। लेखक अपने पुत्रों के विषय में लिखते है- ÷इस बनावटी आडम्बरपूर्ण दुनिया में, विखरते मानवीय मूल्यों और स्वार्थजनित संबंधों के संसार में अपनत्व, प्रेम, संवेदना और एकजुटता के वेमिसाल भाव संजोए रखे हैं। हमारी प्रसन्नता का आधार भी यही है।÷

लेखक ने अमेरिकी समाज को मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा और परखा है। वहाँ पर लोग अनुशासित और समझदार हैं। जितनी भूँख थाली में उतना भोजन, ट्रेफिक नियम का पालन, लाइन में लगकर प्रसाद ग्रहण करना, दोना डस्टवीन में डालना, जिस पार्क में जन्मदिन की पार्टी हुई वहाँ पार्टी समाप्त होते ही उसकी पूरी सफाई, सभी काम समय पर सम्पन्न करना इत्यादि बातें अनुकरणीय हैं। वहां जाकर भारतीय भी क्षेत्रीय, भाषायी और जातीय सीमाएँ लांघकर एक ही भारतीयता के सूत्र में बँधे नजर आते हैं। लेखक विचार करते हैं- ÷कितना अच्छा हो जब हम अपने देश में भी इसी भाव को प्रबल करें और एक सूत्र में बँधकर भारतीयता की महान शक्ति को आत्मसात करें।÷

अमेरिका में खान-पान की परम्पराएं भारत से भिन्न हैं। वहाँ डिब्बाबंद फास्टफूड और आमिष भोजन की अधिकता है। देर रात तक पार्टियाँ और डांस जैसी मनोरंजनात्मक परम्पराएँ हैं। भारत में अहिंसात्मक विचारों की लम्बी परम्परा है। लेखक लगातार आमिष भोजन से बचते नजर आते हैं। वहां का यंत्रीकृत जीवन अपने में गुम सा है, एकाकी और नीरस है। उन्हें सुख-दुःख वांटने का अवसर ही नहीं। वे सुख की तलाश में प्रकृति की गोद में शरण लेते हैं। अकल्पनीय भौतिक उन्नति के बीच सुख की तलाश करनी पड़ती है। ऐसे में लेखक बार बार अपने गाँवों, मित्रों और परिजनों को याद करते हैं।

लेखक अमेरिका की प्राकृतिक सुषमा, झरने, झीलों, बड़े बड़े घास के मैदानों, वर्फीले प्रदेशों, वन, वन्यजीवों तथा सुन्दर पार्कों का वर्णन किया है। वहाँ के लोग प्रकृति प्रेमी के साथ साथ उसके संरक्षक और संवर्धक भी है। भारत में अनेक वृक्षों, नदियों, पहाड़ों की पूजा परम्परा का विधान है। उनके प्रति कृतज्ञता का भाव है। अमेरिका में भारत जितनी जैव विविधता नहीं है। कर्क रेखीय भौगोलिक पर्यावरणीय दशाओं के कारण भारत जैवविविधता से सम्पन्न है। जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधों की अनगिनत प्रजातियां हैं। इस विविधता का संरक्षण व संवर्धन करना हमारी जिम्मेदारी है।

लेखक तिवारी जी ने अमेरिका और भारत की अनेक समस्याएं गिनाई है। अमेरिका का आपाधापी भरा जीवन है, लोगों में अजनबीपन और एकाकीपन है। मशीनों और कलकारखानों के बीच जीवन का यंत्रीकरण हुआ है। भारत में वेइंतहा जनसंख्या वृद्धि, सामाजिक असमानता, कट्टर क्षेत्रवाद, जातिवाद, भाषावाद, धर्मवाद, पिछड़ापन, गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, तंगहाली से लेकर प्रकृति का विनाश, खस्ता स्वास्थ्य व्यवस्थाएँ, विनाशजनित आपदाएँ इत्यादि अनेक चुनौतियाँ देश के सामने हैं। इनका सामना कर्त्तव्यवोध, ईमानदारी और समझदारी से किया जाना चाहिये।

यात्रा-व्रत्तांत को पढ़कर लेखक की बहुआयामी समझ का अंदाजा लगाया जा सकता है। उन्हें तकनीकि शिक्षा, विज्ञान, भूगोल, ब्रह्मांड, सूचना क्रांति, धर्म, दर्शन, संस्कृति और सामाजिक परम्पराओं की गहरी समझ है। उपर्युक्त विषयों का विश्लेषणात्मक उल्लेख लेखन में आया है। वैश्वीकरण आर्थिक उदारीकरण, पूंजीवाद और ऐतिहासिक संदर्भों में बदलते आयामों के विश्लेषणात्मक लेख उच्च कोटि के बन पड़े हैं। उनके लेखन में स्वाभाविकता है, प्रवाह है आसानी से ग्रह्य हैं। लेखों को पढ़ते समय विषय वस्तु पर केन्द्रित होना आसान है क्योंकि उनमें जीवंत बिम्ब खींचने की क्षमता है, हिन्दी भाषा की सहजता है। आवश्यकतानुसार अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग है।

यह पुस्तक दोनों देशों सामाजिक, सांस्कृतिक और भौतिक विकास को समझने में मददगार होगी। साहित्यकारों विद्यार्थियों और यायावारी करने वाले लोगों के बीच यह पुस्तक लोकप्रिय होगी ऐसा मेरा विश्वास है।

-सहायक प्राध्यापक
शासकीय महाराजा महाविद्यालय
छतरपुर (म.प्र.)

कालिदास और बुन्देली लोकभाषा

– डॉ. गंगाप्रसाद बरसैंया

अनुवाद-कार्य दुःसाहस और कठिन है। यह पुनर्सजन से कम महत्वपूर्ण नहीं है। एक भाषा के सृजन को दूसरी भाषा में रूपान्तरित करना पुनर्सृजन ही है। यह तब और कठिन है जब एक समृद्ध भाषा की रचना को लोकभाषा या बोली में अनुवादित करना हो। न्यायपूर्ण अनुवादक का कार्य वही कर सकता है जिसे मूल भाषा और अनुवादित भाषा का सम्यक ज्ञान हो। प्रत्येक भाषा के शब्दों और अर्थों की विशेष प्रकृति और संस्कृति होती है। दोनों भाषाओं में समरथ हुऐ बिना सटीक अनुवाद संभव ही नहीं है। विशेषकर संस्कृत भाषा के शीर्ष रचनाकार कालिदास की श्रेष्ठ रचनाओं का बुन्देलखण्ड की आँचलिक भाषा में अनुबाद करना हो। कहाँ देवभाषा संस्कृत और कहाँ लोकभाषा बुन्देली। मैं यहाँ बुन्देली की कुछ कृतियों की चर्चा करूंगा जो कालिदास के ग्रन्थों से अनुवादित है।

अनुवाद कई प्रकार का होता है। शब्दानुबाद, भावानुबाद, छायानुवाद आदि। अनुवाद कोई भी हो वह रचनाकर के रचना सामर्थ्य और अनुवाद की भाषा की शब्द शक्ति एवं भाव-शक्ति की परिचायक ही नहीं, कसौटी भी होती है। साहित्यिक भाषा शिष्ट व्याकरण और अनुशासन से संबद्ध होती है जबकि लोकभाषायें खुले आसमान के नीचे पनपने, विकसित होने वाली प्राकृतिक सम्पदायें होती है जो लोक कंठो से मुखरित और प्रसरित होती हैं। बुन्देली भी लोकभाषा है, पर वह प्राचीन और बहुप्रचलित भाषा है। उसकी अपनी सीमाएँ हैं। किन्तु उस लोकभाषा में गद्य-पद्य दोनों में पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है। कमी थी तो अनुवादित ग्रन्थें की। प्रसन्नता की बात है कि बुन्देलखण्ड के कुछ रचनाकारों ने कालिदास के कुछ ग्रन्थें का बुन्देली में अनुवाद किया है- जैसे गुणसागर सत्यार्थी, कन्हैयालाल शर्मा, कलश, श्रीनिवास शुक्ल ने कालिदास के मेघदूत का अनुवाद किया है। गुणसागर सत्यार्थी का बुन्देली अनुवाद आ.भा.स्तर पर पुरस्कृत और प्रकाशित हुआ है। इसी प्रकार प्रभुदयाल श्रीवास्तव और डॉ. दुर्गेश दीक्षित ने कालिदास के ग्रंथ ऋतु संहार का बुन्देली में अनुवाद किया है। इस आलेख में इन्ही ग्रन्थों की चर्चा करूँगा।

भारतीय रचनकारों के साथ यह बिडम्बना रही है कि उनका जीवन-परिचय प्रायः निर्विवाद नहीं रहा। कालिदास भी उसके अपवाद नहीं है। उनके जन्मकाल, जन्म स्थान और रचना रूप पर भी मतभेद रहे हैं। आज भी उनका अंतिम समाधान नहीं हो सका। मेघदूत की श्लोक संख्या को ही लीजिए। बुन्देली के इन तीन रचनाकारों नें अपनी कृतियों में अलग-अलग संख्या दी है। कालिदास ग्रंथावली के सम्पादक श्री ब्रह्मानंद त्रिपाठी ने मेघदूत के पूर्व मेघ की श्लोक-संख्या 67 व उत्तर मेघ की 63 दी है। सत्यार्थी के अपने बुन्देली अनुवाद में पूर्व मेघ की संख्या 63 व उत्तर मेघ की 52 है। कलश जी ने क्रमशः यह संख्या 68 व 56 तथा श्री निवास शुक्ल के अनुवादित गंथ में यह संख्या 65 और 55 है। एक ही क्षेत्र के तीन अनुवादक रचनाकारों की छंद संख्या अलग-अलग है। यह विषय अलग से विचारणीय है।

यहाँ मेरा उद्देश्य बुन्देली भाषा की शक्ति और सौन्दर्य की दृष्टि से अनुवाद पर विचार करना है। क्षेत्र एक, भाषा है। एक, मूल कृति एक, किन्तु अनुवाद अलग-अलग। यह अलगाव संख्या पर ही नहीं भावाभिव्यक्ति अर्थभाव-सौन्दर्य के प्रस्तुतीकरण पर भी है। कहीं-कहीं तो बुन्देली में प्रयुक्त शब्द कालिदास की शब्दावली को नया आलेक प्रदान करते हैं। रचनाकार का रचना-सामर्थय यहीं देखने को मिलता है।कुछ छंदो के उदाहरणों से उसे भलीभाँति समझा जा सकता है। गुणसागर सत्यार्थी नें अपना अनुवाद बखै छंद में प्रस्तुत किया है जबकि श्री कलश व श्रीनिवास शुक्ल नें बुन्देली के लोकप्रिय छंद फाग को अनुवाद का माध्यम बनाया है। बरवै छंद और चौकड़िया फाग दोनों लघु आकारी छंद है। इन लघु-आकारी छंदों में कालिदास के अर्थागर्मित लोकों को समेटकर प्रस्तुत करना साहसिक कार्य हैं इन कवियों ने जो अनुवाद प्रसतुत किया है वह कहीं-कहीं कालिदास प्रस्तुत अर्थबोध को अधिक व्यापक, मोहक और नई आभा प्रदान करते हैं जो बुन्देली लोक भाषा की शब्द शक्ति का प्रमाण और परिचायक है। उदाहरणार्थ पूर्व मेघ के छंद में मेघ के लिए जिन आधार तत्वों का उल्लेख है। उनमैं धूम ज्योति सलिल मरूतां और धूम' का उल्लेख कालिदास ने किया है। व्याख्याकार पं. रामतेज शास्त्री ने ज्योत का अर्थ अग्नि किया है, किन्तु गुणसागर नें ज्योति के स्थान पर बुन्देली के 'बीजरी' शब्द के अधिक सटीक और उपयुक्त माना है क्योंकि मेघ में विद्युत की ही उपस्थिति होती है, अग्नि की नहीं। अग्नि और ज्योति के भावार्थ में अन्तर है। इसी प्रकार ज्योति से अधिक सटीक विद्युत (बीजुकी) लगता है। गुणसागर का प्रयोग देखिये-

धुआँ बीजुरी पानी हवा मिलाय, मेथ अचेत चेत से उने दिखाय...।

कालिदास की पंक्ति है-

'धूम ज्योतिः सलिल मरुतां सन्निपातः कुमेघ्रः संदेशार्थः
कु परुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।'

श्री निवास शुक्ल के अनुवाद की दूसरी पंक्ति अधिक खुलासा करती है

धुआँ वायु जल ज्योति जनितघन का संदेसौ जाने।
पै कामी जन जड़ चेतन में, भेदन तनकऊ माने।

इनकी तुलना में कलश जी का अनुवाद अधिक ठेठ है-

धूम अगनि जल पावन से बनो, संदेसौ कैसे ले जाय?
याके काजे चतुर और अति चेतन पुरुख उचित ठहराय।
कामी होते ग्यान बिहीन।

श्लोक क्रमांक 11 में कालिदास कुकुरमुत्ता और कमल नाल के लिए क्रमशः महीमुच्छिलीन्ध्राम व कमलनाल के लिए

'किसलयच्छेद' का प्रयोग किया है जो व्याख्याकार के अर्थ से स्पष्ट है। किन्तु 'कुकुरमुत्ता' और कमलनाल शब्दों में उतना सौकुमार्य भाव नहीं है जितना बुन्देली के 'गाजन' और 'कौंसर' शब्दों मैं है। गाजन शब्दों में उतना सौन्दर्य भले न ई, परन्तु भाव तत्व उसका वरेण्य है। लोक भाषा में कुकुरमुत्ता की जगह गाज अधिक आत्मीय है। कोंसर शब्द तो कोमलता को भी मंडित करता है। कमलनाल उसकी बराबरी नहीं कर पता। सत्यार्थी में अपनी बखै पंक्तियों में इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया है। 'कौंसर' कमलनाल का कोमलतम भाग होता है। कलिदास ने लिखा-

कतुयच्च प्रभवति मही मुच्छिलीन्ध्रामवंध्यां
तच्द्रुत्वा ते श्रवण सुभंग गजिति मान सोला।
आ कैलासा द्विस किसलयच्छेद पाथेयवन्त :
सम्प्रत्स्यते नमसि भवतों राजहंसाः सहायाः।

सत्यार्थी जी की अनुवादित पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

तन मन हरौ धरनि कौ तुम करि देत,
सिहरन भर ऐंड़ाई सहजईं लेत।
गरज सुहानी टौंना सौ कर देय,
सुनतन धरनी गाजन सिर ढँक लेय।
हंसा कमलन बन में सुन अकुलाँए,
मानसरोवर की सुध उनें सताय।
कोंसर दाब उड़े फिर पंख पसार,
देवे संग तुमारो कोस हजार।
संग सहज कैलास लों, मिल रओ तुमखों आज।
सरस सुहानों सुभ सगुन, सजे सुमंगल साज।

'गाजन' और 'कौंसर' शब्दों के प्रयोग से भले नवीनता लगे परन्तु अनुवाद की लम्बाई खटकती है। बरवे जैसे- छोटे छंद का वैशेष्य यहाँ खंडित होता है। इसकी तुलना में श्रीनिवास शुक्ल ने उसे चार पंक्तियों में इस प्रकार प्रस्तुत किया है-

सुन गर्जन गंभीर सुहानी, धरती होती धानी,
हंस वंस मानस सगामी, नभ शोभा वरदानी,
कमलनाल पाथेय साथ ले मगजानी पहचानी,
तोरे संग कैलाश नाथ लौं, उड़ने की मनठानी।

कलश जी का अनुवाद कम विस्तृत नहीं है किन्तु उन्होंने 'कुकरा छत्रन' और 'मृदुल मुरार' शब्दों का प्रयोग कर नवीनता लाने का प्रयास अवश्य किया है। कुकुरमुत्ता के लिए कुकुरछत्रन और कमलनाल के लिए मृदुलमरार का प्रयोग बुन्देली प्रकृति के अनुरूप है। 'मृदुलमुरार' अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर प्रयोग है जबकि 'कुकरा छत्रण' में कोई आकर्षण नहीं है। उनकी पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

स्रवनन उपजावे मधुराई, तुव गर्जन सुखदाई।
बांझ धरा कूकरा छत्रन, पाय सुहादा सुहाई।
सोई गरज सुन राजहंस हू, घर लौटत हर खाई।
मृदुल मुरार पंथ, भोजने हित, चौंचन बीच दबाई।

मृदुल शब्द बुन्देली का नहीं है। मुरार बहुप्रचलित शब्द है। बुन्देली में सर्वत्र प्रयुक्त होता है। कोंसर में कोमलता का भाव अधिक है जो किसलय के निकट है। पूर्व मेघ के दसवें श्लोक की पंक्ति है-

गर्माधान क्षण परियान्ननमाबद्ध मालाःसेविष्यन्ते नयन सुभगे खेमवन्तः बलाका। व्याख्याकार नें इसका अर्थ उस प्रकार किया है-

'तुम्हारा यह आँखों का सुहाने वाला रूप देखकर बलाकाएँ भी समझ लैगी कि हमारे गर्भधारण करने का समय आ गया है और वे पाँत बाँधकर अपने से तुम्हें पंखाँ भारने के लिए अवश्य ही आकाश में उड़कर आती होंगी।' गुणसागर ने बुन्देली में इसे नया आलोक इस प्रकार दिया है-

सादें चौक मनावे की भर आस, बगुलिन पाँते ऊँची उड़त अकाश। असामान में उड़तन भली दिखाय, सेवा में वे पाँते तुम तन आँय। हराँ हराँ कछु रुक रुक चलत बयार, लएँ पालकी मानों जायँ कहार। डेरे बोलते पपिहा भरो गुमान, सुवरन सगुन सुहानो तुम ल्यो जान।

बुन्देलखण्ड में सादें चौक 'मनाने की कल्पना गर्भाधान की स्थिति में होती है। यह नर नारी की स्वाभाविक कामना है। हराँ हराँ कछु रूक रूक चलत बयार से दृश्य प्रत्यक्ष हो जाता है। कहारों द्वारा पालकी ले जाने की कल्पना कवि की अपनी है जो मूल से अलग है। श्री निवास शुक्ल ने इसे सूक्ष्मता से व्यंजित करने की चेष्टा की है-

पाँत पाँत में मादा सारस, गर्भकाम मँडरावैं।' गर्भकाम में वही गर्भधारण करने की भावना है। यह प्रयोग 'सादें चौक मनावे' को पूर्णतः व्यंजित करता है और कालिदास के 'गर्भाधानक्षण' के साथ न्याय भी करता है। कलश जी ने गर्भाधानकाल अनुभवकर जे बगुलियाँ 'घनेरी' लिखा है। यह ध्यान देने की बात है कि सारस और बगुलिया में अंतर है। शुक्ल जी ने सारस शब्द का प्रयोग सही नहीं किया है।

अभी पूर्व मेघके कुछ उदाहरण देखे। अब उत्तर मेघ के भी कुछ उदाहरण देखिये जहाँ कालिदास ने अनावृत श्रृंगार का रूप प्रस्तुत करने में कोई संकोच नहीं किया। बुन्देली कवि ने उन्हें सटीक ओर मर्यादित सीमा में बाँधने की चेष्टा की है। उदाहरण के लिए उत्तर मेघ का सातवाँ श्लोक-

नीवीब बिंधोच्छवसित शिथिलं यंत्र बिम्बाधराणीं,
क्षौमरागाद्निभृत करेष्टवाक्षिपत्सु प्रियेषु।
अर्चिस्तुमान भिमुचमाणि प्राप्य रत्न प्रदीपान्
ह्रीमूढानां भवति विफल प्रेरणा कर्ण मुष्टिः।

श्लोक की प्रथम पंक्ति नीवीबंधोच्छ वसित शिथिलं।' आदि को सत्यार्थी ने अत्यन्त मर्यादित किन्तु सटीक भावा थे के साथ इस प्रकार प्रस्तुत किया है-

अलका में जो रसियन प्रीतम संग
अरुण अधर वारिन के महकत अंग।
बंधना तरकत सरकत बसन उतार,
चंचल करन पिया रयैं आँग उगार।

लाजन गढ़ीं विचारी रई सकुचाय,

रतनन दिया बड़ा वे करत उपाय।

भरके मुठी तुरत दई कुमकुम डार,

भई सुफल ना करके जतन हजार।

लेखक ने अपनी दूसरी पंक्ति में जिन शब्दों का प्रयोग किया है वे भाव तो पूरा स्पष्ट करते हैं किन्तु उनमें कहीं भी अश्लीलता या अमर्यादाभयदि नहीं है जैसा कि कालिदस में दिखाई देता है। श्री निवास जी ने उसे और भी मर्यादित करने का प्रयास किया है-

बिम्ब अधरवाली गोरी के गात मीत ने झींके।

लांगा नुगरे के बंध सरके करतन बरजोरी के।

लखनतन रतन दीप उजयारे कँपितन भोरी के।

कलश जी ने इसे और भी सांकेतिक रूप देने की चेष्टा की है। उनकी बुन्देली में खड़ी बोली का प्रभाव अधिक प्रतीत होता है-

जिनके पिया करत उघरारी, वे लज्जा के मारी।

चपल रंगीले पिया कर नीवी ढोली जान।

बिम्बाधरी तियान के खिसकावैं परिधान।

वे चाहैं दीपक बुझु जाय, मुठिन भर चूरन छिरकाय।...

कालिदास के श्रंगारपरक श्लोक को इन कवियों ने बुन्देली में लोक-सौन्दर्य के साथ आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया है। जिससे नख शिक्ष रूप का चित्रण भी हो गया और मर्यादा का निर्वाह भी मंदिर कालिदास के उत्तरमेघ का श्लोक क्र. 022 प्रकार है-

तन्वी श्यामा शिखरि दशना पक्कबिम्बाध रोष्ठी,

मध्येक्षमा चकित हरिणी प्रेक्षण निम्ननाभिः।

श्रेणी भारादल सगमनास्तो नम्रास्तनाम्यां

या तंत्र स्याधुवति विषये सृष्टि राद्यो धातुः।

इसकी तुलना में अब बुन्देली में अनुवादित पंक्तियों पर दृष्टिपात करें। वे कहीं भी कालिदास से कम नहीं, अपितु कहीं-कहीं इक्कीस लगते हैं। गुणसागर का अनुवाद इस प्रकार है-

देह छरेरी जोबन रई समार, उंगुरिनअधरन दसनन जुही बहार।

पतरी कमर सु-आँगन भाव समाव, बोझन निगतन सहजई कछु अलसावी

चौकत हिंरनी रस हेरन डार, गैरी नाभ भोंर-सी चक्कर दार।

नई-नई कछु सहज जोबनन भार , नगर नवेलिन बीच अलग उनयार।

ऐसी संगिनि, अंग-अंग रससींच, पैली रचना विधि की अलका बीच।

तन्वी श्यामा के लिए 'देह छरैरीबिम्बाधरोष्ठी' के लिए ईगरई अधरन, मध्ये क्षमा के लिए पतरी कमर और नम्रास्तनारभ्यी के लिए नई-नई कछु सहत्र जो बनन भार' आदि का प्रयोग नवीन आभा से युक्त हैं। नई-नई का आशय झुक्ति-झुक्ति' परत है। यहाँ नई का आशय झुकने से है, नवीनता से नहीं।

श्री निवास शुक्ल की पंक्तियों का भाव-सौन्दर्य अलग है। वे लिखते हैं-

गोरी लरम लता सी छोरी, छवि सुषमा में बोरी।

दाँत-दाँत अवदात धबलता, शैल शिखर सैं चोरी।

रक्किम अधरन की लाली ज्यों पको बिम्बफल सेरी।

कटि अति छीन, ठगी-मृगनयनी गहरी नाभि निगोरी।

जंघ-नितम्ब-भारगज़ा-गामिनी नमन जोबनम थोरी।

रचना-कला धन्य विधि बाँकी, कैसी रची किशोरी।

यहाँ लरम ता 'जहाँ कोमलभाव को द्विगुणित करता है, नहीं अन्य पंक्तियाँ बुन्देली-वेशिष्ट्य का अपेक्षित निर्वाह नहीं कर सकीं। दाँत अवदात' का प्रयोग भी अत्यन्त कठोर और असुन्दर प्रतीत होता है। कलश जी की प्रयुक्त शब्दावली मैं कुछ प्रयोग रेखों कित करने योग्य हैं। जैसें अंग रकारे 'तन्वी के लिए है।

पीन नितम्बन भार चलतन मैं अलस्याय।

कुच भारन के करने, सो वा नै-नै जाय ।

यहां नै-नै का आशय झुकर चलने से है। 'लरमलता'का प्रयोग नायिका की कोमलता की पूरी तरह ध्वनित करताहै। इससे 'तन्वीश्यामा' को नयी आभा मिलती है।

इस प्रकार प्रत्येक श्लोक के अनुवाद में बुन्देलीशब्दावली के वैशिष्टय को देखा जा सकता है। कई बुन्देली शब्द संस्कृत शब्दों से अधिक भाव-सौन्दर्य-सम्प्रक्त है। आचार्य दुगौचरण शुक्ल तथा कन्हैया लाल शर्मा 'कलश' दोनों वैदिक साहित्य, संस्कृत एवं बुन्देली, हिन्दी के जानकार विद्वान हैं। दोनों की मान्यता है कि बुन्देली, हिन्दी के जानकार दोनो विद्वान हैं। दोनों की मान्यता है कि बुन्देली केकई शब्द वैदिक साहित्य और संस्कृत की प्राचीन शब्दावली से जुड़े हैं। उनकी प्राचीनता असंदिग्ध है।

मेघदूत के अतिरक्त ऋतु संहार का भी बुन्देली में श्री प्रभू दयाल श्रीवास्तव व डॉ. दुर्गेश दीक्षित ने अनुवाद किया है। डॉक्टर दीक्षित की बुन्देली ग्रामत्व-भाव-सम्पन्न बुन्देली है। उसमें अपेक्षाकृत साहित्यिक सौष्ठव का अभाव है। उन्होनें मर्यादा-अमर्यादा भयधि की चिन्ता नहीं की। श्रीवास्तव की बुन्देली साहित्यक सौष्ठव और भाव सौन्दर्य का उत्कृष्ट प्रयोग है जो कालिदास की पंक्तियों को नये भावार्थ से आलोकित करती हैं। ऋतुसंहार प्राकृतिक-सौन्दर्य और श्रृंगार चित्रण का अनूठा ग्रन्थ है। षटऋतु वर्णन के माध्यम से कवि ने प्राकृतिक स्वरूप के अनोखे चित्र शब्दांकित किये हैं। प्रभुदयाल का अनुवाद बुन्देली- सामर्थ्य का प्रामाणिक उदाहरण है जिसकी प्रशंसा संस्कृत और बुन्देली के दो प्रतिष्ठित विद्वान- पं. कपिल देव तैलंग व डॉक्टर राधावल्लभ त्रिपाठी नें की है।

ऋतुसंहार के प्रथम सर्ग के प्रथम श्लोक-'प्रचंड सूर्यः स्पृहणीय चन्द्रमा...' का अनुवाद श्रीवस्तव ने इन शब्दों में किया है-

सूरज अंगारे बरसारये, चंदा हिय हरसारए।

फिर-फिर सपरत कुअँन बावरिन, जलतल घटत ईला रए।

नीकी लगवे संजा बेरा, मदन न जोर जना रए।

देखौ तो प्यारी अब जे दिन जेठमास के आ रए।

तैलंग जी के अनुसार कवि ने क्रियापद विहीन वाक्यों की एक सम्पूर्ण वाक्य में अनुदित किया है जो उल्लेखनीय है। डाक्टर राधा बल्लभ त्रिपाठी अनुवादक श्रीवास्तव के दी अनुवाद अंशो की विशेष प्रशंसा करते हैं और कहते हैं कि अनुवादक ने अपनी रंगत चड़ाकर भावके चार चाँद लगा दिये हैं। प्रथम संगे का दूसरा श्लोक-निशा शशांक क्षल नील राजय क्वचिद विचित्र जल यंत्र मंहिरम।... इसका अनुवाद इस प्रकार है-

प्यारी जे रातें मन भावैं, चंदा सबै सुहावैं।
अंधयारे की कौरे छँट रईं, सो सब मौज उड़ावें।
कै जिन महलन झरत फुहारें, लोग उतेसुख सुख पावें।
कै सीतल मनि धार लेत, कै चंदन लेप लगावें।

त्रिपाठी जी क शब्दों में 'अंदयारे की कों छंट रई' कहना मूल की चमक बढ़ा देता है। विचित्र जलयंत्र मंदिरम को अनुवादक नें अपनी सूझ बूझ से 'कै जिन महलन झरत फुहारें' बना दिया है। इसी प्रकार अंतिम सर्ग के एक श्लोक के बारे में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्तकर बुन्देली के वैशिष्ट्य को उदधाटित किया है। श्लोक इस प्रकार है-

कर्णेषु योग्यं नवकर्णिक्ति चलेषु नीलेष्व अल्केश्व शोकम्।
फुल्लं च पुर्ष्प नवम ल्लिकायः प्रयान्ति क्रान्तिं प्रमदा जनानाम्।

अनुवाद इस प्रकार है-

किरवारे के कुसुम सुहा रये करनफूल मन भारए।
नई चमेली के फूलन में, जूड़े संजे दिखारए।
मतवारी कामिनी के तन कंछु और बरन भरए जा रए।

त्रिपाठी जी के मतानुसार यहाँ कर्णेषु योग्य 'नव कर्णिकार' को पहली पंक्ति में सुन्दर विस्तार दिया गया है। अंतिम पंक्ति में तो अनुवादक ने अपनी रंगत चढ़ाकर भाव के चार चाँद लगा दिये हैं। एक अर्थ में यह अनुवाद कालिदास का नवाविष्कार है।''

द्वितीय सर्ग (वर्षा) का दूसरा श्लोक इस प्रकार है-

नितान्त नीलोत्पल पत्र कान्तिभिः कचित प्रतिन्नाज्जन राशि सन्नि भैं। क्वचित सगर्भ प्रमदास्रन प्रमैः समाचितं व्योम धनै समन्ततः। यहाँ अनुवादक का भाषा-कौशल प्रशंसनीय है। प्रभिन्नाज्जन राशि सन्निभैः का आशय 'काजर ढेर दिख' और 'कृचित सगर्म प्रमदास्तन प्रभैः समाचित व्योम धनैः समन्ततः' का आशय इन शब्दों में व्यक्त है- कउँ पगभारी मतवारी के आँचरन घाँई सुहारये। पगभारी मतवारी और आँचरन घाँई में कवि का कौशल प्रशंसनीय है। पूरा अनुवाद इस प्रकार है-

गेरउँ गेर मेघ मडराए, आसमान पै छा रए।
कितउँ लगत है ऐसें जैसें काजर ढेर दिखारए।
कितउँ कितउँ नीले कमलन की पखुरिन से लहरारए।
कउँ पगमारी मतवारी के आँचरन घाँई सुहारए।

पं. कपिल देव तैलंग के मतानुसार 'कृतसरं सान्द्रभिः किमर्द कर्दम' को 'रनबनकों पानी कर डारो, सने कीच में जा रए' 'दिशि-दिशि' के लिए गेरउँ गेर', 'सगर्म प्रमदा जनै' के लिए 'पगभारी मतवारी' पुल कोरू पयोधरान्ता के लिए 'फुरेरूउ आना' आदि शब्द जहाँ बुन्देली शब्दावली काव्य की भाषा बनी, वहीं समानान्तर भाव-प्रकाशन में भी सहायक बनी। कवि श्रीवास्तव का कहना है कि चतुर्थ और पंचम सर्ग में कवि की तरूणाई मर्यादा के तटबंधों को झकझोरती सी प्रतीत होती है।उन श्लोकों का अनुवाद यथा संभव मर्यादा में रहकर ही किया गया है। श्रंगाररव एक दो श्लोक उदाहरणार्थ अवलोकनीय हैं। चतुर्थ सर्ग (हेमन्त) के श्लोक 'पीनस्तनोरः स्थल भाग शोभासाथ उत्पीड़न जात खेदः...। का अनुवाद इस प्रकार है-

जबुजे जाड़े जू जड़याने, रोम रोम थर्राने।
अँगिया के भीतर रजा पौंचे, छतिययन बीच समाने।
राते जब उनकी गतिदेखी, जिनके मिले ठिकाने।
रोउन लगे तिन से हिमकन सें, अँसुआ ढरत दिखाने।

कवि ने भावाभिव्यंजना में मर्यादा का पूरा ख्याल रखा है। उनकी तुलना में दुर्गेश दीक्षित का अनुवाद अमर्यादित और फूहड़ लगता है। उदाहरणार्थ-

तियन की चौरी छतिया देखैं, पिय भये कुजने काय कठोर।
दवाकें दुख दैरये हैं भौत जना रये नये जुबनन पैजार।
देख कैं इन तिरियन कौ दर्द, प्रकृति कौ जियरा गयो पसीज।
गिराकैं आंसुका धरती रोय ओस की बुंदि से गई भीज।

ऋतुसंहार के पंचम सर्ग (शिविर) का सातवाँ श्लोक इस प्रकार है-

प्रकाम कामैर्युवभिः सुनिर्दयं निशासु दीर्घा स्वभिराम ताश्चिर।
भ्रमन्नि मन्दं श्रम खोदितो रवः झपावसाने नवयोवनाः स्त्रियः।

प्रभुदयाल की अनुवादित पंक्तियां मूल का पूर्ण भावार्थ व्यंजित करती है। किन्तु मर्यादि शब्दो का प्रयोग नहीं है। यह बुन्देली की बहुत बड़ी विशेषता है-

रसिया रस लैबै डबरावैं, मनमथ मथ मथ जाबें।
ई रस कीं सरदीलें सींजे, लमबी राते पाबैं।
जुवतिन मन को धन करने, ऐसी मौज मनावैं।
बे हारी जे गिया भईं भारी, निगतन भुमत दिखाबैं।

गर्भाडबराबै, मनकोधन करबे, जंगिया भईं भारी' आदि प्रयोग अर्थ सम्पन्न बुन्देली शब्दशक्ति के परिचायक हैं। अब जरा दुर्गेश दीक्षित के ठेठ ग्रामीण बुन्देली- प्रयोग को देखिये जहाँ शब्द चयन में शालीनता की ओर ध्यान नहीं दिया गया। इससे बुन्देली के शिष्ट और ग्रामीण दो रूपों की झलक मिलती है-

जे जाड़े की लम्मी रातें, कट रईं ऐन सुकन से आज।
इन जुवंतिन के रूप देखकें, फूलों फिर रओ युवक समाज।
निरदयता सें खेल खेलकों, ढिलया दये तिरियन के अंग।
हारी थंकीं फिरें जेतिरियाँ, कबनो लरें काम से जंग।

इस प्रकार ये बुन्देली अनुवाद इस बात के प्रमाण हैं कि बुन्देली लोक-भाषा संस्कृत की भाव-व्यंजना प्रस्तुत करने में कहीं भी कमजोर नहीं है बल्कि उसमें कुछ ऐसे शब्द मिलते हैं जो कालिदास द्वारा प्रयुक्त शब्दावली को नया भावालोक से मंडित करते हैं।

- 103, गोयल बिहार, खजराना, गणेश मंदिर के पास
इन्दौर (म.प्र.)

पूर्व ओरछा राज्य में जल प्रबन्धन की परम्परा

– हरिविष्णु अवस्थी

विश्व के सभी धर्मों सम्प्रदायों ने जल की महन्ता को स्वीकारते हुए उसे प्राण तत्व की संज्ञा से विभूषित किया है। हमारे ऋषियों, मुनियों, पूर्वजों ने वरूण देव एवं जल की वंदना का विधान किया है। जल के प्रमुख स्रोत सरिताओं को मैया, माइ आदि जैसे पावनतम श्रद्धास्पद विभूषणों से विभूषित कर उनकी आरती उतारी, उनका जय जयकार किया।

आचार्य केशवदास ने बुन्देलखण्ड की जीवनरेखा नर्मदा का वर्णन करते हुये उसे माइ शब्दों से विभूषित किया है। जिसकी सुर-असुर सभी वंदना करते हैं-

''दक्षिन दिसि सरिता नर्मदा। थिरचर जीवनि क सर्मदा।।
पद-पद हरि वासा जगमगै। स्वच्छ पक्ष पक्षा सी लगै।।
जदपि मतंगन के मदमती। तऊ देव देवनि तें सती।।
जदपि सुरासुर बंदित पाइ। तदपि दीनजन कैसी माइ।। 1

वैसे भी जल सृष्टि का आदि तत्व है, वह न केवल जीवन को धारण करता है, स्वयं जीवन है। जब से प्राण बने, तभी से पानी उसके भीतर वैसे ही प्रवेश कर गया था। जैसे मनुष्य की शिराओं में अनजाने ही रक्त प्रवेश कर जाता है। 2

भारत में जल को जो मान्यता मिली हुई है, वह भले ही एक निष्प्राण कर्मकाण्ड में ढल गई हो, परंतु जल हाथ में लेकर संकल्प लेना यानी जल को साक्षी मानना, जल छिड़क कर अपर्वित्रता के निवारण के लिये आश्वस्त होना, जहां कलश को मंगल विधायी मानना, किसी की मृत्यु के बाद मिट्‌टी का जल भरा घड़ा फोड़कर देह जल (आत्मा) को विराट सृष्टि में विलीन करना, पवित्र नदियों में स्नान, उनकी आरती उतारना आदि मूलतः केवल कर्मकाण्ड नहीं रहे होंगे, वे प्रतीक विधान होंगे, जो जल में प्रिय, पूज्य, मंगल आस्था, साक्षी, व्रत आत्मा आदि की प्रतीति के माध्यम रहे होंगे। 3

जीवनदायी जल की अनिवार्य आवश्यकता एवं उसकी आपूर्ति हेतु वर्षा ऋतु के जल का सरोवरों के रूप में संग्रहण तथा पूरे वर्ष उसके संरक्षण तथा सद्‌पयोग का दायित्व हमारी संस्कृति का अंग है। सहस्त्रों वर्षों से जल संग्रहण एवं संरक्षण की यह परम्परा हमारे देश में विद्यमान है।

कुरुक्षेत्र का ब्रह्मसर, हस्तिनापुर का शुकताल महाभारतकालीन माने जाते हैं, तो चित्रकूट का भरतकूप रामायणकालीन माना जाता है। श्रृंगबेरपुर जो प्रयाग से साठ कि.मी. की दूरी पर स्थित है का निर्माण 2700 वर्ष पूर्व अर्थात् ई. पूर्व सातवीं शदी में होना माना जाता है। वाल्मीक रामायण एवं रामचरित मानस में संस्कृत साहित्य में अनेक स्थानों पर उनका उल्लेख मिलता है। सरोवरों के निर्माण की यह स्वस्थ्य परम्परा लाखों वर्षों से निरंतर चली आ रही है।

देश के मध्य में स्थित बुन्देलखण्ड नाम से अभिहित भू-भाग विन्ध्य पर्वत श्रृंखला का सर्वाधिक राकड़, पथरीला एवं ऊबड़-खाबड़ क्षेत्र है। मौसम विज्ञानियों के अनुसार इसे अनिश्चितकालीन वर्षा वाला क्षेत्र माना जाता है। पूर्व इतिहास प्रकट करता है कि हर पांचवें साल अनावृष्टि इस क्षेत्र की विशेषता है। 4 विगत वर्षों से इस क्षेत्र की स्थिति तो और अधिक दयनीय हो गई है।

बुन्देलखण्ड के प्राचीनकाल में शासक रहे चंदेल शासकों ने पहले पहल इस महत्वशाली रहस्य को समझा। अतः उन्होंने अपने साम्राज्य भर में छोटे बड़े जलाशय खुदवाने के लिये प्रभूत धन व्यय किया। जिस कार्य में चन्देलों ने अपनी अतुल राशि लगाई वह था जलाशयों और सरोवरों का निर्माण। ऐसे विभिन्न क्षेत्रफलों के सरोवर सारे बुन्देलखण्ड में विद्यमान हैं। 5

चंदेलों की सुदृढ़ अर्थ व्यवस्था उनकी समृद्धि का प्रमुख कारण थी। जिसके जीते जागते नमूने बुन्देलखण्ड के गांव-गांव में बनवाये चंदेली तालाब हैं। जिनसे बुन्देलखण्ड की ऊबड़ खाबड़ धरती शताब्दियों से शस्य श्यामला है। जिनसे आज भी हजारों-लाखों हेक्टयर भूमि की सिंचाई होती है। सिंधु सरिस विशाल सरोवरों का निर्माण कराकर उन्होंने इस भू-भाग के विकास का मार्ग प्रशस्त किया।

सर्वप्रथम चंदेल नरेश राहिल वर्मन ने अपने शासन काल सन् 900-915 ई. के मध्य महोबा में राहिल सागर का निर्माण कराकर सरोवर निर्माण की परम्परा स्थापित की उसने बांदा के निकट रासिन नामक ग्राम बसाकर वहाँ अनेक सरोवरों का निर्माण कराया। फिर क्या था पूरे चंदेल साम्राज्य में जलाशयों के निर्माण का कार्य अबाधगति से चल पड़ा। यशोवर्मन ने सन् 930-950 ई. के मध्य कालिञ्जर दुर्ग में कोट तीर्थ नामक सरोवर का निर्माण कराया। चंदेल शासक धंग के सम्वत् 1059 विक्रमी के शिलालेख में यशोवर्मन द्वारा सरोवर के निर्माण का उल्लेख मिलता है। ''यथा सगरस्य सागर विद्या वाकर्ण्यतूर्ण सुधीः स्पर्धावानधिकं व्यधन्त जलधे बैल्वं तडागार्णवम।।38।। महोबा के एक खंडित शिलालेख में जो वर्तमान में राजकीय संग्रहालय लखनऊ में सुरक्षित है में भी बेलाताल जैतपुर का उल्लेख है। यथा-मलामतानि बेलापयोनिधि तटनि समुल्ल संति ।।15।।''

यशोवर्मन के पुत्र देवलब्धि ने ललितपुर के निकट स्थित दूधई ग्राम में राम सागर ÷ विजय वर्मन ने सन् 1040-50 ई. के मध्य सैतपुर में विजय सागर, कीर्ति वर्मन ने सन् 1060-1100 ई. में महोबा में कीरत सागर, सह्मक्षण वर्मन 1100-1110 ई. ने सरकनपुर ग्राम बसाकर दो तालाबों का निर्माण कराया था। मदन वर्मन 1129-1165 ई. ने चंदेल साम्राज्य भर में विभिन्न आकार

प्रकार के अनेकों जलाशयों का निर्माण कराकर जो लोकप्रियता अर्जित की वैसी कोई अन्य चंदेल शासक प्राप्त नहीं कर सका। उसके नाम से ख्यात मदन सागर नामक अनेक विशाल सरोवर पूरे बुन्देलखण्ड में विद्यमान हैं। चंदेल शासन काल में अनाम अज्ञात निर्माताओं द्वारा बनवाये गये सहस्त्रों तालाब आज भी चंदेली तालाब के नाम से विख्यात हैं तथा बुन्देलखण्ड की जलापूर्ति के महत्वपूर्ण साधन हैं।

इन जलाशयों के निर्माण से एक ओर जहाँ प्राणियों विशेष कर मनुष्यों को निस्तार की सुविधा प्राप्त हुई वहीं दूसरी ओर हजारों-लाखों एकड़ भूमि की सिंचाई से विपुल मात्रा में अन्न का उत्पादन भी होने लगा। एक तीसरा लाभ यह भी हुआ कि

" These lakes and tanks have proved to be great value particularly during seasan of low rainfull apart from checking soil erosin they raise the water lavel on there neighbourhood " 6

बुन्देलखण्ड में चंदेल राजा के पराभव के साथ ही यहाँ बुन्देला क्षत्रियों की एक नवीन सत्ता का प्रादुर्भाव हुआ। बुन्देला शासकों ने अपने पूर्ववर्ती चंदेल शासकों का अनुसरण करते हुए नवीन कूप, बापी एवं तडागों के निर्माण की स्थापित परम्परा को अक्षुण्य बनाये रखा।

बुन्देला शासकों में ओरछिश वीरसिंह जू देव प्रथम (1605-27 ई.) ने सरोवरों के निर्माण की चंदेलों द्वारा स्थापित परंपरा को आगे बढ़ाया। उन्होंने सिंधु सरिस विशाल आकार के वीर सागर (ग्राम वीर सागर) सिंह सागर, देव सागर एवं समुद्र सागर नामक चार तालाबों का निर्माण कराया, जो सरोवर स्थापत्य के आदर्श रूप में विद्यमान हैं। आचार्य केशवदास जी ने वीर सागर का वर्णन वीर सिंह देव चरित ग्रन्थ में पन्द्रहवें प्रकाश में दोहा, चौपाई, सवैया आदि विभिन्न छंदों में 77 पंक्तियों में विस्तार से किया है। कुछ पंक्तियां दृष्यव्य हैं-

चौपही-

वीर वीरसागर कों देखि। बरनन लागे वचन बिसेखि।।
अति अनंद भूतल जल खंड। अद्‌भुत अमल अगाध अखंड।।
मगर मच्छ बहु कच्छप बसैं। सारस हंस सरोवर लसैं।।
चंचरीक बहु चक्र चकोर। कहूँ सुरभि मृगगन चित चोर।।
कहूँ गयंद कलोननि करैं। करि कल भनि के मनगन हरैं।।
बहु सुंदरि सुन्दर जल भरैं। कहू महामुनि मौननि धरैं।।

दोहा-

वीरसिंह नर देव की सेवा करौ सभाग।
बांधे ही संपति बढ़ै, देखहु बूझि तड़ाग।। 7

मध्यप्रदेश के जिला शिवपुरी में दिनारा नामक ग्राम में निर्मित देव सागर के बांध पर लगा शिलालेख ध्यातव्य है -

गहिरवार कासीपुरा, वीरसिंह के राज।
पंडित कन्हरदास सह फुरमाए सो काज।।
रजधानी जहंगीरपुर, प्रजा सुखी सुख साज।
नित्य धर्म शुभ कर्म सब, होत नृपत के राज।।
सौरा सै पचहत्तर, माघ पुस्य रविवार।
हिन्दु तुरक जू उथपै, ताहि तलाक हजार।। 8

ध्यातव्य है कि वीरसिंह जू देव ने ओरछा का नाम बदलकर जहाँगीरपुर कर दिया था किंतु वह उन्हीं के कार्यकाल में ही समाप्त हो गया था।

बुन्देला शासक वीरसिंह जू देव द्वारा पुनस्थपित परम्परा को आगे बढ़ाया ओरछेश सुजान सिंह (1653-72 ई.) ने। अड़जार नामक ग्राम (वर्तमान में झाँसी में स्थित है) सुजान सागर तालाब का निर्माण कराया। सुजान सागर के बांध पर चार शिलालेख लगे हैं। जिसमें इसके निर्माता का उल्लेख है। एक शिलालेख निम्नानुसार है-

हीरा दे रानी उदर उपजे सिंध सुजान।
तिनकें महरानी भईं, ब्रज कुमारी शुभज्ञान।।
तीरथ व्रत कीनै सबै, ब्रजरानी धर ध्यान।
जस प्रगटो नव खंड में भक्त दान सन्मान।।
तिन दम्पति संवत ।। 1728।। कियो नाग नगुन चंद।
तब सुजान सागर रचौ लिखै मिटै दुख दंद।।
नंदनवन अमरावती बाग लगे ता पास।
सजल फूल फल सारिका, सुक जन करत विलास।। 9

ओरछेश धर्मपाल सिंह द्वारा संवत् 1877 में पृथ्वीपुर में राधा सागर का निर्माण कराया गया था। साक्षी के रूप में बांध पर शिलालेख लगा है-

छप्पय- संवत सै दस अस्ट सप्त जुग ऊपर लहिये।
जेठ मास सित पक्ष चौथ शनिवार जो कहिये।। 1।।
पुष्य नक्षत्र निशा रस जोग ध्रुव नाम बखानों।
पंचागहि दिन सोध कियो तब याको थानो।। 2 ।।
श्री महेन्द्र महिपालपुरं दर सौ अति राजै।
राधा सागर रचौ तौन जलनिधि सौ गाजे।। 3।।
अंबु अनूपम अमल अमीसम पीवत लागै।
नर-नारी असनान करत पातक सब भागै।। 4।। 1

ओरछेश धर्मपाल सिंह (1817-34 ई.) ने टीकमगढ़ नगर में प्रेमसागर का निर्माण कराया। जिसका उल्लेख नजरबाग मंदिर में लगे शिलालेख में किया गया है। यथा-

गढ़ में सु उत्तर में बंधायो प्रेम सरवर स्वच्छ।
पुन बाग विन्द्रावन समीपहि रचौ सब विधि दच्छ।। 11

वर्तमान समय में इसे विन्द्रावन ताल के नाम से जाना जाता है।

ओरछेश प्रतापसिंह ने अपने पचास वर्षीय शासन काल में राज्य में 7086 कुआँ एवं 73 तालाबों का निर्माण कराया यथा

ओरछेद्वा राज्य के अंतिम शासक वीर सिंह जू देव द्वितीय (1930-56 ई.) ने भी सुधा सागर नामक तालाब का निर्माण

कराया था। यथा- " During his Highness reign of fifty years, 217 new village and 210 hamlets came into existence; 7,086 new wells were sunk and 73 irrigating tanks were built " 12

जल संग्रहण एवं संरक्षण सम्बन्धी कार्य में आम आदमी भी पीछे नहीं रहा संवत 1710 में हीरा नगर के हरदिया काछी ने, संवत् 1717 में गुंदरई में लाला हंसरात्र ने, संवत् 1730 में पपावनी से महंत भोलानाथ ने, संवत् 1748 में लाला लाल गोविन्द ने, संवत् 1760 में लाड़पुरा में रेबा राउत कायस्थ ने, संवत् 1717 में पपावनी में चौबे कल्याण शाह ने, संवत् 1781 में महलबाग ओरछा में राइभोज ने, धुरदौर बावरी वापी कूपों का निर्माण कराया। इनकी तो एक लम्बी सूची है। 13 सहस्त्रों कूपों का निर्माण आम जनता ने बहुजन हिताय बहुजन सुखाय की भावना से कराया। यह परम्परा अब भी किसी न किसी रूप में विद्यमान है।

आज आंत्यातिक स्वार्थ में मनुष्य के चारों ओर ऐसे निष्करुण और निर्लज्ज संसार की सृष्टि कर दी है जिसने प्रकृति के भौतिक अस्तित्व को विनाश के कगार पर पहुँचा दिया है। ऐसे समय साहित्य में जल को पुकारना जीवन की पुनर्रचना का आह्वान है। क्योंकि मनुष्य ने संसार के सबसे मूल्यवान और गतिमान जीवन तत्व को प्रदूषित कर दिया है। उसे उसके ठिकानों से खींचकर बन्धक बनाया जा रहा है। धरती की कोख लगातार खोखली की जा रही है, उसमें उतना भर पानी भी नहीं बचा है जिसमें गर्भ तैरकर रूप लेता है। पहले तो पानी में जहर मिलाया जा रहा है फिर उसी की शुद्धि के नाम पर एक पूरा बाजार विकसित किया जा रहा है।

ऐसी चिन्ताओं में साहित्य की शिरकत बेहद जरूरी है। क्योंकि साहित्य के लिये जल केवल भौतिक अस्तित्व नहीं एक विराट सर्जना है। वही उसकी अभिधा ही नहीं लक्षण और व्यंजना भी है, रस है, बहुरूप सृष्टि है।

सर, सरिताएँ, कूप हमारी जीवन रेखा हैं। यह हमारे विकास, हमारी प्रगति की रीढ़ हैं। इनमें दिनोदिन बढ़ता प्रदूषण निरंतर होते दुरुपयोग के कारण आज हमारे सामने जीवन तत्व जल का संकट उत्पन्न हो गया है। सर, सरिताओं, बापी, कूप की स्वच्छता की ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता है। सरोवरों के बांधों को तोड़कर उस भूमि का कृषि हेतु उपयोग, उनमें भवनों का निर्माण, सफाई के अभाव में तालाबों में बढ़ती जा रही सिल्ट जिसमें उनकी गहराई उत्तरोत्तर कम होती जा रही है। आज हमारी जल समस्या के मूल कारण हैं।

उन्तरोत्तर धरती जल की मात्रा निश्चित रूप से चिन्ता का विषय है। अस्तु यदि हमें अपनी तथा अन्य सभी प्राणियों की जीवन रक्षा करनी है तो इन जल स्रोतों की रक्षा का दायित्व भी संभालना होगा। जल संग्रहण, संरक्षण के साथ ही साथ उसके दुरुपयोग के प्रति जन मानस में जागरूकता उत्पन्न करने की महती आवश्यकता है।

संदर्भ-

1. आचार्य केशवदास-वीरसिंह देव चरित पृष्ठ-310
2. ÷नया ज्ञानोदय ÷ मासिक अंक 13 मार्च 2004 पृ0 7
3. वही पृष्ठ-9
4. टीकमगढ़ दर्शन पृ0 85
5. चंदेल और उनका राजस्व काल पृ0 13
6. झाँसी जिला गजेटियर पृ07
7. वीरसिंह देव चरित पृ0 547-48
8. अक्षत चंदन डॉ. रामनारायण शर्मा अभिनंदन ग्रंथ पृ0 295
9. बुन्देलखण्ड के शिलालेख प्रथम भाग ओरछा राज्य पृ0 -2
10. वही पृ0-67
11. वही पृ0-49
12. Bir Singh Charitra Page-2
13. बुन्देलखण्ड के शिलालेख प्रथम भाग ओरछा राज्य विभिन्न पृष्ठ
14. नया ज्ञानोदय मार्च 2004 पृ0-7

-किले का मैदान, अवस्थी चौराहा
टीकमगढ़ (म.प्र.)

सबसें भलो रूपइया

–नवल किशोर सोनी ''मायूस''

पैल हतो ना ऐसो जैसो आ गयो आज समइया।
बाप भलो नां भइयां अब तौ सबसे भलो रूपइया।।
सबइ जने अब पइसा बारन के पाछे पछयावे।
हाजू हाजू करवे सबरे जौन बात बे कावे।।
जी लौ पइसा नइयां उनको नइयां कोऊ पुछइयां।
बाप भलो नां भइया अवतौ सबसे भलो रूपइयां।।
जौन तरां से ऊकी सम्पत हातै आवै अपने।
सबइ जने अब देखत रावें रात दिनां जे सपने।
बैरी बन गए हैं पइसा के पाछें भइया भइया।
बाप भलो नां भइया अब तौ सबसे भलो रूपइया।
जीसें जै हो जैसे बन रओ अपनो हांत बना रओ।
एक दूसरे खां अब ककरी मूरा घांइ चबा रओ।
लाखन में एकात मिलत है बिगरो काम बनइया।
बाप भलौना भइया अब तौ सबसें भलो रूपइया।
रीते हाँतन जानें सम्पत इतइं धरी रै जानें।
काए धरम ईमान बिगारत हौ सम्पत के लाने।
कीनें कैसे पइसा जोरो सब भगवान दिखइया
बाप भलो नां भइया अब तौ सबसे भलो रूपइया।
जी लौ जौन ओइ का कम है, इयै तनक गुन लइयौ।
सांची जा मायूस काँत हैं सबइ जने सुन लइयो।
धीरज धरे रैव तौ ईशुर पार लगाहै नइया
बाप भलो नां भइया अब तौ सबसे भलो रूपइया।।

- कोतवाली के पीछे, छतरपुर (म.प्र.)
मो. 9993693226

बुन्देले इतिहास के दर्पण में

– श्रवण सिंह सेंगर

बुन्देलखण्ड की उपेक्षा चन्देल शासन की समाप्ति से प्रारंभ हो गई थी। सन् 1203 ई. में कुतबुद्दीन एबक ने चन्देल साम्राज्य पर आक्रमण किया था। चन्देल साम्राज्य विशाल भू-भाग पर होने के कारण पश्चातबर्ती चन्देल शासकों ने पुनः अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करते हुये, अजेय दुर्ग कालिञ्जर पर भी अधिकार कर लिया था। चन्देल बंश के अन्तिम शासक राजा कीर्तिसिंह थे, इनकी पुत्री ही महारानी दुर्गावती इतिहास प्रसिद्ध महिला थीं, जिन्होंने अकबर से स्वयं घमासान युद्ध किया था। चन्देल शासन का सूर्य 16वीं सदी में बुन्देलखण्ड में पूर्णतया अस्त हो गया था।

चन्देलों के पश्चात प्रभावी शासन बुन्देलों का प्रारंभ होता है, मुस्लिम शासक बुन्देलखण्ड पर कभी प्रभावी नहीं हो सके शेरशाह सूरी की मृत्यु राजा कीर्तिसिंह के शासन काल में ही कालिञ्जर दुर्ग के समीप हुई थी। उसके बाद बुन्देलखण्ड का शासन सूत्र बुन्देल बंशजों के आधिपत्य में आया। बुन्देलों ने मुसलमान शासकों तथा अंग्रेजों से सदैव निर्भीकता पूर्वक व्यवहार किया, परिणामतः मुसलमान शासक बुन्देलखण्ड में प्रभावी शासन करने में सफल नहीं हुये। अंग्रेजों के शासन काल में बुन्देला वंशीय क्षत्रियों ने अपनी आन बान और शान से कभी समझौता नहीं किया। उनके विषय में यदि इतिहास का अवलोकन किया जाय तो यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि उनमें कतिपय प्राकृतिक एवं स्वाभाविक ऐसे विशिष्ट चारित्रिक गुण हैं, जिनके आधार पर उन्हें अन्य जातियों के सापेक्ष्य प्रथक कोटि में स्थापित किया जा सकता है। वे सम्मान के विरूद्ध कभी समझौता करने के लिये तैयार नहीं होते हैं, और असम्मान के प्रतिकार स्वरूप वे किसी भी शक्ति के विरूद्ध आक्रामक हो सकते हैं। बुन्देले, परमार एवं धन्धेरे इन तीनों उपजातियों का इतिहास उल्लेखनीय रहा है। तीनों को प्रायः बुन्देल बंश से ही सम्बद्ध करते हुये उनके विषय में उल्लेख किया जाता है। उन्होंने अनेक उल्लेखनीय घटनाओं के आधार पर अपने विशिष्ट इतिहास का सृजन किया है, संक्षेप में कतिपय घटनाओं का उल्लेख किया जा रहा है।

बुन्देल नरेश मधुकर शाह– महाराजा मधुकर शाह का जन्म सन् 1520 में हुआ। सं. 1611 विक्रम से सं. 1649 तक ओरछा के शासक रहे। यह नरेश अप्रतिम पराक्रमी तथा साहसी थे। अकबर महान के समकालीन रहे, अकबर की परवाह नहीं करते हुये अपने राज्य का विस्तार किया। भारतीय पुरातन संस्कृति एवं सम्यता के प्रति निष्ठावान रहे।

महाराज कृष्ण भक्त तथा महारानी रामभक्त थीं। महारानी गणेश कुँवरि की रामभक्ति पर व्यंगात्मक टिप्पणी करने पर महारानी श्री रामलला को ओरछा ले आयीं थीं। ओरछा में श्री रामलला ने अनेकों आश्चर्यजनक तथा कौतुहल पूर्ण कार्य किये। आज ओरछा रामलला का एक विशिष्ट एवं विख्यात तीर्थ स्थल है।

सम्राट अकबर के दरवार में महाराज तिलक माथे पर लगा के जाया करते थे। अकबर को तिलक एवं तिलकधारियों से नफरत थी। सम्राट अकबर ने एक घोषणा दरबार के अन्दर ही की- ÷ आगामी किसी भी दरबार में कोई तिलक लगाकर नहीं आयेगा।[1] ÷ दरबार लगा, उस दरबार में कोई तिलक लगाकर नहीं आया, किन्तु स्वाभिमानी बुन्देला वीर महाराज मधुकर शाह ने उस दिन जो तिलक लगाया वह अभूतपूर्व था।[2] महाराज ने नाक की नोक से लेकर भाल तक तिलक लगाया, और दरबार में उपस्थित। अकबर आग केवल मधुकर शाह का माथा ऊँचा और विशिष्ट तथा एक मात्र तिलक से बादशाह तिल मिलाया। मधुकर शाह को बागी घोषित करने तथा दण्डित करने की आज्ञा दी गई।

मैं बादशाही से अधिक परमात्मा को इष्टकर मानता हूँ, इस तिलक धारण हेतु मुझे गुरू की आज्ञा है। उसकी आज्ञा की तुलना में आपकी आज्ञा तुच्छ है। मैं खड़ा हूँ ! जिसमें साहस हो मेरा माथा लोहे से दागे? आज सब बुन्देला वंश का पराक्रम देखें।
सम्राट अकबर ने स्वयं शाह के शौर्य को सराहा।[3]
महाराज मधुकर शाह ने 1591-1592 ई. में महाप्रयाण किया।[4]

महाराज वीरसिंह देव (प्रथम)- (1606-1627)- प्रतापी एवं अति लोकप्रिय नरेश महाराज वीरसिंह बुन्देला ने अकबर महान की सत्ता को भी स्वीकार नहीं किया, अपनी छोटी जागीर बड़ौनी का अपने भुजवल के आधार पर विस्तार किया। अकबर के अतिशय प्रिय सैन्य अधिकारी नीतिज्ञ एवं विद्वान अबुल फजल का बध किया। 12 अगस्त सन् 1602 को इस घटना के पश्चात् उन्हें अकबर के कोपभाजन होने के कारण कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। महाराज ने दुर्भिक्ष काल में जनता की सहायता करने के उद्देश्य से एक साथ बावन निर्माण कार्य कराये, जिनमें अनेक किले थे।[5]

महाराज वीरसिंह कुशल प्रशासक प्रजापालक होने के साथ ही साथ अतुलनीय साहस एवं पराक्रम के पर्याय थे। उनके कार्यकाल को स्वर्गयुग की संज्ञा प्रदान की गई थी। जहाँगीर बादशाह ने उनका भव्य स्वागत किया था। उदारता तथा न्याय प्रियता में उस सामन्ती युग के सम्भवतया वे भारतीय स्तर में प्रथम कोटि के न्यायाधीश थे, अपने पुत्र को अपराध सिद्ध होने पर प्राण दण्ड दिया। उनका एक विधि विनिश्चय अत्यन्त लोक प्रिय है- सब विधानों से ऊपर भी एक पारलौकिक विधान है। 1627 ई. में उनका निधन हो गया। ओरछा नरेश जनता के दिलों में आज भी जीवित है।

हरदौल राजा– राजा जुझार सिंह के लघु भ्राता हरदौल विमाता पुत्र थे। कुंजा और जुझार सहोदर थे। हरदौल का जन्म 1608 ई. में हुआ था। पराक्रम के पर्याय शौर्य और साहस की साक्षात प्रतिमूर्ति

हरदौल ने अपने भ्राता जुझार सिंह को शेर के पञ्जों से मुक्त कराया था। जहाँगीर को महावत खान की कैद से अपनी बुद्धि, बल और निर्भीकता के आधार पर मुक्त करा लिया था कतिपय एकाधिक कारणों से हरदौल को अपने ज्येष्ठ भ्राता जुझार सिंह का स्नेह प्राप्त न हो सका। जबकि जन सामान्य के दिलों के राजा हरदौल ही थे। अपने युद्ध कौशल से बादशाह शाहजहाँ की सेना को उन्होंने परास्त किया था। [6] हरदौल के विरूद्ध मुगल सेना के अधिकारी के द्वारा षड़यंत्र किया गया। जुझार सिंह की रानी श्रीमति चम्पावती के विषय में अनैतिक सम्बन्धों की शंका उत्पन्न कर दी, शंकालु जुझार सिंह ने रानी से हरदौल को विष पान कराने की शर्त रखी, कि तभी बहुरानी की पवित्रता पर विश्वास करेंगे। रानी को विष मिश्रित भोजन बनाने के लिये जुझार सिंह ने विवश किया, हरदौल के संज्ञान में आने पर हरदौल विष मिश्रित भोजन अपनी भाभी के करों से ग्रहण करने हेतु तैयार हो गये, विलाप करते हुये भाभी ने भोजन परोस दिया, हरदौल के मुख मण्डल पर अलौकिक कांति छा गई। हरदौल परमगति को प्राप्त हुये, और अमर हो गये। रानी ने भी भोजन किया, उनका भी प्राणान्त हुआ। उनका अनुगामी मेहतर ने भी वही भोजन किया, उसका भी प्राणान्त हुआ। इस त्याग तथा बलिदान की गाथा भारतवर्ष के अंर्धांश से भी अधिक भाग में प्रचारित हो गई।

हरदौल के पवित्र देवायतन प्रत्येक ग्राम में नर्मदा के उत्तर में निर्मित स्थलों पर उनकी अश्वारूढ़ प्रतिमाऐं और मेहतर की समीपस्थ चौंतरिया पाई जाती है। कनिंधम के अनुसार हरदौल की प्रतिमा, लार्ड हेस्टिंग्ज के सैन्य अधिकारियों को सिंध नदी के किनारे चौंदपुर सोनारी में तथा सर विलियम स्लीमैन के नौकर को लाहौर के समीप अनेक स्थानों पर दिखाईं दीं। [7]

महाराज जुझार सिंह– महाराज जुझार सिंह (1627-1634 ई.) प्रथम बुन्देल वंश ने मुगल सत्ता के शाहजहाँ का साहस तथा शौर्य पूर्ण सामना किया और सन्धि का प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। 1635 ई. में ओरछा राज्य को त्याग कर शहंशाह धामौनी में शरण ग्रहण की। मुगल सेना पीछा करती रही, परिवार के सदस्यों सहित सभी को अपार कष्ट उठाने पड़े। मुसलमानों ने दो पौत्रों का बलात धर्म परिवर्तन कराया। एक अन्य पुत्र उदयभान का वध कर दिया गया। गोंड़ों ने विश्वासघात किया और महाराज जुझार सिंह तथा ज्येष्ठ पुत्र विक्रमादित्य का निद्रा निमग्न स्थिति में वध कर दिया।[8] महाराज जुझारसिंह ने सर्वगुण सम्पन्न अपने आज्ञा कारी लघु भ्राता हरदौल के साथ न्याय नहीं किया। उस समय परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि यदि हरदौल चाहते तो जुझार सिंह को अपदस्थ करके स्वयं को राजा घोषित कर सकते थे। महाराज जुझार सिंह एक अत्यंत असत्य षड़यंत्र के शिकार हुये।

महाराज चम्पत राय (1637-41ई.)– मुगलों को बुन्देल रक्त के ताप की असहनीय तपन की अनुभूति उनके ट्टिढ़बृती साहस की साक्षात प्रति मूर्त्रि महाराज चम्पत राय के द्वारा करायी गयी। जागीर की आय मात्र 12000-00 रू. वार्षिक ही थी, इनका अंश अंततः 350-0 रू. ही था। परंतु -असंतुष्टा द्विजा नष्टा, तुष्टा नष्टा न राधिपाः।

दस पाँच सहगामियों के साथ अभियान प्रारंभ किया।[9] आय एवं सैन्यबल में वृद्धि आरम्भ हो गयी। पराक्रमी चम्पतराय के साहचर्य हेतु युवा आकर्षित हुये। शाहजहाँ की सेना के द्वारा महिलाओं के साथ दुराचार, स्वजातियों की दुरवस्था एवं तिरस्कार के कारण चम्पतराय ने मुगलों के समूल संहार की सुदृढ़ प्रतिज्ञा की। यद्यपि कतिपय कारणों से ओरछा राजवंश असहयोग कर रहा था। चम्पतराय इस समय मुगलों तथा ओरछेश पहाड़ सिंह, दो शक्तियाँ, दोनों प्रबल शक्तियों से युद्ध हेतु विवश थे। माता की उचित सम्मति से शाहजहाँ से सन्धि की। किन्तु यह कूटनीति भी अधिक समय तक नहीं चल सकी। [10]

मुगलों से युद्ध करते समय इनका अतीव पराक्रमी एवं युद्ध कौशल में प्रवीण नवयुवा पुत्र शालिवाहन भी वीरगति को प्राप्त हुआ। शालिवाहन की मृत्यु से माता पिता के अतिरिक्त अन्य समस्त जन समुदाय ने अपार क्षति की अनुभूति किया। बुन्देलखण्ड के देश प्रेमी व्यक्तियों के हृदयों में शोक व्याप्त हो गया। [11]

1649 ई. में महाराजा चम्पतराय और रानी सारन्धा जू को छत्रसाल के रूप में पुत्र की प्राप्ति हुई। चम्पतराय का जीवन अपार कष्टमय था। जंगल ही जीवन था आकाश ही छत थी। त्याग और वलिदान साक्षात परीक्षक थे। चम्पतराय एक मात्र परिक्षार्थी थे। इन्ही विषमताओं में बालक छत्रसाल का पालन व पोषण हो रहा था।[12]

इन्हीं परिस्थितियों में चम्पतराय एक बार सन् 1656 में पहाड़सिंह की सुरागरशी से मुगल सेना द्वारा घेर लिये गये। शत्रुओं की संख्या अधिक थी, बचकर निकल जाने की आशा कम थी। भाग्यवश इस समय पुत्र छत्रसाल इनके साथ नहीं थे। युद्ध आरंभ हो गया। वृहत सैनय बल से 50-60 व्यक्तियों द्वारा कुछ समय तक युद्ध हुआ। सभी हताहत हुये। चम्पतराय युद्ध कर रहे थे, रानी ने क्षण भर विचार किया और अपनी पिस्तौल से चम्पत राय को स्वर्ग यात्रा पर भेजकर स्वयं एक गोली से आत्म वध किया और पति की सहधर्मिणी सहगमिनी बनी। शत्रु और शत्रु सेना देख कर अवॉक.....। मृत्यु के सम्बन्ध में एक मत यह भी है कि उन्होंने स्वयं प्राणों का उत्सर्ग किया था। इस समय बालक छत्रसाल की अवस्था सात वर्ष थी और वे अपनी ननिहाल में शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। [13]

रानी सारन्धा तथा राव चम्पत राय को मुगल जीवित अवस्था में स्पर्श तक नहीं कर सके, विश्व स्तरीय वीरत्व का उदाहरण प्रस्तुत करके वे मेवाड़ की महारानी पद्मिनी की कोटि में स्थापित हो गई। राव चम्पतराय के कुँवर छत्रसाल एवं महाराणा प्रताप के कुँवर अमर सिंह की वाल्यावस्था की पीड़ाओं और कष्टों में पर्याप्त साम्य है। [14]

महाराज छत्रसाल– महाराज छत्रसाल के शौर्य, पराक्रम और साहस की महिमा का वर्णन करना अथाह पयोनिधि की थाह लेने के प्रयास के समान है। अनेकों उच्च कोटि के विद्वानों, महाकवि भूषण, साहित्यकार एवं राजनीतिज्ञ श्री सम्पूर्णानन्द जी आदि-आदि लेखकों ने इस महान व्यक्तितत्व के वीरत्व, कावित्व एवं कृतित्व पर ग्रन्थों की रचना की है। उनका इस भारत भूमि पर अवतरण एक अनिर्वचनीय शुभ संयोग रहा।

उनका जन्म, शैशव, कैशौर्य, यौवन, जरा एवं महाप्रयाण सब इतिहास ही तो है, सम्पूर्ण जीवन जाग्रत इतिहास ही तो है, वे स्वयं आज प्रासंगिक हैं, इतिहास हैं और भविष्य में रहेंगे। छत्रसाल की आयु मात्र 14 वर्ष थी। पित्र प्राणन्त के समाचार ने पुत्रों की भावनाओं को ऐन्द्रजालिक नागों की भाँति आहत किया।[15] वे प्रतिकार हेतु व्यग्र हो गये। छत्रसाल ने मालवा तथा बुन्देलखण्ड के राजकुमारों को औरंगजेब की धर्मान्तिरण नीति के विरूद्ध संगठित किया। एटकिसन के अनुसार औरंगजेब के विरूद्ध छत्रसाल प्रधान अधिनायक निर्वाचित हुये और बुन्देलों के प्रमुख बनाये गये। [16]

छत्रसाल ने गढ़कोटा, बंसा तथा बड़ी पिटारी पर विजय प्राप्त की, सईद बहादुर को पराजित किया। सिन्ध, ग्वालियर, कंजिया, दयापुर तथा दमोह को परास्त किया। उन्होंने एक सौ बैलगाड़ियों पर बादशाह के लिये जा रहे उपहारों पर अपना अधिकार कर लिया इस पर तहाउर खान को वृहद तुर्क सेना के साथ भेजा गया। छत्रसाल ने उसे पराजित किया।

बुन्देल वीर ने कालिञ्जर पर अधिकार कर लिया।[17] कालिञ्जर पर अधिकार का तात्पर्य सदैव से ही उत्तर भरत पर अधिकार समझा जाता रहा है। बाँदा, हमीरपुर तथा सम्पूर्ण झाँसी डिवीजन पर आधिपत्य हो गया। वास्तव में पूर्व तथा चम्बल के दक्षिण बघेलखण्ड तक पूर्ण अधिकार उन्होंने जालौन, एरछ, कचर, कमर, कालपी उरई और भदेख पर वर्चस्व स्थापित किया। बरहट वालों को प्रतिज्ञा भंग का सबक सिखाने के बाद कोटरा के सैय्यद लतीफ ने लगभग 2 माह मुकावला किया किन्तु अन्ततः एक लाख रूपया देकर सन्धि की और माफी मांगी।[18]

महोबा के जमींदारों ने लगभग बीस ग्रामों के निवासियों को छत्रसाल के विरूद्ध शस्त्र उठाने के लिये उत्प्रेरित किया। समीपस्थ ग्राम दारीरा में युद्ध हुआ, शस्त्र विद्या में अनुभवहीन सैकड़ों ग्रामीणों का प्राणान्त हुआ। मुस्करा पर आक्रमण किया, इसके बाद बुन्देलाबीर जलालपुर चले गये।[19]

इस समाचार के पश्चात अब्दुल समद विशाल सेना के साथ बुन्देलखण्ड को विनष्ट करने के लिये भेजा गया। छत्रसाल ने औरंगाबाद के बल्देव को दायें पार्श्व पर और अपने बन्धु की तरह रायमन दौवा को बायें पार्श्व में नियुक्त किया स्वयं को केन्द्र में रखा। दीर्घावधि तक घमासान युद्ध में शाही सेनाओं को पूर्णतः विनष्ट कर दिया। उनके अधिनायकों को बन्दी बना लिया, और जो बुन्देलखण्ड को विनष्ट करने आये थे, उनको बुन्देलखण्ड के नर नाहर ने तब तक मुक्त नहीं किया जब तक परिमुक्ति धन प्राप्त नहीं कर लिया। छत्रसाल भी आहत हुये, पन्ना आये।[20]

स्वस्थ होने पर बहलोल खान को दो बार परास्त किया। भेलसा आदि पर आधिपत्य किया। पुनः खान ने सामाना किया किन्तु उसे पीछे हटना पड़ा। पराजयों की आत्मग्लानिवश उसने धामौनी में आत्म हत्या कर ली। उसके मरणोपरान्त छत्रसाल ने कोटरा, जसु, गैघाता पर आधिपत्य करके महोबा की ओर अग्रसर हुये, मुराद खान जो दलेल खान के साथ था उसका सहयोगियों सहित वध कर दिया।[21] दलेल खान प्रसन्न था उसने अपनी प्राण रक्षा की खुशी में सदैव निरन्तर चौथ देना स्वीकार किया। बुन्देला - अस्त्र शास्त्रों ने अब मटौन्ध की ओर उन्मुखता की। किले पर अधिकार कर लिया। नगर एवं किला धौर्रा व थुरहट, कोटरा, बाकीजरा, पलगाई तथा जलालपुर पर आधिपत्य किया। बहलोल खान के उत्तराधिकारी असमद खान को पराजित किया। शाह कुली खान आये, उनकी भी वही दुर्गति हुई।

चम्बल और जमुना के पश्चिमी प्रदेश के एक छत्र स्वामी छत्रसाल हो गये। 1707 ई. में बहादुर शाह तख्त नशीन हुये, खान-खाना के माध्यम से बहादुर शाह ने छत्रसाल को आमंत्रित किया और जितना प्रदेश उन्होंने अपने अधिकार में कर लिया था, वह एक लाख स्टर्लिंग मूल्य का था। बहादुर शाह ने महाराज छत्रसाल को देने की पुष्टि की।

1732 ई. में इलाहाबाद के सूबादार मुहम्मद खान बंगस ने आक्रमण किया। बाजीराव पेशाबा की सहायता से बंगस को जैतपुर के दुर्ग में निरूद्ध कर लिया गया उसके सैनिकों को भोजन नहीं मिला, मरणासन स्थिति में उन्हें चूहों तथा कुत्तों के मांस से अपनी क्षुधा शान्त करना पड़ी। कभी न आने की कसमें खाने पर उन्हें मुक्ति प्रदान की गई।

डॉ. सम्पूर्णानन्द जी एवं अन्य विद्वानों के मतानुसार बुन्देलों में महाराज छत्रसाल के पश्चात एक भी ऐसा पराक्रमी वीर पैदा नहीं हुआ, जिसे इतिहास में स्मरण किया जाता। मैं सहमत नहीं, बुन्देलखण्ड की शौर्य गाथाओं 1857-1876 (मुद्रणान्तर्गत) लेखक की पुस्तक में 50 से अधिक बुन्देल वंशजों के विषय में विस्तृत विवरण स्पष्ट सन्दर्भों तथा प्रमाणों सहित दिया गया है। 1826 तथा 1842 के बुन्देला विद्रोह के विषय में ख्याति लब्ध इतिहास विद् दीवान प्रतिपाल सिंह जू देव का लेखन उल्लेखनीय है।[22] अन्य विद्वानों ने भी बुन्देलों के विषय में सराहनीय एवं पठनीय टिप्पणियाँ की हैं।

विद्वान लेखक ई.टी. एटकिन्सन ने बुन्देलों के विषय में अपना मत व्यक्त करते हुये लिखा है- बुन्देले अहंवादी, युद्धप्रिय तथा आक्रमक होते हैं, यदि वे असंतुष्ट हो जाँय तो आपस में अथवा अपने शासक से विवाद करने के लिये सदैव तैयार रहते हैं। यह

लोग अधिकांशतः बुन्देलखण्ड के अग्रणी एवं प्रतिनिधि परिवारों के वंशज हैं। वे अपने सम्मान के प्रति अधिक आशक्ति रखते हैं, किन्तु शारीरिक कार्य करने से बचते हैं। इनमें अधिकांशतः राव अथवा दिमान हैं। उनके पास आनुवांशिक जागीरें अथवा राजस्व मुक्त उबारी हैं। [23] परमार तथा धंधेरे भी इसी कोटि में आते हैं।

एटकिंसन आगे लिखते हैं कि बुन्देलों को आदर सहित सम्मानीय पदों से सम्बोधित किये जाने की अपार अनुरक्ति है, जिसे सभी जानते हैं। क्षेत्रों में राव साहवान तथा दीवान साहवानों का बाहुल्य है। एटकिंसन ने बुन्देलों की बटोटा तथा भूमियावत प्रथा का भी अत्यन्त सटीक एवं रोचक वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है, जब कोई बुन्देला भूमियावत प्राप्त करता है, वह अपने अनुगामियों को एकत्र करता है, तो जब तक वह अपनी शर्तों के अनुसार शान्ति प्राप्त नहीं कर लेता है, तब तक वह अन्धाधुन्ध आक्रमण एवं हत्यायें करने में संलग्न रहता है। [24]

1857-58 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के राष्ट्रीय अभियान में भी बुन्देलों की उल्लेखनीय भूमिका रही है, केवल उत्तर प्रदेश के झाँसी, जालौन, बांदा तथा हमीरपुर जिसमें ललितपुर भी सम्मिलित है, के जनपदों में अनेक बुन्देल वीरों ने पराक्रम का परचम लहराया है। 1842 ई. में ओरछा नरेश के प्रपौत्र राजा पारीक्षत, जैतपुर ने बुढ़वा मंगल के दिवस पर ग्राम सूपा तहसील चरखारी में अंग्रेजी शासन के विरूद्ध एक विशाल सभा का आयोजन किया था। अनेक बुन्देलों ने उसमें भाग लिया था। उसमें अतुलित बलशाली वीर बरजोर सिंह बुन्देला ग्राम बिलायाँ ने भी भाग लिया था, अंग्रेज सरकार ने तेरह वर्षों तक घेरा बन्दी करने के पश्चात भी रोम नहीं छू पाया वह वीर 1869 में लू से मृत हुआ।[25]

इसी प्रकार राजा मरदन सिंह जू देव बानपुर, राजा बखत बली शाहगढ़ जवाहिर सिंह परमार नानिकपुर, जवाहर सिंह कटीली, दीवान शत्रजीत सिंह नारहट, दीवान सा. दरयाव सिंह पाली, विक्रमाजीत सिंह, देशपाल सिंह आदि पचासों बुन्देले वीरों ने स्वतंत्रता के यज्ञ में अपने आस्थान समर्पित कर दिये और सहर्ष प्राणों की आहुतियाँ दीं।

महाराज छत्रसाल के विषय में कवि भूषण ने उन की तलवार एवं बरछी के पराक्रम का अलंकारिक वर्णन किया है-

निकसत म्यान सें मयूखें प्रलैभानु कैसी,
फारें तमतोम से गयन्दन के जाल कों।
लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिन सी,
रूद्राहिं रिझावै दै दै मुण्डन के माल कों।
लाल क्षितिपाल छत्रसाल महा बाहुबली,
कहाँ लौ बखान करों तेरी करबाल कों।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
कालिका सी किलकि कलेउ देति काल कों। [26]

उपर्युक्त प्रशस्ति यद्यपि तलवार के संदर्भ में की गई है, किन्तु तलवार कोई यंत्रीकृत उपकरण नहीं है, महाराज छत्रसाल के सामरिक कौशल तथा भुजबल के वौरीष्टस का परिचयात्मक उल्लेख है। इसी प्रकार भूषण ने उनकी बरछी की प्रशस्ति भी छत्रसाल दशक में की है।

भविष्य द्रष्टा- एटकिंसन का मत है कि महाराज छत्रसाल ने देखा कि हमारे इस साम्राज्य की असंगठित शक्ति सम्भवतया मरहठों की सहायता के अभाव में यह उतनी ही शीघ्रतापूर्वक समाप्त हो सकती है, जितनी शीघ्रता पूर्वक इसे अध्यासित किया गया है, इसलिये उन्होंने बुद्धिमत्ता पूर्वक दृढ़ निश्चय किया और मरहठों को इसके परिरक्षण हेतु उन्हें इसमें अंश देकर रूचि उत्पन्न की। शेषाँश अपने उत्तराधिकारियों के लिये रखा। [27]

उन्होंने वसीयत की, तृतीयाँश पेशवा बाजीराव को दिया उसमें यह प्रतिबन्ध रखा कि मरहठों को हमारे उत्तराधिकारियों एवं अग्रिम वंशजों के राज्य की सुरक्षा करते हुये उसे अक्षुण्य रखना होगा। पेशवाओं को कालपी, हट्टा, सागर, झाँसी, सीरोंज, कूना, गढ़ाकोटा तथा हरदीनगर दिये, इनका वार्षिक राजस्व लगभग इकतीस लाख था, गंगाधर बाल इसके गर्वनर नियुक्त किये गये थे। [28]

महाराज छत्रसाल के जीवन के महान क्रियाकलापों, चारित्रिक विशेणओं, अदभुत साहसिक उपलब्धियों, शौर्य तथा पराक्रम के अतिरिक्त उनकी करुणामयी उदारता तो विख्यात रही ही है, वे एक श्रेष्ठ कवि भी थे। योगिराज प्राणनाथ के शिष्य थे, गुरू के ऊपर उन्हें अटल श्रद्धा थी, स्वयं महाराज छत्रसाल इन्हीं के आदेश से दिग्विजय हेतु अग्रसर हुये थे। महाराज छत्रसाल की मृत्यु के विषय में अनेक कथानक तथा किंवदन्तियाँ प्रचलित हो गईं। महाराज के महान कार्यों के विषय में श्री बलभद्र जी की पंक्तियाँ अत्यन्त सुविचारित हैं।

नहिं तात न भ्रात न साथ कोऊ, नहिं द्रव्यहु रंचक पास हती।
नहिं सेन हुँ साज समाज हती, अरु काहु सहाय जराहु न ती।।
न हिम्मत किंयत सों अपनी, सुलई धरती औ बढ़ाई रती।
बलभद्र भनै लख पाठक वृन्द, हिये में गुनौ छत्रसाल गती।। [29]

डी.एल.ड्रेक ब्रौकमैन का अभिमत - डी.एल. ड्रेक ब्रौक मैन, आई.सी.एस. के अनुसार बुन्देले सदैव से प्रतिभावान भू-अधिपति के रूप में स्थापित है, [30] विशेषकर ललितपुर तथा छतरपुर जनपदों में इनका वर्चस्व एवं प्रभाव सर्वाधिक है। आगे उनका मत है कि प्रभावशाली राजपूत भू-आधिपति प्रायः प्रबन्धन की दृष्टि से निम्न सिद्ध हुये लोधी कहावत में एक तथ्य प्राय प्रस्फुटित हुआ है-

''दीवान के पुत्र से अपने ग्राम के सम्बन्ध में जानकारी होने की आशा नहीं की जा सकती।''[31]

बुन्देले अपनी सुदीर्घकालीन पुराजन परम्पराओं की महानता के शनैः शनैः क्षरण होते प्रभाव को यथावत रखने हेतु

संघर्षरत हैं ताकि प्राचीन शानो शौकत यथावत बनी रहे। स्वाभिमानी, आत्माभिमुखी वे यह चाहते हैं कि जिन्हें वे स्वयं अपने से निम्नतर समझते हैं, वही उन्हें विशिष्ट सम्मान युक्त शीर्षकों से सम्बोधित करें, जिससे उनकी श्रेष्ठता प्रकट हो।[32] उनका इन सम्मानों के प्रति प्रेम सर्व विदित है।

राजपूतों का संघर्षशील यौद्धिक तथा आक्रामक चरित्र रहा है उनके इस सम्मान के प्रति प्रेम ने उन्हें इसकी रक्षार्थ हिंसात्मक गतिविधियों की ओर अग्रसर होने के लिये विवश किया, जिससे मैं यह कहने के लिये बाध्य हूँ कि प्रत्येक ग्राम में डाकू प्राप्त होने की सम्भावनाऐं हैं। [33] आगे ब्रौक मैन साहब फरमाते हैं-

÷किन्तु दूसरी ओर, उनकी समस्त कमियों के बावजूद, जो कि वास्तव में ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण ही अधिकांशतः उत्पन्न हुई हैं, बुन्देलों में अत्यन्त सुदृढ़ सम्मानसंहिता तथा शिष्टाचारिता है, यह महानताऐं उन्हें अतीव आनन्ददायक व्यक्ति बनाती हैं, उनसे व्यवहार करने में आनन्द प्राप्त होता है, यह सद्‌गुण उन्हें पृथ्वी का प्राकृतिक अधिपति बनाता है और जन सामान्य के व्यक्तियों द्वारा भी सर्वोत्तम भूमिपति स्वीकार किया जाता है। [34] अंततः ब्रौक मैन साहब ने बुन्देलवंश की श्रेष्ठता को स्वीकार करते हुये, समग्ररूपेण विचारोपरान्त उनके अनेक सद्‌गुणों की प्रशंसा की है।

कर्नल जेम्स टॉड का अभिमत- गहरवार राजपूतों को उनके राजस्थानी भ्रातागण बहुत कम जानते हैं, वे उनके प्रदूषित खून के कारण उनके साथ मिश्रित नहीं होना चाहेंगे, यद्यपि पराक्रमी योद्धा होने के कारण वे उनके सहभागी होने के अधिकारी हैं। गहरवारों का मूल देश, काशी के प्राचीन राजवंश में है। इनका महान पूर्वज खोरताज देव था, इनकी सातवीं पीढ़ी में जय सोन्दा थे, इन्होंने विंध्यवासिनी देवी के स्थान पर भव्य आत्म त्याग पूर्ण संस्कार सम्पन्न किये, इनके परिणाम स्वरूप इनके पुत्र को बुन्देला संज्ञा पद प्रदत्त किया गया। बुन्देलों ने गहरवार नाम पर अधिकार कर लिया और बुन्देलखण्ड के वृहत क्षेत्र, और वृहत शाखाओं पर आवासित हो गये। चन्देलों के ध्वंसावशेषों के प्राचीन नगरों कालिञ्जर, मोहिनी तथा महोबा पर इन्होंने अपना अधिकार कर लिया। [35]

मानवीर बुन्देला के उत्कर्ष का दिनाङ्क लगभग 1200 ई. था, तेरहवीं पीढ़ी में मधुकर शाह ने वेतवा के किनारे ओरछा राज्य की स्थापना की, उनके पुत्र वीर सिंह ने विचारणीय शक्ति प्राप्त कर ली थी। ओरछा बुन्देलों का प्रमुख साम्राज्य था। किन्तु इसके संस्थापक ने स्वयं कभी समाप्त न होने वाली अपकीर्ति का कृत्य किया, अबुल फजल की हत्या कर दी, जो अकबर महान का मित्र तथा इतिहासकार था एवं हिन्दुओं का अर्थशास्त्री तथा प्रवक्ता था। [36]

अकबर के शासन काल में बुन्देलों ने प्रत्येक युद्धों में प्रशंसनीय भागीदारी की, जो अतीव प्रतिभा के कार्य थे। यहाँ तक कि राजस्थान के महान वीर राजाओं ने भी इतने शौर्य पूर्ण पराक्रम तथा विश्वसनीय कृत्य नहीं किये जितने कि बुन्देलों ने सम्पन्न किये। [37]

कर्नल जेम्स टॉड के मतानुसार शौर्य और पराक्रम के दृष्टिकोण से बुन्दलों ने राजस्थान के राजपुत्रों से भी अधिक सराहनीय एवं विश्वसनीय कार्य किये हैं। कर्नल टॉड ने अपनी 1280 पृष्ठीय ÷पुस्तक एनल्स एण्ड एण्टी कुटीज ऑफ राजस्थान÷ में राजस्थान के राजपूतों के विषय में लिखा है। इस महान लेखक ने भी अवर्णनीय शब्दों बुन्देलों की प्रशंसा की है। उनके साहस और शौर्य की सराहना की है।

24 जून 1864 को उपायुक्त ललितपुर के द्वारा यह डोंगरा उबारी के विषय में यह टिप्पणी की गई है कि मान सिंह के शासन काल में बसंत राय दैलवारा से गये और डोंगरा ग्राम पर अधिकार कर लिया, और उसके पश्चात उनके परिवार ने जागीर में ग्रामों की वृद्धि करना प्रारम्भ कर दिया। संवत 1869 (1812 ई.) में कर्नल बैप्टिस्ट ने जिले को जीत लिया और परिवार पर 3966 रूपये उबारी पर लगान आयद कर दिया। जिसे बाद में ग्वालियर दरबार द्वारार कम कर दिया गया। इस पर टिप्पणी की गई कि जिले (ललितपुर) में यह ठाकुर लोग (बुन्देले) सर्वाधिक आक्रमक हैं। [38]

जून 1864 में नन्हें दीवान बुन्देला, जो बुन्देला क्रान्तिकारी श्री देशपत सिंह, जैतपुर जिला हमीरपुर के चचेरे भाई थे, उनके विषय में सेक्रेटरी ने आई.जी. पुलिस को लिखा कि नन्हें दीवान के विरूद्ध जो पुलिस प्रबन्ध किया जाय, उसका व्यय कुछ शासन करे तथा कुछ अंश ग्राम के निवासियों से वसूल किया जाय। एक हेड कान्स्टेविल को 15.00रू. प्रत्येक कान्स्टेविलों को 10.00रू. के हिसाब से 6 को 60.00रू. कुल 75.00रू. मासिक भुगतान किया जाय। आगे यह आशङ्का व्यक्त की गई है कि इस व्यवस्था को लागू करने में केवल जिद्दी बुन्देलों के कारण ही रूकावट आने की सम्भावना है। .... Since only obstinate application of the aet could over come an obstinate people like the Boondelas. [39]

सन्दर्भ / संकेत

1. अशान्त, श्री मोतीलाल त्रिपाठी- कृति- ओरछा दर्शन
2. गजेटियर झाँसी (1965)
3. साहू, श्री श्यामलाल-विन्ध्य प्रदेश के राज्यों का स्वतंत्रता संग्राम
4. कनिंघम, मे.ज. ए. कनिंघम- आकिलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डियाः रिपोर्टर
5. डॉ. सम्पूर्णानन्द- महाराजा छत्रसाल
6. एटकिंसन, ई.टी. बी.ए.- स्टैस्टीकल एकाउण्ट ऑफ दी नॉर्थ वेस्टर्न आविंसेज ऑफ इण्डिया, भाग-1 बुन्देलखण्ड
7. दीवान प्रतिपाल सिंह- एक आख्यान
8. प्रेस लिस्ट, ऑफ बुन्देलखण्ड लेखक डॉ. जी.एन. सेलेटोरे
9. कर्नल टॉड, जेम्स- एनल्स एण्ड एण्टीकुटीज ऑफ राजस्थान

सन्दर्भ

1. अशान्त- पृष्ठ- 21, 2. वही- पृष्ठ- 38-39
3. वही, 4. झाँसी गजेटियर- पृष्ठ- 42
5. साहू- पृष्ठ- 39, अशान्त- 49
6. अशान्त पृष्ठ- 54, 7. कनिंघम- 163
8. डॉ. सम्पूर्णानन्द- पृष्ठ- 5-6
9. वही- पृष्ठ- 15, 10. वही- पृष्ठ 10-11
11. वही, 12. वही, 13. वही, 14. वही पृष्ठ- 15
15. एटकिंसन- पृष्ठ- 25, 16. वही, 17. वही
18. वही- पृष्ठ- 26, 19. एटकिंसन- 26, 20. वही
21. वही, 22. दीवान प्रतिपाल सिंह
23. एटकिंसन- पृष्ठ- 329, 24. वही- 330
25. प्रेस लिस्ट-पत्रावली सं. 112
26. डॉ. सम्पूर्णानन्द- पृष्ठ- 48
27. एटकिंसन- पृष्ठ- 27-28
29. डॉ. सम्पूर्णानन्द- पृष्ठ- 68
30. झाँसी गजेटियर (1909)पृष्ठ 32, 31. वही- 127
32. वही पृष्ठ 127-128, 33. वही- पृष्ठ- 28
34. वही- पृष्ठ- 12, 35. कर्नल टॉड- पृष्ठ- 90
36. वही- पृष्ठ- 90-91, 37. वही- पृष्ठ- 91
38. प्रेस लिस्ट- पत्रावली संख्या- 109
39. वही- पत्रावली संख्या- 109

-कैरोंखर हाउस, गुरसरांय
झांसी (उ.प्र.)

लघु कथा

ठरगजे

-अजीत श्रीवास्तव

एक किसान हतो, ऊके चार चार मौड़ा हते। पै वे मौंड़ा एकऊ पहार से हो कें भी कछु करत धरत न हते। निठल्ले घुमत फिरत रत ते। सो एक दार किसान नें उनखाँ घर से काड़ दऔ,कई इकाऊ नटवा से फिरत रत, काम के ना दाम के, नौ मन अनाज के, जौ तौ नई कै बूढे बाप के हाँथ मजबूत करौ, खा खा के मुटा रये, अब हमाये घर से कढ़ जाऔ कछु कमा के लौटियो सारे जु हरौ, ठरगजे कऊँ के।

सो वे चारऊ घर से कढ़ गये, चलत चलत बिलात दूर एक परदेश में आ गये। सो चरचा करन लगे। कि का करैं, कितैं काम मिलै का काम करें, कित रें, किते खें, किते सोये। ये ई फिकर में चले आ रये तें। कि एक जगा मुनादी हो रई ती, नगड़िया पै एक राजा कौ सिपाई कै रओ तो। राजा के मैलन में धर्म पै बहस हो रई, जो कोऊ ऐसो कुछ धर्म सुनायै जो काऊ नै न सुनो होय सो ऊये भौत इनाम मिलैं औ जमी जागा दई जै। जा सुन के वे चारऊ भौतई खुश हो गये। उननें उतैं जाने को मन बना लओं बै तो हते मूसरचंद सो आंखन-आंखन में इशारौ करन लगे पै एक नै दूसरे से इशारौ से कई कि उतै हम औरे करें तो का करें। सो एक किसान मौड़ा बोलो जैसे हम, वैसई तुम '' सो दूसरे किसान के मौड़ा ने मो सकोड़ कें कई '' ऐसौ कब तक चलै '' ऐसौ कब तक चलै'' सो तीसरो मौड़ा कन लगो ''मुटठा ठेली कब तक चलै'' सो चौथो मौड़ा नै कई जौ लौ चले तौ लौ चलै''

फिर उनन में कई कि राजा के इतै चलै चइये औ जेई जौन मौ से निकरी है सूना दै है सो वे राज दरबार मै पौचे उतै नंबर लगो तो भौतई भीर सुनावे बारन की हती, पै सुनबे वारे पंडत बिद्वान बैठे थे सो जो कोऊँ धर्म चर्चा सुनाये सो बे अगाऊं की किसा सुना देत ते। उन्है राजा पुरानी सुनावे के कारन जेल मै डाल देत तो। सो लैन मैं लगवे के बाद चारऊ भगवे की सोसन लगे तबई इनकौं नंबर आ गऔ सिपाही ने एक को ठैल दयो, सो ऊनै उतै कई ''जैसे हम वैसई तुम'' फिर चिमा गऔ सो विद्वान कछु समझई नई पाये। उये अलग ठांडो कर दओ गऔ दूसरे नै कई ''ऐसो तब तक चलै'' तीसरे ने कई ''मुटठा ठेली कब तक चलै'' चौथे ने सुनाओ जरै जौ चलै तो तब तक चले चारऊ अलग ठाड़े कर दये गये । विद्वान ई कौ अरथ नई कर पाये सो उनने जा कई, ईकौ कछु अरथ नई होत है, जेर में डार दो, राजा उनै जेर में डारवे की आज्ञा दैने वारो हतो कि उनकी रानी बड़ी स्यानी हती। उनै कई जब इन्नै इतै आकै बड़ी हिम्मत सै कई सो ईकौ अर्थ है। औ हमाई समझ में तौ कछु आ रई सो सुन कऔ जाय।

पैले मौड़ा नै कई ''जैसे हम वैसई तुम'', जा तौ राम जू की सुग्रीव से जब मित्रता होवे वारी हती सो सुग्रीव से परिचै पूछो कि तुम को आओ? सो सुग्रीव नै कई ''जैसे हम बैसई तुम'' मानै जैसे तुमाई लुगाई काऊ नै छुड़ा लई वैसई हमाई काऊ नै छुड़ा लई। सो ताली बज उठी राजा नै रानी की तारीफ करी '' दूसरो मौड़ा नै कई ती ऐसो कब तक चलै ईको का कारण है रानी ? रानी नै कई जेई बात सुग्रीव नै राम जू से कई सो राम नें फिर आ बाली खो मार दऔ। दरवार में ताली बजी सबरे सुन कें भौतई प्रसन्न हो गये। राजा ने तीसरे मौड़ा की कानात कौ अरथ पूछों सौ रानी नै समझाओ-जौ प्रसंग मोय लगत मंदोदरी रानी नै राजा रावन से कई कि बिलात दिना युद्ध खों हो गये जा ''मुटठा ठेली कब तक चलै'', हमाये मौडन खों तुम जबरन युद्ध मै ठेल देत वै मार देत। सौ चौथे मौड़ा नै जौन कई ती जब लौ चलै तव तक चलै ईको अरथ है मंदोदरी नैसीता खो राम खौ दैबे कई सो रावन भन्ना उठौ कन लगौ गुस्सा सें कि जब तक चलै तब तक चलै।

-राजीव सदन मुहल्ला,टीकमगढ़ 472001
मो 8827192845

वृद्धाश्रम

–डॉ. महावीर प्रसाद चंसौलिया

अब वृद्धाश्रम खुल गये बने वृद्ध आगार
जैसे गौशाला रहें, बूढ़ी गौ लाचार।।
आजीवन ऐसे जुते, ज्यों तेली का बैल।
आशा का चश्मा चढ़ा, चलते थकी न गैल।।
बहुत किया अब थक गए है जीवन की शाम।
अविरल गति करते रहे, देखा शीत न घाम।।
है घर अब किल्लत बड़ी, हो हल्ला बहुताय।
सुनें न कोई काहु की, निज निज राज कराय।।
अनुशासन की हीनता, बालक सुने न बैन।
भवन भार बैठे बने क्षणिक मिले नहीं चैन।।
अब प्रभु का सुमिरन करो हो विरक्त निष्काम।
चौथेपन विश्राम ले, तजो सकल गृह काम।।
जीवन का ठहराव अब, पिता करो आराम।
गृह में नहिं सुख शान्ति है, चलों वृद्ध सुख धाम।।
वहां प्रात सब जागकर, लेते हरि का नाम।
सकल शौच नियमित करें, पुनि भोजन विश्राम।।
स्वप्न दिखायें स्वर्ग सुख, आश्रम सुन्दर धाम।
मिलें वृद्ध विद्वान अरु, सत्संगति ही काम।।
बटवारें में मात पितु मासिक बार हिसाब।
घड़ी पेण्डुलम से डुलें, एक थल टिकन न पांव।
पाले पितु बहु सुत सुता श्रम कर उन्हें पढ़ाएँ।
पिता एक सिर भार है, बृद्धाश्रम टरकाएँ।
कुछ पीड़ित संतान से, कुछ लावारिस जाएँ।
विवस पड़े बृद्धाश्रम, तजि राम सहाएँ।।
चिंता में दिन कट रहै, जैसे कारागार।
जिमि अशोक वन सियरही, पिय पद पदुम निहार।।
संवेदन की हीनता, नहिं संबन्ध विचार।
मात पितहिं सम्मान नहिं, मानवता गई हार।।
पितृपक्ष करते सुजन, पितृ हेतु जलदान
'महावीर' वे अधमतर, पितु तजि देव समान।।

-ग्राम पो. बंगरा, जिला-जालौन
मो. 8004776067

चौकड़िया

– डॉ. लालजी सहाय श्रीवास्तव

बिटिया सुख-दुख में भी प्यारी-सारे जग सें न्यारी।
गउ, जैसी है भोरी-भारी-चन्दा सी उजयारी।।
बिटिया हुइए तौ कल हुइए-नइँ तौ निस-इंदयारी।
'लाल' सदा बिटिया रई जग में-दो कुल तारन हारी।।

- गंगा सदन, न्यू इंदिरा, कॉलोनी,टीकमगढ (म.प्र.)

माई कालका! वीरन कौ मरम राखियौ

– लक्ष्मीप्रसाद गुप्त 'किंकर'

वीर सपूत शहीदन कौ अब जौ बलदौ ना झिलहै।
सेंना ठर्र ठर्र मारै सो भगत गैल ना मिलहै।।
बैरी लुक लुक घुसे देश में वीर उजागर जैहें।
ढूड़ ढूड़ दुष्टन खौं मारैं सब हिसाब लै लैहें।।
जौन देश आतंकी खौं आतंकी लौ ना काबै।
अपने घर से पानी दै विष के बिरवा सिंचवाबै।।
ऊंकी लौ आँखें खुल जैं कित्ते पानी में ठाँड़ो।
ऊ जानत है भारत ने कॉ कॉ लौ झंडा गाड़ो।।
सेंना के संग ठाड़ो बलदौ लैबे देश अड़ो है।
दुश्मन पै गरजें बरसैं खौं बादर खूब मड़ो है।।
संकट की जा घरी कालका माई देश उबारौ।
सबइ रक्तबीजन के मूड काट खप्पर में डारौ।।
भारत है जो धरम वीर वीरन कौ मरम राखियौ।
सबरी दुनियां में माता मानुष कौ धरम राखियौ।।
गौ गंगा गौरी को मैया तुम सम्मान राखियौं।
बीरा बिटियन कौ माता अपनऊं सौ मान राखियौं।।
जब मैजर की घरवाली जैहिन्द गरज कैं बोली।
पथरन ने लौ अंसुआ डारे धरती डग मग डोली।।
बीरा बहुअन की हिम्मत पै ठॉड़ी सबइ शहादत।
उनके घर वारन की हिम्मत देश भरे खौं सादत।।
निकिता औ विभूति से बउवन लरकन की का काबै।
इनके ऊँचे साहस सें पहार नैंचो पर जाबै।।

- ईशानगर छतरपुर (म.प्र.)

कसम से साँसी कै रए

– राघवेन्द्र उदैनिया 'सनेही'

सुनलो प्यारे भाई, कसम सें साँसी कै रए।
अब काँ हैं मैगाई, कसम सें साँसी कै रए।।
सड़कछाप नेता, टुच्चा गप्पें हकवइया।
खा रए दूद मलाई, कसम सें साँसी कै रए।।
इज्जत औ जोबान, चार पइसा में बिक रइ।
लैलो जू मनयाई, कसम सें साँसी कै रए।।
जा माटी के मोल बिकत है लाज सरम फिर।
उतै कौन कोताई, कसम सें सांसी कै रए।।
सब चीजें सस्ती हो गईं है आज ''सनेही''
टकै सेर कबिताई, कसम सें साँसी कै रए।।

- सरानी दरवाजे के बाहर, छतरपुर (म.प्र.)

चौकड़ियाँ

– उमाशंकर खरे 'उमेश'

प्रगटी भुवन राधिका बारी, वा बृषभानु दुलारी।
अऊण कमल दल ऊपर खेले, लली लाड़ली प्यारी।।
ले आये बृषभानु महल में, गूँज उठी किलकारी।
भव अवतार प्रेम मूरत कौ, है 'उमेश' बलिहारी।।
गुईयाँ चले राधिका घुटुऊन, नूपुर बाजें छुन-छुन।
पीत झँगुलिया राजत तन पर, कटि धन बाजत रुन-झुन।।
कंठ कठुलिया हा अति सोहे, चन्दा सूरज,लहसुन।
सखि! मुस्कात मनइँ मन भूपत, तोतिल वानी सुन-सुन।।
राधे खेलें अटकन-चटकन, खेले कभउँ चपेटन।
कभउँ बनावें वे घरबूला, रुच-रुच लीपें आँगन।।
छनन-छनन-छन बजे पैजनी, करती है वे नर्तन।
बलिहारी है उन चरन की, कान्हा करते दरसन।।
राधे खेलें चैयाँ-मैयाँ, सखी कदम की छैयाँ।
मुतियन जड़ी घँघरिया पैरें, जड़तारी अदवैयाँ।।
नन्हीं बुँदियन मेहा बरसे, भींग गई है मुइयाँ।
कहत 'उमेश' लाड़ली जू अब, लै रइँ हैं फिरकैयाँ।।

- सुप्रभातम्, साकेत नगर, पृथ्वीपुर (म.प्र.)

जनकवि-जगनिक

-गुप्तेश्वर द्वारका गुप्त

बांकी भुम्म बुंदेली हीरन की
गाथा गा गये हैं जगनिक बीरन की
पैदा भयें हैं ग्राम सकौर, दसा पै इनकी करियौ गौर।
ज्वानी रओ नई इनकौ ठौर, काटे हैं दिन इननें दौर।।
गा गा बड़वारी बेतवा तीरन की-
मान पान हित खा खां झटके, समै ने ऐंसे किबरा खटके।
कनवज जाय कछु दिन भटके, आन महोबा बीचा अटके।
लख काटी कला हर अजीरन की-
ओछी जात बनाफर राय, देवलदे रई जिनकी माय
बहना मान लओ हरषाय, अपनों दीन्हों धरम निभाय।।
लाज द्रोपदी के घाई राखी चीरन की
राजा रऐ परमाल महान, आल्हा ऊदल जोधा ज्वान।
जिनके गाये कीरत गान, ऐंसे जगनिक भये गुनवान।
नहिं चिंता करी जागीरन की-
तंत्र मंत्र अरू कविता खास। जुद्ध कला रई जिनके पास।
कअऊं ना टूटी मन की आस। 'गुप्तेश्वर' रख दृढ़ विश्वास।।
सदा बांधी है हिम्मद अधीरन की-

- कचनार सिटी, विजय नगर, जबलपुर (म.प्र.)

होली गीत

– नीतेन्द्र सिंह परमार 'भारत'

राधा के संग खेले रे होली,
राधा के संग होली लाल।
मीठी-मीठी बोले बोली।
राधा के संग होली लाल।
ग्वाल बाल सखियाँ जुर आयी,
लाल गुलाल की होली भायी,
बृज ग्वालन की संग में टोली।
राधा के संग होली लाल। राधा के संग खेले...
भांग धतूरा पीलो प्यारे,
शिव शंकर जी हमें निहारे,
सूरत दिखवे भोला की भोली।
राधा के संग होली लाल, राधा के संग खेले...
जमुना को गंगाजल नीको,
सानी नइया कोऊ ईको,
मनमोहन 'भारत' हमजोली,।
राधा के संग होली लाल,
राधा के संग खेले रे होली,
राधा के संग होली लाल। राधा के संग खेले...

- कमला कॉलोनी, नया पन्ना नाका
छतरपुर (म.प्र.)

विदा-गीत

– मुक्ता प्रसाद गुप्त 'रत्नेश'

बावुल किते पटक दई मोकौं ।
तो बिन कैसौ लग है तोको। बावुल...
हा मेरी मइया हा मेरी काकी।
हा मरे वीरन हा मेरी भाभी।।
जब जाये भार नित झोंकों। बावुल...
वेहद प्यार तुम्हारा पाया।
पाला पोषा बड़ा बनाया।।
आपने करमन को ठोको। बावुल...
मैं हूँ कान सी क्षही छिरिया।
विधना काय बनाई बिटिया।
अब जन्म भर हड़िया झोंको। बावुल...
सखियन के संग कब खेलूँगी।
बागन झूला कब झूलूंगी।।
मैं खुद को कैसे रोकों। बावुल...
सास-ससुर मोय कैसे मिलै हैं।
ननद जिठानी से कैसे हिल हैं।।
'रत्नेश' पड़ गई मैं सोको। बावुल...
समझदार तुम बिटिया हमारी।
चतुराई से बन जैहे प्यारी।।
बच्ची पीठे नें ठोकों। बावुल...

- आलमपुर, भिण्ड (म.प्र.)

मदन रस बरसें - आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल

समीक्षक - एन.डी.सोनी

आचार्य दुर्गाचरण शुकल जू की पोथी 'मदन रस बरसें' में अठारा ललित निबंध बुन्देली भाखा में लिखे गये उर उनकौ खड़ी बोली में भावानुवाद सोऊ करो गओ। निबंधन खों पड़कें लगत कै बुन्देली की समरथ सांसऊँ भौत बड़ गई। बुन्देली कवतन कैसी मिठास गद्य में सोऊ हो सकत। शुकल जू के लिखे ललित निबंध गद्य उर पद्य कौ मजा एक संगै देत। इन निबंधन में वेद उर पुरानन की ऐसी-ऐसी बातें बताई गई कै पड़ें अचरज होत। कौआ, गदा, भैंस जैसे प्रानी जिनें हम तुच्छ मानत वे हमाये लाने गुरु के समान ज्ञान दैवे बारे हैं जा बात लेखन में बड़े रोचक ढंग सें वेदन की कथायें लिखकें समजाई गई है। रूखी-सूखी खाकें शाँत रैबो उर अपनी तागत भर काम करवौ हम गदा सें सीक सकत। सादां जीवन उच्च विचार की जो हमाई संसकिरती है ऊमें हम कितने सुखी हते। सब की भलाई कौ ख्याल हमाये संसकारन में रऔ। हमाये रिसी-मुनियन नें अपनी तपस्या, अपने अनुभव उर अपने परयोगन सें जो ज्ञान हाँसल करो तो ऊऐ ऐसे साँचे में ढारो कै बे हमाये रोजऊँ के जीवन में हमाये संस्कारन में आ गये। जे निबंध हमें वे भूलीं-बिसरीं उर अंजानी बातें बताउत हैं। आज के समय में हम अंगरेजन के रैन-सैन खों अपना कें, घटिया सोच-विचार में परकें पइसा की हाय-हाय कर रये। जिंदगानी ऐसी आपा-धापी वारी हो गई कै अच्छौ-बुरऔ सोचबे की फुरसतई नइयाँ। शुकल जू के निबंध पड़कें ऊ पुरानी सुखी जिंदगानी के बारे में सोचवे-विचारवे कौ मन हुइये। निबंधन में एक बात इकाऊ कंचन कैसी दमकत कै हमनें अपनी प्रकती, वनस्पति, पशु-पंछियन सें, नदियन-तलन सें इतै तक कै जीवन दैवे वारी हवा तक सैं नातौ विगार कें अपनें पाँवप पै कुलरिया पटक लई। हम इनकौ नास करकें अपनौ जीवन खुदई नरक बना रये। दुर्गाचरण जू नें जा बात सूदी-सूदी न कैकें, नीम, मउआ,बरिया, पीपरं, बेरी, अकउआ की महत्ता उर उपयोग कौ ऐसौ रस भरो बरनन करो कै पड़बे बारौ ऊकौ मजा लैबे कौमन जरूरई करै। पेड़ ने सें लगाव हुइये तौ उनकौ बचाव सोऊ हुइयै। साहित्त कौ काम मान्सन में भावना जगाबे कौ है सो जे निबंध ई कसौटी पै खूबई खरे उतरत।

निबौरियन कौ झोंकन मद बगराबे कौ उर महुआ के मदन रस बरसावें कौ बरनन ऐसौ रस भरौ है कै मौं में मिठास उर नकुअन में सुगन्ध कौ ऐसास होन लगत। बुन्देली के शब्द ऐसे मजे के सजे हैं के पड़बे में राँग सौ ढड़कत जात उर अरथ सूदो मन में, दिमाग में बैठत जात। नीम के निबौलन कौ मद कैसो बगर जा बात शुकल जू ऐसें कै रये-

''भुनसारौ हो रओ है। नीम के हरीरे पत्तन पै पीरी-पीरी सुनहरी सूरज की किरनें नच उठी हैं। सतरंगी टोपी लगायें कटकोला जू नीम की छाल कों खोद-गोद कें ऊके गुनन की खोज कर रये हैं। पूँछ ऊपर उठायें गिलहरी रानी नीम की गरी कौ कलेव कर रई हैं। भौंरा फूलन के मद सें अपने-अपने कटोरा भर रये हैं। शहद की मांछी झूम-झूम कें गुन-गुना रई है। नीम अपनौ सरबस बाँटें जा रओ।''

ललित भाव, ललित शब्द उर ललित कैबे कौ ढंग, जेऊ आय ललित निबंध कौ मजा/मउअन के फूल जो मउआ कोआउत उनकौ मुरका, डुबरी उल लटा जैसे बिंजन अब गाँवन वारे तक झूलत जा रये। साहित्त में मउआ कौ पिरभाव बाल्मीक जू पै ऐसौ भऔ कै उनें बुन्देलखण्ड कौ मउआ कौ बिरछा अजुद्या जू उर दण्डभवन में सोऊ दिखानौ। व्यास जू महराज खों मउआ के फूलन की आभा राजकुमारी चित्रांगदा के मौ पै दिखानी। शुकल जू के कौबे कौ मतलब जौ समज में आउत कै कऊँ हमें सोऊ मउआ की महमा समज में आ जाबै तौ मउआ के दिन फिर सकत।

निबंधन की जा पोथी पड़े कें जा समज में आई कै शुकला जू खों शब्द ब्रम्ह कौ भौत पुख्तां ज्ञान है तबई ऐसौ सार सें भरौ लेखन कर रये। वे जिन शब्दन कौ परयोग करत उनकी रग-रग जानत जा बात बुन्देली शब्दन के शब्दकोष में शुकल जू ने साफ साफ बताई ती। बड़े-बड़े साहित्तकार नई जानत कै बुन्देली के मुतकेरे शब्द संस्कृत सें पुराने हैं। दुर्गाचरण जू ने वेदन के उदाहरन दैं कें जा बात उजागर करी। हमें जौ ज्ञान कराऔ कै हजारन साल पैलऊँ बुन्देली बोली इतै के आदिवासियन की बोली हती पै अब एक समरथ भाखा बन गई। जा पोथी बुन्देली की समरथ के कारनई हमें पड वे खों मिली है।

निबंध लिखबे की जितनी विधी हैं उनमें लिखबे बारौ कौनऊँ विषय या बात विशेष के इर्द-गिर्द घूमत रत, पै ललित निबंध लिखबे बारौ जहाज के पंछी कैसो बेर-बेर आसमान में उड़बे कौ आनन्द लेत भये मूल विषय के संगै न जानें कां-कां की कथा जोर देत। जैसें रामान कै महाभारत की कथा कैबे बारे पंडित जू कथा खों रोचक बनावे के लानें क्षेपक उर मौखाद सुनीं बातें उर भजन-कीर्तन सब करत। ललित निबंध लिखबे बारे तौ हिन्दीअई में इनै-गिनै हैं पै बुन्देली में लिखबे बारे तो उंगइन पै गिन सकत। मदन रस बरसें पोथी पड़के लगत कै शुकल जू ने संसकिरत, हिन्दी, अंगरेजी, बुन्देली भाखन के संगै ज्योतस, वैदक उर विज्ञान खों घोंटकें पी लऔ। हम पंडत जू खों ऐन लिंगा से जानम सो ना सोऊ कै सकत कै बे नाव अई के दुर्गाचरण नइयाँ, जिंदगानी भर भगवती की साधना करी सो उनकी किर पा सेंई जौ सब हो रऔ है। वेदन की किरपा सोऊ भगवती के भगत पै है सो सौने पै सुहागा जैसी चमक-दमक उनके निबंधन पै दिखात। ऐसौ कौनऊ निबंध नइयाँ जी में वेदन की बातें ना होबें। वेद पड़वे कौ ताव या बूतौ सबमें नइयाँ पै उनकौ ज्ञान जानबे कौ हक्क सबखों है, सबके हित में है। शुकल जू ने अपने लेखन सें जौ ज्ञान सबखों बाँट के भौत पुन्न कौ काम करो है। प्रकती के बनाये चंदा, सूरज, तारे, पेड़-पौधा, नदियाँ, नोर, समुद्र, अनगिनत प्रानी जे सब हम देखत तौ हैं पै इनके रहस्सन के बारे नई जानत। दुर्गाचरण जू नें सब देखो-सुनौ, पड़ो-गुनौ उर जीवन भर को ज्ञान की कमाई सबखों बाँटवें ऊऐ लिख कें हमाये सामनें धर दऔ। अब जा हम पै है कै ऊसें हम कितनौ सीकत उर जीवन जीवें में ऊकौ कितनौ लाभ उठाउत। और कोऊ उठाय चाय नईं पै बुन्देलखण्ड की कतकारियन नें जरूर उठाऔ है। शुकल जू के शब्दन में ''बुन्देली माटी में विंद्रावन पिरगट हो गओ है। खिरकन खोरन की छनकीली गोरीधना की कंचन काया में गोपिन कौ भाव उतर आऔ है। उनके अंतस में कन्हैया की बांसुरी बज उठी है। मन कौ मोर मस्त हो कें नचन लगो है।''

ऐसे ऐसे न जाने कितने बरनन इन निबंधन में हैं। इनें पड़कें लगत कै ललित निबंध गद्य की सबरी विधन में सिरमौर है। ऋतुअन के राजा बसंत की तरां आनन्द बाँटवे में ललित निबंध की शानी नईयाँ। निबंध ने नीम जैसे करये बिरछा सें ऐसौ मद बगराव कै सबखों मस्त कर देत। लबरन की बातन सें दुखी गदा खों शुकल जू ने वेद वानी सुनाकें ऊकी महत्ता गदा के संगै हमें सोऊ समजा दई। जब गदा अपने गुनन सें गायत्री कौ पात्र बन सकत तौ हम का नई कर सकता। कजन्त की दारै स्कूलन में वेद की बातें पड़ाई जान लगें तो आवे बारी पीढ़ियन की सोच बदल सकत उर जीवन के दलुद्दर दूर हो सकता। जे लेख हमाये समाज के कर्ता-धरतन खों पढ़ें चइये उर गुने चइये। आचार्य जी तौ साधुवाद के पात्र हेंई, ई के संगै प्रकाशक खों सोऊ इतनी अच्छी पोथी छापबे के लाने बधाई है। अब प्रकाशन विभाग कौ एक काम और है कै पोथी जादां से जादां लोगन के पास पोंचवै, खास तौर सें प्रदेश के उनकर्ता धरतन के पास जो आनेवाली पीढ़ियों को अच्छे संस्कार देवें खों शिक्षा जगत में कछू कर सकवें में सक्षम है।

- राजमहल के पास,टीकमगढ़, मो. 7999375995

पशु-पंछी उर कीट पतंगन सें जुड़ीं बुन्देली कैबतें

डॉ. डी.आर. वर्मा ''बेचैन''

बुन्देलखण्ड कौ क्षेत्र भौत बड़े भू भाग में फैलो। ईमें उ.प्र. उर म.प्र. कौ क्षेत्र है। करीबन इक्कीस जिला मिलाकें विद्वान लोगन नें ईकी रूपरेखा मानी। झाँसी, जालौन, बाँदा, हमीरपुर, छतरपुर, दतिया, टीकमगढ़ ई बुन्देलखण्ड कौ मध्यभाग कओ जा सकत। बुन्देलखण्ड के शरीर कौ जौ भूभाग दिल भी कओ जा सकत। ई क्षेत्र की भाषा बुन्देली है। ई बुन्देली के क्षेत्रीय रूप थोरे भौत अंतर सें अलग अलग जरूर हैं। बुन्देली भाषा में सुंदरता कम नइयाँ। ईमें तौ गारी भी जू लगाकें दई जातीं। एईसें जा सुनवे उर बोलवे में मिठास भरी लगत। बुन्देली भाषा होय चाय कौनऊं और भाषा होयकोस कोस पै बदलै पानी, चार कोस पै बानी की कहावत के अनुसार थोरौ-भौत बदलाव कौ दो-चार कि.मी. की दूरी पै पतौ परन लगत। बुन्देली भाषा अवै तक संविधान की सूची में स्थान नई पा सकी। ई के लानें बुन्देली प्रेमियन खां लगातार कोशिस करवे की जरूरत है। ई में ब्रजभाषा सें कम मिठास नइयाँ। बड़ी रसीली है। मरमभेदी है। सूदी तीर सा जा ठटत। ई कौ साहित्य भौत है। ई में बुन्देली अटका चटका किस्सा कानियां, कैवतें- परम्परा सें चले आ रये लोकगीत तौ सैकरन तरा के हैं। जोड़े वाले शब्द, मार्मिक शब्द तौ बड़े जोरदार हैं। ई की कैवतें जिनें कानात या कहावतें या आने सोउ कओ जात। पुरखन नें अपनी बात अच्छी तरा सें समजावे के लानें कैउ तरां की कानातें बनाईं। बात बतकाय में वे अचानक मों सें निकर परतीं जीसें बात जिहन में भिदजात उर समज में आ जात। इ कैवतन में पशुअन सें, पंछियन सें कीरा मकोरन सें जुरी सैकरन कैवतें हैं जिनें जानों उर उनकौ आनंद लेव। बुन्देली साहित्य की जे कानातें बड़ी अमूल हैं जिनें आगे की पैरी तौ भूलई जै। अपने पुरखन नें कछु अनुभव करकें सार सार निचोर कें कछु ऐसी बातें कै दईं जो अबै लो चाय जितै सई उतरतीं। जेई तौ कानातें, कैवतें, आने या कहावतें कुवाउतीं। कछू कहावतें पशु पंछी उर कीट पतंगन सें जुरी भई हैं जो जानें कित्ती पुरानी हैं, उर कबै गड़ी गईं हुईयें ई कौ कछु पतौ नइयां। वे कहावतें अबै भी ऊसौअई असर करतीं। कछू कानातें हम इतै परोस रये सो उनें गुनो उर उनकौ आनंद लेव।

1. जानी मानी टीटरी चलै हंस की चाल– ई कानात कौ मतलव जौ है कै कौनऊँआदमी की असलियत, क्षमता, तागत या स्वभाव सबई कोउ जानत होय उर वौ बनावटी झाम जोर कें क्षमता भौत वड़िन जैसी बनाकें अपनों असर समाज में बतावे की कोसिस कर रओ होय तौ समाज मैं कैउ जनें जा कन लगत कै देखौ तौ- जानी मानी टीटरी चलै हंस की चाल मतलब टिटहरी खां तौ सबई कोउ जानत उर बा हंस जैसी चाल चलवे की सौक करत फिर रई।

2. गनेस जू खां चौक पूरौ-मेंदरे जू आन विराजे– सूदौ सौ मतलब है कै भौत महत्वपूर्ण आदमी के लानें बैठवे की, स्वागत की तैयारी करी जाय और ऊ जांगा पै या ऊ आसन पै एक गैर इज्जत वारौ अदना आदमी आन बैठे। मतलब भओ कै जौन आदमी सई सम्मान पावे कौ हकदार है उयै न मिलकें कोनऊ ऐरा गैरा ऊ सम्मान के लानें आ जाय तब जा बात कई जात कै गनेश जू खां चौक पूरौ मेंदरे जू आन विराजे।

3. एरावत खां नाल ठुकनें, गदइयाँ गोड़े उठाँय फिर रई– ई कानात कौ भाव ऊपर की कानात सें मिलत जुरत है। जौन सम्मान जीखां मिलो चइये बौ तौ शांत है उर ऊ की जांगा जो आदर कौ पात्र नइयां, सम्मान के जोग नइयां यानी काऊ में नइयां-बौ सम्मान लैवे फिरै तो कई जा सकत कै एरावत खां नाल ठुकनें गदइयां गोड़े उठांय फिर रईं।

4. कै भैंस भैंसन में कै कसाई के खूँटा– जा कानात भैंस के आधार पै पुरखन नें बनाई। ई कौ सूदौ मतलब है कै कौनऊ समस्या उरजी वीदी न डरी रवो चइये कौनऊँ काम होनें तौ उर ऊखों पूरौ करनें, अधूरौ, अतपरया कौनऊ बात ना रओ चइये नातर बा दुखदाई होत उर ठीक नईं रत। कौनऊं काम आदौ अधूरौ डरो होय तौ समझदार आदमी जेइ कत कै- कै भैंस भैंसन में कै कसाई के खूंटा।

5. भौंके ना दर्राय, मसकऊँ काट खांय– ई कानात कौ आधार कुत्ता कुतियन खां बनाव गओ। मतलब साफ साफ है कै समाज में कछु आदमी ऐसे भी होत जो कछू अपनी मंशा, अपनों उद्देश्य कछु भी बताउत नइयां उर सूदो अपनों काम जो उनें करनें, करके सुस्ते हो जात। ऐसे आदमी जो विल्कुल बकत नइयां-सूदौ अपनों उद्देश्य हल कर लेत। ऐसे लोगन के लाने जा कई जा सकत कै- भौंके ना दर्याय मसकऊं काट खांय।

6. कुतियां प्रागै जान लगीं तौ हड़िया को चाटै– जा कहावत भी समाज में भौत महत्त राखत। अगर कौनउं अदना या विल्कुल कमजोर हैसियत कौ आदमी होय उर वौ भौत बड्डौ काम करबे की बात करत होय यानी कैं शक्तिहीन आदमी भौत बड्डे काम करवे के लानें लम्मी चौरीं बातें मसकै तौ उते कोउ कैबे बाये के मों सें जा कानात् निकर सकत कै- कुतियाँ प्रागै जान लगीं तो हड्डियां को चाटै।

7. चीलरन के डर सें कथरी नई छोड़ी जात– मतलब ई कानात कौ साफ है कै जादां महत्व की चीज एक मामूली समस्या के पछाडूं छोड़ देवौ मूर्खता की बात कई जै। जैसें कथरी में अगर चीलर हो गये तौ चीलरन कौ थौरौ सा उपाय करो चइये कै वे मर जाँय। गरम पानी में कथरी डार दो वे मर जें। जै न करकें भौत कीमती कथरी जो भौत मेंनत सें भौत दिनन में बनी, उयै फेंक देवौ- कछू समजदारी नई कई जा सकत। एइ सै जा कैबत पुरखन ने समजदारी के लानें

चीलर उर कथरी खां लैकें बनाई जो बड़े काम की है अगर कौऊ मामूली मेंनत करे से बड़ौ फायदा होत और कोऊ उयै नई करत तब जा काना कैवौं सई लगत कै चीलरन के धोकें कथरी नई छोड़ौ।

8. **सूदरे कौ मों कुत्ता चाटत**– जादा सूदौ बनकें समाज में रैबौ भौत जादा नुकसानदार होत। समाज कौ हर आदमी ऊकौ नुकसान करत। अपनी सिदाई के कारन बौ काउ सें कछू नईं कत। ई सें कैबत कई गई कै कुत्ता जैसौ जानवरभींी सूदे आदमी कौ मों चाटन लग। बौ कुत्ता खां ना ललकारै ना भगाय काय कै बौ सूदौ है। ऊके सूदेपन कौ फायदा कुत्ता भी उठा रओ। जौ भी एक दोष है। जादां सूदौ होवौ भी ठीक नईं होत। तुलसीदास जी ने भी कई अधिक सिदाई सो बड़ दोषू। उर जा कानात चल परी कै- सूदरे कौ मों कुत्ता चाटत।

9. **छिरिया खटीक सें मानत**– जा कानात एक जात विशेष खटीक सें जुरी भई चल रई। छिरिया, बुकरा, बुकरियां गाड़रें खटीक काट के या कटवा कैं बैच देत उर मांसाहारी लोग लै जात। कैवे को मतलब कैबत में जौ है कै विना कठोरता के सूदौ आदमी भी सईं तरां से बेयोहार नईं करत। कठोर या दुष्टता के विना कौनऊँ काम सफल नईं होत। समाज में जे चीजें जे वातें देखवे मिलतीं तब पुरखन ने जा कहावत बनाई हुइयै कै- छिरिया खटीक सें मानत।

10. **ऊंट की चोरी न्योरें न्योरें नईं होत**– ऊँट एक सबसें ऊँचौ जानवर होत। ऊखां कोउ छोरन चोरी सें जाय तौ ऊखां ठाड़ौ जरूर होनें परै। कैवे कौ मतलब ई कानात में जौ है कै कौनऊँ भी बड़ौ काम होय तौ ऊखां छिपा कें नई कर सकत। बड़ौ काम तौ उजागर होकें सबके सामने आजै है। जौ ऐसौ काम नोईं कै कुठिया में गुर फोर लवो, कोउखाँ पतौ नईं परो, एइयें पुरखन ने समय पै कैवे के लाने जा कानात बना दई कै-ऊँट की चोरी न्योरें न्योरें नईं होत।

11. **बछियन बछियन राउन जुरत**– ढोर बछेउन खां लैकें पुरखन नें भौतई नौनी बातन कौ कहावतन के द्वारा उपदेस दवो। राउन (ढोरन कौ झुण्ड) कओ जात जितै जादाँ ढोर इकट्ठे होत रत और बरेदी फिर उनें हाँक कै चरावे लै जात। आज कल बा बात देखवे कम मिलत। मतलब कहावत कौ है कै एक एक बछिया इकट्ठी कर कैं भौत बड़ौ झुंड बरेदी के चरावे के लानें जुर जात। अब बात भौत साफ समाज में आ गई कै पइसा पइसा जोर कें भौत बड़ी रकम बनाई जा सकत। नीचें एक दोहा में ई कौ अर्थ पूरौ पूरौ है-

कौड़ी-कौड़ी जोर कें, निरधन होत धनवान।
अक्षर अक्षर के पढ़ें, मूरख होत सुजान।

12. **अरुवा बोलै जब भ्यांयदौ बोलै**– बुन्देली भाषा में अरुवा उल्लू पक्षी खाँ कओ जात। जौ उल्लू रात में देख सकत दिन में नईं। रात में अरुवा निकरत उर अपनों शिकार खौज के पेट भरत। रातई के टैम में अरूवा बोलत जियै कोउ कोउ ने सुनों भी हुइयै। ईकी बोली सुनवे में डरावनी (भ्यांयदी) लगत। ऊकी बोली कुदरती रूप में डरावनी होत। जैसें कोइल की बोली कुदरती रूप में सुनवे में प्यारी लगत। ई कहावत कौ मतलब जौ भओ कै कौनऊँ आदमी समाज में ऐसे भी होत जिने नोंनी बात कै नईं आउत। उनके मों से साजी बात, मीठी बात जो सुनवे सें सबखाँ भली लगै-ऐसी बात निकरई नई सकत। ऐसे लोगन के लानें जा कहावत पूरी पूरी सई उतरत-कै अरुवा बोलत जब भ्यांयदो बोलत। ई कानात खां लैकें एक छोटी सी मजेदार किस्सा याद आ रई सौ ऊकौ आनंद और उठाव।

एक परिवार में एक बुड़ी बऊ हतीं। उनकौ पूरौ जीवन बुरयै बोलत कड़ गओ। बुढ़ापे में भी उनके मों से साजी बात निकरतई नईं हती। परिवार वाये ध्यान नईं देत्ते कै ऊकी तौ आदत है बुरये बोलवे की। बूड़ी बऊ के नाती कौ व्याव ऐंगर आ गओ। दो चार जनन नै बऊ खां प्रेम से समजा दवो कै बऊ तुम दो चार दिना गल्ला ना करियो, चुप रइयो, नाती कौ व्याव हो रवो। बऊ नें कई हवो बेटा। बरात जान लगी दूला कौ मौर (टोपी) एक जांगा धरो तो। ऊकी खबर नई रईं। लरका घर सें कछू दूर निकर गऔ बऊ ने मौर देख कें चिल्ल्या कैं कई- जौ मौंर तौ इतईं धरो लरका की मूड़ी पै लूगर धर दैव का ? अब अपुन सब समज गये हुइयौ कै- अरुवा बोलत जब भ्यांयदो बोलत।

13. **कैंकरे के बच्चा माटी अकडूरत**– ई बुन्देली कहावत कौ मतलब तौ भौतई साफ है उर सबखाँ समज में आ रवो हुइयै कै जीके घरै जौन काम होत आउत ऊकी संतानें ऊ काम खाँ जल्दी सीक जातीं उर जांदातर वे वोई काम करवे में सुखी रात। दरजी कौ लरका सिलाई सीक जै, किसान कौ खेती वारी सीक जै, लुहार कौ लरका लुहार कौ काम सीक जै उर बानियां कौ दुकानदारी, इनैं सिकावे में मेनत नईं कन्ने आउत। जैसें कैकरे कौ बच्चा होतनई सें माटी अकडूरवौ चालू करता ई के लानें एक दोहा नेंचें दयें देत जीसें रोम रोम में अर्थ समा जै है-

जीके कुल की जौन है, लयें रात है तौन।
सिंह बाज के चैंनुवा, इनै सिकावै कौन।

14. **कबरा कें कबरा ना हुये तौ तिलोका जरूर हुये**– जा बात तौ सबखाँ माननें परै कै अपने पुरखा अपुन सें भौतईं हुशयार हते। उन लोगननें अनुभव करकें ऐसी बातें इन कानातन के रूप में दै दई कै वे काट नईं सकत। जांदातर वे सोराना सईं है। ई कानात कौ मतलब बड़ौ सूदौ है कै जीके जैसे बाप मताई होत जादातर संतान भी वैसई होत। वंश परम्परा के अगर सबरे गुन संतान में नईं आंय तौ कछू न कछू जरूर आँय। गैंया, छिरियां जैसी होती वैसे उनके बच्छा बछियां उर बुकड़ेऊ होत। कबरी गइया छिरिया हुयै तौ वैसो अई बच्चा हुये। एक दोहा (कविता) कहावत रूप में ईके मतलब की है सो समजौ-

जीके जैसे बाप मताई, ऊके वैसे लरका।
जांके जैसे नदियां नारे मांके वैसे भरका।।

15. **ऊँट पहारवा तरें पोंचत जब उखाँ पतो परत कै हमसे भी ऊँचो कोउ है**– समाज में ई कैबत कौ भी भौत महत्त है। जब

कौनऊ आदमी खां गरूर होत कै हमईं जौ काम कर सकत हम भौत बड़े आदमी हैं, हमाये समान कोउ नइयाँ और कौनऊ ऊसें भौत बड़ो ऊके सामने आ जात तब उयै पतौ परत कै हम तौ काउ में नइयाँ। जैंसे ऊँट जानवरन में बड़ौ होत। ऊँट जब पहारवा के ऐंगर हो कड़त जब ऊखां पतौ परत कै हमईं ऊँचे नइयाँ हमसे भी कोऊ और बड़ौ है। ऐंसअई समाज में गरूरी आदमी कौ हाल होत। ऐंइ सें कई जात कै- ऊँट जब पहारवा के नैंचे पौंचत तब उयै पतौ परत कै हमसें भी ऊँचौ कोउ है।

16. **चीता परै न रीता–** जंगली जानवर चीता होत ऊके बारे में जा कानात है कै बौ भूंकौ नईं सो सकत। चीता चल फिर के घूम फिर कें रात में चाय देर चाय जितेक हो जाय अकेलैं बौ कछु न कछु शिकार जरूर कर लै उर अपनों पेट भर लै जब सोहै। एइ तरां सें कौनऊ प्रन करने बालो जब ऊखां पूरौ कर लेत तबई उयै शांति कौ अनुभव होत।

17. **मुर्गा न हुयै तौ का भोर ना हुये–** जा कहावत भी बड़ी जोरदार है, कौनऊ आदमी जा सोचत कै हमाय बिना जौ काम हो नई सकत। हमईं करैं जब हुइयै। हमाये सिवा कोऊ नई कर सकत। तब ऐसे आदमी के लाने जा बात कानात के रूप में पुरखन ने गड़ी कै जौन गाँव में मुर्गा नई होत तौ का उतै भोर नई होत।

18. **पढ़े सुआ बिलैंयन खा लये–** जा कानात जा बताउत कै कौनऊ आदमी खां खूब सिकावो पढ़ावो कै जा सावधानी राखनें, गलती नईं करनें। सौ सौ बेरा पढ़ा दयो उर जब बा बेरा आई तौ बेई गलती कर दई जौन खाँ सौ सौ बेरा समजा दओ तौ कै जौ काम ऐसौ नईं करने, ई तरां सें करनें। जब समजाये समजाये पै कोड बड़ी गलती कर जाय तब जां कानात कैबो साजौ लगत कै-पढ़े सुआ बिलैंयन खा लये।

19. **ऊमर फोरौ ना पंखा उड़ाव–** ई कानात कौ मतलब है कै कौनऊं छिपावे वाइ बात होय तौ ऊकी हवा क्यांउ न लगो चइये। जब कौनउँ बात छिपावे वाई होय उर ऊखां उजागर ना करनें होय तौ ठीक रत। अगर कौनऊँबात तनक मनक खुल जाय तौ ऊकौ खुद बिलौरा भौत होत। हर आदमी खाँ का का बताउत बात जाँ की ताँ दबी रये तौ ठीक रत। ई सें जा बात कई गई कै ना ऊमर फोरौ ना पंखा उड़ाव। ऊमर के अंदर छोटी छोटी पंखी सैकरन रतीं। जिनें ऊमर के संगै खा लओ जात। ऊमर सेंगो खा लओ जात। फोर कें खात तौ वे पंखी उड़ती वे ठीक नईं रतीं।

20. **डार कौ चूको बँदरा उर असाड़ कौ चूको किसान सालभर में ठिकानें लगत–** ई कानात कौ भौत सूदो मतलब है कै अगर सई समय पै कौनऊं काम ना करो जाय या वौ काम समय पै ना हो पाय तौ फिर ऊकौ मौका भौत देर में मिलत उर पछतावौ होत अलग। बंदर जात में जा सुनी जात कै कौनऊँ बँदरा ई डार से ऊ डार पै कूँद रओ होय उर बौ चूक जाय तौ सब बंदरा उयै भगा देत एक साल तक अपनी समाज में नई मिलाउत। एइ तरा सें किसान असाड़ के मइना में अपनी खेतीपाती ठीक तरां से ना कर पाँय तौ उखों फिर एक साल भी पछतावनै परत। एइ के लानें जा कहावत पुरखन नें कई कै-डार कौ चूको बँदरा उर असाड़ कौ चूको किसान, साल भर में ठिकानें लगत।

ई तरा सें बुन्देली के साहित्य में दस बीस नईं सैकरन कहावतें पसु पंछी उन कीट पतंगन खाँ लैकें गड़ी गई। इन कहावतन कौ प्रयोग सुनवे खां बूड़े पुरानन सें बात बतकाय में मिल जातीं। ई छोटे से लेख में सवरीं कहावतन कौ समेटवौ संभव नईं हो सकत। बानगी रूप में बुन्देली के ई साहित्य की थोरी सी झलक अपुन के सामने रखी। आशा है कै अपुन ने पढ़ी हुइयै, गुनी हुइयै उर समजी हुइये। अगर पसंद आय जे कैबतें तौ हम अपनी मैनत खाँ सफल मानें।

-स्यावरी, मऊरानीपुर (झाँसी)
मो. 9794419115

बुन्देली व्यंजन

– डॉ. देवदत्त द्विवेदी

खुरमा, खाजे, खाँकरे-कुसली, बतियाँ, सेव।
पुरीं, पपरियाँ, माँग हौ-तनक और तौ देव।।
फूली-फूली फुलकियाँ-कै हँतपउ लुचयाउ।
मोटी रोटी पनपथू-खा के देखौ दाउ।।
खिचड़ी, गुड़ला औ कुदइ-सौंदौ, भंगरी भात।
हिंगा, महेरी, खीर सें-कोउ न इतै अघात।।
बरा-बरीं औ खीचला-पापर खीच बिजौर।
बिड़इँ, भजेरा, कचरियाँ-मजा देयँ हर कौर।।
होरा, कोरीं, पनफरा-उसे उसाये बेर।
सतुआ, बिरचुन घोर कें-खालो नइयाँ देर।।
डुबरी, मुरका औ लटा-मिठवाँ भुँजे-भुँजाय।
मौअन के पकवान जे-बे जाने जिन खाय।।
कल्ले की रोटी सिकी-औ तइया की साक।
स्वाद-स्वाद सब खा गये - परसैया खों खाक।।
सुरा, गुलरियाँ, गुलगुला - चीला, माड़े, फूल।
लोल कुचइयाँ इँदरसे-कोउ न पाबै भूल।।
गनगौरा, गुजियाँ, गुना-मालपुआ रसदार।
माठे, मठरी, सारदें-खा-खा लेयँ डकार।।
अमियन का होबै पनों-अमचुरियन की दार।
कै ताजे दई छाँच सें-लपट जात है हार।।
कुचरा कच्ची करी कौ-चटनी और सलाद।
बड़ा देत मिर्चा हरी-दरभजिया कौ स्वाद।।
पनौं, छाँछ कौ रायतौ-सरबत मीठी साँयँ।
तैली, मोरा कौ दही-रै रै और मिठायँ।।
तइया की भाजी भुजी-तरकारी और दार।
हँड़िया की फदकी कड़ी-हाँत चटाबै झार।।

- बड़ामलहरा

बिजावर राज्य के स्वतंत्रता सेनानी पं.- रामकृष्ण पालिया

– मनमोहन पाण्डेय

भूतपूर्व बिजावर राज्य के प्रजामंडल के संचालक, राज्य में कांग्रेस के संगठन, प्रचार, प्रसार के कर्मठ कर्मयोगी का जन्म महोबा के बिलबिनी ग्राम में हुआ था वे जाति के सारस्वत ब्राह्मण थे । प्रारंभ में हमीरपुर एवं जीवनान्त तक बिजावर के निवासी रहे क्योंकि 28 वर्ष तक ब्रह्मचारी रहने के पश्चात् उनका विवाह बिजावर में श्रीमती गौरीबाई के साथ हुआ था। उनके एक पुत्र था, माता पुत्र दोनों श्री पालिया जी के देहावसान के बाद मृत्यु को प्राप्त हो गये है। पालिया जी प्रारंभ से हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के सदस्य थे। वे भारत के प्रसिद्ध पहलवान श्री राममूर्ति के शिष्य थे तथा क्रान्तिकारी चन्द्र शेखर आजाद के सम्पर्क में रहे। विवाहोपरान्त वे गांधी आश्रम के कर्मचारी रहे। पालिया जी साढ़े पांच फुट के लगभग गठीले शरीर के धनी थे सावगी पसन्द तथा खादी वस्त्र धारी थे। पहलवान होने निष्य पूर्ति प्रति व्यायाम करने के कारण प्रचुरमात्रा में दूध की उपलब्धता के लिये वे बकरियां पाले हुए थे। उनके आचरण के कारण बिजावर में मुहल्ले में व्यायाम शालायें थी । मैं भी उनमें से एक व्यायाम शाला दत्त पाण्डेय मुहल्ला की धर्मशाला के अखांड़े का सदस्य था। सन 40 से कांग्रेस का आन्दोलन तीव्र हो गया । चरखारी से स्वतंत्रता के लिए भड़की चिंगारी बिजावर की जनता में फैल गई। यद्यपि अंग्रेजी सरकार से बिजावर नरेश की संधि होने के कारण वे इस आन्दोलन से तटस्थ थेकिन्तु बिजावर की प्रजा पालिया जी के नेतृत्व मे पूर्णतः सक्रिय थी। पालिया जी के सहयोगी श्री रामकिशोर सक्सेना तथा श्री सादिक अहमद थे । उनके साथ स्व. श्री ग्यासी लाल ददरया, मुन्नी, रघुराज सिंह यादव एवं उनके सहयोगी सक्रिय थे। गांधी जीं के आदर्शो एवं कार्यक्रमों का संचालन पालिया जी की संरक्षता में होता था। बाहर ग्रामों से आये ग्रामीणों को पालिया श्री स्वयं अपने हाथ से भोजन पकाकर खिलाते यह किसी व्यक्ति को कोई रोग हो गया तो वे रात रात भर जागकर उसकी परिचर्या करते थे। सन् 42 से 45 के बीच आन्दोलन भारत छोड़ तीव्र हो गया। मैं गोविन्द गंज मंदिर धर्मशाला के स्कूल में पढ़ता था मेरे शिक्षक श्री मंगली प्रसाद ने सूचित किया कि चलो छुटटी हो गई है। हम अपने बाल साथियों के साथ आन्दोलनकारियों में शामिल हो गये। उत्तेजित भीड़ इन्कलाब जिन्दाबाद, भारत माता की जय के नारे लगा रही थी। टूटै ना चरखे कौ तार चरखा चालू रहै। जे बुढऊ गांधी दूला बन गये दुल्हन बनी सरकार चरखा चालू रहे श्री रामकिशोर सक्सेना तथा श्री सादिक अहमद आन्दोलनकारियों का संचालन कर रहे थे चूँकिः पालिया जी जेल में थे । शोभा यात्रा चक्कर की सड़क पार करती हुई रेस्ट हाउस पहुँची जहां पर ब्रिटिश सरकार के अधीनस्थ राज्य बिजावर के कर्मचारी दौलतराम का पुतला जलाया गया। सारी भीड़ वापिस लौटी पन्द्रह अगस्त 1947 की रात्रि में भारत स्वतंत्र हुआ श्री पालिया जी को नई बनने वाली विधानसभा में उच्चतम स्थान प्राप्त होना था उनके प्रतिस्पार्धियों ,विरोधियों को उनकी जन प्रियता एवं उन्नति नहीं देखी गई और उन्हें नौगांव में विषदेदियां गया वे मृतावस्था में बिजावर आये विमान में उनकी पार्थिव मृत देह बिठाई गई। सम्पूर्ण बिजावर शोक समुद्र में डूब गया। मैं भी उनकी मृत शवयात्रा में सम्मिलित हुआ। स्व. कविराज श्री रमेश पाण्डेय ने व्यथित डोकर लिखा कहत रमेश वीर पालिया पहलवान मेरी जान लाड़न गयो इन्द्र के अखाड़े में पालियरा जी। बैठका में सुभाषचन्द्र बोस की प्रेरणा दायक तस्वीर टंगी थी जिसमें सुभाषचन्द्र बोस एक हाथ में अपना कटा हुआ सिंर लिये थे, दूसरे हाथे में तरवार, उनके कंठ से जमीन पर गिरते हुए रक्त से अनेको सिख ईसाई, हिन्दू मुसलमान के बच्चे उत्पन्न हो रहे थे नीचे एक वाक्य लिखा था तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा जिसको देखकर हम लोगों के दिल उछलपडते थे टीनके बंगला में सभा के वक्त कई अवयस्कों के ने कमीज फड़कर सिपाहियों को गोली चलाने का आदेश दिया था। पालिया जी के पुरुषार्थ के दो चित्र देखें

बिजावर में कोई अंग्रेज पहलवान आया उसने बिजावर के पहलवानों को ललकारा महाराज बिजावर जानते थे कि उसे पालिया जी ही पराजित कर सकते है पर वे मेरे कहने से आयेंगे नहीं क्योकि वे मुझे स्वतंत्रता प्राप्ति में बाधक मानते हैं। बिजावर की शान रखने को उन्होंने तत्कालिक नगर सेठ श्री छोटेलाल अग्रवाल को कहा कि वे पालिया जी को मना लावें छोटेलाल पालिया जी के पड़ोसी एवं मित्र थे उनके कहने पर पोलो ग्राउंड में कुश्ती में आंगुतकपहलवान को उन्होंने तीनबार पछाड़ा

पालिया जी के परममित्र श्री बाबूराम शांडिलय थे दोनों एक ही साइकिल पर बैठकर कानपुर गये। दोनों के पैसे रास्ते में चुक गये वे बाजार में खाने के बारे में चर्चा कर रहे थे। सामने हलवाई की दुकान थी उसने इनके वार्तालाप को सुनकर अपने पास बुलाया और थोड़ी सी (आधा पांव) रबड़ी खाने को देने लगा पालिया जी ने कहा इतने से क्या होगा । उसने कहा पूरे कूड़े भी रबड़ी खा जाओगे उन्होने हामी कर दी और कूड़े की पूरी रवड़ी खा गये आश्चर्यचकित हलबाई ने कहा कि क्या तुम पहलवान हो क्या तुम्हारी कुश्ती यहां रखवा दें ? कुश्ती में पालिया जी ने कानपुर के पहलवान को चित कर दिया।

पालिया जी के स्वर्गलोक पश्चात श्री नंद लाल जैन प्रोफेसर दरबार कॉलेज रीवानें उनकी प्रतिमा बनवाने का आग्रह किया किन्तु कृतघ्न बिजावर ने इस पर ध्यान नहीं दिया उनके रिश्तेदार सुदामा प्रसाद भी प्रदेश के मुख्यमंत्री तक गुहार लगा आया किन्तु उनका स्टेच्यू नहीं बन पाया नही उनका नाम किसी सड़क पर रखा गया वीर साहसी सादगी पसन्द देशभक्त शहीद श्रीरामकृष्ण पालिया को शतशः नमन।

-मऊ चुंगी नाका, टीकमगढ़ (म.प्र.)

महिषासुर मर्दिनी देवी का प्रादुर्भाव

– प्रभु दयाल श्रीवास्तव 'पीयूष

दोहा–कमलासन पै बिराजी, महालक्ष्मी मात।
महिषासुर मरदिनि के, चरनन शीष नवात।।
हांतन में जिनके गदा, परसु धनुष असिमढाल
बज्र चक्र त्रिशूल मधु पाश शंख अदमाल।।

वीर छंद :

रिसि कै रए कै देव दनुज में, जुद्ध भऔ पूरे सौ साल।
इंद्र हते देवतन के स्वामी, महिसासुर दानव प्रतिपाल।
बड़े लड़इया उन दैतन सें, देवतन की सेना गइ हार।
सुरक लोक पै महिसासुर ने बनकें इंद्र करो अंधकार
सबइ देवता जुर बिटियां संग, हरि हर चरन शार में आन।
अपनी हार और बैरी के, बल कौ बढ़ बढ़ करो बखान।
महिषासुर ने सूरज चंदा, पवन अगन यम दए निकार।
सुरग लोक के स्वामी इंदर, इन्द्रासन से दए उतार।
मारे मारे फिरत धरन पै हम सब जन मानस की नाई।
राक्षसन की सब करत में, आज अपुन खौं आन सुनाईं।
जुर मिल कें हम सबइ देवता, चरन शरन में आ गए आज।
उयै मार कैं हमें बचा लो, फिर से मिलै सुरग कौ राज।
सुनकें दीन वचन देवतन के, श्री हरिविष्णु और त्रिपुरार।
भरे क्रोध से भोहें तन गईं, आँखें भई लाल अंगार।
ब्रह्मा विष्णु और शिव मुख से, निकरी तेज क्रोध की ज्वाल।
तबइ सबइ देवतन के तन सें, निकरन लगो तेज ततकाल।
बेसब तेज तेज सें मिल कें, होन लगे हें एकाकार।
जी की दमक न देखी जाइ तेज पुंज कौ बनो पहार।
लपटें उठरइं दसउ दिसनमें दूर दूर तक लगी दिखान।
तेज पुंज के झक्काटे ने, देवी रूप धरो अब आन।
शिव कौ तेज बनो देवी मुख, यम कौ तेज बने हें बाल।
विष्णु तेज से बनी भुजाएं, चंद्र तेज से उरज विशाल।
इन्द्र तेज से छीन कमरिया, बरुन तेज से जाँगें दोऊ।
धरनी तेज नितम्ब बनादए, ब्रह्म तेज दोउ चरन बनाए।
भात तेज चरनन कीं उँगरी, कर उँगरिन वसु तेज समाए।
नासा बनी कुबेर तेज सें प्रजाती तेज सें दाँत।
अगन तेज से तीनउँ नैना, जिनकी शोभा कही न जात।
संध्या तेज बनी दोइ भोंहे, पवन तेज सें बन गए कान।
सबदेवतन कौ तेज समानो, देवी प्रकट भई हैं आन।
देखो दिब्ब रूप देवी कौ, देवता फूले नई समाएं।
शिवशंकर त्रिशूल देत हें, श्री विष्णु इक चक्र गहाए।
शंख बरुन ने शक्ति अगन, ने दै रए पवन धनुस उर बांन।
ऐरावत हाथी कौ घंटा, बज्र इंद्र ने करे प्रदान।
काल दण्ड सें दण्ड देत यम दै रए बरुन पांश कौ जाल।
ब्रह्मा जू ने दऔ कमंडल, प्रजापती फटिक की माल।
सूरजदेव ने तेज भरो है, रोम रोम में अपरमपार।
दई काल ने उनें ढाल के संगै चमचमात तलवार।
छीर सिन्धु ने दिब्ब बसन दए, जगमगात हीरन कौ हार।
हुँसुली चूड़ामनि बाजूबंद पेंती रोंनन की झंकार।
विसकर्मा ने फरसा दै दऔ, कवच अभेध और हथयार।
और समुन्दर ने दै दइ हैं,सुंदर कमल फूल उपहार।
रतन अमोलक दए हिमांचल, सिंघा दऔ होवे असवार।
मधुरस कलस कुबेर देत हें, शेष नाग मनियन कौ हार।
सब देवतन ने आभूषन के, संगदूँ भेंट करे हथयार।
मान मान पाकें देवी ने, ऊंचे सुर में भरी हुंकार।
धरनी सें लैके अकास तक, गूंज उठी भारी गुंजार।
धरनी कंपत डोल रए परबत, उठन लगे सागर में ज्वार।
सिंघवाहिनी देवी को सब, देवता कर रए जै जै कार।
रिषि मुनियन के मन सें उनने डर खों दऔ है दूर निकार।

- चित्रांश कॉलोनी, वर्मा शैल पैट्रोल पंप के पास,
मऊरोड, टीकमगढ़ (म.प्र.)

पानी तुम बेकार न बहाईयो

– सुरेश पराग

पानी तुम बेकार ना बहाइयो
राजा तुम...
बिन्नू तुम, तनक में नहाईयो।
जब तुम जाओ कहूँ नहान,
इन बातन को रखियो ध्यान,
नदी तला हैं अपनी शान।
बूंद, बूंद पानी बचाईयो
राजा तुम...
बिन्नू तुम तनक में नहाईयो।
नदी तला में ढोर न जावें
भैंसें जल में लोर न पावें
उनखाँ पानी अलग पिवावें
सुन्दर सी बाड़ भी लगाइयो,
राजा तुम...
बिन्नू तुम तनक में नहाईयो।
सुनियों बात लगा कें ध्यान,
लईयो पानी पैला छान,
सब रोगन को येई निदान,
पानी खों गंदगी से बचाईयो,
राजा तुम...
बिन्नू तुम...
भैया तुम...
लल्ला तुम, तनक में नहाईयो।
पानी तुम बेकार ना बहाईयो।

-देवेन्द्रनगर

रामचरित मानस में बुन्देली

– अभिनंदन गोइल

बुन्देली माटी के सपूत गुसाई तुलसीदास जू की रची श्री रामचरित मानस की भासा बैसें तो अवधी मानी जात है, पै ऊ में बुन्देली सबदन कौ गुरीरौपन सोऊ घुरो है।

मानस के बाल काण्ड की जा चौपाई देखियौ, जी में गुसाई जू गुरू वंदना करत भय कै रए हैं।

'' बंदऊँ गुरूपद पदुम परागा, सुरूचि सुवास सरस अनुरागा।
अमिअ मूरमय चूरन चारू, समन सकल भव रूज परिवारू।।

ई चौपाई के चूरन (बुन्देली) शब्द ने अमरमूल (यानी संजीवनी जड़ी) खों सारथकता दैवे कैसो नीकौ काम करो है।

बुन्देली में देखवे खों सूझवौ सोऊकत है। गुसाई जू लिखत है-

सूझहिं रामचरित मनि मानिक, गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक।

इतै वे गुरू की कृपा सें मिली मानस के मनि-मानक दिखावे बारी दृष्टि के लाने बुन्देली शब्द '' सूझहिं'' कौ सहारौ ले रए है। मणि-माणिक कौ सौऊ बुन्देलीकरन करकें मनि-मानिक लिखों गऔ है। बैसें तौ पूरी मानस में ण की कर्कषता की जगां न लिखकें बुन्देली मिठास भर दई है। जैसें मनि-मानिक पुरान, प्रनाम, चरन, गुन आदि आदि। ऐसई कर्म कौ करम, स्वर्ग कौ सुरग य सरग, नर्क कौ नरक, तीर्थ कौ तीरथ जैसे शब्दन कौ तौ बुन्देलीकरन सोऊ नौनों लगत है। उदाहरन देखौ-

'' सरग नरक अनुराग विरागा, निगमागम गुनदोष विवादा ''।

'स' 'श' और 'ष' इन तीनई आखरन (अक्षरों) की जगां बुन्देली में अकेलौ सरौता कौ स लिखौ औ उच्चारो जात। सो तुलसीदास जू ने सोऊ श की जगां बुन्देली घाई स कौ प्रयोग करो है। हाँ षटकोण को स मानस में गुसाईजू ने लऔ है। जैसें दोष, विषाद आदि।)

बुन्देली के जेऊ-तेऊ सबदन कौ कैसो नौनो प्रयोग भओ है-

लखि सुवेष जग बंचक जेऊ, वेष प्रताप पूजिअहिं तेऊ।

बुन्देली के नीकी-फीकी सबदन को प्रयोग दैखों-

प्रभु पद प्रीति न सामुझि नीकी, तिन्हई कथा सुनि लागि न फीकी।

ऐसई गुसाई जू ने अक्षर खौ आखर और अर्थ खौं अरथ लिखकें बुन्देली की कैसी मिठास धों दई है देखें-आखर अरथ अलंकृत नाना आगें देखियौ बुंदेली कौ जौ गुरीरौपन-

कवित विवेक एक नहि मोरे। सत्य कहऊँ लिखि कागद कोरे।।

इतै मोरे औ कोरे ठेठ बुन्देली लहजौ हैं और कागद है कागज को बुन्देलीकरन ऐसई देखौं।-

''तुम्हरी कृपां सुलभ सौऊ मोर, सिआनि सुहावनि टाटपटोरे''। में बुन्देली पुट कौ कैसो मजा है। कपिपति रीछ निसाचर राजा, में रीछ बुंदेलियई शब्द आऔ है।

सो सांची सांची कई जाए तौ मानस में बुदेली सांचऊ नौनी गुंथी है। देखो

राम निकाई रावरी है सबही कौ नीक।
जौं यह सांची है सदा तौनी कौ तुलसीक।।

अबै लौं तौ अपन मानस के बालकाण्ड मेंई डोल रए ते पै ई के सबई काण्ड भरे परे हैं बुदेली सें।

अयोध्या काण्ड में गुसाई जू ने श्रीराम जी के राज्याभिषेक के लाने बुन्देली कौ टीका शब्द लऔ है।

जों पांचहि मत लागे नीका, करहु हरिष हियँ रामहि टीका।।''

राम के राजतिलक होवे की खबर सुनकें माता सुमित्रा चौक पूरती है। देखो बुन्देली की नौनी सी झलक '' चौकें चारू सुमित्रा पूरी''

अयोधा काण्ड में-चींखा, पठाये, लपेटे, अटपटे, कठवता जैसे कैऊ बुंदेली शब्द भरे परे हैं, जिनके कछू उदाहरन नैचे दए जा रह हैं-

निज कर नयन काढ़ि यह दीखा। चाह सुधा विषु चाहत चींखा।।

''सुन केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे।''

''बरबस राम सुमंत्र पठाये, सुरसरि तीर आपु तब आए।''

केवट राम रजायसु पावा, पान कठवता भर लेऊ आवा।

श्रीराम-केवट संवाद में मणि -मुद्रिका खों बुंदेली में मनि मुदरी लिखकें कैसी मिठास घोर इई है-

पिय हिय की सिय जाननि हारी, मनिमुदरी मन मुदित उतारी।

ऐसई सुंदर काण्ड में सोऊ माता सीता द्वारा श्रीराम की मुदरी चीनबे कौ वरनन बुंदेली के प्रयोग सें कैसौ मार्मिक बन गऔ देखौ-

'' चकित चितव मुदरी पहचानी, हरष बिषाद हृदय अकुलानी''

अरण्यकाण्ड में बुदेंली कौ प्रयोग देखै, कैसो छाती खौं ठंडक दै रऔ-

चितवत पंथ रहेऊ दिन राती, अब प्रभु देख जुड़ानी छाती ।

छुपबे के लानें लुकबे को प्रयोग देखें कैसो भऔ है-

अबिरल प्रेम भगति मुनि पाई, प्रभू देखैं तरू ओट लुकाई।

किष्किंधा काण्ड के ई दोहा में देखो युवराज खों तुलसीदास जू ने बुन्देलीखण्ड मुं जुबराज कई है-

राजु दीन्ह सुग्रीव कहँ, अंगद कहँ जुबराज।

लंकाकाण्ड के नैंचे दए ई सोरठा में बुंदेली सब्दन की छटा देखौ-

फूलई फरई न बेंत, जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरख हृदय न चेत, जौं गुर मिलहिं बिरंचि सम।।

ई में फूलई, फरई बेंत, मूरख और गुर सब्दन के नौंने प्रयोग से हियौ जुड़ाजात।

उत्तरकाण्ड में सोऊ राम राज कौ बरनन करत भय गुसाई जू फूलईं फरई कौं प्रयोग कर रए हैं।

फूलई फरई सदा तरू कानन रहहिं एक संग गज पंचानन।

रामराज के बरनन में बगरी बुंदेली छटा कौ एक और उदाहरन देखौ-

नहिं दरिद्र कोऊ दुखी न दीना, नहि कोऊ अबुध न लच्छन हीना।

इते कोऊ औ लच्छन जैसे सब्दन ने बुंदेली की मिठास भर दई है।

सो भौत का कई जाए, पूरी रामचरित मानस में बुंदेली कौ गुरीरौपन घुरो धरो है। गुसाई जू की ई कृति खों बुंदेली औ अवधी कौ मिलो जुरो महाकाव्य कई जाए तौ कछू बेजां बात न हुइए। सो गुसाई जू के इन शब्दन के संगै विराम लेत हों कै-

थोरे महूँ जानिहहिं सयाने।

-बाजार जैन मंदिर मार्ग, टीकमगढ़ (म.प्र.)
मो. 9424923622

बुन्देली गीत

–जगत मोहन हरि

बांग मुरगा नें दयी लगाय, परे सें उठी लली अंगड़ाय

साल सोहहवां रओ है झांक, चुनर सें रही जुवनवां ढांक।।

भुजाई खों लख दओ मुस्काय, लजा कें मुड़िया लयो झुकाय।

बांग मुरगा नें दयी लगाय, परे सें उठी लली अंगड़ाय।। 1।।

पीसबे चून पौंच गइ पौर, पोंछ दुइ पाटन खों लओ और।

लगा कें मानीं अपनी ठौर, डारबे टिकी कौर पै कौर।।

देहिया दूनर हो हो जाय, चाव सें चकिया रही चलाय।

बांग मुरगा नें दयी लगाय, परे सें उठी लली अंगड़ाय।। 2।।

भुजाई नें उत करो उसार, पसेरक इत लओ चून निकार।

इतेकइ में अब भओ भन्सार, चली जल भरबे झोंका मार।।

गगर दो दो धर मटकत जाय, कमर सौ सौ बलखइयाँ खाय।

बाँग मुरगा नें दयी लगाय, परे सें उठी लली अंगड़ाय।। 3।।

लगी फिर भंउन मठा खों संग, भुजाई निरख रही सब अंग।

उमगवें छतियां, चोली तंग, चढ़न लागो अंगन पै रंग।।

नजर मन्मथ ना देय लगाय, डठूला माथें दियो बनाय।

बांग मुरगा ने दयी लगाय, परे सें उठी लली अंगड़ाय। ।4।।

करी सानीं लइ माँड़ी घोर, बछेरू गइंयन खों दओ छोर।

चटा दओ बछवा धौरी थोर, भरो घैला भर दूध निचोर।।

कलेवा की दइ तार लगाय, आग दै चूलौ दियो जलाय।

बांग मुरगा नें दयी लगाय, परे सें उठी लली अंगड़ाय।। 5।।

भुजाई नें कर दओ ज्यौनार, चाँवरन संग चनन की दार।

राइ जीरन सें मठा बगार, चिपर दइं रोटी माखन मार।।

भटा भूंजो दओ भरत बनाय, बांद दइ चटनी हींग मिलाय।

बांग मुरगा नें दयी लगाय, परे सें उठी लली अंगड़ाय ।। 6।।

लांक फैली खेतइ में हुये, मताई धीरज खोतइ हुयै।

बाप भइया चिन्ता में हुये, दांय में देरी होतइ हुयै।।

कलेवा धरें धरै पग धाय, छमाछम पायल छमकत जाय।

बांग मुरगा नें दयी लगाय, परे सें उठी लली अंगड़ाय।।7।।

- राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन, हा.से. स्कूल, झांसी (उ.प्र.)

बुन्देली गजल

–अमित कुमार खरे

कौन बिले में घुस गए नेता, वोट डरे और छुप गए नेता।

अब तक तौ छाती खूंदेंते, कितै हिरा गए दुक गए नेता।

सांप आंधरे खूब करत ते, डसे डसाए फिर रये नेता।

पांच साल की फसल काट कें, बण्डा भर कें सो गए नेता।

सब जानत ते गहरे हैं जे, असली जौ है, चुक गए नेता।

- मुहल्ला बजरिया सेवढ़ा

पं. आशाराम त्रिपाठी की पुस्तक चौकड़िया की मड़िया पर

प्रतिक्रियात्मक पांच चौकड़ियाँ

– शिवभूषण सिंह गौतम 'भूषण'

पोथी चौकड़िया की पाई-मड़िया सजी सजाई। (1)

तीन सैकड़ा फागैं लिख दई तुमने खूब बनाई।

पहले विनय सारदा जू की फिर गिरधर की गाई।

बन्न-बन्न की बातैं लिख दईं, संगै बाप मताई।

अपनो जीवन सार बात दौ चौकड़िया में गा दौ।(2)

प्रेमभगति राधा माधव की, ऊधौ खां समझा दौ।

गांव गली खलिहान खेत की, सांसौ याद दिला दौ।

बुन्देली चौकड़िया 'गौतम', गा कै रस बरसा दौ।

चुन-चुन चौकड़िया की कड़िया, खूब बनाई मड़िया।(3)

प्रेम पगी गोपिन को गारो, राम नाम की ड़ड़िया।।

मन मोहक मोद्वन को मगरो, कान्हा कलित किवड़िया।

''भूषण'' भनत भाव रस भीनी, भरी भराई भड़िया।

ऊधौ राग निरंजन गावैं, गोपिन खां समझावैं।(4)

ज्ञान गठरिया खोल अपनी, जोग जुगत दर सावैं।

बृज में ब्रह्मज्ञान उपदेशा, जोग समाधि सिरपावै

''भूषण'' भन्नत प्रेम रस पागी, इन खां का समझावें।

तुम्हरी चौकड़िया रस आंठी, आशाराम त्रिपाठी।(5)

एन गुरीरी सब रस सीरी, ज्यों गन्ना की गांठी।

सुधर सजीली अति अलबेली, बुंदेली कद कांठी।

चौकड़िया की मड़िया ''गौतम' षटरस व्यंजनटाठी।।

- कमला कॉलोनी, छतरपुर (म.प्र.) 471001

परयावरन बचाउनें

–सुरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव सुमन

परयावरन हमकों बचाउनें, जगह जगह बिरछा लगाउनें।
पेड़ है जीवन के आधार
ऑक्सीजन के ये भण्डार
वर्षा इनसें होय अपार
बिरछन सें फूल फल पाउनें, जगह जगह बिरछा लगाउनें ।।1
इनपे बैठे काग चिरैंयाँ
बचीं रहें इनसें गौरैंयाँ
पेड़न से होय शीतल छैंयां
बाग, उपवन, बगीचा, बचाउनें, जगह जगह बिरछा लगाउनें ।। 2
पेड़न से होंय वर्षा भारी जासें समरे खेती बारी
धरती पे फैले हरियारी
हमें पुरखन की सीख अपनाउनें, जगह जगह बिरछा लगाउनें।। 3
परयावरन संतुल्न इनसे
पानी, हवा, दवाई, इनसें
जीवन की खुशहाली इनसें
वन जीवन संरक्षित कराउनें, जगह जगह बिरछा उगाउनें।। 4

- ग्राम कुसमरा पोस्ट नावली, जिला-जालौन (उ.प्र.)

नईं-नईं पोथीं अपुन के लानें

- नदी की वेदना (कहानी संग्रह) डॉ. अमिता अरजरिया प्रकाशक- जे.टी.एस. पब्लिकेशन्स, दिल्ली कीमत 400/-
- स्वप्नदर्शी (उपन्यास) अश्विनी कुमार दुबे, प्रकाशक- इंदिरा पब्लिशिंग हाउस, भोपाल कीमत 345/-
- महामति प्राणनाथ जीवन दर्शन और साहित्य, पं. ब्रजवासी लाल दुबे प्रकाशक-इंदिरा पब्लिशिंग हाउस, भोपाल कीमत 595/-
- महाकवि कालिदास प्रणीत ऋतुसंहार का हिन्दी पद्यानुवाद अनुवादक, रमाशंकर पाण्डेय सं. डॉ. आभा पाण्डेय, प्रकाशक- अयन प्रकाशन, महरौली नई दिल्ली कीमत 360/-
- बुन्देली दरसन 2019-सं. डॉ. एम.एम. पाण्डेय, प्रकाशक- नगर पालिका परिषद, हटा (दमोह)
- बुन्देलखण्ड समग्र सं. हरि विष्णु अवस्थी, अयोध्या प्रसाद गुप्त कुमुद अमृत अभिनंदन, प्रकाशक- माधवराव सप्रे समृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल
- गौ भक्त राघव, शुभम् मिश्र, प्रकाशक- श्री वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद, टीकमगढ़
- लाइन हाजिर (लघु कथा संग्रह), माता प्रसाद शुक्ला, प्रकाशक- उन्तरायण प्रकाशन, लखनऊ
- जल बिचमिन पियासी-पं. रामस्वरूप दास पाण्डेय, प्रकाशक- विकास ऑफसेट प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स, भोपाल
- आतिथेयी (गो संस्कृति भूमक कहानी संग्रह), लेखक-श्री बलूकपीठ सेवा संस्थान, बृन्द्रावन
- पत्नीशास्त्र फुलबतियों (काव्य संग्रह), रामसेवक शाक्यवार, प्रकाशक-प्रतीक प्रकाशन, ग्वालियर कीमत 250/-
- भारत संस्कृति का दर्पण (काव्य संग्रह),रामसेवक शाक्यवार, प्रकाशक-प्रतीक प्रकाशन, ग्वालियर कीमत 250/-
- भारत धर्म, संस्कृति तथा राष्ट्रवाद, लेखक बी.डी. श्रीवास्तव, प्रकाशक बीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद्, टीकमगढ़ कीमत 80/-
- मुर्गे की आत्मकथा (काव्य संग्रह)- अजीत श्रीवास्तव, प्रकाशक, अयन प्रकाशन महरौली, नई दिल्ली कीमत 250/-
- छत्रसाल दर्शन पत्रिका- योगेन्द्र प्रताप सिंह कीमत 250/-
- हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी-डॉ. आशुतोष त्रिपाठी, प्रकाशक- अभय प्रकाशन, कानपुर कीमत 400/-
- गुजरी बातें-उमाशंकर तिवारी, प्रकाशक वीर बुन्देलखण्ड प्रेस, झाँसी कीमत 495/-
- बुन्देली की फागें- डॉ. हरि कृष्ण हरि, प्रकाशक- म.प्र. लेखक संघ भोपाल कीमत 200/-
- दो रंग दो दिशाएं- कृपाशंकर तिवारी, प्रकाशक- प्रतिश्रुति प्रकाशन, कोलकाता कीमत 380/-
- रमकल्लो की पाती-लखनलाल पाल, प्रकाशक-रश्मि प्रकाशन, लखनऊ कीमत 160/-
- समर्पिता-डॉ. नरेन्द्र मोहन अवस्थी, प्रकाशक-साहित्य रत्नाकार, कानपुर कीमत 175/-
- लोकाभिव्यक्ति , पन्ना के मध्य युगीन मंदिर- डॉ. शिवकुमार तिवारी, प्रकाशक- सरूप बुक पब्लिशर प्रा.लि., नई दिल्ली कीमत 800/-
- प्रेम के रंग- डॉ. नरेन्द्र मोहन अवस्थी, प्रकाशक-श्री वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद, टीकमगढ़
- रामभक्ति में झूलन रहस- सं. डॉ. लक्ष्मी नारायण गुप्त विश्व बंधु
- हँसै हँसाबै सोई जिन्दगी- डॉ. श्याम बहादुर श्री शीत श्याम, प्रकाशक- बुन्देली साहित्य एवं संस्कृति सेवा संस्थान, उरई कीमत 170/-
- डॉ. डी.पी. खरे अभिशाप (बुन्देली एवं हिन्दी उपन्यास), प्रकाशक-लक्ष्मी प्रिंटिंग प्रेस बाजार जैन मंदिर मार्ग टीकमगढ़ 125/-
- आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल- मदन रस बरसे (बुन्देली हिन्दी साहित्य निबंध), प्रकाशक- आदिवासी लोक कल्याण एवं बोली विकास अकादमी, म.प्र. जनजाति संग्रहालय श्यामला हिल्स भोपाल (म.प्र.) 462002 कीमत 200/-
- हरि विष्णु अवस्थी- जल प्रबन्धन बुन्देलखण्ड में पारंपरिक जल संरचनाएं प्रकाशक- आदिवासी लोक कल्याण एवं बोली विकास अकादमी, म.प्र. जनजातीय संग्रहालय श्यामला हिल्स भोपाल (म.प्र.) 462002 कीमत 50/-
- प्रकाशक- वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद्
- टीकमगढ़ 472001 अंकित नहीं
- गुणसागर शर्मा सत्यार्थी- विरासत प्रकाशक- बुन्देली विरासत अकादमी ओरछा जिला निवाड़ी (म.प्र.) कीमत 600/-
- सं. उमाशंकर खरे उमेश सवाई महेन्द्र महाराज श्री मधुकर शाह पर देव ओरछेश अभिनंदन ग्रंथ मधुकर, प्रकाशक- युवराज रुद्र प्रताप सिंह जू देव कीमत अंकित नहीं
- रामकुमार तिवारी, गोपी विरह (कविता) प्रकाशक- डॉ. हर्ष कुमार तिवारी पाथेय प्रकाशन सराफ नबलपुर कीमत 100/-
- प्रो. बी.के. श्रीवास्तव, बुन्देलखण्ड का इतिहास (1531से1857 ई.) प्रकाशक- डी.के. प्रिंट वर्ल्ड (प्रा.) लि. वेदश्री एफ 395 सुदर्शन पार्क मेट्रो स्टेशन ई.एस.आई. हॉस्पिटल नई दिल्ली 110015 कीमत 280/-
- आशाराम त्रिपाठी, चौकड़िया की मड़िया, पुस्तक प्राप्ति स्थान- मकान नं. 19 स्वास्तिक सी.टी.ओ. कॉलौनी बैरागढ़ भोपाल कीमत 100/-
- डॉ. रामनारायण शर्मा डायरी एक साहित्यकार की, प्रकाशक- डॉ. सुशीला शर्मा 695/3 सिविल लाइन झाँसी कीमत 250/-
- बंजारा मन पथरीली आँखें-श्रीमती विमल बुन्देला, प्रकाशक- जे.टी. एस. पब्लिकेशन्स, दिल्ली-53 कीमत 500/-
- फाग लोक के ईसुरी- डॉ. दया दीक्षित, प्रकाशक- अमन प्रकाशन, कानपुर - 12 कीमत 295/-
- 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के बाद का राजपूताना- फ्रांसीसी पर्यटक लुई रुसुले द्वारा लिखे वृत्तांत का अनुवाद- राकेश व्यास, प्रकाशक-जे.टी. एस. पब्लिकेशन्स, दिल्ली-53 कीमत 995/-
- कलम रोक दूँगा (कविता संग्रह)- डॉ. राजेश पाठक, प्रकाशक- अमन प्रकाशन, महरौली, नई दिल्ली कीमत 220/-
- पीर घनेरी- अभिनन्दन गोइल, प्रकाशक- मनीष प्रकाशन, भोपाल कीमत 101/-
- चिड़ियाँ चुग गईं खेत- डॉ. राज गोस्वामी, प्रकाशक- बुक पब्लिकेशन, लखनऊ कीमत 250/-

BUNDELI VIKAS SANSTHAN CHHATARPUR (M.P.)

INCOME & EXPENDITURE A/C FOR THE YEAR 2018-2019

EXPENDITURE	Rs.	Rs. (R)	INCOME	Rs. (R)
Bundeli Utsav Expenses		1,945,200.00	From Jan Sahyog	2,380,000.00
Medical Camp Exp	13,526.00			
Hasya Kabi Semeelan	39,875.00		Membership Fees	6,680.00
Plantation Expenses	16,520.00			
Agriculture Training & Seed Di	19,635.00	89,556,00	Smarika Advertisement	288,500.00
Other Expenses				
Salary	340,000.00		Interest From Bank	898.
Honorarium	130,000.00			
Audit Fees & Income	5,000.00		Fortune Stone Ltd. Chhatarpur	100,000.00
Misc Exp	36,320.00			
Stationary & Printing	24,500.00		PNC Ltd. Chhatarpur	200,000.00
Teaching Learning Exp	62,130.00			
Smarika Printing Exp	192,500.00			
Postage	7.220.00			
Sangosthi (Meeting)	48,340.00	**846,010,00**		
Add Excess of Income		**93,312,00**		
TOTAL RS.		**2,974,078,00**	**TOTAL RS.**	**2,974,,078.00**

Certificate from management
Certified that above income & Expenditure is Correct.

AUDIT REPORT
As per our report on Balance Sheet.

President **Secretary** **Sagar : 26.06.2019**

R.V. Agrawal
Chartered Accountants

BUNDELI VIKAS SANSTHAN CHHATARPUR (M.P.)

RECEIPTS & PAYMENTS A/C FOR THE YEAR 2018-2019

EXPENDITURE	Rs.	Rs. (R)	INCOME	Rs.	Rs. (R)
OPENING BALANCE			**Bundeli Utsav Expenses**		1,945,200.00
Cooperative Bank (46)	5,594.00		Medical Camp Exp	13,526.00	
Canara Bank (S/A) 1608	17,641.00		Hasya Kabi Semeelan	39,875.00	
F.D.R. Canara Bank	800.000.00	823,235.00	Plantation Expenses	16,520.00	
			Agriculture Training & Seed Di	19,635.00	89,556,00
Membership Fees		2,380,000.00	**Other Expenses**		
			Salary	340,000.00	
			Honorarium	130,000.00	
From Jan Sahyog		4,680.00	Audit Fees & Income	5,000.00	
Smarika Advertisement		288,500.00	Misc Exp	36,320.00	
			Stationary & Printing	24,500.00	
Interest From Bank		898,500.00	Teaching Learning Exp	62,130.00	
			Smarika Printing Exp	192,500.00	
Fortune Stone Ltd. Chhatarpur		100,8000.00	Postage	7.220.00	
			Sangosthi (Meeting)	48,340.00	**846,010,00**
PNC Ltd. Chhatarpur		200,000.00	**Construction**		
			Building Construction		**78.744.00**
			Cooperative Bank (46)	5,594.00	
			Canara Bank (S/A) 1608	32,209.00	**837,803.00**
			F.D.R. Canara Bank	800,000.00	
TOTAL RS.		**3,797,313.00**	**TOTAL RS.**	**837,803.00**	**3,797,313.00**

Certified that the above statement
is correct.

President **Secretary** **Sagar : 26.06.2019**

R.V. Agrawal
Chartered Accountants

BUNDELI VIKAS SANSTHAN CHHATARPUR (M.P.)
BALANCE SHEET AS AT 31/032019

FUND	Rs.	Rs. (R)	ASSETS	Rs.	Rs. (R)
Society Fund			**FIXED ASSETS**		**5,574,129.00**
As per L.BS		5,574,129.00	Land (As per last B.S.)		
			Building Construction	2,964,089.00	
			ADD THIS YEAR	78,744.00	**3,042,833.00**
Loans & Deposit			**Virasat Dwar Construction**		**1,498,800.00**
Nehru Yuva Club Basari		132,216.00	**Furniture (As per last B.S.)**		**9,597.00**
			Deak Stock (W.D.V.)		**8,666.00**
			CLOSING BALANCES		
			Cooperative Bank (46)	5,594.00	
			Canara Bank (S/A) 1608	32,209.00	
			F.D.R. Canara Bank	800,000.00	**837,803.00**
TOTAL RS.		**5,706,345.00**	**TOTAL RS.**		**5,706,345.00**

Certificate from management
Certified that above income & Expenditure is Correct.

AUDIT REPORT
As per our report on Balance Sheet.

President **Secretary** **Sagar : 26.06.2019**

R.V. Agrawal
Chartered Accountants

करयाइ तक टेड़ी हो गइ

–पं. बाबूलाल द्विवेदी

जिनकी टेड़ी टेड़ सुधारत करयायी तक टेड़ी हो गइ।
दिन टेड़े सूधे नइं हेरत वे टिड़या रए लुखा लुखे में।।
उनकी डूड़ी पीटत पीटत जिन्दगानी डूड़ीं की डारी।
डुड़िया में डर गए उर उड़ गए अग डिड़या रए लुखा लुख में।।
लाड़ लड़ा लडुवा खुवाउत्ते वेई आज लर्रये लतयारये।
लौंचत लै लोड़ा लुड़यारए हम लिड़या रए लुखा लुखे में।।
मन में भरी मिसमिसी ऐसी कत की नइं कॉ कय की से का।
हीड़त हेरत टेरत फेरत विल विचया रए लुखा लुखे में।।
करी दिल्लगी दिल में लग गई लगे पनी लाग लगवाने।
लग गइ लाग उमैठें मूंछे हम सिसकत रए लुखा लुखे में।।
हारे के हरि होत, हरारत हरौ, हेर लो, हे हरि आ।
'मधुप' हियौ हरया जावै जा सोस सुमर रए लुखा लुखे में।।
पुरी साव खुलकैं कत ते हेर हंसत ते ठिलठिलात ते।
संग छोड़कैं वेइ चले गए इतै ढूड़ रए लुखा लुख में।।

– ग्राम छिल्ला पो. बानपुर, जिला-ललितपुर (उ.प्र.)

गज़ल

– महेश कटारे 'सुगम'

लग रई धना रसौली जैसी
कच्ची हरी निबौरी जैसी
दांत लगत हैं मोती जैसे
आँख लगत है कौंड़ी जैसी
ओंठ धना के लाल गुलाबी
रच गयी होय गिलौरी जैसी
गालन तिल ज्यों पके मकोरा
बिंदी लगत करोंदी जैसी
निकरत बोल घुरत कानन में
बज रई होय टकौरी जैसी
घोकत बैठी अगर देख लो
लगवै कौनऊँ टौरी जैसी
लचकत देह लगत है ऐसें
होवै रुई की पौनी जैसी
बुरई नज़र सें सुगम बचावै
सूरत सुघर सलौनी जैसी

– चन्द्रशेखर वार्ड, बीना

२३वें बुन्देली उत्सव २०१९ का प्रतिवेदन

– नेहा सिंह बुन्देला

बुंदेली लोक कला, परम्परा एवं संस्कृति केन्द्रित आठ दिवसीय कार्यक्रम ''बुंदेली-उत्सव 2019'' का अत्यंत हर्षोल्लास के साथ भव्य शुभारम्भ 16 फरवरी 2019 को पर्यटक ग्राम-बसारी में हुआ। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में कांग्रेस के वरिष्ठ नेता अजय सिंह जू (राहुल भैया) पधारे। आपने महाराजा छत्रसाल के चित्र पर माल्यार्पण किया एवं दीप प्रज्जवलित कर कार्यक्रम की गति प्रदान की। दूसरी ओर रंगबिरंगे गुब्बारो को आसमान मे छोड़ा साथ ही आतिशबाजी की आवाज ने महाराजा छत्रसाल स्टेडियम बसारी को गुजाएंमान कर दिया। तत्पश्चात शासकीय हायर सेकेण्ड्री बसारी की छात्राओं ने मुख्य अतिथि के स्वागत मे स्वागत गीत प्रस्तुत किया।

बुंदेली विकास संस्थान के संरक्षक शंकर प्रताप सिंह बुंदेला ''मुन्नाराजा'' ने मुख्य अतिथि का पुष्प माला से स्वागत किया एवं अपने चितपरिचित अंदाज में स्वागत किया एवं अपने चित-परिचित अंदाज में स्वगात वक्तत्व देते हुए मुख्य अतिथि एवं अन्य अतिथियों का ''बुंदेली-उत्सव 2019'' में पधारने पर आभार व्यक्त किया साथ ही बुंदेली उत्सव को 23 वें वर्ष मे प्रवेश करने पर क्षेत्रीय जनता और सहयोग प्रदान करने वालो का आभार व्यक्त किया। बुंदेली विकास संस्थान के अध्यक्ष आदित्य शंकर बुंदेला ने सभी अतिथियों का आभार व्यक्त करते हुऐं सभी क्षेंत्रवासियों कार्यक्रम मे शामिल होने की अपील की और पुलवामा हमले मे शहीद हुऐ देश के वीर सैनिको को भावभीनी श्रद्धांजली दी गई।

16/02/2019 उत्सव के प्रथम दिन रंगोली एवं लोक चित्रो का प्रदर्शन बुन्देली पोशाक प्रतियोगिता एवं बुन्देली नृत्य आदि स्कूली बाल कलाकारो एवं क्षेत्रीय कलाकारों द्वारा प्रस्तुत किया गया जिसमे शासकीय उच्चतर मा. वि. बसारी, डी.पी.एस., डिलाइट स्कूल एवं आर.बी.एस. स्कूल बसारी आदि के छात्र-छात्रायें सम्मिलित हुऐ। कार्यक्रम के इसी क्रम मे प्रतिवर्ष प्रकाशित होने वाली बुंदेली स्मारिका पत्रिका ''बुन्देली बसन्त 2019'' का लोकार्पण किया गया। दूसरी ओर दंगल और गिल्ली डंडा की प्रतियोगिता आकर्षण का प्रमुख केन्द्र बनी दंगल मे अंचल के अलावा देश के विभन्न प्रांतो के नामी पहलवानो ने हिस्सा लिया।

उत्सव के दूसरे दिन 17/02/2019 एक और बालीवॉल गिल्ली डंडा की प्रतियोगिताओं ने अद्‌भुद प्रदर्शन से लोगो का रोमांचित किया वही दूसरी ओर चैपर के दॉव-पेंच ने लोगो को अपनी ओर आकर्षित किया। बसारी स्टेडियम मे बालीवॉल, गिल्ली-डंडा और चैपर के मुकाबलों की जबरदस्त घूम रही। हजारों खेल प्रेमियों की हर्ष ध्वनियो व तालियो की गड़गड़ाहट के बीच खिलाड़ियों ने जबरदस्त प्रदर्शन कर सबके मन जीत लिए।

उत्सव के तीसरे दिन 18/02/2019 कबड्डी, बालीवॉल चैपर के मैच जारी रहें। कबड्डी मे महिलाओं और पुरूषों की टीमो के बीच खिलाड़ियों के दॉव-पेंच देखकर दर्शन मंख्मुगध हो गए। आखिरी मैच ग्वालियर और सतना की टीमों के बीच खेला गया जिसमें सतना टीम विजयी हुई एवं महिलाओं की टीमो मे सागर एवं बकस्वाहा के मुकाबलें मे बक्सवाहा की टीम विजयी रही।

दूसरी ओर बुंदेली फिल्मों की धूम मची। उत्सव के पहले ही दिन बुन्देली फिल्मकारों के द्वारा निर्मित आधा दर्जन फिल्मकारों के द्वारा निर्मित आधा दर्जन फिल्मो का प्रदर्शन हुआ एवं तीसरे दिन भी यहाँ बनी टपरा टाकीज मे पानी का मोल, पिता द फाइटर, संस्कुति, हम फौजी, जैसी कई फिल्मो का प्रदर्शन किया गया। इस अवसर पर बुंदेली फिल्मकार ज्ञानेन्द्र बुंदेला, कमल चतुर्वेदी, जीत वर्मा, संजू सबनम, अमित खरे, राम भैया, राजेश झाँ, को बुन्देली विकास संस्थान के अध्यक्ष आदित्य शंकर बुंदेला एवं पूर्व जनपद अध्यक्ष सिद्धार्थ शंकर बुंदेला के द्वारा सम्मानित किया गया।

सोमवार को ही चैपड प्रतियोगिता का फाइनल हुआ जिसमे गोवद्रि सिंह दौरिया एवं रामदास पाल दौरिया प्रथम स्थान पर रहें। उपविजेता के रूप मे घरम सिंह चंदला एवं अजुज़्न सिंह नाहर चुने गए। निणाज़्यक की भूमिका मुलचंद्र जोषी बसारी ने निभाई।

इसी के साथ तीसरे चरण मे आज बसारी गढीसागर तालाब मे रोमांचक नौका दौड का आयोजन भी किया गया जिसमे आसपास के क्षेंत्रो से आये नाविको ने अपनी पतवारो से कस्ती को खीचने मे गजब की फुत्तीज़ का प्रदषज़्न किया। इस प्रतियोगिता मे खजवा निवासी राजेष एवं रामकिषन रैकवार की टीम प्रथम एवं खजवा के ही आषाराम एवं दीना रैकवार की टीम द्वितीय सीलोन के बब्लू एवं बब्लू रैतवार की टीम ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। इस अवसर पर पूवज़् कृषि उपज मण्डी अध्यक्ष डीलमणि सिंह (बब्बूराजा), प्रभात अग्रवाल, कांग्रेस नेता मो0 हनीफ सहित अनेक लोग उपस्थित रहें।

उत्सव के चौथे दिन 19/02/2019 को कबड्डी के फाइनल मुकाबले खेले गये तो वही दंगल और रस्साकशी खेल में खिलाडियों ने अपने दांव पेंच दिखाएं। मंगलवार को अधिक संख्या मे विदेशी मेहमान भी बुंदेली कला एवं खेलो को देखने के लिए ग्राम बसारी पहुंचें। कार्यक्रम की श्रृंखला में महिला कबड्डी का फइनल मुकाबला सागर टीम ने शानदार विजय प्राप्त की। आज भी बुंदेली सिनेमा का प्रदर्शन किया गया। टपरा टाकीज मे बृजेश मोर्य की दिल-दोस्ती, हरीश पटेल की पानी की किल्लत, राजेश झा की भारत बंद, हिमालय यादव की देशी लैला विदेशी छैला, आरिफशहडोली की लोकेशन ऑफ बुन्देलखण्ड, देवदत्त बुधौलिया की हालत-हालत का प्रदर्शन हुआ। इा दौरान विदेशी पर्यटकों की उपस्थिति भी

मनोरता रही उन्होने भी कबड्डी दंगल के मुकाबले का आनंद उठाते हुऐ खिलाड़ियों के साथ तस्वीरें ली। विजेता खिलाड़ियो एवं पहलवानों को पूर्व विधायक एवं संरक्षक महोदय ''मुन्नाराजा'' द्वारा शील्ड एवं सम्मानित राशि प्रदान करके सम्मानित किया गया।

उत्सव के पाँचवे दिन 20/02/2019 कार्यक्रमों की श्रृंखला के अंर्तगत सबसे रोमांचक प्रतियोगिता बैलगाड़ी दौड़ का आयोजन किया गया। क्षेत्र के 23 से अधिक किसान अपने हष्ट-पुष्ट बैंलों और सजी-धजी बैलगाड़ियों के साथ बैलगाड़ी दौड़ प्रतियोगिता मे हिस्सा लेने पुहंचे। इस प्रतियोगगिता मे ग्राम बंधियन का दबदबा रहा। ग्राम बंधियन के ही तीन किसानो ने प्रतियोगिता के तीनो स्थानो पर अपना कब्जा जमाया। प्रथम स्थान कैलाश यादव दूसरा दूसरा स्थान भगवानदास यादव और तीसरा स्थान जीतेन्द्र विष्वकमाज़ ने अपने नाम किया माननीय संरक्षक महोदय ''मुन्नाराजा'' एवं अध्यक्ष आदित्य शंकर बुंदेला सहित इस रोचक प्रतियोगिता को देखने आए विदेशी मेहमानो ने विजेता को 3100 रूपये व एक नई बेलगाडी पुरस्कार स्वरूप भेंट की दूसरे स्थान पर रहे प्रतिभागी को 3100 रूपये एवं तीसरे स्थान पर प्रतिभागी रहे प्रतिभागी को 2100 रूपये का पुरस्कार प्रदान किया। दूसरी और कबड्डी पुरूष वर्ग के फाइनल मुकाबले मे गाजीपुर और बीना की टीमों मे गाजीपुर ने विजयी हासिल की। विजेता टीम को 7100 रूपये देकर सम्मानित किया गया। मैंच के दौरान देवेन्द्र राठौर, नरपत सिंह, रामलाल सिंह, लक्ष्मण दास नायक और रामकृष्ण जाटव ने रैफरी की भूमिका निभाई तो वही धीरज चैबे ने शानदार कामेन्ट्री की।

आज से ही रात्रि कालीन कार्येक्रमों की श्रृंखला भी प्रारम्भ हुई जिसमे सांय 07 बजे से बधाई नृत्य, कछियाई, दिवारी, बुंदेली पोषाक, अहिरवारी बैठक, बुंदेली कीर्तन, कहरवा, बनरे, गारी, लमटेरा, सैर, ख्याल, दादरा, जैसी लोककलाओं की अद्भभुत् प्रस्तुतियों नें सभी दर्शकों का मन मोह लिया। उत्सव के छठवें दिन 21/02/19 रात्रि कालीन कार्यक्रमों की श्रृंखला मे मंच पर बुंदेलखण्ड के कोने-कोने से आए लोक कलाकारो ने नीरता, कछियाई, दिवारी, बुन्देली कीतज़्न, कहरवा, बनरे, ख्याल आदि की प्रस्तुति हुई।

मुख्य अतिथि के रूप मे जाने-माने फिल्म अभिनेता राजा बुंदेला मंच पर मौजूद रहे। इस इस अवसर पर बुन्देली साहित्य के क्षेत्र मे श्रीमती लक्ष्मी शर्मा को राव बहादुर सिंह बुंदेला स्मृति सम्मान एवं लोक संस्कृति के क्षेत्र में प्रमनारायण मिश्रा को राव बहादुर सिंह स्मृति सम्मान से सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि एवं अन्य अतिथियों का स्वागत करते हुए बुन्देली विकास संस्थान के संरक्षक मुन्नाराजा ने अपने वक्तव्य मे कहा कि बुन्देलखण्ड की संस्कृति अपने आप में पूर्ण एवं समृद्ध है किन्तु हमने अपनी कलाओं को संरक्षित और विस्तृत करने पर विषेष ध्यान नहीं दिया जिसके कारण अन्य राज्यों की तुलना मे हमारी कला बड़े क्षेत्र मे नहीं पहुंच सकी उन्होंने कहा पिछले 23 वर्षो से यह उत्सव लगातार यह प्रयास कर रहा है कि हम अपनी संस्कृति एवं कला को दूर-दूर तक पुहचाने के लिये कलाकारो को मंच उपलब्ध कराऐ। इस अवसर पर कार्यक्रम के मुख्य अतिथि राजा बुन्देला ने कहा कि यह अनूठा आयोजन हैं। बुंदेली विकास संस्थान एवं पूर्व विधायक सहित पूरी बधाई के पात्र हैं जो बुन्देली भाषा और बुंदेली कलाओं को विकसित करने और संरक्षित करने का पुण्य कार्य कर रही है। सागर के नृत्य लोक कला अकदमी एवं बजरंग मण्डल बसारी के कलाकारो ने नीरता की शानदार प्रस्तुति की दी तो वही महोबा की प्रीति कुशवाहा एवं राजारंक कुशवाहा के द्वारा कछियाई, सपना रंग मण्डल बसारी एवं भगवानदास एण्ड पार्टी के द्वारा दिवारी की प्रस्तुति दी गई। बुन्देली कीर्तन मे आशीष विश्वकर्मा सागर बेटी बाई एवं सखियां बसारी, मालती कुशवाहा भुमानीपुरा और मत्थी बाई ने लोगो को मुत्र मुग्ध कर दिया। इसी प्रकार कहरवा, गारी, बनरे, सैर, ख्याल, व दादरे की प्रस्तुतियों को दर्शको ने खूब सराहा एवं लमटेरा मे बाबूलाल मस्ताना ने दर्शकों की तालियां लूटी। दूसरी ओर सांयकालीन कार्यक्रम अश्वनृत्य एवं धोडे की साजसज्जा प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिता मे बुन्देलखण्ड के कोने-कोने से आऐ घुड़सवारों ने बसारी स्टेडियम मे जब अपने धोडो का करतब दिखाया वो लोग दिल थामकर रह गऐ। रंग-बिरंगी पोषाक मे सजे धोडे ढोल और नगड़िया की थाप पर आसमान तक उछलते नजर आये तो वही धुड़सवारो की वेशभूशा ने भी दर्शको का ध्यान खीचा।

इसी दौरान बुंन्देली व्यंजन प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया। अतिथियों ने यहा लगाऐ गये बुंदेली व्यंजन के स्टॉल पर जाकर 500 से अधिक बुंदेली व्यंजनो का आनंद लिया। स्थानीय महिलाओं एवं छतरपुर से पहुचें कई प्रति भागगियों ने लोगो को बुन्देली महेरे, बरा,डुबरी जैसे पकवान परोसे तो अतिथि अंगुलिया चाटते रह गऐ।

उत्सव के सांतवे दिन 22/02/2019 रात्रिकालीन कार्यक्रम मे लोकगायन, रावला, ढिमरयाई, आल्हा गायन, बिलबारी, काडरा, अलगोजा, गोटगायन, कार्तिक गीत, बहुरूपिया, आदि की रंगारंग प्रस्तुतिया हुई जिसमे चुन्नीलाल रैकवार करार्पुर एवं मुन्नालाल सैनी छतरपुर ने ढिमरियाई, प्रेमनारायण याद (वांदा), कु0 दीक्षा, प्रतीक्षा (महोबा), राजपाल सिंह (बाछौन), ने आल्हा गायन की प्रस्तुति दी। मुख्य अतिथि श्री राजन ने बुंदेली संस्कृति को समपिज़्त इस आयोजन की जमकर प्रशंसा की।

दूसरी ओर सायंकालीन कार्यक्रम मे रोमांचकारी प्रतियोगिता निशानेबाजी मे भी दूर-दूर से आऐ निशानेबाजी ने गढ़ी सागर तालाब मे आयेजित इस प्रतियोगिता मे पहले स्थान पर संजय पायक रहे। दूसरे स्थान पर बमनी देवेन्द्र नगर के जयंत सिंह व तीसरे

स्थान पर इंद्र विक्रम सिंह रहे। इस प्रतियोगिता में अतिथि के रूप मे कलेक्टर मोहित बुंदस उपस्थित रहे। उन्होने विजयी प्रतिभागियो को पुरूस्कृत करते हुऐ इस आयोजन की सराहना की। उत्सव के आठवें दिन 23/02/2019 रात्रि कालीन कार्यक्रम मे नाटक एवं लोक नृत्य राई की मनोरम प्रस्तुतिया हुई नाटक की श्रृंखला मे 1857 मे मेरठ से शुरू हुई आजादी की पहली लडाई के पूर्व बुंदेलखण्ड में अंग्रेजो के खिलाफ विद्रोह की शुरूआत हुई थी। बुंदेलखण्ड के ऐतहासिक पन्नो मे इसका जिक्र मिलता है इसे आजादी की पहली लडाई की संज्ञा दी गई हैं आजादी की यही संघर्ष बुन्देली उत्सव के मंच पर एक नाटक के रूप मे प्रस्तुत हुआ। जबलपुर के लेखक एवं निर्देशक अयण पांण्डेय के नाटक ''हंसा करले किलोल'' का मंचन म.प्र. नाट्य विधालय के दो दर्जन छात्र-छात्राओं एवं कलाकारो ने 'बुदेली उत्सव'' के मंच पर लिया। नाटक लेकर आए म.प्र. नाट्य विद्यालय के डायरेक्टर आलोक चटर्जी और कलाकारो को मंच से सम्मानित भी किया गया।

बुन्देली संस्कृति को बढ़ावा देने के लिये बुन्देली विकास संस्थान द्वारा समापन अवसर पर बुन्देली उत्सव के शुरूआती दिनों मे इसका सहयोग करने के लिये शारदा प्रसाद शुक्ला को महाराजा गौरिहार नरेश स्मृति सम्मान, बुन्देली बसंत पत्रिका के संपादन के लिये डॉ0 बहादुर सिंह परमार हरि सिंह धोष एवं शिव मंगल सिंह का सम्मान किया गया। वही कार्यक्रम के संचालन के लिए विष्णु अरजरिया, जगदीश गंगेले, नीरज खरे, फोटोग्राफी के लिए गोल्डू सेन, को साल-श्रीफल एवं स्मृति चिन्ह भेंटकर सम्मानित किया गया तत्पश्चात लोक नृत्य राई की रंगारंग प्रस्तुतिया हुई। मान सिंह पाल ललितपुर एवं घनश्याम एण्ड पार्टी के कलाकारो के द्वारा देर रात तक लोक नृत्य राई की प्रस्तुति दी गई। हजारों की तदाद मे आये दर्शकों को ने इन प्रस्तुतियों का आनेद उठाया। कार्यक्रम मे आये कलाकारों का स्वागत बुंदेली विकास संस्थान के अध्यक्ष आदित्य शंकर बुंदेला, लखन दुबें, चौबे चौधरी, अतीन्द्र मणि त्रिपाठी, देवेन्द्र प्रताप सिंह, राम बाबू ताम्रकार, पंकज दुवें, छतरपुर कृषि उपज मण्डी के पूर्व अध्यक्ष डीलमणि सिंह बुंदेला (बब्बूराजा) ने किया। उत्सव के आठों दिन बुन्देली मेला पर्यटक ग्राम बसारी की शोभा बढ़ाता रहता है। साथ ही यह मेला उत्सव की रोनक को कई गुना बढ़ा देता है। अततः लोक नृत्य राई की रंगारंग प्रस्तुतियों कें साथ बुन्देली उत्सव-2019 का पदा गिरा।

समीक्षा-

बुन्देलखण्ड की लोक कथायें

- डॉ. एन.एम. अवस्थी

अजीत श्रीवास्तव जी ने बुन्देलखण्ड की लोक कथाओं को अपने मूल रूप में लिपिबद्ध कर उल्लेखनीय शोध कार्य किया है। वर्ना निकट भविष्य में ही ये लोक कथायें विलुप्त होकर इतिहास की अलभ्य वस्तु बन जाती । सभी जानते हैं कि बुन्देली बोली लिखना और दूसरे भाषा भाषियों के लिये दुसाध्य है। अतः लेखक ने खड़ी बोली में भी प्रस्तुत कर इन कथाओं को सामान्यजन एवं विशिष्ट बैद्धिक वर्ग को खास एवं क्लाश लिटरेचर दे सराहनीय कार्य किया है। लोककथायें मूलतः बुन्देलखण्ड की धरती में बिखरे अहाने है यह लेखकीय से जाना जा सकता है।

श्रीवास्तव जी ज्ञानबद्ध परिपक्व साहित्यकार, शोधार्थी एवं शिल्पकार हैं किन्तु आश्चर्य की बात है कि एक भी छैनी, हथौड़ा न चला फोटोग्राफिक मूल रूप प्रस्तुत किया है।

लोक कथायें अपने पूर्ण संवेग एवं संक्षिप्तता होने से जन मानस में पीढ़ियों से स्मृति के कारण श्रव्य साहित्य के रूप में बसती रही है। उनका प्रवाह बरसाती नाले नदी की तरह होते हुये शीघ्र समाप्ति ही उनका सौष्ठव है। यह क्षण भंगुरता ही उनका अपरिमित सौंदर्य है। किन्तु एक भाव, रस, रूप, सत्य, पर प्रकाश डाल शाश्वत की गोद में समा जाती है और पाठक पर उसका अमित प्रभाव पड़ता है, मारक क्षमता होने से मस्तिष्क पर चोट पड़ती है।

श्रीवास्तव जी का इतना संग्रहण, शोध एवं प्रस्तुतीकरण सराहनीय है। इनकी लघु कथाओं में जीवन का सत्य एवं कथा एवं शिक्षायें इनकी बड़ी विशेषताओं में से एक है। श्रीवास्तव जी ने भाषा एवं भाव सौन्दर्य को संरक्षित कर विशेष कार्य किया है।

कथायें बुन्देली में होने के बावजूद अविधा, लक्षणा व्यंजना शब्द शक्तियों से अलंकृत है।

समाज के सभी वर्ग का प्रतिनिधित्व लक्षणा के साथ कृति में दिखता है। यथा-पंडत, हजूर में आव, खवास, जाँच पड़ताल न करो पाण्डे, अध्धम अध्धम स्वाहा जें आयें अहीर दाऊ। लोकोक्तियां, मुहावरे, कहावतें-तुनक तुनक तैना, हम लड़ई, तुम बैना। मुहावरे-जेई कि लाठी ओई कि भैंस अथवा आधी छोड़ सारी को धावे, आधी मिले न पूरी आवे।

सामाजिक जीवन का परिदृश्य -मुरका लटा खाये या ब्यान होन तो दो, तुम तो मुहल्ला भर खां जोर ले हो आदि। खड़ी बोली के एक आधा शब्द कहीं कहीं, आयें पर लगते हैं, पर हैं नहीं कथाओं का मूल रूप में प्रस्तुतीकरण वर्तमान और आगत पीढ़ी इनको सदैव कृतज्ञ रहेगीं।

- प्राचार्य श्री रामदास महाविद्यालय
टीकमगढ़ (म.प्र.)

बुन्देली बसंत की सदस्यता हेतु आवेदन

नाम ....

पिता का नाम ....

स्थाई पता ....

डाक का पता .... पिन नंबर ....

मोबाइल नम्बर ....

ई-मेल आई.डी. ....

सदस्यता का प्रकार-वार्षिक/द्विवार्षिक/ पंचवार्षिक सदस्यता राशि ....

भुगतान का तरीका .... चैक / आर.टी.जी.एस./ ऑन लाइन बैंकिंग / नगद

....

हस्ताक्षर

वार्षिक सदस्यता	- 250 रु. (डाक व्यय सहित)
द्विवार्षिक सदस्यता	- 500 रु. (डाक व्यय सहित)
पंचवार्षिक सदस्यता	- 1000 रु. (डाक व्यय सहित)

सदस्यता शुल्क की राशि बुन्देली विकास संस्थान बसारी के **केनरा बैंक** के **खाता क्र. 1915101001608, आई.एफ.सी. कोड** CNRB0001915 में आर.टी.जी.एस. या ऑनलाइन जमा कराई जा सकती है। चैक भी बुन्देली विकास संस्थान, छतरपुर के नाम देय होंगे।

बुन्देली उत्सव के आयोजन पर हम हार्दिक स्वागत करते हैं।

बुन्देली उत्सव -2020

के आयोजन पर

हार्दिक शुभकामनाएँ

हारने का सवाल ही नहीं उठता

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित

टीकमगढ़ (म.प्र.)

1. बैंक से सम्बद्ध प्राथमिक कृषि साख सहकारी समितियों के माध्यम से उनके सदस्यों को अल्पकालीन फसल ऋण शून्य प्रतिशत ब्याज दर पर उपलब्ध करवाना।
2. बैंक में जमा अमानतों का जिले के कृषि विकास में शत- प्रतिशत विनियोजन।
3. जिले के दूरदराज के क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली अन्तर्गत उपभोक्ताओं को उचित मूल्य की
   दुकानों से राशन सामग्री उपलब्ध कराना।
4. मध्यप्रदेश शासन की जय किसान फाल ऋण माफी योजना वर्ष 2018-19 के अन्तर्गत प्रथम चरण में कृषकों का ऋण माफ किया गया। दूसरे चरण की स्वीकृति प्रक्रियाधीन है।
5. अन्य बैंको की तुलना में जमा अमानतों पर अधिक ब्याज।

जिला सहकारी बैंक एवं उसकी सेवा सहकारी समितियों से जुड़िये और जिले के कृषि विकास में अपना योगदान दीजिये।

प्रशासक

(ए.एस. कुशवाह)
मुख्य कार्यपालन अधिकारी

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित

सागर (म.प्र.)

1. बैंक से सम्बद्ध प्राथमिक कृषि साख सहकारी समितियों के माध्यम से उनके सदस्यों को अल्पकालीन फसल ऋण शून्य प्रतिशत ब्याज दर पर उपलब्ध करवाना।
2. बैंक में जमा अमानतों का जिले के कृषि विकास में शत- प्रतिशत विनियोजन।
3. जिले के दूरदराज के क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली अन्तर्गत उपभोक्ताओं को उचित मूल्य की
   दुकानों से राशन सामग्री उपलब्ध कराना।
4. मध्यप्रदेश शासन की जय किसान फाल ऋण माफी योजना वर्ष 2018-19 के अन्तर्गत प्रथम चरण में कृषकों का ऋण माफ किया गया। दूसरे चरण की स्वीकृति प्रक्रियाधीन है।
5. अन्य बैंको की तुलना में जमा अमानतों पर अधिक ब्याज।

जिला सहकारी बैंक एवं उसकी सेवा सहकारी समितियों से जुड़िये और जिले के कृषि विकास में अपना योगदान दीजिये।

प्रशासक

(डी.के. राय)
मुख्य कार्यपालन अधिकारी

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित

दमोह (म.प्र.)

1. बैंक से सम्बद्ध प्राथमिक कृषि साख सहकारी समितियों के माध्यम से उनके सदस्यों को अल्पकालीन फसल ऋण शून्य प्रतिशत ब्याज दर पर उपलब्ध करवाना।
2. बैंक में जमा अमानतों का जिले के कृषि विकास में शत- प्रतिशत विनियोजन।
3. जिले के दूरदराज के क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली अन्तर्गत उपभोक्ताओं को उचित मूल्य की
   दुकानों से राशन सामग्री उपलब्ध कराना।
4. मध्यप्रदेश शासन की जय किसान फाल ऋण माफी योजना वर्ष 2018-19 के अन्तर्गत प्रथम चरण में कृषकों का ऋण माफ किया गया। दूसरे चरण की स्वीकृति प्रक्रियाधीन है।
5. अन्य बैंको की तुलना में जमा अमानतों पर अधिक ब्याज।

जिला सहकारी बैंक एवं उसकी सेवा सहकारी समितियों से जुड़िये और जिले के कृषि विकास में अपना योगदान दीजिये।

प्रशासक

(एस.के. शुक्ला)
मुख्य कार्यपालन अधिकारी